प्रकाशक : सुशील वोहरा
वोहरा प्रकाशन, बोरडी का रास्ता, जयपुर

संस्करण : १९७२

आवरण शिल्पी . श्री प्रेमचन्द गोस्वामी

मूल्य : पच्चीस रुपये

मुद्रक : जयपुर मान प्रिंटर्स; वाणवालों का दरवाजा, जयपुर-३

दो शब्द

आजकल समाज का आकर्षण कथा साहित्य की ओर बडी तेजी से बढता जा रहा है और कहानी और उपन्यास विकास के मार्ग में आने वाले सभी व्यवधानों को तोड़कर आगे बढ़ रहे हैं। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि साहित्य की अन्य विधाएँ उपेक्षित हो गयी हैं। मेरा अभिप्राय यह है कि आज कल गद्य की इस विधा को बहुत बड़ा प्रोत्साहन मिल रहा है। अनेक कारणों में से प्रमुख यह है कि मनुष्य की सहज रुचि कहानी की ओर ही होती है। आज का कथा साहित्य चमत्कारवादी नहीं है। उसमें यथार्थ की ठोस धरा है और लेखक की अनुभूतियों का गहरा पुट है; इसीलिये एक मानस से दूसरे मानस में उसकी सुगम अवतारणा हो जाती है।

सभी कोटियों के उपन्यास लिखे जा रहे हैं और उनमे विभिन्न दृष्टिकोणों का समावेश दृष्टिगोचर होता है। बहुत से उपन्यासों का तथ्य एक होते हुए भी, लेखक-भेद से उनके शिल्प में भेद है। उपन्यास की अनेक भूमिकाएँ दिखायी पड़ती हैं जिसमें समाज, इतिहास, मनोविश्लेषण और व्यक्ति की धाराएँ प्रमुख हैं। प्रमुखतः इन्हीं तत्वों को लेकर डॉ० महावीरमल लोढा ने हिन्दी उपन्यासों का शास्त्रीय विवेचन किया है।

मेरी दृष्टि में उपन्यास के सिद्धान्तों को लेकर हिन्दी उपन्यास पर अनेक गवेषणात्मक एवं आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखे गये हैं। संभवतः प्रस्तुत कृति के लेखक ने ऐसी रचनाओ को 'शास्त्रीय विवेचन' की अभिधा दी है

जहा सिद्धान्तो का विश्लेषण और विवेचन होता है वहीं शास्त्र अपनी आकृति सँवार लेता है। डा० लोढा ने अपने विवेचन के लिये सन १९५० से ६५ तक के उपन्यासो को चुना है।

लेखक ने कृति का प्रारम्भ 'उपन्यास का सैद्धान्तिक विवेचन' से किया है। इसके अन्तर्गत उसने उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति से लेकर उसकी परिभाषा, स्वरूप, वैयक्तिक सामाजिक जीवन से उसका सम्बध, वस्तु-विधान, चरित्र-विधान और उद्देश्य, उपन्यासो की शास्त्रीय विवेचना से आशय, वर्गीकरण के सिद्धान्त आदि का सूक्ष्म विवेचन किया है। तत्पश्चात् दूसरे अध्याय मे लेखक ने सामाजिक उपन्यासो का विवेचन प्रस्तुत किया है। सामाजिक उपन्यासकारो मे लेखक ने अमृतलाल नागर, उदयशकर भट्ट, फणीश्वरनाथ रेणु और धर्मवीर भारती को प्रमुखता दी है क्योंकि इनके उपन्यासों मे उसे सामाजिक चेतना के दर्शन हुए हैं। इन सबका विवेचन वस्तु-विधान, चरित्र-विधान और उद्देश्य के आधार पर किया गया है।

तीसरा अध्याय समाजवादी उपन्यासों की विवेचना प्रस्तुत करता है। इस वर्ग के उपन्यास समाज के वर्ग-सघर्ष की उपज हैं और इनके लेखकों का लक्ष्य वर्गहीन समाज की स्थापना को प्रोत्साहित करना है। इनके उपन्यासकार यशपाल, रांगेयराघव, नागार्जुन, भैरवप्रसाद गुप्त और अमृतराय प्रमुखता से विवेचित हुए हैं। लेखक की परख-दृष्टि वस्तु-विधान, चरित्र-विधान और उद्देश्य को ही लेकर चली है। इस वर्ग के उपन्यासो के वस्तु-विधान और चरित्र-विधान-कौशल में भेद दिखलाते हुए भी लेखक ने इनके उद्देश्य की एकता सिद्ध की है।

चौथा अध्याय 'समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास' से सम्बंधित है। इसके अन्तर्गत मनोविश्लेषणात्मक विशेषताओ की विवेचना की गयी है। मैं नहीं समझता कि 'समाजपरक' पद को जोडकर लेखक किस अतिरिक्त आशय को व्यक्त करना चाहता है जो मनोविश्लेषणात्मक पद से व्यक्त नहीं होता। साहित्य की कोई विधा समाज से अलग करके नहीं लिखी जा सकती। मनोविश्लेषण शब्द स्वयं समाजपरक होता है। उसका व्यक्ति और समाज से सम्बधित होना आवश्यक है। यह ठीक है कि मनोवैज्ञानिक और मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे भेद होता है। एक की लेखन धरा मनोविज्ञान में निहित होती है और दूसरे की मन के विश्लेषण में। कुछ

आलोचक भेदीकरण के इस पहलू की उपेक्षा कर देते है, किन्तु यह उपेक्षणीय नहीं है। इस वर्ग के प्रमुख उपन्यासकार इलाचन्द्र जोशी है।

पांचवा अध्याय 'समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास' से सम्बद्ध है। चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, अमृतलाल नागर, रांगेयराघव और हजारीप्रसाद द्विवेदी इस वर्ग के प्रमुख उपन्यासकार हैं। यह वर्ग उन उपन्यासों को प्रस्तुत करता है जिनकी कथावस्तु या पात्रो की निर्मिति में इतिहास की धरा रही है। कहीं-कहीं ऐतिहासिक वातावरण से भी इतिहास को प्रस्तुत किया गया है, फिर भी आधुनिक समाज की झलकियां उभरे बिना नहीं रही हैं। इस प्रकार लेखको के हाथो मे समाज और इतिहास का गठबंधन हुआ है।

छठे और सातवें अध्याव मे लेखक ने 'व्यक्तिपरक और व्यक्तिवादी' धाराओं का अलग-अलग विश्लेषण और विवेचन प्रस्तुत किया है और आठवें अध्याय में 'व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की विवेचना की गयी हैं। यह कहने की आवश्यशता नहीं कि मनोविश्लेशण व्यक्तिपरक भी हो सकता है और समाजपरक भी। समाजपरक मनोविश्लेषण मे लेखक समाज को सामने रखता है और व्यक्तिपरक मनोविश्लेषण मे व्यक्ति को। यह सूक्ष्म अतर इस कृति के रचयिता की सूझबूझ की विशेषता है।

अतिम अध्याय 'व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास' का है। मेरी दृष्टि में इतिहास युग का होता है, व्यक्ति का नहीं। इतिहास मे भी ऐसी बहुत सी कृतियां हैं, जैसे 'अकबर महान्' किन्तु वे या तो अकबर आदि के युग को प्रशस्त करती हैं या व्यक्ति विशेष के जीवन को। व्यक्ति विशेष के जीवन को प्रस्तुत करने वाली कृतियो को ऐतिहासिक कृति नाम देना भूल होगी।

जो हो अपने समग्र रूप मे यह अध्ययन साहित्य के विद्यार्थी के लिये बहुत उपादेय है। यदि इस कृति मे विवेचन के आधारो का पुनरावर्तन न होता तो उसकी गठन कुछ अधिक चमक उठती। लेखक ने वस्तु, चरित्र और उद्देश्य को प्रत्येक कृति के सम्बन्ध से दोहराया है। वह एक ही बार पूरे वर्ग की सामान्यताओ का अधीक्षण और विश्लेषण कर सकता था; फिर भी आगे के लेखक इसको देखकर अपनी भूल का सुधार कर सकते हैं।

लेखक ने प्रशंसनीय अध्यवसाय से इस कृति को तैयार किया है। इससे उपन्यास साहित्य के अध्येताओं के अध्ययन को बडी प्रेरणा मिलेगी। मै आशा

करता हूँ कि डॉ० लोढ़ा अपने इस अध्ययन को आगे के अध्ययन की प्रथम कड़ी के रूप में ही समझेंगे। वे इसे न तो अल्प विराम समझ सकते हैं और नहीं पूर्ण विराम। मैं उनके प्रयास और उपलब्धि पर उन्हें साधुवाद देता हूँ।

जयपुर
२१–३–७२

डॉ० सरनामसिंह शर्मा 'अरुण'
आचार्य एवं अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर

विषय-सूची

प्रथम–खण्ड

उपन्यास का सैद्धान्तिक विवेचन

द्वितीय-खण्ड

समाजसापेक्ष उपन्यास

तृतीय-खण्ड

व्यक्तिसापेक्ष उपन्यास

परिशिष्ट

विषय-प्रवेश

हिन्दी उपन्यास साहित्य का अनुशीलन अनेक दृष्टियो से अबतक हुआ है। अनुसन्धान के क्षेत्र मे हिन्दी उपन्यास के विभिन्न क्षेत्रो पर कार्य किया गया है किन्तु इन पन्द्रह वर्षों मे हिन्दी उपन्यास कितना विकास की ओर उन्मुख हुआ है, उसका व्यवस्थित विवेचन शोध ग्रन्थो में भी उपलब्ध नही है। इन पन्द्रह वर्षों के उपन्यासो का आंशिक विवेचन केवल निम्नलिखित तीन प्रकाशित शोध ग्रन्थो में उपलब्ध है :

(१) **डा० सुषमा धवन**
हिन्दी उपन्यास : (प्रेमचन्द और उत्तर प्रेमचन्द काल : प्रवृत्तियाँ : १९५५ तक) प्रथम सस्करण, १९६१, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।

(२) **डा० गणेशन**
हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन (पाश्चात्य उपन्यासो से तुलना सहित) प्रथम सस्करण, १९६०, दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स।

(३) **डा० श्रीनारायण अग्निहोत्री**
हिन्दी उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन
प्रथम संस्करण, १९६१, आगरा, सरस्वती पुस्तक सदन।

डा० सुषमा धवन ने अपने शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी उपन्यास' (प्रेमचन्द और उत्तर प्रेमचन्द काल) मे १९५५ तक के उपन्यासो का विवेचन, सामाजिक, व्यक्तिवादी, मनोविश्लेषणवादी, समाजवादी और ऐतिहासिक उपन्यास के अध्यायो के अन्तर्गत किया है। डा० सुषमा धवन अपने शोध-प्रबन्ध मे भ्रामक मान्यताओ को लेकर चली हैं जिसका निराकरण प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध मे किया गया है। डा० नन्ददुलारे वाजपेयी ने अज्ञेय और जैनेन्द्रकुमार की कृतियो को

व्यक्तिवादी घोषित किया है क्योंकि अज्ञेय और जैनेन्द्रकुमार वस्तुतः व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं किन्तु डा० सुषमा धवन ने इनको मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे स्थान दिया है। मनोविश्लेषण और व्यक्तिवाद स्पष्ट रूप से दो अलग विचारधारायें हैं। इस शोध प्रबन्ध की लेखिका ने व्यक्तिवादी चेतना की आत्मकेन्द्रित स्थिति को मनोविश्लेषण माना है। मनोविश्लेषण अचेतन मन का विश्लेषण है और व्यक्तिवाद व्यक्ति-दर्शन। डा० धवन ने भगवतीचरण वर्मा और उपेन्द्रनाथ अश्क के उपन्यासो को व्यक्तिवादी उपन्यास घोषित किया है जबकि उनमे समाजसापेक्ष व्यक्ति चेतना है। मैंने इन उपन्यासकारों को 'व्यक्तिपरक उपन्यास' मे स्थान दिया है क्योंकि जहां अज्ञेय और जैनेन्द्र के उपन्यासो को स्थान मिला है, वहा भगवतीचरण वर्मा और अश्क के उपन्यास कैसे स्थान पा सकते हैं ? 'अज्ञेय' और जैनेन्द्र ने समाज से असम्पृक्त व्यक्तियों का चित्रण किया है किन्तु 'वर्मा' और 'अश्क' के पात्र समाज से असम्पृक्त नहीं हैं। इसमें लेखिका ने मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास और मनोवैज्ञानिक उपन्यास का समान अर्थ में प्रयुक्त किया है, जो भ्रामक है।

डा० गणेशन ने अपने शोध प्रबन्ध 'हिन्दी उन्यास साहित्य का अध्ययन' (पाश्चात्य उपन्यास से तुलना सहित) मे उपन्यास और उसका महत्व, उपन्यास के विकास की रूपरेखा (हिन्दी एवं पश्चिमी), वस्तु-विधान, उपन्यास और समाज, चरित्रचित्रण, उपन्यास मे मनोविज्ञान, यथार्थ, आदर्श और उससे सम्बन्धित वाद और मूल्याकन के अलग-अलग अध्यायो में विभक्त है इसलिए अलग-अलग उपन्यासकारो के अलग-अलग उपन्यासो के व्यवस्थित विवेचन का इसमे अभाव है। आवश्यकतानुसार डा० गणेशन की मान्यताओ के खण्डन-मण्डन की आवश्यकता मुझे प्रतीत हुई है।

डा० श्रीनारायण अग्निहोत्री ने अपने शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी उपन्यास का शास्त्रीय विवेचन' मे अध्यायो का विभाजन निम्नलिखित प्रकार से किया है :

(१) विषय प्रवेश : हिन्दी शब्द के विभिन्न अर्थ, उपन्यास शब्द की व्याख्या, उपन्यास का प्रारम्भ, उपन्यास का महत्व

(२) उपन्यास शब्द की व्याख्या, लक्षण, स्वरूप एव प्रादुर्भाव

(३) उपन्यास साहित्य के अन्य अग

(४) उपन्यास के प्रेरक तत्व

(५) उपन्यास के तत्व

(६) उपन्यासकार और उपन्यास-तत्व

(७) प्रेषणीयता की अनुभूति और पाठक

(८) हिन्दी उपन्यासो का वर्गीकरण

(९) उपन्यास का भविष्य और हिन्दी उपन्यास की सम्भावनायें ।

वस्तुतः यह प्रबन्ध हिन्दी उपन्यासों का शास्त्रीय विवेचन न होकर उपन्यास साहित्य का शास्त्रीय विवेचन हो सकता है, क्योकि केवल अन्तिम दो अध्यायों मे हिन्दी उपन्यासो की चर्चा विवेचना हुई है और हिन्दी उपन्यासो के भविष्य की सम्भावनायें बताई हैं किंतु हिन्दी उपन्यासो की व्यवस्थित विवेचना नही की है। परम्परागत वर्गीकरण के आधार पर उपन्यासो के कितने ही वर्गीकरण प्रस्तुत किये हैं जैसे—(१) वर्ण्य वस्तु के आधार पर (२) ढांचे की दृष्टि से, (३) कथावस्तु के स्वरूप और तथ्य के अनुसार, (४) क्रिया-कलाप की दृष्टि से, (५) उपन्यास सगठन के अनुसार, (६) चरित्रचित्रण की दृष्टि से, (७) शैली की दृष्टि से, (८) उद्देश्य की दृष्टि से, (९) जीवन के प्रति दृष्टिकोण के विचार से, (१०) साधारण जनदृष्टि से और (११) ऐतिहासिक दृष्टिकोण से और वर्ण्य विषय के प्रति दृष्टिकोण के विचार से। अतः विविध दृष्टिकोण, जटिलताओ और उलझनो से भरे हुए हैं और ये व्यक्ति और समाज के प्रश्न को लेकर प्रवृत्तिमूलक वर्गीकरण नही है। इनमें से एक वर्गीकरण को आधार मानकर हिन्दी उपन्यासो का विवेचन करना असम्भव प्रतीत होता है, अतः इस शोध प्रबन्ध मे व्यक्ति और समाज को लेकर प्रवृत्तिमूलक वर्गीकरण के आधार पर हिन्दी उपन्यासो के विवेचन की समस्या को पूरा करने का प्रयास किया गया है।

अतः इस सदर्भ मे यह शोध-प्रबन्ध एक अभाव की पूर्ति के लिए विनम्र प्रयास है।

'शास्त्रीय विवेचन' शब्द इस विधा के लिए नया शब्द रहा है। इस शब्द को लेकर विद्वानों ने अपने पत्रो मे अपने मतव्य प्रकट किए हैं।[1] मैंने 'शास्त्रीय विवेचन' का अर्थ साहित्य-शास्त्रीय और मानव-शास्त्रीय विवेचन माना है। मानव-शास्त्रीय विवेचन का अभिप्राय—मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक और समाजशास्त्रीय विवेचन से है: मानवशास्त्रीय-विवेचना के सभी पहलुओं की विवेचना हर उपन्यास मे आवश्यक नही मानी गई है। व्यक्ति और समाज को लेकर उपन्यासो का मानवशास्त्रीय वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। व्यक्ति और समाज को लेकर दो प्रवृत्तियां समान रूप से चल रही है। मनो-

१. परिशिष्ट, पृ० २८८-२९३।

विज्ञान के क्षेत्र मे मनोविश्लेषण, और दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में अस्तित्ववाद और समाजवाद ने व्यक्ति और समाज को प्रभावित किया। मनोविश्लेषण में भी व्यक्ति और समाज की यह दो प्रवृत्तियां दृष्टिगत हुई हैं और ऐतिहासिक उपन्यास भी व्यक्ति और समाज से उपेक्षित नही रहे हैं। अनेक उपन्यास मनोविश्लेषण और दर्शन के प्रभाव से आक्रान्त नहीं है। साहित्यशास्त्रीय विवेचन मे साहित्यशास्त्र या काव्यशास्त्र को यहां विचारार्थ लाना व्यर्थ है। केवल उपन्यासों के विवेचन के ढांचे की प्रेरणा इनसे लेकर हर उपन्यास का वस्तु, चरित्र और उद्देश्य का विवेचन किया गया है क्योकि इन तीन तत्वों का स्थानापन्न वस्तु, नेता और रस के स्थान पर सहज ही किया जा सकता है।[1] प्रारम्भ मे विवेचन के पहले सार रूप मे उपन्यास की कथा दी है क्योकि वह बताती है कि उपन्यास मे क्या है? वस्तु-विधान मे वस्तु-संगठन, चरित्र-विधान मे मुख्य पात्रो की मुख्य विशेषताओ को बताकर विकसनशीलता-अविकसनशीलता और बद्धता-मुक्तता को बताया गया है। उद्देश्य मे उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट किया गया है और अन्त में वर्गीकृत श्रेणी मे स्थान देने का कारण बताया गया है।

हिन्दी उपन्यासों के विवेचन मे चयन का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण रहा है। जिन उपन्यासो का प्रकाशन हल्के मनोरंजन, धन प्राप्ति या मतवाद के प्रचार के लिए हुआ है, उनको यहां इस प्रबन्ध मे स्थान नही दिया गया है। इस श्रेणी के उपन्यासो को वाल्टेर एलेन के अनुसार "उपभोक्ता की वस्तु" या "फुटपाथ के उपन्यास" कह सकते हैं। इस विवेच्यकाल मे विपुल उपन्यासों की रचना हुई है इसलिए एक लेखक की अधिक रचनाएं होने पर महत्वपूर्ण कृतियो के अतिरिक्त शेष उपन्यासो को 'अन्य उपन्यास' के अन्तर्गत स्थान दिया गया है। यह भी हो सकता है कि नगण्य उपन्यास छूट गये हो जिसके लिए प्रस्तुत प्रबन्ध लेखक क्षमाप्रार्थी है।

प्रस्तुत प्रबन्ध तीन खण्डो मे विभाजित है और तीन खण्ड एक, चार, चार के क्रम से नौ अध्यायों मे विभाजित हैं। प्रथम खण्ड मे "उपन्यास का सैद्धान्तिक विवेचन"—उपन्यास की व्युत्पत्ति, परिभाषा, स्वरूप, तत्व, शास्त्रीय विवेचन और वर्गीकरण है। सैद्धान्तिक-विवेचना मे यथासम्भव पिष्टपोषण से बचने का प्रयत्न किया गया है। इस अध्याय के अन्त में प्रवृत्तिमूलक वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है और जिसके आधार पर अन्य अध्यायो में क्रमबद्ध रूप से उपन्यासो की विवेचना की गई है।

---

१. प्रस्तुत प्रबन्ध, पृ० १-२६

इस प्रबन्ध का दूसरा खण्ड "समाजसापेक्ष उपन्यास" खण्ड है। अत. इस प्रबन्ध का दूसरा अध्याय सामाजिक-उपन्यास है जिसमे सामाजिक उपन्यास की विशेषताओ को बताकर कुछ सामाजिक उपन्यासो की, उपन्यासकारो के क्रम से कथा, वस्तु-विधान, चरित्र-विधान और उद्देश्य के आधार पर विवेचना और अन्त मे सभी रचनाओं का सर्वेक्षण प्रस्तुत किया गया है। प्रबन्ध का तीसरा अध्याय समाजवादी उपन्यास है, जिसमे समाजवादी उपन्यासो की विशेषता बताकर समाजवादी उपन्यासो की विवेचना की गई है। इस प्रबन्ध का चतुर्थ अध्याय समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक अध्याय है, जिसमे मनोविश्लेषणात्मक को स्पष्ट कर, व्यक्तिपरक और समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों के बीच अन्तर बताकर, समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की विवेचना की है। इस प्रबन्ध का पाचवा अध्याय समाजपरक ऐतिहासिक है जिसमें व्यक्तिपरक और समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासों के बीच अन्तर स्पष्ट करके इस श्रेणी के उपन्यासो की विवेचना की गई है।

इस प्रबन्ध का तीसरा खण्ड व्यक्तिसापेक्ष उपन्यास खण्ड है। इस प्रबन्ध का छठा अध्याय व्यक्तिपरक उपन्यास है, जिसमे व्यक्तिपरक उपन्यास और व्यक्तिवादी उपन्यास की विशेषताएं बताकर व्यक्तिवादी उपन्यासो की विवेचना की गई है। इस प्रबन्ध का आठवा अध्याय व्यक्तिपरक मनोविशेषणात्मक उपन्यास है जिसमे व्यक्तिपरक-मनोविश्लेषणात्मक-उपन्यास की विशेषताए बताकर इस श्रेणी के उपन्यासो का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस प्रबन्ध का नवम और अन्तिम अध्याय "व्यक्तिपरक-ऐतिहासिक-उपन्यास" है जिसमे व्यक्तिपरक ऐतिहासिक-उपन्यासो की विशेषताए बताकर, व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो की विवेचना प्रस्तुत की गई है।

परिशिष्ट चार भागो मे विभक्त है। (क) भाग मे दो सहयोगी-उपन्यासो 'ग्यारह सपनो का देश' और 'एक इंच मुस्कान' की विवेचना प्रस्तुत की गई है क्योकि एक से अधिक लेखको के कथाप्रयोग होने के कारण इनको निर्धारित वर्गीकरण की सीमा मे स्थान देना असम्भव जान पडा है। (ख) भाग उपसहार है। इसमे इस विवेच्यकाल की 'उपलब्धियाँ' और 'उपन्यास का भविष्य' विषय पर विचार प्रकट किया है। (ग) भाग मे विद्वानो के कतिपय पत्रो को स्थान दिया है जो प्रस्तुत प्रबन्ध-लेखक को, शोध-प्रबन्ध के सम्बन्ध मे अनुसन्धान काल मे प्राप्त हुए। (घ) भाग विवेच्य-पुस्तक सहायक-पुस्तक, संदर्भ-पुस्तक और पत्र-पत्रिकाओ की सूचिया हैं, जिनसे प्रस्तुत प्रबन्ध-लेखक को इस प्रबन्ध लेखन में सहायता मिली है।

श्रद्धेय डा० चन्द्रप्रकाश सिंह हिन्दी विभागाध्यक्ष, जोधपुर विश्वविद्यालय के प्रेरणास्पद आशीर्वाद के फलस्वरूप यह प्रबन्ध प्रस्तुत हो सका है। श्रद्धेय डा० नित्यानन्द शर्मा के विद्वत्तापूर्ण निर्देशन मे यह प्रबन्ध तैयार किया गया है और डा० सा० ने शोध की वैज्ञानिक पद्धति से परिचित कराकर मुझे अमूल्य निर्देश दिये हैं, जिसके लिए मैं कभी उऋण नही हो सकता। सर्व श्री कल्याणमल लोढा, डा० प्रभाकर माचवे और डा० रघुवश के प्रति पत्रो द्वारा उनके सुझावो और प्रेरणा के कारण, हार्दिक आभार प्रकट करता हू। श्री जैनेन्द्रकुमार, यशपाल और राजेन्द्र यादव को भी उनके पत्रोत्तर के लिए आभार प्रकट करता हूं। इस सदर्भ मे मेरे अग्रज श्री प्रकाश जैन, सम्पादक 'लहर' अजमेर, के स्नेह का मैं कायल हूँ। 'लहर' कार्यालय से मुझे इस विवेच्यकाल के अधिकाश उपन्यासो, सहायक पुस्तको और विपुल पत्र-पत्रिकाओ की सामग्री उपलब्ध हुई, जिसका मैंने साधिकार प्रयोग किया। आदरणीय डॉ० सरनामसिंह शर्मा 'अरुण' का भी मैं विशेष आभारी हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर 'दो शब्द' लिखने की कृपा की है। अत मे, मैं उन सब लेखको का आभारी हू जिनके उपन्यासो का विवेचन किया है और जिनकी पुस्तको और रचनाओ का उपयोग इस शोध—प्रबन्ध मे किया गया है।

महावीरमल लोढ़ा

उपन्यास जीवन का सृजन है

उपन्यास जीवन की अभिव्यक्ति, आलोचना, व्याख्या और टिप्पणी नहीं, जीवन का सृजन है। 'उपन्यास जीवन का पुन.सृजन है क्योकि जो यथार्थ जीवन मे नही है, वह प्रकट हो जाता है, जिसको हम टिप्पणी, एक दृष्टि और एक मूल्याकन कहते हैं।[1]' यह यथार्थ का दिग्भ्रम न होकर जीवन का सृजन है क्योकि 'भ्रम का सुख सृजन के सुख से कम होता है।'[2] उपन्यासकार केवल निरीक्षक नही किन्तु काल्पनिक जीवन का सर्जक है।'[3] डी. एच. लारेंस के अनुसार कला का विषय वह जीवन है, जो मृत्यु का अजन्मा शरीर है[4] क्योकि उसका जन्म नही हुआ है। उपन्यासकार भी उपन्यास मे ऐसे ही जीवन का सृजन करता है और उपन्यास का यह सृजन कलात्मक होना चाहिये। कला केवल जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति, आलोचना, व्याख्या, टिप्पणी और व्यग नही, जीवन का सृजन है। उपन्यासकार 'किसी उपन्यास का निर्माण उसी तरह करता है जैसे एक चित्रकार चित्र का सृजन करता है।[5]' प्रतिकृति किसी कला के मूल्याकन का मानदण्ड नही बन सकती है।[6]।

---

१ ए. डब्लू. लीगेट : द आइडिया इन फिक्शन, पृष्ठ १२–१३।
"इट इज ए रिक्रीएशन ऑफ लाइफ इन सच ए मैनर, दैट समथिंग विच इज नोट प्रेजेन्ट इन रियल लाइफ, मैनीफैस्ट्स इटसैल्फ—समथिंग वी मे कॉल ए कमेंट, ए जजमेंट ए गेसचर, ए वेलुएशन"।

२. पर्सि लुबोक : क्राफ्ट ऑफ फिक्शन . (१९६५), पृष्ठ २३।
"बट द प्लीजर ऑफ इलूजन इज स्माल बिसाइड्स द प्लीजर ऑफ क्रीएशन"।

३ फ्रान्सिस मारिस : नॉवलिस्ट्स ऑन द नॉवल्स : मेरियम अलॉट पृष्ठ ८०।
"नॉवलिस्ट इज नोट एन ऑबजर्वर बट ए क्रेटर फिक्टिशन्स लाइफ"

४. एच डब्लू लिगेट : द आइडिया इन फिक्शन : पृष्ठ १८–१९।
"डी. एच लॉरेन्स डिस्क्राइब्स—एज दैट अनबोर्न बोडी ऑफ दिस हाफ डैथ ह्विच वी काल लाइफ, दैट प्रोड्यूसेज द मैटेरियल ऑफ आर्ट"।

५. रिचार्ड स्टैंग : द थ्योरी ऑफ नावल इन इंगलैड (१९६१), पृष्ठ ११

६. लियो टॉल्स्टॉय . व्हाट इज आर्ट, पृष्ठ ७५।
"लिमिटेशन कैननोट सर्व एज ए स्टैण्डर्ड ऑफ वेल्यूज ऑफ आर्ट"।

कला ने अब तक केवल 'प्रतिकृति, कल्पना और अभिव्यक्ति'[1] का सहारा लिया किन्तु अब यह सृजन की स्थिति तक पहुच गई है। प्रतिकृति-वादियो ने कला को प्रतिकृति, कल्पनावादियो ने कल्पना, अभिव्यक्तिवादियो ने अभिव्यक्ति, अन्त: करणवादियो ने अन्त.करण, यथार्थवादियो ने यथार्थ का भ्रम, किन्तु कला इन स्थितियो को पार करती हुई सृजन की स्थिति तक आ पहुची है। यह मानना ठीक है कि कलाकार का निर्णय उसकी भावना से न होकर उसके सृजन से होता है।[2] वस्तुत यह कहा गया है कि सृजन का अर्थ नयेपन से है और सौंदर्यशास्त्र सृजन का आधार निश्चित करता है।[3] सभी कलाओ की मूल प्रवृत्ति सृजन है। सगीतकार उन रागरागीनियो का सृजन करता है जो सुनने मे अच्छी लगती है, कवि और साहित्यकार उन सृजन के लिए प्रेरित होते हैं जो पढने मे अच्छे लगने हैं। चित्रकार, मूर्तिकार उनके सृजन के लिए प्रेरित होते हैं जो देखने मे अच्छे लगने हैं।[4] अत. उपन्यास भी कला है। एक लम्बे समय तक उपन्यास को कला मानने से इन्कार किया जा रहा था इसलिए हैनरी जेम्स को कहना पडा कि कथा—साहित्य ललित कला ही है और उपन्यास को कलात्मक होना चाहिये।[5] कला केवल जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति, आलोचना, व्यग और टिप्पणी नही है। कला जीवन का सृजन है इसलिए उपन्यास भी जीवन का कलात्मक सृजन है। यह ठीक है कि कला के नियम और कानून उपन्यास पर भी लागू होते हैं।[6] जिस तरह कला

---

१. डैगोवर्ट डी. रून्स ट्वन्टियथ सैन्चुरी फिलॉसफी (१९४७), पृ० ४३।

२ लियो टॉल्स्टॉय : व्हाट इज आर्ट (मास्टर पीसेज ऑफ वर्ल्ड फिलॉसफी) पृष्ठ ७२४।
एन आर्टिस्ट इज नोट जज्ड बाइ हिज फीलिंग, बट बाइ हिज क्रेशन।

३. मोरिस आइ स्टेन एण्ड शर्ली जे हेइग : क्रीटिंग एण्ड द इंडिविजुअल (१९६०) पृष्ठ ७।

४. सी. जे. होल्मस ए ग्रामर ऑफ आर्ट्स (१९४६) पृष्ठ ५।
क्रीशन इज़ द प्राइमरी इम्पल्स ऑफ आल आर्ट्स। दी म्यूजिसियन इज़ इन्सपायर्ड टू क्रीट थिंग्स दैट आर गुड टू हियर, द पीयट अैण्ड द मैन ऑफ लैटर आर इन्सपायर्ड टू क्रीएट थिंग्स व्हिच आर गुड टू रीड। द पेण्टर, स्कल्पटर अैण्ड द क्राफ्ट्समैन आर इन्सपायर्ड टू क्रीएट थिंग्स व्हिच आर गुड टू सी।

५. हेनरी जेम्स : द हाउस ऑफ फिक्शन (१९५७), पृष्ठ २६–२७।

६. पर्सी लुबोक : क्राफ्ट ऑफ फिक्शन (१९६५), पृष्ठ १०।
दलॉज़ ऑफ आर्ट, देअरफोर, अेप्लाइ टू दिस ओबजेक्ट ऑफ आवर स्क्रुटिनी, दिस नॉवल।

जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति और व्याख्या को पार करती हुई जीवन के सृजन के लक्ष्य पर पहु च गई है, उसी तरह उपन्यास मे भी जीवन की अभिव्यक्ति, व्याख्या और आलोचना न मानकर, जीवन का सृजन मानना चाहिये। साहित्य की अन्य विधाओ–महाकाव्य, नाटक और गीत को कला माना जाता है और जीवन का सृजन उनमे होता है, वही स्थिति उपन्यास–कला की है।

उपन्यास गद्यमय–महाकाव्य है

उपन्यास,साहित्य की अन्य विधाओ से जो सबसे अधिक निकट हैं,वे महाकाव्य और नाटक हैं। साहित्य मे उपन्यास के समीप महाकाव्य हैं,इसलिए उपन्यास को 'गद्यमय महाकाव्य' (एपिक इन प्रोज)[१] कहा गया है। उपन्यास और महाकाव्य में घटनाओ का विशेष क्रम होता है जिमे दोनो ही रचनाकारो को मानना पड़ता है। दोनो ही विधाएं वर्णन-प्रधान और विषय प्रधान हो सकती हैं और दोनो की कथा शृखलाबद्ध होती है। इतना होने पर भी दोनो के वस्तु-विधान, चरित्र-विधान और उद्देश्य मे अन्तर है। विषय की व्यापकता की दृष्टि से उपन्यास खण्डकाव्य और गीतकाव्य की अपेक्षा महाकाव्य से अधिक निकट है। उपन्यास के गद्यमय-महाकाव्य होने के कारण एक लम्बे समय तक उपन्यास के लिए 'शास्त्रीय-महाकाव्य सिद्धान्त'[२] की चर्चा हुई। महाकाव्य के शास्त्रीय सिद्धान्तो को उपन्यास-शास्त्र का आधार बनाया जा सकता है।

उपन्यास नाटकीय कविता है

उपन्यास महाकाव्य की तरह नाटक के भी अधिक निकट है। नाटक और उपन्यास के मूलतत्व महाकाव्य की तरह एक ही है। यह कहा गया है कि 'नाटक की सीमाए चरित्र को अभिव्यक्त करने मे असमर्थ थी, इसलिए उपन्यास का जन्म हुआ। उपन्यासकार और नाटककार एक ही पथ के पथिक हैं।' यह निश्चित किया गया कि नाटक और उपन्यास के रचना-विधान के मानदण्ड निर्धारित करने चाहिये।[३] नाट्यशास्त्र उपन्यास-शास्त्र का आधार बन गया, इसलिए 'उपन्यास के लिए नाटकीय सिद्धान्तो[४]' की चर्चा हुई।

---

१ डब्लू एच. हडसन : एन इन्ट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ लिटरेचर (१९५४), पृष्ठ १३०।

२. रिचार्ड स्टग द थ्योरी ऑफ नॉवल इन इगलैंड (१९६१), पृ० ११२

३. वही' पृ० १२२।

४ वही, पृ० १२२।

उपन्यास और नाटक अलग अलग विधाए है किन्तु उपन्यास का उद्भव नाटक से हुआ है इसलिए उपन्यासो के विवेचन के लिए नाट्य शास्त्र को आधार बनाया जा सकता है।

उपन्यास का उद्भव केवल नाटक के द्वारा नही हुआ है किन्तु महाकाव्य, नाटक, गीत और निबन्ध सभी विधाओ ने उपन्यास के उद्भव मे सहायता की। उपन्यास नयी विधा है, जो सबका समूह और सबका सारांश है। यह सबसे महान् साहित्यिक विधा है। विवरण के आधार पर महाकाव्य, चरित्राकन के आधार पर नाटक और भावनाओ के आधार पर गीत के समान है। अत. उपन्यास नाटक और कविता दोनो का सम्मिश्रण है इसलिए उपन्यास को 'नाटकीय-कविता' भी कहा गया है। उपन्यास मे काव्यपक्ष पर बल देने के लिए यहा तक कह दिया गया है कि 'बिना कवि हुए उपन्यासकार नही हो सकता है।'[1] उपन्यास नाटकीय-कविता है इसलिए नाटक और कविता के मानदण्डो और तत्वो के आधार पर उपन्यासो का भी विवेचन-विश्लेषण हो सकता है। नाटक और महाकाव्य के तत्वो के आधार पर उपन्यास के तत्वो की विवेचना होनी चाहिये।

उपन्यास के तत्व

उपन्यास घटनाओ को लेकर चलता है, जो पात्र या नाटकीय व्यक्तियो के जीवन मे घटित होता है; वे नाटकीय-व्यक्ति वार्त्तालाप करते हैं; यह कार्य और यह चरित्र किसी विशेष समय अथवा स्थान पर घटित होता है; उसकी अपनी शैली होती है, और वह किसी निश्चित जीवन-दर्शन को अभिव्यक्त करता है। अत 'वस्तु, चरित्र, वार्त्तालाप, कार्य का समय और स्थान, शैली और जीवन दर्शन उपन्यास के मुख्य तत्व माने गए हैं।[2]'

पाश्चात्य दृष्टि से नाटक के छ तत्व माने गए हैं—वस्तु, पात्र, सवाद, देशकाल, शैली और उद्देश्य। भारतीय आचार्यों ने रूपक के तीन तत्व माने हैं—वस्तु, नेता और रस। इन छ; तत्वो का भारतीय-तत्वो मे समावेश किया जा सकता है। वस्तु तत्व समान है। पात्र तत्व और नेता तत्व मे वस्तुत अन्तर नही है। नाटक मे नेता का स्थान प्रमुख माना गया था, किन्तु उपन्यास मे अनेक पात्रो के चरित्र, किसी निश्चित उद्देश्य की उपलब्धि की प्राप्ति

---

१. रिचार्ड स्टैंग : द थ्योरी ऑफ नावल इन इगलैंड (१९६१) पृ० १८।
२. डब्लू. एच. हडसन : एन इन्ट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ लिटरेचर (१९५४) पृ० १३१।

के लिए, विकसित होते है। भारतीय रस तत्व और पाश्चात्य 'उद्देश्य' तत्व मे भी कोई विशेष अन्तर नही है, अन्तर केवल दृष्टिकोण का है। सवाद और शैली उपर्युक्त भारतीय तत्वो के साधन है, तत्व नही।[1]' सवाद वस्तु-विधान के विकास चरित्र के सृजन और उद्देश्य की उपलब्धि मे सहायक होता है। शैली विचारो और भावनाओ को व्यक्त करने की एक पद्धति है। शैली का प्रयोग वस्तु-विधान के सगठन, चरित्राकन के चरित्राए और उद्देश्य की स्थापना के लिए होता है। भाषा भी शैली का ही एक रूप है। वस्तु और चरित्र के विकास के लिए किसी युग के आचार–विचार, वेशभूषा और रहन–सहन का ध्यान रखना पडता है। देशकाल के विरुद्ध वेशभूषा से रस के आस्वादन मे बाधा पडती है। देशकाल भी वस्तु, चरित्र और उद्देश्य की स्थापना मे सहायक होता है। अत वस्तु चरित्र और उद्देश्य उपन्यास के मूल तत्व हैं।

वस्तु, चरित्र और उद्देश्य तत्वो के आधार पर उपन्यासो का विवेचन विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है। उपन्यास मे भी सवेगात्मकता होनी चाहिये किन्तु शास्त्रीय दृष्टि मे उसे उपन्यास–रस नही कह सकते है, अत रस के स्थानापन्न के रूप मे 'उद्देश्य' शब्द ही समीचीन जान पडता है। वस्तु-विधान उपन्थास का शरीर तत्व, चरित्र विधान प्राणतत्व और उद्देश्य आत्मा तत्व है। शरीर के अभाव मे प्राणो का स्थान नही है और आत्मा भटकती है, उसी तरह वस्तु-विधान के अभाव मे उपन्यासकार अपने उपन्यास मे प्राणो का स्पन्दन और आत्माभिव्यक्ति नही कर सकता है। चरित्र-विधान के अभाव मे उपन्यास मे प्राणो का स्पन्दन नही हो सकता है और किसी निश्चित उद्देश्य के अभाव मे आत्माहीन मनुष्य के समान उपन्यास की स्थिति हो जाती है। अत उपन्यास मे देखना पडेगा कि 'क्या इसकी कहानिया कहानियों की तरह ठीक कही गई हैं? क्या इसके उपन्यास अनुपात और सन्तुलन से रचकर विकसित हुए हैं? क्या इसकी घटनाए सम्भव है? क्या वे नियति में सहायक होते है?[2] अत वस्तु-विधान, चरित्र-विधान और

---

१ मोहनवल्लभ पन्त · आलोचना शास्त्र · पृ० ६२।

२. हैलन मैकमोहन क्रिटिसिज्म ऑफ फिकशन . ए स्टडी ऑफ ट्रैंड्स इन दी अटलांटिक मथली (१६५२), पृ० ४१।
आर हिज सिम्पली अँज स्टोरीज वैल टोल्ड ?
आर हिज प्लॉट्स सिमोमेट्रिकल्ली कन्स्ट्रक्टेड एण्ड हारमनियसली एवोल्ड ? आर हिज इन्सीडेन्ट्स प्रोबेबिल ? एण्ड डू दे हैल्प इन द कैटैस्ट्रोफिक ?

उद्देश्य के आधार पर उपन्यास का विवेचन-विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है।

वस्तु-विधान

उपन्यास मे कथा के अभाव मे उपन्यास का अस्तित्व ही नही है। कहानी ही उपन्यास का विषय है। उपन्यास अन्ततः एक कहानी है, एक कहानी की तरह ताजी, दिलचस्प और कथनीय है।[1] उपन्यास मे कहानी प्रारम्भ से विकास की ओर बढती हुई, हर स्थिति का चित्रण करती हुई, अनावश्यक कथा-प्रसगो को छोडती हुई, अपना प्रभाव डालती हुई अन्त में लुप्त हो जाती है। उपन्यास मे कथा का अर्थ घटनाओ के शृखलाबद्ध क्रम से है। उस कथा के प्रारम्भ, मध्य और अन्त मे पूर्णता नही चाहिये। उपन्यास गतिशील लेखन है इसलिए शिल्प मे परिवर्त्तन के कारण कथा की धारा क्षीण से क्षीणतर, और क्षीणतर से क्षीणतम हो रही है।

कथा मे घटनाओ की शृखलाबद्ध अभिव्यक्ति होती है किन्तु उपन्यास मे घटनाओ की शृखला यथेष्ट नही है। उपन्यासकार किसी विशेष योजना की दृष्टि के आधार पर कथा को सगठित करता है, घटनाओ को विशेष क्रम से रखता है और इस विशेष योजना को वस्तु कहते है। उपन्यासकार जीवन के बिखरे सूत्रो को एकता मे पिरो देता है। जीवन के विशृखलित सूत्रो को एक विशिष्ट योजना मे पिरोने से वह वस्तु-अन्विति की रक्षा करता है। अत कथा मे घटनाओ की मात्र शृखला होती है किन्तु वस्तु-विधान इन घटनाओ के बीच कार्यकारण सम्बध[2] स्थापित करता है।

उपन्यासकार उपन्यास की घटनाओ को विशेष क्रम से सजाता है। कथाए और उपकथाए लगातार चलती रहती हैं, किन्तु उनमे अन्विति होनी चाहिये। कथाओ मे शृखला नही होगी तो कथानक का ढांचा उखडा उखडा लगेगा। कथानक का विकास निश्चित क्रम से होता है जैसे किसी पौधे का विकास[3] होता है। पहले पौधे का अकुर फूटता है, फिर कोपल फूटती हैं, छोटे छोटे पत्ते निकलते हैं और फिर तने और शाखाओ मे फैलकर घनीभूत हो जाता है उसी तरह उपन्यास की वस्तु का विकास होना चाहिये। उपन्यास

---

१. विलियम हेनरी हडसन : एन इन्ट्रोडक्शन टु द स्टडी ऑफ लिटरेचर (१९५४), पृ० १३६।
२. ई. एम फोरेस्टर : अस्पैक्ट्स ऑफ दी नाविल (१९५३), पृ० ८२।
३. रिचार्ड स्टंग . द थ्योरी ऑफ नाविल इन इंगलेंड (१९६१), पृ० ३४।

प्रारम्भ से लेकर अन्त तक लगातार गन्तव्य की ओर बढ़ता है; घटनाए और चरित्र दोनो मिलकर उसे विकास की ओर ले जाते है। वस्तुत., उपन्यास मे अन्विति नाटक की अन्विति से भिन्न नही है।

भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार 'नाटक का वस्तु-विन्यास कार्यावस्थाओ, अर्थ प्रकृतियो और सधियो के अनुरूप[1]' होता है। नाटक मे भी सधिपचक की योजना का अभिप्राय नाटक की समस्त कार्यराशि का परस्पर अगागि-भाव से सम्बद्ध होने से है।[2] उपन्यास की अन्विति का तात्पर्य भी 'अगागि-भाव' से है।

पश्चिमी आलोचको की दृष्टि मे भी अरस्तू के त्रय-सकलन के निर्वाह मे इस प्रकार की कठोरता का निर्वाह एक प्रकार से अव्यावहारिक ही रहा है। समय सकलन और स्थान सकलन को आवश्यक नही माना गया किन्तु कार्यसकलन को कुछ सीमा तक आवश्यक माना गया है। कार्यसकलन का अभिप्राय है कि नाटक मे किसी ऐसी घटना का समावेश नही होना चाहिये जिसका सम्बध नाटक की प्रमुख घटना से न हो। नाटककार का कर्त्तव्य है कि वह अपनी कृति के आदि मध्य और अन्त को एक अखण्ड समष्टि के रूप मे प्रस्तुत करे। इस सम्बध मे लोवेल का कथन है कि जिस तरह शरीर के एक अग का दूसरे अग से सम्बध है, उसी तरह का पारस्परिक सयोजन नाटक के विभिन्न भागो मे होना चाहिये।[3] कार्य सकलन तो नाटक मे आवश्यक माना गया किन्तु ड्राइडन ने समय और स्थान सकलन के सिद्धान्तो की धज्जिया उड़ाई। पीछे इब्सन की आधी मे यह सिद्धान्त रूई की भाति उड गए।[4] नाटक जैसी रूढिगत विधा ने भी समय और स्थान सकलन का मोह छोड़ दिया है, उसी प्रकार उपन्यास के लिए भी सीमित कार्य-सकलन की योजना अपेक्षित है। उपन्यास का कथानक पूर्ण इकाई होना चाहिये और उसकी घटनाए और चरित्र अपने लक्ष्य की ओर भागने चाहिये। यह कहा गया है कि 'उपन्यास घटनाओ की शृखलामात्र नही है, वह एक चित्र, एक

---

१ डा० गोविन्द त्रिगुणायत भारतीय नाट्य साहित्य . स० डा० नगेन्द्र, पृष्ठ २५।

२. वही, पृ० ४६।

३ डा० कन्हैयालाल सहल · भारतीय नाट्य साहित्य, डा० नगेन्द्र, पृ० १०६।

४. वही, पृ० १०७।

आलेख्य है जिसमे रूप, प्रचन और समानुविधान होना चाहिये, जैसा हर एक कला मे होता है।[1]' इस तरह उपन्यास की वस्तु मे 'अनुपात और सन्तुलन' होना चाहिये। यह अनुपात और सन्तुलन ही उपन्यास की अन्विति की रक्षा करता है। 'सम्पूर्ण उपन्याम मे नाटकीय ऐक्य न हो तो उसका अपकर्ष होकर असम्बद्ध घटनाओ के रूप मे उसका अपकर्ष हो जाएगा।[2]' जिन उपन्यासो मे नाटकीय ऐक्य न हो वहा चरित्र भी प्रभावशील नही होते हैं और उपन्यास अपने उद्देश्य की स्थाण्ना मे असफल हो जाता है। इतना होने पर भी कार्य-सकलन की एक सीमा होनी चाहिये। अरस्तू ने जिस अर्थ मे कार्य की एकता मानी है, वह अनावश्यक है। आवश्यकता 'विषय की एकता, भावना और रुचि की एकता की है।[3]'

चरित्र-विधान

वस्तु-विधान उपन्यास का शरीर तत्व है और चरित्र-विधान प्राण-तत्व। उपन्यासकार पात्रो मे प्राणो की चेतना फूकता है। उपन्यासकार निश्चित जीवनदृष्टि की स्थापना के लिए पात्रो का निर्माण करता है। 'उपन्यासकार का उद्देश्य पाटको को चरित्र से परिचित कराना है कि उसके मस्तिष्क के प्राणी बोलते हुए, घूमते हुए, जीवित मानव-प्राणियो की तरह दीखे। उनमे हर एक की गहराई और चौड़ाई, सकड़ापन और छिछलापन स्पष्ट दिखाई पड़े।[4]' उपन्यास के सजीव-पात्र ही उपन्यास मे प्राण फूकते हैं।

---

१. पर्सी लुबोक : क्राफ्ट ऑफ फिक्शन (१९६५), पृ० ९।
ए नॉवल इज ए पिक्चर, ए पोर्ट्रेट, एण्ड वी डू नोट फोरगेट दैट देअर इज मोर इन ए पोर्ट्रेट दैन द 'लाइकनैस'। फॉर्म, डिजाइन, कम्पोजिशन, आर टू बी सॉट इन ए नॉवल; एज इन ऐनी अदर वर्क ऑफ आर्ट।

२. वेसिल होगार्थ : द टैकनिक ऑफ नॉवल राइटिंग : पृ० ७८।

३. रिचार्ड स्टैंग द थ्योरी ऑफ नॉवल इन इंगलैंड (१९६१)पृ० १२४।
यूनिटी आफ एक्शन इन एरिस्टोटलिएन सैंस इज अननैसेसरी, ऑल दैट इज नैसेसरी इज यूनिटी ऑफ थीम...... ए नॉवल मस्ट हैव यूनिटी ऑफ फीलिग एण्ड इण्ट्रैस्ट।

४. रिचार्ड स्टैंग : द थ्योरी ऑफ नॉवल इन इगलैंड (१९६१) पृ ३३।
द एम ऑफ द नॉवलिस्ट मस्ट टू मेक हिज रीडर्स इन्टीमेटली एक्युऐनटेड विद हिज कैरेक्टर्स, दैट द क्रीएचर्स ऑफ हिज ब्रेन्स शुड बी टू दैम स्पीकिंग, मूविग, लिविंग ह्यूमैन क्रीएचर्स* द डैप्थ एण्ड द ब्रीथ, द नैरोनैस अंड द शैलो ऑफ ईच शुड़ बी क्लियर टू हिम।

उपन्यास का सैद्धान्तिक विवेचन

उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति

उपन्यास शब्द मे 'अस' धातु और 'नि' उपसर्ग है। 'नि' उपसर्ग और 'अस' धातु मिलाकर 'न्यास' शब्द बनता है। 'न्यास' शब्द मे 'उप' उपसर्ग है। 'उप' का अर्थ है 'पास रखा हुआ' इसलिए उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर इसका अर्थ हुआ 'पास रखी हुई धरोहर'[1]। उपन्यास शब्द 'अनेकानेक अर्थों[2]' मे प्रकट हुआ है किन्तु इसका एक अर्थ कल्पित या लम्बी कहानी है। उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति के सम्वध मे सभी अर्थों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपन्यास एक काल्पनिक कथा है, जो मानव के अधिक निकट है, उसकी धरोहर या अमानत है, मानवजीवन की प्रस्तावित रूपरेखा है, इसमे कथा के प्रमाण द्वारा किसी बात को प्रमाणित किया जाता है। 'उपन्यास' शब्द का अर्थ 'बात की लपेट'[3] भी है। अत: यह निश्चित है कि उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति से इसकी परिभाषा का विकास हुआ है। यो कहा जा सकता है कि उपन्यास के सही अभिप्राय को भारतीय–साहित्य मे, उसकी व्युत्पत्ति द्वारा समझ लिया गया है। मानवजीवन शब्द छुपा हुआ है। उपन्यास मे यथार्थ जीवन का चित्रण होता है इसलिए यह मानव–जीवन की

---

१ हिन्दी शब्द सागर (१९२९), पृ० ३४६।

२. सस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ (सन् १९५७), पृ० २४७।

(उप + नि अस + घज)

पास लाना। धरोहर, अमानत। प्रस्ताव। प्रमाण। वाक्य का उपक्रम। सधि का एक प्रकार। कल्पित या लम्बी कहानी।

३. हिन्दी शब्द सागर (१९२९), पृ० ३४६।

निकटतम विधा है। यह एक महत्वपूर्ण विधा है इसलिए इसे मानवजीवन की धरोहर या अमानत मानना चाहिये। उपन्यास मानव-जीवन की प्रस्तावित रूप रेखा है। उपन्यासकार जीवन के प्रति एक निश्चित दर्शन, उद्देश्य या लक्ष्य को लेकर चलता है और उसे अपनी कहानी के द्वारा प्रमाणित करता है। बात की लपेट' का अर्थ उपन्यास के शिल्प से है।

अंग्रेजी शब्द 'नावेल' की व्युत्पत्ति भिन्न आधार लेकर हुई है। इसकी व्युत्पत्ति लेटिन के 'नावेला' के आधार पर हुई है जिसका अर्थ है युवा और ताजी, जिसका निर्माण या सृजन अभी अभी हुआ है, जिसकी उपलब्धि नई है। नावेला का अर्थ एक ऐसी कहानी है जिसकी यथेष्ट लम्बाई हैं और उसमे उपन्यास की विशेषताए हो।[1] अंग्रेजी मे इसके नयेपन पर बल दिया गया है। अत अंग्रेजी और हिन्दी के आधार पर उपन्यास के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि उपन्यास काल्पनिक कथा की एक नई विधा है जो मानव जीवन की धरोहर है, 'बात की लपेट' मे मानव जीवन की प्रस्तावित और प्रमाणित रूप रेखा है। भारतीय साहित्य के अनुसार उपन्यास की व्युत्पत्ति अधिक स्पष्ट है।

'उपन्यास' की परिभाषा

उपन्यास की अनेकानेक परिभाषाए प्रचलित हैं, जिनमे दृष्टि की विभिन्नता स्पष्ट दृष्टिगत होती है। एक अंग्रेजी–कोश के अनुसार 'उपन्यास वर्णनात्मक काल्पनिक गद्य कथा है जिसकी यथेष्ट लम्बाई है (जो एक या अधिक खण्ड मे समा जाय) और उसके चरित्र और कार्य यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं और वे एक से अधिक या कम जटिल वस्तु मे गुंथे होते हैं।[2]' वस्तु की जटिलता के स्थान पर वस्तु का संघठन होना आवश्यक है इसलिए एक अंग्रेजी आलोचक के अनुसार उपन्यास एक गद्य कथा है जो

---

१. ए. एच. मरे : न्यू इंगलिश डिक्शनरी ऑन हिस्टोरिकल प्रिन्सिपल्स वॉलूम–६, पृष्ठ २४२।

२. दी आक्सफोर्ड इगलिश डिक्शनरी (१६६१), वॉलूम–७, पृष्ठ २४२। ए फिक्टीश्यस प्रोज नरेटिव ऑर टेल ऑफ कन्सीडरेबिल लैन्थ (नाउ यूजुअल्ली एज लोंग एज टू फिल वन ऑर मोर वालूम्स), इन विच कैरेक्टर्स एण्ड एक्शन्स आर रिप्रजेन्टेटिव ऑफ द रियल लाइफ ऑफ पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट टाइम्स, आर प्रोट्रेड इन ए प्लॉट इन ए मोर ऑर लैस कम्प्लैक्सिटी।

यथार्थ जीवन या उसके समान जीवन को चित्रित करती है जिसमे एकता और सघठन वस्तु या कुछ अन्य बातो से होती है या लेखक के मन की निश्चित इच्छा और धारणा को बताती है ।[1] एक हिन्दी आलोचक के अनुसार. 'उपन्यास मनुष्य के निकट रखी हुई वह वस्तु, या कृति है जिसको पढ़कर ऐसा लगे कि यह हमारी ही है, इसमे हमारे ही जीवन का प्रतिविम्व है इसमे हमारी ही भाषा मे कथा कही है ।[2]' उपन्यास की यह परिभाषाएं एकागी और अधूरी हैं । यह उपन्यास के बारे मे निम्नलिखित धारणाएं निश्चित करती हैं ।

(१) उपन्यास वर्णनात्मक काल्पनिक गद्य कथा है ।
(२) उपन्यास की यथेष्ट लम्बाई होती है ।
(३) उपन्यास के चरित्र यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं ।
(४) उपन्यास मे कथा कम या अधिक जटिल वस्तु मे गुथी होती है ।
(५) उपन्यास मे वस्तु का सघठन होता है ।
(६) उपन्यास मे लेखक के मन की इच्छा और धारणा अभिव्यक्त होती है ।
(७) उपन्यास मनुष्य के निकट रखी हुई कृति है ।
(८) उपन्यास मानव जीवन का प्रतिविम्व है ।

उपन्यास विकास को स्थितियो को ग्रहण करता हुआ आगे बढ़ रहा है, इसलिए यह धारणाएं एकागी और अधूरी हैं । उपन्यास काल्पनिक गद्य कथा है, किन्तु वर्णनात्मक होने के साथ वह नाटकीय भी है । उपन्यास की लम्बाई की कोई सीमा निर्धारित नही की जा सकती है क्योकि यह वृहत् से वृहत और लघु से लघु हो सकता है । उपन्यास के चरित्र यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं, किन्तु यथार्थ के साथ उनमे सवेगात्मकता होनी चाहिये । उपन्यास मे वस्तु–विधान होता है किन्तु वस्तु की जटिलता उसकी अनिवार्य

---

१. एरनेस्ट—ए बेकर : द हिस्ट्री ऑफ नावल इन इगलैण्ड (१९५०) पार्ट–I, पृष्ठ ११ ।
……ए प्रोज स्टोरी, पिक्चरिंग रियल लाइफ, समथिंग करैस्पेंडिग देअर टू, एण्ड हैविंग दी यूनिटी एन्ड कोहीचीवेंस ड्यू टू ए प्लाट आर स्कीम आफ सम काइंड ऑर टू ए डैफीनिट इनटैंशन एण्ड एटीच्यूड ऑफ माइंड ऑन द पार्ट ऑफ द आथर ।
२ हिन्दी साहित्य कोश : भाग १, पृ० १५३ ।

विशेषता नही है। उपन्यास के वस्तु-विधान मे सगठन होता है किन्तु अन्विति के अभाव मे वह उपन्यास की सज्ञा से हीन नही हो जाता है। उपन्यास मे लेखक के मन की धारणाए और इच्छाए अभिव्यक्त होती हैं, किन्तु वह केवल लेखक के मन की इच्छाओ और धारणाओ की अभिव्यक्ति का साधन नही है। उपन्यास मे मानव जीवन प्रतिविम्बित होता है किन्तु उपन्यास, जीवन का केवल प्रतिबिम्ब या अभिव्यक्ति नही है क्योकि वह, जीवन का कलात्मक सृजन है।

अत उपन्यास के स्वरूप को दृष्टिगत रखते हुए उसकी परिभाषा निर्धारित की जाय तो वह अधिक सुसगत होगी। गद्यमय महाकाव्य और नाटकीय कविता के रूप मे, उपन्यास काल्पनिक गद्य कथा का एक गतिशील लेखन है जो जीवन की (यथार्थ और सवेगात्मक) अभिव्यक्ति-व्याख्या, आलोचना या टिप्पणी और यथार्थ का दिग्भ्रम ही नही,जीवन का कलात्मक सृजन है।

उपन्यास का स्वरूप

इस परिभाषा के आधार पर उपन्यास का निम्नलिखित स्वरूप निर्धारित किया जा सकता है :—

(१) उपन्यास काल्पनिक-गद्य-कथा है।

(२) उपन्यास गतिशील लेखन है।

(३) उपन्यास जीवन की अभिव्यक्ति है।

(४) उपन्यास यथार्थ का दिग्भ्रम है।

(५) उपन्यास जीवन का कलात्मक-सृजन है।

(६) उपन्यास गद्यमय-महाकाव्य है।

(७) उपन्यास नाटकीय-कविता है।

उपन्यास काल्पनिक गद्य कथा है

मानव के उद्भव के साथ कथा का उद्भव हुआ है। सर्वप्रथम आदि-मानव की कथा का आधार केवल जीवन का यथार्थ था, किन्तु धीरे धीरे उस पर कल्पना का रग चढ़ने लगा। कल्पना से सज्जित होकर कथा अपना रूप बदलती गई। मानव का प्रारम्भिक लेखन काल्पनिक कथा या 'फिक्शन' था, किन्तु 'फिक्शन' लिखे जाने के बहुत पहले फिक्शन था।[1] काल्पनिक कथा का या

---

१. एडवार्ड वेजेंकनॉट : कम्प्लेवेड ऑफ इंगलिश नॉविल, पृ० १६, इंट्रोडक्शन।

व्हट देअर वाज फिक्शन लोग बिफोर फिक्शन वाज रिटन, फार दैट मैटर, देअर वाज फिक्शन, लोग बिफोर अनीथिंग वाज रिटन।

फिक्शन का रूप धीरे धीरे परिवर्तित होता रहा। प्रारम्भ मे फिक्शन की रचना पद्य मे हुई किन्तु गद्य के विकास के साथ गद्यात्मक फिक्शन की रचना प्रारम्भ हुई। 'गद्यात्मक फिक्शन' का उदय कविता से हुआ इसलिए उसने पुन अपना रक्त सम्बध कविता से स्थापित किया है।[1]' अपना रक्त सम्बध कविता से होने के कारण, उपन्यास महाकाव्य आदि मे अपना सम्बध स्थापित करना चाहता है। काल्पनिक गद्य-कथा का प्रारम्भिक रूप रोमास था। पद्यात्मक-रोमास से धीरे धीरे 'गद्यात्मक रोमास' की रचना प्रारम्भ हुई। 'पद्यात्मक रोमांस'[2] पद्य मे वर्णित उच्चादर्श कथा थी, जिसमे साहस या प्रेम का चित्रण हो। रोमांस गद्य और पद्य दोनो मे था किन्तु सामान्य जीवन से उसका बहुत कम सम्बध था। रोमास की स्थितियो को पार करता हुआ उपन्यास ने अपना सही स्वरूप प्राप्त किया।

रोमास का आधार कल्पना थी, किन्तु उपन्यासकार ने उपन्यास मे यथार्थ जीवन का दिग्भ्रम उपस्थित किया। रोमांस मे उन घटनाओ का उल्लेख रहता है, जो आज तक घटी है और घट सकती हैं, किन्तु उपन्यास में वे घटनाए और चरित्र रहते है जो घटित हुए हैं या जिनके घटित होने की सम्भावना है। घटित हुई घटनाओ मे भी उपन्यासकार को कल्पना का सहारा लेना पड़ता है। अत. उपन्यास और रोमास दोनो काल्पनिक-गद्य कथा हैं जिसमे उपन्यास की कल्पना यथार्थ मे जुडी हुई है किन्तु रोमास की कल्पना का, यथार्थ से सम्बंध नही है और वह केवल कल्पना का इन्द्रधनुषी जाल है।

काल्पनिक-गद्य-कथा या कल्पना सापेक्ष्य गद्य की दूसरी उपलब्धि कहानी या गल्प है। कहानी और उपन्यास मे, विस्तार और शिल्प दोनो ही दृष्टि से, भेद है, इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहु चते है कि उपन्यास, रोमास और कहानी से भिन्न, एक काल्पनिक-गद्य-कथा है और जिसे कल्पना-सापेक्ष गद्य भी कह सकते हैं।

---

१. अरनेस्ट—ए बेकर : द हिस्ट्री आफ इंगलिश नॉविल (१९५०) इंट्रोडक्शन।
"प्रोज फिक्शन हैड इट्स फ्रोम पोयट्री, इट हैज रीजरटेड इट्स किनशिप टू पोयट्री।

२. विलवर आर. क्रॉस : द डवलपमेंट ऑफ इंगलिश नॉवल (१९५७) पृष्ठ १३, इन्ट्रोडक्शन।

उपन्यास गतिशील लेखन है

उपन्यास एक गतिशील लेखन है। गतिशील-लेखन के कारण इस विधा को, महाकाव्य, खण्डकाव्य और नाटक की तरह, जटिल सिद्धान्तो और नियमो मे बद्ध नही किया जा सका है। इसका क्रमश; विकास हुआ है। उपन्यास इतना अधिक गतिशील हो गया है कि इसके रचना-विधान को लेकर विवादास्पद विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं। फ्रांसीसी-साहित्य के एक विवादास्पद कथाकार ने 'इन्टरनेशनल लिटरेरी एन्युअल' के प्रथम खण्ड मे 'रिफ्लेक्शन्स ग्रान सम आस्पेक्ट्स ग्राफ सम ट्रेडिशनल नावेल 'शीर्षक निबन्ध मे कहा है कि पात्र, वातावरण, रूप, शैली और सच्चे उपन्यासकार की वर्णन शक्ति आदि को पढने के हम इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि इस मकडी के जाल से बचने के लिए प्रयत्न आवश्यक हो जाता है।[1] तथाकथित परम्परागत चरित्र और कथा का भी विरोध किया है। इसके विरोध मे अंग्रेजी उपन्यासकार विलियम कूपर ने 'इन्टरनेशनल लिटरेरी एन्युअल' के दूसरे खण्ड मे 'रिफ्लेक्शन्स ग्रान सम आस्पेक्टस ग्राफ द एक्सपेरिमेंटल नावेल' मे रोब्ब एलेन ग्रिलेत की प्रयोगवादी उपन्यास की मान्यताओ की खिल्ली उडाकर कहा है कि आज इन प्रयोगवादियो द्वारा उपन्यास दिन प्रतिदिन खोखला किया जा रहा है, इसकी रोचकता कम की जा रही है इसका आकर्षण हटाया जा रहा है।[2] परम्परागत-उपन्यास से तथाकथित प्रयोगवादी-उपन्यास की गतिशीलता की और उपन्यास बढ गया है।

उपन्यास एक गतिशील लेखन है इसलिए कथा, वस्तु, चरित्र और उद्देश्य के शिल्प मे युगान्तकारी परिवर्त्तन हुए हैं। 'एपीसोडिक नावेल' या घटना प्रधान उपन्यास से वस्तु प्रधान, वस्तु प्रधान से चरित्र प्रधान और चरित्र प्रधान से मनोवैज्ञानिक-उपन्यास के शिल्प को पार करता गतिशील बनता जा रहा है।

उपन्यास जीवन को अभिव्यक्ति है

यह माना गया है कि उपन्यास मानव जीवन की अभिव्यक्ति है प्रतिकृति है, मानव जीवन का चित्र है। उपन्यासकार मानव-जीवन का फोटोग्राफर नही है, चित्रकार है। जीवन के आश्चर्यजनक तत्वो को समेटता है किन्तु इन आश्चर्यजनक तत्वो का सम्बन्ध मानव-जीवन से होना चाहिये। वस्तुतः,

---

१. युग चिन्तन (१९६२) [सम्पादक . शरद देवड़ा], पृ० ८० ।
२. वही, पृ० ८४ ।

उपन्यास का विशाल भवन यथार्थ पर टिका होता है और उपन्यासकार को यथार्थ की झाकी प्रस्तुत करनी पड़ती है, इसलिए उपन्यास मे मानव जीवन की स्वाभाविक और सम्भाव्य अभिव्यक्ति होनी चाहिये।

उपन्यास केवल यथार्थ—जीवन का चित्र नही है, किन्तु जीवन के यथार्थ का सवेगात्मक चित्र है। सवेगात्मकता के अभाव मे उपन्यास मे जीवन के स्पन्दन का अभाव होता है। यह सही है कि यथार्थ लेखक, अगर एक कलाकार है तो वह केवल 'जीवन का फोटोग्राफिक प्रतिनिधित्व न कर एक दृष्टि को अभिव्यक्त करता है जो यथार्थ की अपेक्षा पूर्ण है, विस्तृत है और अधिक सत्य है।[1]' जीवन की पूर्णता और सत्यता सवेगात्मक यथार्थ जीवन से ही अभिव्यक्त हो सकती है। अत. उपन्याम यथार्थ जीवन की सवेगात्मक अभिव्यक्ति है।

उपन्यास यथार्थ का दिग्भ्रम है

जीवन की वास्तविकता को उपन्यासकार यथातथ्य रूप मे नही रख सकता। वह जीवन की अभिव्यक्ति, आलोचना, व्याख्या और टिप्पणी प्रस्तुत करता है; यथार्थ जीवन का चित्र प्रस्तुत करता है, जो यथार्थ होते हुए भी यथातथ्यरूप मे घटित नही हुआ है। यथातथ्य रूप मे प्रस्तुत करने पर आत्मकथा, जीवनी और इतिहास का निर्माण हो सकता है, उपन्यास नही। उपन्यासकार जीवन की स्वाभाविक और सम्भाव्य घटनाओ के नाम पर 'यथार्थ का दिग्भ्रम' उपस्थित करता है। उपन्यास को पढकर केवल यथार्थ के भ्रम की अनुभूति होती है। यह कहा जा सकता है कि उपन्यास केवल जीवन की प्रतिकृति नही है, क्योकि प्रतिकृति किसी कला के मूल्य का मानदण्ड नही बन सकती है। जीवन विस्तार मे भरा भानुमती का कुनबा है, किन्तु कला मे छाट और चुनाव' है। उपन्यास मे जीवन का विस्तार है किन्तु उचित चुनाव के पश्चात् विस्तार को अभिव्यक्ति मिलती है जीवन के सूत्र बिखरे पडे है और उपन्यासकार बिखरे सूत्रो को एकता मे पिरोता है।

उपन्यास जीवन की अभिव्यक्ति और प्रतिकृति न होकर जीवन का सरलीकरण है। वास्तविक जीवन जटिलता से पीडित है, किन्तु उपन्यासकार

---

१. अरनॉल्ड बेनेट . आथर्स क्राफ्ट, पृ० ७१।
दी रियलिस्ट इफ ही इज एन आर्टिस्ट विल सीक टू गिव अस नोट ए बैनल फोटोग्राफिक रिप्रेजेन्टेशन ऑफ लाइफ बट ए विजन ऑफ दैट इज मोर फुलर, मोर वाइड्ड एण्ड मोर कम्पेलिंगली ट्रुथफुल।

केवल उसको सरलतम रूप मे उपन्यास मे प्रस्तुत करता है। जीवन की जटिलता कथा के माध्यम से सरलतम रूप मे हमारे समक्ष अभिव्यक्त होती है। समाज और व्यक्ति के सम्बन्ध मे दार्शनिक जटिलताए और मनोग्रंथियाँ—सभी कथा मे गूंथकर सरलतम रूप मे अभिव्यक्त होती हैं इसलिए 'उपन्यास जीवन का सही रूपान्तर न होकर सरलीकरण है।[१]'

उपन्यास जीवन की अभिव्यक्ति ही नही, जीवन का मूल्यांकन आलोचना और टिप्पणी है। यह कहा गया है कि इसमे जिन्दगी प्रकट ही नही होती, एक शक्तिशाली प्रकाश के नीचे, जीवन की आलोचना और उसका मूल्याकन होता है।[२] इसके अतिरिक्त उपन्यास जीवन की एक टिप्पणी है।[३] उपन्यासकार जीवन की सड़ी गली रूढियो और मान्यताओं की, एक आलोचक की तरह, आलोचना करता है। उपन्यासकार जीवन की वदलती मान्यताओ के आधार पर नए जीवन मूल्यो की स्थापना कर, जीवन का मूल्यांकन करता है। उपन्यासकार समस्त जीवन को अभिव्यक्त नही कर सकता इसलिए कथा के माध्यम से जीवन की टिप्पणी प्रस्तुत करता है।

उपन्यासकार जीवन की अभिव्यक्ति, व्याख्या, आलोचना, मूल्याकन और टिप्पणी है किन्तु अस्वाभाविक और असम्भाव्य जीवन को वह अभिव्यक्त नही करता है। 'उपन्यासकार कल्पना के सहारे एक नई दुनिया खोलकर रखता है और यह दुनिया 'दिग्भ्रम का सृजन' करती है।[४]'

---

१. स्टीवेन्सन : मेमोइर्स एण्ड पोट्रट्स . पृष्ठ २९७
"दी नॉवल इज नोट ए ट्रान्सक्रिप्ट ऑफ लाइफ टू बी जज्ड बाइ इट्स एक्जैक्टिट्यूड वट ए सिम्प्लीफिकेशन" ।

२. बर्नार्ड—डी. वोट . दी वर्ल्ड ऑफ फिक्शन · पृष्ठ १५०–१५१ ।
"लाइफ हैज नोट ओनली बीन रिवील्ड, इट हैज़ बीन क्रिटीसाइज्ड एण्ड एप्राइज्ड अण्डर ए स्ट्रोंग लाइट" ।

३. हर्बर्ट जे. मुलर . मोडर्न फिक्शन · ए स्टडी ऑफ वैल्यूज फाउण्ड, पृष्ठ १४ ।

४. पर्सी लवोक क्राफ्ट ऑफ फिक्शन (१९६५), पृष्ठ ६ ।
"ए नॉवल; एज़ वी से, ओपिन्स ए न्यू वर्ल्ड टू दी इमेजिनेशन, एण्ड इट इज प्लीजैन्ट टू डिसकवर दैट समटाइम्स, इन फ्यू नॉवल्स, इट इज ए वर्ल्ड ह्विच 'क्रीएट्स इन इलूजन" ।

वस्तु की अपेक्षा उपन्यास मे चरित्र का महत्त्व है। वस्तु का विकास चरित्र के विकास के लिए होता है और चरित्र का प्रभाव सार्वभौमिक होता है। उपन्यास को स्थायित्व प्रदान करने का कार्य उपन्यास के सजीव पात्र करते हैं। यह निश्चित रूप मे कहा जा सकता है कि सभी उपन्यासो का सम्बन्ध चरित्र मे होता है, चरित्र की अभिव्यक्ति और सृजन के लिए वस्तु-विधान का ढाचा तैयार होता है और चरित्र के माध्यम मे जीवन का उद्देश्य स्पष्ट होता है। चरित्र-सृजन का उपन्यास मे महत्वपूर्ण स्थान है। चरित्र-सृजन के लिए, पात्र के बाह्य रूप के अतिरिक्त, उसकी मन स्थितियो के चित्रण के द्वारा, अनुभूतियो और भावनाओ के चित्रण द्वारा, उपन्यासकार को उसमे प्राणतत्व फूकना पडा है। पात्रो का कार्य, इच्छाए और विचारो की अभिव्यक्ति के द्वारा, उपन्यासकार पात्रो का सृजन करता है। जो उपन्यास पात्रो की अनुभूतियो और भावनाओ को अभिव्यक्त करने मे असफल रहता है उसके पात्रो मे सजीवता का अभाव होता है। उपन्यासकार ऐसे पात्रो का सृजन करता है, जिससे इन पात्रों की पीडा और आनन्द, सुख और दुःख, हास्य और अश्रु, ईर्ष्या और प्रेम, प्रेम और घृणा अनुभूत हो सके।

उपन्यास के पात्रो का वर्गीकरण पात्रो के चरित्र के विकास और लेखक के प्रभाव और नियत्रण के आधार पर किया जा सकता है। पात्रो के चारित्रिक-विकास के आधार पर विकसनशील और अविकसनशील; समतल और गौलीय[1] (Flat & round) भेद किए गए हैं। जब पात्र अपना व्यक्तित्व खोकर 'समतलीय' हो जाता है तो वह एक निश्चित विचारधारा का प्रतिपादन करने लग जाता है; अपने वर्ग का प्रतिनिधि बन वर्गगत हो जाता है, उसे समतलीय या अविकसनशील पात्र कहा जा सकता है। समतलीय या अविकसनशील पात्र 'टाइप' होते हैं, अपनी जातिगत और वर्गगत विशेषताओ का प्रतिनिधित्व करते है। सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो मे विशेषत इन पात्रो को देखा जा सकता है। विकासशील पात्र जीवन के उतार चढाव के बीच विकास की सम्भावनाओ को लेकर आगे बढते है। विकसनशील पात्र 'गौलीय' होते हैं। विकसनशील पात्र अपने व्यक्तित्व के कारण उपन्यास मे विशिष्ट स्थान रखते हैं। विकसनशील पात्र पाठको मे कौतूहल जगाए रखते है। एक समीक्षक ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि अपने शुद्ध रूप से सपाट या समतल चरित्र का निर्माण एक विचार या गुण के इर्दगिर्द होता है और

---

१. ई एम. फोरस्टर : एसपैक्ट्स ऑफ द नॉवल (१६५३), पृ० ६५।

जब उनमे एक से अधिक तत्व होते हैं, तब उनका मोड़ वृत्त की ओर बढता है।[1] यह स्पष्ट है कि अविकसनशील पात्रो के जीवन मे घटनाओ का उतार चढ़ाव नही आता और उनके व्यक्तित्व की केवल एक विशेषता अभिव्यक्त होती है किन्तु विकसनशील पात्र के जीवन मे घटनाओ के मोड़ आते रहते हैं और उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओ की परतें पाठको के आगे खुलती रहती हैं। कुछ स्थितियो मे विकसनशील और अविकसनशील पात्रो के मिले जुले रूप भी मिलते हैं। यह निश्चित है कि अविकसनशील पात्रो के स्थान पर विकसनशील, वर्गगत पात्रो के स्थान पर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के पूर्ण प्रस्फुटन के कारण श्रेष्ठ होते हैं।

लेखक के प्रभाव और नियत्रण के आधार पर भी बद्धपात्र और मुक्त-पात्र के दो भेद किये जा सकते हैं। परतत्र या बद्धपात्र, लेखक के हाथो की कठपुतली और मशीन के साँचे होते है किन्तु मुक्त पात्र अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मे स्वतत्र होते हैं। बद्ध पात्र लेखक के इशारो पर चलते है या लेखक के विचारो का प्रतिपादन करने मे अपना अस्तित्व खो देते हैं। बद्ध-पात्र केवल लेखक के इशारो पर हसी और आँसू, पीडा और आनन्द को प्रकट करते हैं। पात्र लेखक के व्यक्तित्व से पूर्णतया मुक्त होने चाहिये और लेखक को केवल तटस्थ निरीक्षक के रूप मे पात्रो का निरीक्षण करना चाहिये। सार्त्र की मान्यता है कि पात्र नैसर्गिक जीवन को न छोडे, अपनी सहज प्रवृत्ति के अनुसार ही कार्य करें पाठक उन पात्रो से तादात्म्य स्थापित कर उनकी प्रकृति प्रेरित क्रियाओ को देखकर मुग्ध हो जाए।[2] पात्र लेखक के विचार प्रकाशन या प्रचार का साधन नही है किन्तु लेखक का जीवनदर्शन और जीवन-दृष्टि, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुख्य या विशेष पात्र की इच्छाओ, भावनाओ और कार्यों मे प्रकट होती है।

---

१. वही, पृ० ६५।
प्लॉट कैरेक्टर्स वर कॉल्ड "ह्यूमर्स" इन द सेवनटीन्थ सेंचुरी, अँड आर समटाइम्स कॉल्ड टाइप्स, अँड समटाइम्स, कैरीकैचर्स। इन देअर प्योरेस्ट फोर्म, अनस्ट्रक्टेड राउण्ड ए सिंगल आइडिया ऑर क्वालिटी : व्हेन देअर इज मोर दैन वन फैक्टर इन दैम, वी गेट द बिगिनिंग ऑफ द कर्व टूवार्ड्स द राउण्ड।

२. जीन पॉल सॉर्तरे. व्हाट इज़ लिटरेचर पृ० १५४।

अतः उपन्यास, जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति और व्याख्या ही नही, जीवन का सृजन है इसलिए उपन्यास मे पात्रो को जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति और व्याख्या के रूप मे प्रकट न कर, जीवन की सृजनात्मक-अभिव्यक्ति के रूप मे प्रकट करना चाहिये। पात्रो के वाह्य रूपरग और चेष्टाओ से उसके व्यवहार का परिचय मिलता है, किन्तु अन्तरङ्ग जीवन की अभिव्यक्ति से उसमे प्राणो की चेतना प्रस्फुटित होती है। प्राणवान पात्र, उपन्यास के पढने के पश्चात, हमारी कल्पना मे छाया रहता है किन्तु प्राणहीन पात्र, उपन्यास की समाप्ति पर ही कल्पना और स्मृति से लोप हो जाता है।

उद्देश्य

उपन्यास का सम्पूर्ण शिल्प विधान उसके उद्देश्य पर आधारित है। पर्सी लुब्बक का कथन है कि कथा-साहित्य का रचना विधान उद्देश्य पर आधारित है और वह यह बताता है कि विवरणकर्त्ता का कथा के साथ क्या सम्बध है ?[1] उपन्यास यथार्थ का दिग्भ्रम उपस्थित कर जीवन का सृजन करता है। जीवन की पीडा और आनन्द, शान्ति और सघर्ष, सफलता और असफलता सभी उस उपन्यास में है। उपन्यासकार जीवन को एक विशेष दृष्टि से देखता है, जीवन के प्रति एक विशिष्ट जीवन दर्शन को वस्तु और चरित्र के द्वारा प्रस्तुत करता है। 'हर उपन्यास जीवन का सूक्ष्म रूप (microcosm) है और उसका सृजन लेखक करता है।[2]' अपने सृजन मे जीवन के जिस सत्य को अभिव्यक्त करता है उसे 'काव्यात्मक-सत्य[3]' कहते हैं। उपन्यास में उद्देश्य का वही स्थान है जो जीव मे आत्मा का स्थान है। वस्तु-विधान उपन्यास का शरीर तत्व, चरित्र विधान प्राणतत्व, और उद्देश्य उपन्यास का आत्म तत्व है। यह ठीक है कि उद्देश्यहीन कहानी आत्माहीन मनुष्य के समान है।[4]

---

१ पर्सी लुब्बक : द क्राफ्ट ऑफ फिक्शन (१९६५), पृ० २५१।
द होल इन्ट्रीकेट क्वैश्चन ऑफ मैथड, इन द क्राफ्ट ऑफ फिक्शन आइ टेक टू बी गवर्न्ड बाइ द क्वैश्चन ऑफ पाइंट ऑफ व्यू–द क्वश्चन ऑफ द रिलेशन इन व्हिच द नैरेटर स्टैंड टू द स्टोरी।

२. डब्लू. एच. हडसन एन इंट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ लिटरेचर (१९६५) पृ० १६५।

३ वही, पृ० १६८।

४ हैरॉल्ड वैस्टन फॉर्म इन लिटरेचर (१९३४) पृ० ३३।
"फॉर ए स्टोरी विदाउट ए सिग्नीफिकेंस इज लाइक ए मैन विदाउट ए सोल।

जीवन-दर्शन और जीवन मूल्यो की स्थापना में उपन्यासकार को नैतिकता की स्थापना करनी पडती है । उपन्यास मे नैतिकता कथा के साथ गुंथी होनी चाहिये । यह भ्रामक धारणा है कि यह कानून है कि कथा साहित्य के लेखक को अध्यापक और उपदेशक के साथ एक मनोरजक भी बनना पडता है ।[1] वस्तुत उपन्यासकार न अध्यापक है और न उपदेशक, न मनोरजनकर्ता और न राजनीतिज्ञ । 'साहित्य' मे राजनीति किसी नृत्य समारोह के मध्य पिस्तौल के निशाने के समान है ।[2]' उपन्यास मे राजनीति होते हुए भी वह राजनीति से परे है, नैतिकता होत हुए भी नैतिकता से परे है, दर्शन होते हुए भी दर्शन से परे है । उपन्यास मे जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति होती है । उपदेश का अंश हो, तो वह 'कान्तासम्मित' उपदेश होना चाहिये । डी० एच० लारेंस ने जीवन-दर्शन के बारे मे विचार प्रकट करते हुए कहा है कि उपन्यास एक सूक्ष्मरूप है और मनुष्य सृष्टि को देखता है और वह सिद्धान्त के प्रकाश मे देखे, इसलिए हर उपन्यास की पृष्ठभूमि या व्यक्ति के अस्तित्व के रचना-विधान के पीछे कुछ दर्शन होना चाहिये किन्तु यह दर्शन कलात्मक उद्देश्य से दबा हुआ होना चाहिये अन्यथा उपन्यास एक शास्त्र मे परिणत हो जाएगा ।[3] उपन्यास का उद्देश्य प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त होने पर उपन्यास शास्त्र के रूप में परिणत हो जाता है । उपन्यास मे प्रस्तुत नैतिकता, सामाजिकता, राजनीति और दर्शन की सीमाए कला निर्धारित करती हैं । अतः कला का उद्देश्य ही उपन्यास का उद्देश्य है क्योकि उपन्यास भी एक कला ही है । कला सृजन की प्रक्रिया से निकलकर अपने उद्देश्य में सहायक होती है ।

---

१ रिचार्ड स्टैंग द थ्योरी ऑफ नॉवल इन इगलैंड (१९६१) पृ.६८ । देअर इज ए लॉ दैट द राइटर ऑफ द फिक्शन मस्ट बी टीचर अैंड प्रीसचर अैंज-वैल-अैंज अम्यूज़र ।

२ स्टैंढल नॉवलिस्ट ऑन द नॉवल . मैरियम अलैट पृ० ९२ । पॉलीटिक्स इन ए वर्क ऑफ लिटरेचर आर लाइक ए पिस्टल शूट इन द मिडिल ऑफ ए कन्सर्ट ।

३. मरियम अलेट : नॉवलिस्टस ऑन द नॉवल : पृ० ९२ । बिकॉज़ ए नॉवल इज ए माइक्रोसीम अैंड मैन इज व्यूइग द यूनिवर्स मस्ट व्यू इन लाइफ ऑफ ए थ्योरी, देअरफोर, एवरी नॉवल मस्ट हैव ए बैकग्राउण्ड ऑर स्ट्रक्चरल स्कैलटन ऑफ बीइग सम मेटा-फिजिक । बट मेटाफिजिक्स मस्ट आलवेज सबसर्व आर्टिस्टिक परपज बियॉण्ड द आर्टिस्ट्स कान्शस्नेस एम, अदरवाइज ए नॉवल बिकम्स ए ट्रीटाइज ।

श्री मुल्कराज आनन्द ने अपने निवन्ध 'भारतीय कथा-साहित्य' पर एक टिप्पणी मे उपन्यास का उद्देश्य वताते हुए सृजन की प्रक्रिया को स्पष्ट किया है। इनका कथन है : 'उपन्यासकार का अंतिम लक्ष्य मनुष्य को समझना, उसके भावो को उत्तेजित करना, उसकी चेतना को जगाना और ऐसी स्थिति का निर्माण करना है जो रस, या सौंदर्य की स्थिति प्रदान कर सके, और फिर उसकी समस्त शक्तिया सृजन मे लग जाती हैं।[1]' उपन्यासकार ज्ञानात्मक स्थिति को पारकर भावात्मक स्थिति की ओर पहुचता है। मनुष्य का ज्ञान प्राप्त करके, भावो को उत्तेजित कर, भावातिरेक के द्वारा रस उत्पन्न करता है, जिसे दूसरे शब्दो मे सौंदर्य की अनुभूति भी कह सकते हैं। अत उपन्यासकार का समस्त ज्ञान, अनुभव और शक्ति इस सृजन की प्रक्रिया मे लग जाती है और महान् उपन्यास सृजन की प्रक्रिया से निकलकर जीवन का कलात्मक सृजन प्रस्तुत करता है।

शास्त्रीय विवेचन :

वैज्ञानिक विधि :—'शास्त्र' शब्द 'शास' धातु मे 'ष्ट्रन' प्रत्यय लगाकर वनता है।[2] किसी भी विषय को शास्त्र की सज्ञा दी जाती है जब उसका क्रम व्यवस्थित हो।[3] शास्त्र का उद्देश्य है किसी भी विषय के मूल नियमो, सिद्धान्तो और विधानो की खोज करना। शास्त्र के आधार पर किसी भी विषय को नियमवद्ध किया जाता है जिससे पूर्ण रूप से उसका विवेचन हो सके। किसी भी विषय पर जो कुछ कहा गया है उन सबका वैज्ञानिक अध्ययन शास्त्रीय वन जाता है। शास्त्रीय विधि को वैज्ञानिक विधि की पर्याय कह सकते है। वैज्ञानिक विधि का अर्थ व्यवस्थित ज्ञान है। जिस विधि के द्वारा किसी विशिष्ट विषय का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से रखा गया हो[4] उसे शास्त्रीय विधि कहते हैं।

---

१ इडियन लिटरेचर · वालूम ८, न. १, १९६५, पृ० ५५।

२. शब्दकल्पद्रुम (१९६१) पृ० ११०६।
(शिष्यतेऽनेन शास + ष्ट्रन) जनसाधारण के लिए विधान वताने वाले धार्मिक ग्रन्थ। आज्ञा, आदेश। धर्माज्ञा, धर्मशास्त्र की आज्ञा। किसी विषय का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से रखा गया हो।

३. हिन्दी शब्द सागर (तीसरा संस्करण), पृ० ३०९।

४ संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर (रामचन्द्र शर्मा : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी), पृ० ९२३, षष्ट संस्करण।

विवेचन .—विवेचन[1] मे प्रतिपाद्य विषय को स्पष्ट रूप से समझाया जाता है। विवेचन मे वस्तु की भलीभाति जाच की जाती है, यह निर्णय लिया जाता है कि कौनसी बात ठीक है या नही, उसकी तर्क वितर्क के आधार पर व्याख्या की जाती है, उसके सम्बध मे नई मान्यताओ और सिद्धान्तो की खोज की जाती है, अनुसन्धान किया जाता है, उसकी समग्र रूप से परीक्षा कर उसकी मीमासा प्रस्तुत की जाती है। किसी भी वस्तु या विषय का विवेचन करने के लिए उस विषय के स्वरूप को स्पष्ट कर, तत्वो के आधार पर व्याख्या करते हुए, यह निर्णय किया जाता है कि वर्गीकरण मे उसका क्या स्थान है ? परीक्षा, निर्णय, व्याख्या और अनुसन्धान का आधार लेकर कृति का पूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया जाता है। विवेचन मे गुण दोष की ओर अधिक ध्यान न देकर उसका स्वरूपगत और तत्वगत विवेचन प्रस्तुत किया जाता है।

शास्त्रीय विवेचन :—शास्त्रीय विवेचन मे किसी विषय या वस्तु का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। शास्त्रीय विवेचन मे साहित्यशास्त्रीय विवेचन भी अपेक्षित है। किसी भी कृति को तत्वगत विश्लेषण–परीक्षण कर उसके साहित्यिक स्वरूप को स्पष्ट किया जाता है। एक ओर साहित्यशास्त्रीय सिद्धान्तों और दूसरी ओर कृति का युग–बोध के आधार पर परीक्षण किया जाता है।

उपन्यासो का शास्त्रीय विवेचन —उपन्यासो का शास्त्रीय विवेचन में 'शास्त्रीय का काव्यशास्त्रीय अर्थ सारे अध्ययन को निरर्थक कर देता।[2]' डा० प्रभाकर माचवे[3] की भी मान्यता है कि शास्त्रीय का अर्थ' वैज्ञानिक से है, प्राचीन साहित्यशास्त्र को यहा विचारार्थ लाना व्यर्थ है। शास्त्रीय से 'उनका अर्थ' निष्पक्ष, पूर्वाग्रहविरहित, आधुनिक मनोविज्ञान और समाजविज्ञान की सहायता से विश्लेषण-विवेचन करना है।' 'अब हडसन और सेंटसबरी, राल्फफाक्स और ए० सी वार्ड काफी नही हैं। गत पन्द्रह वर्षो मे प्रत्येक उपन्यास को जाचने वाली अमरीकी नयी आलोचना और लेखक के हेतु के विषय मे विवेचना बढ रही है।' हिन्दी उपन्यासो की शास्त्रीय विवेचना के लिए साहित्य

---

१ हिन्दी शब्द सागर. तीसरा सस्करण (१६२६)।

२. परिशिष्ट, पृ० ३४६।

३. परिशिष्ट, पृ० ३४६–३४७।

शास्त्र को न पूर्ण रूप से उपेक्षित किया जा सकता है और न पूर्ण रूप से स्वीकृत। साहित्य शास्त्रीय विवेचन के साथ मानव शास्त्रीय विवेचन भी अपेक्षित है। 'शास्त्रीय विवेचन मे' जहा एक आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति अपेक्षित है वहा दूसरी ओर साहित्य शास्त्रीय (श्रेण्य पद्धति) भी।[1]' साहित्य शास्त्र के आधार पर उपन्यासो का तत्वगत विवेचन किया जा सकता है, तो दूसरी ओर समाजशास्त्र के आधार पर सामाजिकता, मनोविज्ञान के आधार पर मनोवैज्ञानिकता और दर्शन के आधार पर दार्शनिकता आदि की युग-बोध के कारण विवेचना अपेक्षित है।

अत. उपन्यासो के शास्त्रीय-विवेचन का अभिप्राय साहित्यशास्त्रीय और मानवशास्त्रीय विवेचन से है। अत मानव शास्त्रीय विवेचन के लिए उपन्यास का प्रवृतिमूलक वर्गीकरण व्यक्ति और समाज को केन्द्र मानकर प्रस्तुत किया गया है। इस वर्गीकरण के आधार पर वर्गीकृत उपन्यासो के कथासार, वस्तु-विधान, चरित्र-विधान, चरित्र और उद्देश्य की विवेचना साहित्यशास्त्रीय विवेचना है। साहित्यशास्त्र वस्तु, चरित्र और उद्देश्य का ढाचा प्रस्तुत करता है। साहित्यशास्त्रीय रूढिगत मान्यताओ की विवेचना यहा अपेक्षित नही है। हर एक उपन्यास के वस्तु, चरित्र और उद्देश्य की विवेचना के पश्चात्, वर्गीकृत श्रेणी मे स्थान देने का कारण प्रस्तुत किया गया है जो वस्तुत मानव शास्त्रीय-विवेचना है। सामाजिक उपन्यासो मे सामाजिकता, समाजवादी उपन्यासो मे समाजवाद, मनोविश्लेपणात्मक उपन्यासो मे मनोविश्लेषण, व्यक्तिवादी उपन्यासो मे व्यक्तिवाद और ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास के परिपार्श्व मे व्यक्तिपरक और समाजपरक प्रवृत्तियो की विवेचना की गई है अत उपन्यासो की विवेचना साहित्यशास्त्रीय, और उपन्यासो का वर्गीकरण मानव-शास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यासों का वर्गीकरण

अब तक हिन्दी उपन्यास का वर्गीकरण तत्वगत, विषयगत और शैलीगत विशेषताओ के आधार पर हुआ है। तत्वो की दृष्टि से इनको घटना प्रधान, चरित्रप्रधान और समस्या-प्रधान आदि की कोटि मे रखा जाता है। शैली के आधार पर यथार्थवाद, आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, ऐतिहासिक यथार्थवाद, आदर्शोन्मुख यथार्थवाद आदि की कोटि मे रखा जाता है। उपन्यास के वर्गीकरण ठीक नही है। घटनाप्रधान (Episodic) उपन्यास विगत की वस्तु बन

---

१. परिशिष्ट, पृ० ३४४–३४५।

चुका है। चरित्रप्रधान और समस्याप्रधान के रूप मे भी उनका स्थूल भेद प्रस्तुत नही किया जा सकता है। शैली की दृष्टि से यथार्थवाद, आदर्शवाद और प्रकृतिवाद के आधार पर जो भेद किए हैं उनसे भी उपन्यासो का ठीक वर्गीकरण प्रस्तुत नही किया जा सकता है। उपन्यास 'यथार्थ का दिग्भ्रम' उपस्थित करता है इसलिए यथार्थवाद के अभाव मे उपन्यास का अस्तित्व ही नही है। आदर्शवादी मान्यताओ की स्थापना करना उपन्यास का उद्देश्य नही है। हिन्दी उपन्यासो के एक आलोचक का 'घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान, चरित्र सापेक्ष या नाटकीय और ऐतिहासिक[1]' भेद भी भ्रमात्मक है। ऐतिहासिक उपन्यास घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान और नाटकीय हो सकता है इसलिए हिन्दी-उपन्यासो को इस वर्गीकरण मे स्थान देना भी असम्भव जान पडता है।

इसके अतिरिक्त उपन्यासो को विषय के आधार पर ऐतिहासिक, पौराणिक, धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक वस्तु के आधार पर घटना प्रधान (Episodic) और वस्तुप्रधान, मनोग्मिक और सरितोपम; कथा के ढाचे के आधार पर कथात्मक, पत्रात्मक और आत्मकथात्मक; चरित्र के आधार पर चरित्र प्रधान और मनोवैज्ञानिक; स्थायित्व के आधार पर सामयिक और शास्त्रीय, आकार के आधार पर वृहद और लघु, वातावरण के आधार पर आचलिक और अन्य, उद्देश्य के आधार पर समस्याप्रधान, भावप्रधान और विचारप्रधान, आदर्शवादी, यथार्थवादी और प्रकृतिवादी आदि रूपो मे वर्गीकृत किया जा सकता है। उपन्यासो के यह अनेकानेक वर्गीकरण भ्रामक हैं। उपन्यासो का विषय और तत्वगत वर्गीकरण शास्त्रीय वर्गीकरण नहीं है।

जीवन की विविधता और जटिलता मे विषयो की भरमार पर घटनाप्रधान, वस्तुप्रधान, नाटकीय आदि भेद किए जाते हैं किन्तु यह वर्गीकरण चरित्रप्रधान, वातावरणप्रधान और उद्देश्य प्रधान उपन्यासो की उपेक्षा करते है। वस्तु के आधार पर वस्तु के सगठन, गहराई और विशालता के आधार पर अनेक भेदोपभेद प्रस्तुत किया जा सकता है। चरित्रप्रधान उपन्यासो ने वस्तुप्रधान और उद्देश्यप्रधान उपन्यासो की उपेक्षा की है। चरित्रप्रधान उपन्यास भी चरित्रप्रधान और मनोवैज्ञानिक उपन्यासो के बीच सीमा रेखा नही खीच सकते हैं। स्थायित्व के आधार पर सामाजिक और शास्त्रीय भेद प्रस्तुत

---

१. शिवनारायण श्रीवास्तव हिन्दी उपन्यास, पृ० ४५६।

किया जाता है किन्तु स्थायित्व केवल समय की कसौटी पर खडा होना ही स्थायित्व का सही मानदण्ड निर्धारित नही किया जा सकता है। सामाजिक उपन्यास ही शास्त्रीय उपन्यास हो जाते हैं। आकार के आधार पर वृहत और लघु उपन्यास का वर्गीकरण स्थूल है। आचलिकता के आधार पर भी उपन्यासो का वर्गीकरण नही किया जा सकता है। उपन्यास का उद्देश्य किसी आदर्श मतवाद या विचारधारा की स्थापना करना नही है इसलिए समस्या-प्रधान भावप्रधान, विचारप्रधान आदि भेद भी भ्रामक है। उपन्यास का उद्देश्य न केवल समस्याए प्रस्तुत करना है और न पूर्ण रूप से भावात्मक बनना। वस्तु और चरित्र के अभाव मे विचार आधारहीन है। उपन्यास 'यथार्थ का दिग्भ्रम' है इसलिए आदर्शवादी और यथार्थवादी वर्गीकरण भी शंकाएं उत्पन्न करता है। उपन्यासो का प्रवृत्तिमूलक वर्गीकरण ही शास्त्रीय वर्गीकरण हो सकता है।

साहित्यिक वर्गीकरण के सिद्धान्त ·

साहित्यिक वर्गीकरण समानता-असमानता के आधार पर प्रस्तुत किया जा सकता है। साहित्यिक कृतियो का वर्गीकरण चार सिद्धान्तो[1] के आधार पर प्रस्तुत किया जा सकता है। यह चार सिद्धान्त अरस्तू के चार कारणो के आधार पर प्रस्तुत किए गए हैं :

(१) रचनाकारो और उनके युगो के आधार पर (Efficient Cause of Aristetle)

(२) उद्देश्य के आधार पर (Aristele's Final Cause)

(३) विषय के आधार पर (Aristetles material Cause)

(४) नियम के आधार पर (Aristetles formal eause)

प्रथम सिद्धान्त के अनुसार हर उपन्यासकार के उपन्यास एक वर्ग मे रखे जा सकते हैं। परम्परावादी लेखक इसी आधार को लेकर चले हैं। युगो के आधार पर हिन्दी उपन्यास का विभाजन विकास की रेखाओ को ध्यान मे रखते हुए प्रेमचद के व्यक्तित्व और कृतित्व के आधार पर प्रारम्भिक युग, और प्रेमचद्रोत्तर युग के रूप मे रखा गया है। यह स्थूल वर्गीकरण है।

उद्देश्य के आधार पर उपन्यासों के निम्नलिखित भेद प्रस्तुत किए जा सकते हैं :—

---

१. जोसेफ् टी. शिप्ले : डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिटरेचर (१९४३), पृ० १०४।

(१) प्रचारवादी—उपन्यास (Propaganda novel)
(२) उपभोग्य-उपन्यास (merchandise novel)
(३) साहित्यिक उपन्यास (literary novel)

प्रथम दो श्रेणी के उपन्याम असाहित्यिक और निम्नकोटि के होने के कारण प्रवन्ध की कोटि मे नही आते हैं। साहित्यिक उपन्यासो को उद्देश्य के आधार पर तर्कसगत रूप से प्रस्तुत नही किया जा सकता। उपन्यास 'सृजन की प्रक्रिया' से निकलकर पाठक मे रसात्मक चेतना जगाता है, इसलिए प्रचारवादी, उपभोग्य और साहित्यिक उपन्यास के रूप मे वर्गीकरण प्रस्तुत नही किया जा सकता है।

तृतीय श्रेणी के आधार पर विषयगत वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। यह ऐतिहासिक, पौराणिक धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक भेद प्रस्तुत करता है। इन उपन्यासो ने व्यक्तिपरक, व्यक्तिवादी और मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की पूर्ण रूप से उपेक्षा की है। अत यह वर्गीकरण भी शास्त्रीय सिद्धान्त की स्थापना नही करता है।

चतुर्थ सिद्धान्त उपन्यासो के वर्गीकरण के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। यह सवसे महत्वपूर्ण, बाह्यार्थनिरूपक और उपयोगी है।[1] नियम के आधार पर प्रवृत्तिमूलक वर्गीकरण ही शास्त्रीय वर्गीकरण हो सकता है। भिन्न भिन्न प्रवृत्तियो के आधार पर विधिवत् वर्गीकरण प्रस्तुत किया जा सकता है।

हिन्दी उपन्यासो का प्रवृत्तिमूलक—वर्गीकरण डा० सुषमा धवन ने अपने शोधप्रवन्ध मे प्रस्तुत किया है। डा० धवन ने प्रथम खण्ड मे सामाजिक, दूसरे मे व्यक्तिवादी, तीसरे मे मनोविश्लेषणवादी चौथे मे समाजवादी और पाचवे मे ऐतिहासिक प्रवृत्तियो[2] के आधार पर हिन्दी—उपन्यासो का विवेचन प्रस्तुत किया है। इनकी धारणा है कि उपन्यास का आधारभूत उद्देश्य सामाजिक से व्यक्तिवादी, व्यक्तिवादी से अतिव्यक्तिवादी अथवा मनोविश्लेषणवादी और इन प्रवृत्तियो की प्रतिक्रिया स्वरूप समाजवादी रूप धारण करता है।[3] अतिव्यक्तिवादी उपन्यास मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास नही है। समाज-

---

१. जोसेफ टी. शिप्ले : डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिटरेचर (१९४३) पृ० १०४।
इट प्रोवाइड्स द मोस्ट इपोर्टेन्ट क्लासीफिकेशन ऐण्ड द सच द मोस्ट यूजफुल ऑब्जेक्टिव।

२. डा० सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास (१९६१), पृ० ४।

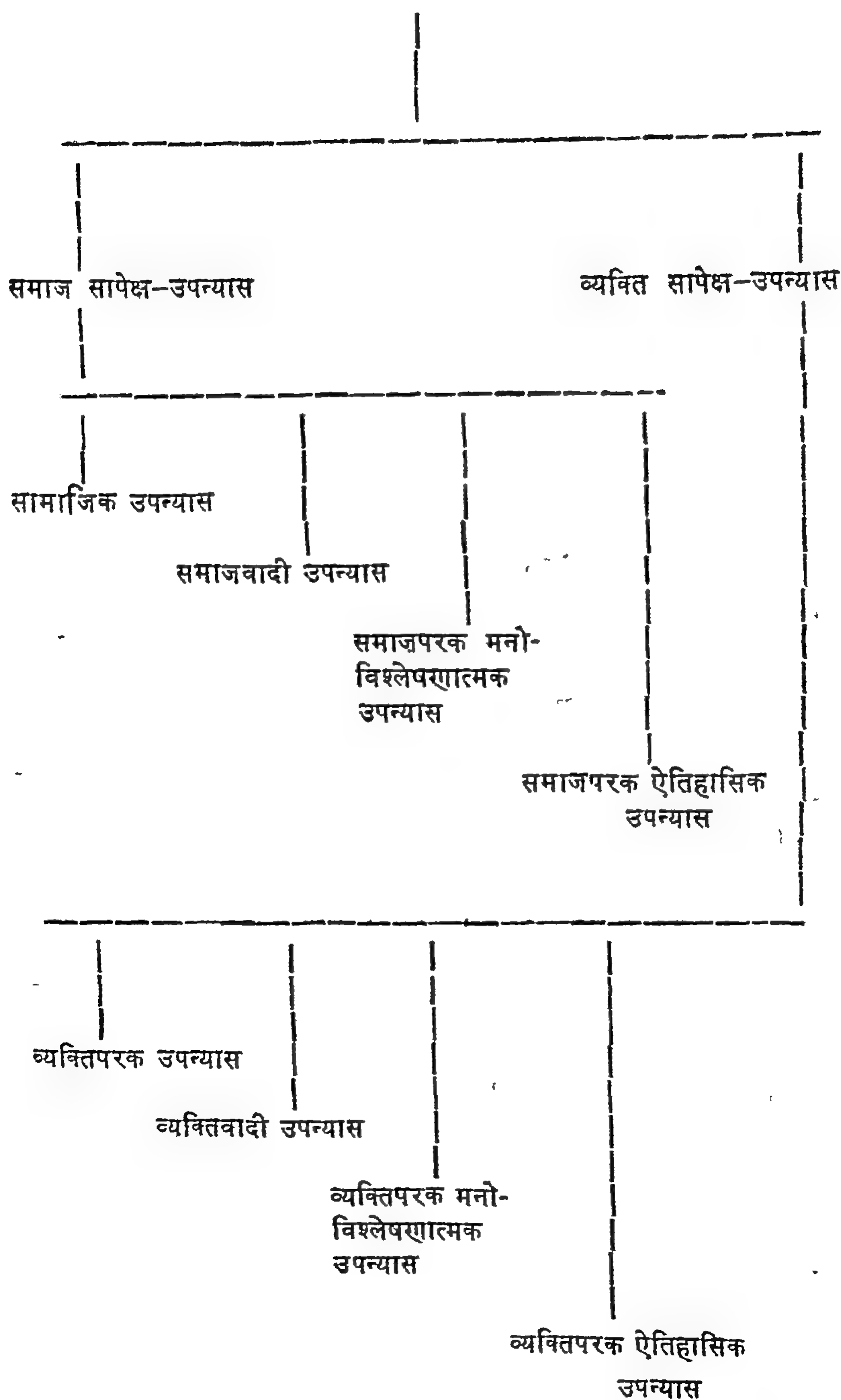
३. वही, पृ० २।

वादी उपन्याम इन उपन्यासो के प्रतिक्रिया स्वरूप न आकर किसी निश्चित समाजदर्शन को अभिव्यक्त करता है किन्तु व्यक्तिवादी उपन्यास समाजवाद की प्रतिक्रियास्वरूप व्यक्तिवादी जीवनदर्शन की स्थापना करता है। व्यक्ति को केन्द्र मानकर चलने वाले सभी उपन्यासो को व्यक्तिवादी मानना ठीक नही है। मनोविश्लेपरण की प्रवृत्ति इस विवेच्यकाल मे समाज और व्यक्ति दोनो को लेकर चली है। ऐतिहासिक उपन्यास भी समाज और व्यक्ति दोनो प्रवृत्तियो को लेकर चल रहा है।

व्यक्ति-सापेक्ष और समाज-सापेक्ष उपन्यास

उपन्यास व्यक्ति और समाज को केन्द्र मानकर चलता है। व्यक्ति और समाज को लेकर चलने वाली दो प्रवृत्तिया कभी दबती और कभी उभरती चली आ रही हैं। प्रेमचन्द युग मे सामाजिक प्रवृत्ति की प्रधानता थी किन्तु व्यक्ति सापेक्ष प्रवृत्ति का भी बीजारोपण हो गया था। इन दो प्रवृत्तियो के आधार पर हिन्दी उपन्यासो का वर्गीकरण स्थूल रूप मे व्यक्तिसापेक्ष और समाजसापेक्ष रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है। समाजसापेक्ष और व्यक्ति-सापेक्ष प्रवृत्तियाँ भी अलग अलग धाराओ मे बही हैं।

व्यक्ति सापेक्ष और समाजसापेक्ष प्रवृत्तिया तीन धाराओ मे बही हैं। समाजसापेक्ष और व्यक्तिमापेक्ष—दोनो प्रकार के उपन्यासो मे 'वाद' का आग्रह रहा है। समाजसापेक्ष उपन्यासो ने समाजदर्शन के द्वारा समाजवादी विचार-धारा और व्यक्तिसापेक्ष उपन्यासो ने व्यक्ति-दर्शन के द्वारा व्यक्तिवादी विचार-धारा का प्रस्फुटन किया है। कुछ उपन्यास मे वाद का आग्रह है, कुछ मे मनोविश्लेपण का और कुछ वाद और मनोविश्लेषरण से परे है। मनोविश्लेषण का मूलाधार व्यक्ति है किन्तु वह भी मनोविश्लेषरणात्मक प्रवृत्तियो के आधार पर समाजसापेक्ष प्रवृत्तियो को स्थान दे सकता है। मनोविश्लेषरणात्मक उपन्यासकार अगर सामाजिक मूल्यो की स्थापना करे तो उसे व्यक्तिसापेक्ष उपन्यास मे स्थान न देकर समाजसापेक्ष उपन्यास मे स्थान देना पडेगा। कुछ उपन्यासो मे वाद और मनोविश्लेपरण का अभाव है और वे समाजसापेक्ष उपन्यासो मे सामाजिक और व्यक्तिसापेक्ष—उपन्यासो मे व्यक्तिपरक उपन्याम हैं। ऐतिहामिक उपन्यासो मे यह तीनो प्रवृत्तियाँ दृष्टिगत हो सकती हैं किन्तु इस विवेच्यकाल के उपन्यासो मे केवल सामाजिक, व्यक्तिपरक और समाजवादी प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं इसलिए इनको समाजसापेक्ष ऐतिहासिक उपन्यास और व्यक्तिसापेक्ष-ऐतिहामिक उपन्यास के रूप मे वर्गीकत किया जा सकता है।


उपन्यासों का वर्गीकरण
समाज सापेक्ष–उपन्यास
व्यक्ति सापेक्ष–उपन्यास
सामाजिक उपन्यास
समाजवादी उपन्यास
समाजपरक मनो-विश्लेषणात्मक उपन्यास
समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास
व्यक्तिपरक उपन्यास
व्यक्तिवादी उपन्यास
व्यक्तिपरक मनो-विश्लेषणात्मक उपन्यास
व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास

अत सामाजिक और व्यक्तिपरक उपन्यासो मे समाज और व्यक्ति की प्रवृत्तियो का चित्रण दार्शनिक मान्यताओ, मनोविश्लेषणात्मक उहापोह और ऐतिहासिकता मे मुक्त होता है, समाजवादी और व्यक्तिवादी उपन्यासो मे क्रमश: समाज और व्यक्ति का दर्शन अभिव्यक्त होता है, समाजपरक मनोविश्लेषणवादी और व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणवादी उपन्यासो मे, समाज और व्यक्ति की प्रवृत्तियो का चित्रण, मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि के आधार पर प्रस्तुत होता है, और समाजपरक ऐतिहासिक और व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास के परिपार्श्व मे समाज और व्यक्ति की प्रवृत्तियो का निदर्शन होता है।



सामाजिक-उपन्यास

प्रेमचन्द ने अपने कथा-साहित्य की व्याख्या करते हुए व्यक्ति-प्रधान और व्यक्तिवादी साहित्य का घोर विरोध प्रकट किया है। उन्होने अपने उपन्यासो के द्वारा सामाजिकता का सचार किया है, व्यक्ति के ऊपर समाज के महत्व को प्रतिष्ठित किया है। प्रेमचन्द के पूर्व हिन्दी के सामाजिक-उपन्यासो मे समाज का वास्तविक स्वरूप और उसकी गम्भीर समस्याओ का चित्रण नही के बराबर हुआ है। प्रेमचन्द के उपन्यासो का मूल स्रोत और प्रेरणा समाज-कल्याण रही है। उनकी यह धारणा थी "साहित्य की प्रवृत्ति अहवाद या व्यक्तिवाद तक परिमित नही रही, बल्कि वह मनोवैज्ञानिक और सामाजिक होती जाती है। अब वह व्यक्ति को समाज से अलग नही देखता किन्तु समाज के एक अग के रूप मे देखता है।"[1] सामाजिक जीवन से प्रेमचद का निकटतम सम्बन्ध था किन्तु उन्होने व्यक्ति की उपेक्षा नही की। व्यक्ति की पीडा को उन्होने सामाजिक परिस्थितियो के बीच स्पष्ट किया। उन्होने समाज को आधार मानकर व्यक्ति की समस्याओ पर प्रकाश डाला। उनके साहित्य मे व्यक्ति के स्थान पर समाज उभरता था। प्रेमचन्द ने यह स्वीकार किया "मनुष्य की भलाई या बुराई की परख उसके सामाजिक या असामाजिक कृत्यो मे है। जिस काम से मनुष्य-समाज को क्षति पहुचती है, वह पाप है, जिसमे उसका उपकार होता है, वह पुण्य है। सामाजिक उपकार या अपकार से परे हमारे कार्य का कोई महत्व नही है और मानव-जीवन का

---

१ प्रेमचन्द . साहित्य का उद्देश्य पृ० १६।

इतिहास इसी सामाजिक-उपकार की मर्यादा बाधता चला गया है।"[1] सामाजिक-उपकार या समाज मगल की भावना ही प्रेमचन्द के सामाजिक-उपन्यासो की आधारभूत तत्व थी।

प्रेमचन्द ने सामाजिक-उपन्यास के लिए समाज-मगल की भावना को आधार माना था इसलिए यह भ्रान्त धारणा चली आ रही है कि सामाजिक उपन्यास-कला की आधारभूत विचारधारा व्यक्तिचिंतन से सम्बद्ध न होकर समाज-मगल की भावना से अनुप्राणित है।[2] सामाजिक-उपन्यास का उद्देश्य समाज-मगल और व्यक्तिपरक उपन्यासो का उद्देश्य व्यक्तिमगल नही है। साहित्य का दायित्व व्यक्ति या समाज का मगल नही है। साहित्य मे व्यक्ति या सामाजिक-मूल्यो की स्थापना होती है। व्यक्तिपरक उपन्यासो मे उपन्यासकार जीवन को व्यक्ति के माध्यम से देखता, अभिव्यक्त करता है; विवेचन-विश्लेषण और चिंतन कर व्यक्तिमूल्यो की स्थापना करता है किन्तु सामाजिक-उपन्यासकार व्यक्ति की उपेक्षा करता है। सामाजिक-उपन्यास मे वह जीवनमूल्यो को समाज के माध्यम से और व्यक्तिपरक उपन्यास में व्यक्ति के माध्यम से प्रस्तुत करता है।

हिन्दी उपन्यास-साहित्य के इतिहास मे सामाजिक-उपन्यासो की यह प्रवृत्ति क्रमश बदलती रही है। प्रारम्भिक उपन्यासो का मुख्य स्वर सुधार का रहा है। हमारे उपन्यास का सबसे बडा विषय नैतिकता का रहा है। प्रारम्भ मे नैतिकता के प्रति सुधारवादी दृष्टि रही है। सामाजिकता के विवेचन मे हिन्दी-उपन्यास आदर्शवाद मे यथार्थवाद के धरातल पर उतर आया है।

सामाजिक उपन्यास के कई रूप दिखाई पड रहे है। उपदेशात्मक सामाजिक-उपन्यासो मे उपदेश का स्वर था। आलोचनात्मक सामाजिक-उपन्यासों मे समाज की आलोचना का स्वर, यथार्थवादी सामाजिक-उपन्यासो मे समाज का यथार्थचित्र, नग्नवादी सामाजिक उपन्यासो मे समाज का नग्न-चित्र और आचलिक सामाजिक उपन्यासो मे किसी अचल विशेष का चित्र दिखाई पडता है। आलोचना का स्वर होने से सामाजिक उपन्यास व्यक्तिवादी नही हो जाता है। यथार्थ का रग होने से समाजवादी और नग्नचित्रण होने से

---

१. प्रेमचन्द : साहित्य का उद्देश्य : पृ० ८३।

२. सुषमा-धवन हिन्दी उपन्यास . पृ० ६।

प्रकृतवादी और मनोवैज्ञानिक शिल्प होने से मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास नही हो जाता है।

अत. सामाजिक-उपन्यास की कथा, वस्तु, चरित्र और उद्देश्य से सामाजिकता का स्वर प्रतिध्वनित होता है। उसकी कथा किसी व्यक्ति मात्र की न होकर किसी समूह, परिवार, समाज या देश की होती है। इन उपन्यासो मे चरित्र केवल एक व्यक्ति के रूप मे अभिव्यक्त न होकर, समाज के सदस्य के रूप मे चित्रित होते हैं। उनके पात्र, अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास करते हुए, अपने व्यक्तित्व की पूर्णत रक्षा करते हुए, किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व भी करते हैं। सामाजिक उपन्यास का उद्देश्य जीवन को सामाजिक दृष्टि से देखना है, जीवन का विवेचन-विश्लेषण सामाजिक दृष्टि से करना है, व्यष्टि सत्य को समष्टि सत्य मे समा देना है और जीवन–मूल्यों की स्थापना समाज के माध्यम से करना है।

अमृतलाल नागर

अमृतलाल नागर सामाजिक उपन्यासकार हैं। सामाजिक उपन्यासकार होते हुए भी नागर जी ने व्यक्ति की उपेक्षा नही की है। उनकी धारणा है "व्यक्ति और समाज सूक्ष्म दर्शनार्थ विवेचन विश्लेषण के लिए तो अलग–अलग देखे जा सकते हैं, वस्तुत वे 'गिरा अरथ जल बीचि सम कहित भिन्न न भिन्न हैं।' यदि हम समाज को शब्द मानलें तो व्यक्ति उसका अर्थ है, इसी प्रकार व्यक्ति को शब्द मानलें तो समाज उसका अर्थ हो जाता है....... इसी प्रकार अन्तश्चेतना भी मेरे लिए कोरमकोर अमूर्त वस्तु नहीं, अपने समाज से अतरग होने की प्रक्रिया मे वह मुझे मिलती है।"[१] अमृतलाल नागर की उपन्यासकला का मूलभूत उद्देश्य व्यक्ति और समाज की समस्या मे समन्वय स्थापित करते हुए भी समाज की महत्ता, व्यक्ति के ऊपर प्रतिष्ठित की गई है। नागर जी की धारणा है कि व्यक्ति–सत्य के स्थान पर समाज-सत्य, व्यक्तिमूल्य के स्थान पर सामाजिक मूल्यो की स्थापना होनी चाहिए किन्तु समाज की भीड़ मे व्यक्ति को भी उपेक्षित नही किया जा सकता है। एक स्थान पर नागर जी ने पुनः कहा है. "इस प्रकार ऐन्द्रिक चेतना को मैं निजी और मस्तिष्क को मैं सामाजिक व्यक्तित्व मानता हूँ। व्यक्ति अपने इन दोनो व्यक्तियो को साथ लेकर ही जीवनयापन करता है। उसकी उलझने,

---

१. आलोचना, २८, पृ० ८६।

द्वन्द्व दुःख-सुख ग्रादि इन्ही दो प्रकार की चेतनाग्रों का द्वन्द्व समन्वय मे ममाया है। यह सामाजिक व्यक्तित्व-मस्तिष्क इतना अगाध व्यापक और समर्थ है कि ऐंद्रिक चेतना की शक्ति इच्छा–शक्ति को पूर्णतया आत्मसात कर स्वतत्र और नूतनरूप मे आता है।[1] अत: व्यक्ति के साथ सामाजिक-यथार्थ की अभिव्यक्ति नागर जी के उपन्यासो का मूलस्वर है।

सामाजिक उपन्यासकार

अमृतलाल नागर, उदयशकर भट्ट, फणीश्वरनाथ 'रेणु' और धर्मवीर भारती आदि इस विवेच्यकाल के सामाजिक-उपन्यासकार हैं क्योंकि इनके उपन्यासो मे सामाजिक–चेतना के दर्शन होते हैं।

'महाकाल' (१९४७), 'सेठ बाकेमल' (१९५५), 'बूद और समुद्र' (१९५६), 'शतरज के मोहरे' (१९५९), 'सुहाग के नुपुर' (१९६०) और 'ये कोठेवालियाँ' (१९६०) लेखक की उपन्यास-कृतियाँ हैं जिनमे 'सेठ बाके-मल', 'बूद और समुद्र', 'शतरज के मोहरे', 'सुहाग के नुपूर' और ये कोठे–वालियाँ इस विवेच्यकाल की रचनाएँ हैं। 'शतरज के मोहरे' समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। 'ये कोठेवालियाँ' को उपन्यास कहने मे सकोच होता है क्योंकि इसमे केवल वेश्यावृत्ति के खिलाफ जिहाद है।[2] 'बूंद और समुद्र' के अतिरिक्त इस विवेच्यकाल के अन्य उपन्यासो को सक्षिप्त विवेचना की गई है।

बूंद और समुद्र

कथासार—राजा बहादुर द्वारकाप्रसाद अग्रवाल की प्रथम पत्नी 'ताई' की हवेली मे कन्नोमल का बेटा चित्रकार–सज्जन किराए रहता है जिससे वह सामाजिक अगति का कारण समाज मे बैठकर खोज सके। ताई का जादू टोना प्रसिद्ध था। सज्जन के यहाँ उसके दो मित्र–उपन्यासकार महिपाल और कर्नल उर्फ श्री नगीनचद आया करते थे। मुहल्ले मे मास्टर जगदम्बा सहाय का भतीजे की विधवा-बहू से सबध होने मे लडका हुआ और पुलिस की छानबीन चालू हो गई। जगदम्बा सहाय की पुत्री वनकन्या ने सज्जन से पुलिस को जाने को कहने के लिए सहायता मागी। सभूती सुनार के यहाँ बडी बहू विरहेश कवि 'वीर' के प्रेम मे उलझ गई और उसको उकसाकर उसका भडा-भोड उसकी ननद नन्दो ने किया। बडी की दुर्गति होती है और वह शेष

१ आलोचना, १६, पृ० ६०–६१।

२. अमृतलाल नागर . 'ये कोठेवालियाँ' : पृ० ९।

जीवन विरहेश कवि के यहाँ काटती है। वेशर्म चित्रा से सज्जन के भी अनैतिक सबध थे। महिपाल के सवध डा शीला स्त्रिग से थे। महिपाल की पत्नी कल्याणी महिपाल के कारण दुखी थी। वनकन्या सज्जन से मिली और दोनो प्रेमपाश मे वध गये और विवाह की मंजिल तक पहुँच गये। अपनी मानजी का विवाह करने के लिए महिपाल चोर हो गया। उसके धनी ननिहाल मे डाकुओ का धावा हुआ और चोरो ने धन को गाढ दिया। महिपाल ने गढे-धन को हस्तगत किया। सज्जन वावाराम जी के सम्पर्क मे आया और उसकी सामाजिक-चेतना प्रखर होने लगी। उसने अपने तीन लाख रुपयो का ट्रस्ट कायम किया। कर्नल, वनकन्या, एक जज, एक अफसर और वह ट्रस्ट के मेम्बर बने। उसने सहकारी वैंक खोलने की योजना वनाई। महिपाल ने इस सस्था के विरोधी पूँजीपतियो—सेठ रूपरतन और लाला जानकीशरण के इशारे पर, एक पुस्तिका मे व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओ की पूर्ति के लिए, सज्जन के विरुद्ध जहर उगला। ताई की वीमारी मे वनकन्या ने उसकी सेवा की। सज्जन ने महिपाल के विरुद्ध मानहानि का दावा करना चाहा किन्तु कर्नल ने उसे मना कर दिया। सज्जन ने इसको अस्वीकार कर दिया। सज्जन का कहना था कि यह सिद्धात की वात है, प्रश्न केवल एक व्यक्ति के अपमान का नही है वल्कि अनेक व्यक्तियो की आर्थिक व नैतिक हानि का है। सज्जन ने स्वय को एक व्यक्ति नही सस्था माना। ताई का देहान्त हो गया। राजा सा० की ओर से सज्जन को हवेली खाली करने का नोटिस मिला। उस हवेली मे वनकन्या का स्कूल चलता था। सेठ रूपरतन ने महिपाल की पोल खोल कर रख दी। धनाभाव से उसने चोरी की थी। शादी, व्याह, मुण्डन, जनेऊ, बच्चो की पढाई, हैसियत की चढाओढ, कल्याणी का हठ, सबने मिलकर उसका आदर्श भ्रष्ट किया था। सज्जन ने मानहानि की इच्छा छोड दी। महिपाल की मानजी का विवाह हो गया और उसने एक सम्पादक को लिखे गये पत्र मे, सार्वजनिक रूप से अपराध स्वीकार कर लिया। उसने लिखा कि उसके व्यक्तित्व की यह सकीर्णता समाज मे कलक के रूप मे याद रखी जाए। गोमती मे डूवकर उसने आत्महत्या करली। कर्नल, सज्जन, कल्याणी और शीला पर उसकी मृत्यु ने एक स्थायी छाप छोड दी। सज्जन को विश्वास था कि एक दिन व्यक्ति की सामाजिक-चेतना जाग कर ही रहेगी।

वस्तु-विधान—'वूंद और समुद्र' मे सज्जन की कथा प्रारभ से अत तक अभिव्यक्त हुई है और अन्य कथाएँ इस कथा को आगे वढाती हैं। जगदवा महाय की पुत्री वनकन्या की अपनी कथा है किंतु सज्जन से विवाह होने के

कारण सज्जन की कहानी, सज्जन और वनकन्या की कहानी बन जाती है। दूसरी मुख्य कहानी महिपाल की है क्योंकि वह सज्जन का मित्र रहा और दोनों ही समाज मे व्यक्ति को प्रमुख मानते रहे। सज्जन ने तो वनकन्या और और बाबा राम जी के साहचर्य से सामाजिकता की ओर बढकर, उसको अपना लिया किंतु महिपाल, व्यक्तिवादी चेतना के कारण, पतन की ओर बढा। ताई की कथा उपन्यास का केन्द्र बिंदु है, क्योंकि एक ओर वह सज्जन की कथा को आगे बढाती है और दूसरी ओर वह भारतीय परिवार और भारतीय समाज की प्रवृत्तियो को स्पष्ट करने मे सहायक होती है। सभूती सुनार के घर की कथा का मूल कथा से कोई सबध नही है किंतु पारिवारिक जीवन के चित्रण के मोह ने उसे ग्रसा है। डा शीला स्विग की कथा ने महिपाल की कथा को आगे बढाया है। अत कई कथाओ का सबध मुख्य कथा-सज्जन और वनकन्या से दूर का है किंतु भारतीय परिवार और भारतीय-समाज की कमियो, अभावो और दुर्बलताओ के चित्रण के मोह से लेखक ने उनको स्थान दिया है। इस उपन्यास मे युग का यथार्थ प्रकट हुआ है इसलिए विशाल चित्र फलक के कारण अन्विति या सघठन मे बाधा पडी है। डा. रघुवश का कथन है कि नागर जी मे इस स्तर पर व्यापक मानव जीवन की अपेक्षा सामाजिक जीवन और उसके यथार्थ की चेतना भी है, और दूसरी ओर समसामयिक व्यक्तिचेतना के यथार्थ को भी अस्वीकार कर देना उनके लिए सभव नही हो सका। यथार्थ के इन कई स्तरो और पक्षो को एक साथ उठाना युग की माग हो सकती है, लेखक को उसका महत्व भी मिलता है। लेकिन इस स्थिति मे रचनात्मक स्तर पर इसका सयोजन, सगठन और अन्विति तो सभव नही है, अथवा उसके लिए बडी सर्जक प्रतिभा की अपेक्षा थी।[1] व्यक्ति और समाज के विशाल धरातल का यथार्थ—अकन लेखक को करना पडा है, इसलिए उक्त प्रासगिक कथाओ का योगदान उपन्यास की अन्विति और उसके विकास मे सहायक सिद्ध नही हुआ है। यह मान्यता अक्षरश. सत्य है कि उपन्यास को कमजोर करने वाला अश आदिम समाज का हवाला देने का रोग है।[2] आदिम समाज के हवाले ने वस्तु-विधान को इतना कमजोर नही बनाया है, जितना भारतीय समाज और भारतीय परिवार के यथार्थचित्रण ने। केवल एक व्यक्ति की कथा कहकर उसका समुचित

१ माध्यम . मई . १९६५ : पृ० १०८–१०९।

२ आलोचना २०, पृ० ९१–९२।

विकास करना लेखक को इष्ट नही था, वह परिवार और समाज की कथा कहना चाहता है। 'बूद और समुद्र' मे लेखक ने व्यक्ति और समाज के समन्वय को उपस्थित किया है और इस दृष्टि से सज्जन और वनकन्या, महिपाल और शीला ज्विग, ताई, सभूती परिवार और बाबाराम जी की कथाएँ अपने उद्देश्य को बढाने मे सहायक हुई है। अतः उद्देश्य की दृष्टि से उपन्यास के वस्तु-विधान मे अन्विति की पूर्ण रक्षा हुई है किन्तु मुख्य कथा, प्रासगिक कथाओ और गौण-कथाओ को कथा-विकास की दृष्टि से ले तो वस्तु-अन्विति मे कई कथाएँ योगदान नही देती हैं। भारतीय-समाज और भारतीय-परिवार के चित्रण के पूर्वाग्रह के फलस्वरूप उपन्यासकार को वस्तु-अन्विति की रक्षा का मोह नही रहा है।

चरित्र-विधान—यह उपन्यास पात्रो का अजायबघर है। कथा के विकास की दृष्टि से सज्जन को नायक और वनकन्या को नायिका माना जा सकता है किंतु भारतीय-परिवार और भारतीय-समाज के चित्रण के कारण नायक-नायिकाहीन उपन्यास है। ताई और महिपाल भी कम महत्वपूर्ण पात्र नही हैं। अन्य पात्रो मे राजा द्वारिकादास, रूपरतन, छोटी, नदो, बड़ी, शकरलाल, चित्रा, डा शीला ज्विग और बाबा रामजी आदि हैं। सज्जन प्रारम्भ मे व्यक्ति चरित्र है, जो वनकन्या के ससपर्श से, सामाजिकता की ओर बढ़ता है। उसके जीवन की विकास-धारा व्यक्ति के रूप मे बहती आ रही थी किंतु वह समाज की अगति का कारण समाज मे पैठकर सोचना चाहता है।[1] सज्जन की सामाजिक चेतना का तीव्र विकास बाबा रामजी के सपर्क मे आने से होता है। वह अपने जीवन के कार्यो को सामाजिक प्रयोग मानता है।[2] सज्जन और महिपाल—दोनो मे दुर्बलताएँ और कमजोरियाँ है किन्तु महिपाल के जीवन की आर्थिक-विषमताएँ उसको तोड देती है। सज्जन की कमजोरी चित्रा है, तो महिपाल की डा शीला ज्विग। महिपाल अपनी कमजोरियो से पतन की ओर जाकर पूर्णत. व्यक्तिवादी-चेतना का प्रतीक बन जाता है। आत्महत्या करते समय वह चाहता है कि उसके व्यक्तित्व की सकीर्णता सदा कलक के रूप मे याद रखी जाय। ताई एक महत्वपूर्ण पात्र है क्योंकि जादू टोने का प्रतीक होते हुए भी उसमे सवेदना और गहराई है। यह

---

१. अमृतलाल नागर · बूंद और समुद्र : पृ० ७।

२. वही, पृ० ५६६।

कहा गया है कि ताई हिन्दी को एक विशिष्ट देन है और इस पर एक उपन्यास लिखा जा सकता है ।'[१] अन्य पात्रो मे राजा द्वारिकादास और रूपरतन पूँजीपति वर्ग का; चित्रा आधुनिक नारी के वीभत्स रूप का: शीला ज्विग आधुनिक नारी का; कवि वीर आज के रूमानी गीताकारो का; नन्दो भारतीय–परिवार की ननद का और वडी वहू प्रेमिका का प्रतिनिधित्व करती है। वावा रामजी को सामाजिक-चेतना के प्रतीक के रूप मे अभिव्यक्त किया गया है। वनकन्या, आधुनिक बौद्धिक नारी का प्रतीक है, जो जीवन की रूढियो और परम्पराओं का विरोध करती । सज्जन, महिपाल, वनकन्या और ताई—इस उपन्यास की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं। सज्जन और महिपाल विकासशील पात्र है किंतु वनकन्या, ताई, वावा रामजी, चित्रा और शीला ज्विग सभी सपाट हैं क्योकि सज्जन और महिपाल को छोडकर अन्य पात्रो मे विकास की सम्भावनाएँ नही रही हैं। सज्जन, महिपाल, वनकन्या, ताई और वड़ी मे जीवन का स्पन्दन होने मे प्राणवान पात्र हैं। लेखक ने पात्रो का चरित्राकन विना किसी पूर्वाग्रह के ग्रस्त होकर किया है इसलिए वे मुक्त और सशक्त हैं। पात्रो की सजीवता और विविधता मे लेखक हमे जीते जागते ससार मे खडा कर देता है।

उद्देश्य—उपन्यास का लक्ष्य महिपाल के अतिम पत्र के असगवद्ध वाक्यो और सज्जन के विचार–मथन से स्पष्ट हो जाता है। महिपाल लिखता है, "व्यक्ति अवश्य रहे, पर उसके व्यक्तिवादी चिंतन मे भी सामाजिक दृष्टिकोण का रहना अनिवार्य हो।" ""दु ख-सुख, शाति-अशाति आदि व्यक्तिगत अनुभव हैं पर ये समाज मे प्रत्येक व्यक्ति के हैं। अतएव हमे यह मानना चाहिए कि समाज एक है—व्यक्ति तो अनेक है।"[२] सज्जन सोचता है, "हमारा समाज अभी जागरुक नही है।" " हमारा देश विचारो और रीतिरिवाजो का एक महान अजायवघर है।"' "' हमारे आज के लोकजीवन मे फैले अविश्वास का दूसरा कारण आज की राजनीतिक पार्टियाँ है। 'जनजीवन अन्धविश्वास और भ्रान्तियो से जकडा हुआ है।" " इस समय तो ऐसा लगता है कि इस देश मे, पृथ्वी पर, केवल व्यक्ति रहता है, समाज नही। व्यक्ति केवल अपने दायरे मे रहता, सोचता और कर्म करता है। ऐसा लगता है, जैसे हर व्यक्ति एक–एक द्वीप मे अलग–अलग है।"'''' मनुष्य का आत्म-

---

१ माध्यम मई १९६५ पृ० ११३।
२. बूंद और समुद्र पृ० ५८०।

विश्वास जागना चाहिए, उसके जीवन मे आस्था जागनी चाहिए। मनुष्य को दूसरे के सुख दुख मे अपना सुख-दुख मानना चाहिए।""""" पर शर्त यह है कि सुख-दुख मे व्यक्ति का व्यक्ति से अटूट सबंध बना रहे—जैसे बूद से बूद जुडी रहती है—लहरो से लहरें। लहरो से समुद्र बनता है इसी तरह बूद मे समुद्र समाया है ... व्यक्ति की सामाजिक चेतना जागकर ही रहेगी।"[1] व्यक्ति को व्यक्तिपरकता और व्यक्तिवादी चेतना के कठघरे से निकालकर, सामाजिक चेतना जगाना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

बूंद और समुद्र व्यक्ति और समाज

बूद व्यक्ति का प्रतीक है और समुद्र समाज का। बाबाजी ने कहा, हर बूद का महत्व है क्योकि वही तो अनन्त सागर है एक बूद व्यर्थ क्यो जाय? उसका सदुपयोग करे—कैसे यह बूद अपने आपको महासागर अनुभव करे? इस विशाल जनसागर मे वह नितात अकेली है। उसका कोई अपना नही है—बूद अगर बूद से शिकायत करती है तो उससे कही अलगाव भी रखती है। तब यह सागर कैसा जिसमे हर बूद अलग है? व्यक्ति यदि इतना ही अलग है तो समाज बधता ही क्योकर है?[2] इस उपन्यास मे व्यक्ति और समाज की समस्या को सज्जन, महिपाल और वनकन्या के माध्यम से प्रस्तुत किया है। सज्जन और महिपाल दोनो व्यक्ति परक पात्र है, सज्जन वनकन्या के कारण सामाजिक मूल्यो को अपनाकर अपने व्यक्तित्व को सामाजिक व्यक्तित्व मे आत्मसात कर देता है। महिपाल ऐसा व्यक्ति–चरित्र है, जो समाज से पलायन करके मौत को गले लगाते हुए, सामाजिक चेतना को स्वीकार करता है। सज्जन व्यक्ति की सामाजिक चेतना का प्रतीक है और सज्जन का व्यक्तित्व ही उपन्यासकार के लक्ष्य को स्पष्ट कर देता है और महिपाल द्वारा प्रतिपादित व्यक्ति की सामाजिक चेतना का रूप आरोपित सा लगता है। बाबा जी का व्यक्तित्व भी व्यक्ति की सामाजिक चेतना का प्रतीक है। महिपाल स्वय अनुभव करता था कि व्यक्ति और समाज दोनो ही दोषपूर्ण हैं। जब तक समाज नही बदलता तब तक व्यक्ति बेचारा क्या करेगा? व्यक्ति और समाज के समन्वय का यही मूलभूत आधार है।[3] उपन्यास मे बूद और

---

१. वही, पृ० ५८१–५८३।

२ बूद और समुद्र पृ० ३६९।

३. वही, पृ० ४३४।

समुद्र—व्यक्ति और समाज के समन्वय की समस्या को प्रस्तुत किया है। व्यक्ति और समाज का समन्वय करके व्यक्ति की सामाजिक चेतना जगाना ही इसका उद्देश्य है इसलिए यह निश्चित रूप से सामाजिक उपन्यास है।

अन्य उपन्यास

सेठ बांकेमल (१९५५) अमृतलाल नागर का आगरे की भाषा मे लिखा हुआ उपन्यास है। इसमे सेठ बाँकेमल और चौबेजी अपने गत–जीवन के निठलेलपन को अभिव्यक्त करते है। इसमे बाँकेमल की जिन्दादिली अभिव्यक्त होती है। 'सेठ बाँकेमल' युग की सडीगली रूढियो पर एक व्यग है। एक लेखक ने बाकेमल का प्रशस्ति गान गाते हुए उसे होरी के समान स्थान देते हुए कहा है कि होरी और बाँकेमल गाँव और शहर की मरणशील सभ्यता के ऐसे अध्ययन हैं जो व्यक्ति भी हैं और वस्तु सत्य की पकड के लिए इतिहास के अमर नायक भी।[1] होरी की श्रेणी मे बाकेमल को स्थान नही दिया जा सकता है। वह व्यक्ति अवश्य है किन्तु इतिहास का अमर नायक नही।

सुहाग के नुपूर (१९६०) मे लेखक ने 'निवेदन'[2] मे स्वीकार किया है कि उपन्यास तमिल–साहित्य के महाकवि 'इलङ्गोवन' के महाकाव्य 'शिलप्पादिकारम्' पर आधारित होते हुए भी एक स्वतत्र रचना है। नगर के प्रसिद्ध-प्रतिष्ठित सेठ का लडका, दूसरे वैभवशाली सेठ का जामाता कोवलन अनिंद्य सुन्दरी कन्नगी की उपेक्षा कर, पायल के नुपूरो को झकार को झंकृत करने वाली माधवी के प्रति आकर्षित होता है किन्तु समाज के नियम और बन्धनो से वह विवश होता है। समाज के विवाह की जटिलताओ के फलस्वरूप कोवलन, कन्नगी और माधवी का जीवन विषमय बन जाता है। प्रारम्भ मे माधवी सैकड़ो वैभवशाली पुरुषो को ठुकराकर कोवलन की ओर आकृष्ट होती है और कोवलन की प्रतीक्षा करती है। उसकी माँ उसे वेश्या बने रहने और नृत्य गुरु चेलका कुलवधू बनने का उपदेश देती है। दुहरे विचारो के अन्तर्द्वन्द्व के बीच वह डोलती रहती है। वह पायल ने नुपूरो को त्याग कर सुहाग के नुपूरो की आकाक्षा करती है। कन्नगी कोवलन मे स्नेह नही पाती इसलिए सुहाग के नुपूर पर ही सन्तोष करती है। माधवी लम्बी प्रतीक्षा के पश्चात् अपने प्रेमी को लातमारकर दूसरे पुरुष का आश्रय ग्रहण करती है। सती पत्नी

---

१. राजेन्द्रयादव आलोचना १४ पृ० ५०।

२ अमृतलाल नागर : सुहाग के नुपूर : 'निवेदन'।

न बनने का दु ख उसे जीवन पर कचौटता रहता है और वह बौद्ध सघाराम मे पागल हो जाती है।

वस्तुविधान की दृष्टि से यह उपन्यास सुन्दर है। कोवलन, कन्नगी और माधवी के त्रिकोण मे माधवी मशवत चरित्र है। कोवलन, कन्नगी और माधवी सभी परिस्थितियो के पुतले हैं किन्तु लेखक ने तीनों को व्यक्तित्व प्रदान किया है। कन्नगी का सपाट चरित्र है किन्तु माधवी, अपने जीवन के उतार चढावो के कारण, विकसनशील पात्र है। विवाह के प्रश्न को लेकर समाज की रूढियो और मान्यताओ को बताना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। पगली माधवी के शब्दो मे उपन्यासकार बोलता है 'पुरुष जाति के स्वार्थ और दम्भ भरी मूर्खता से ही सारे पापो का उदय होता है। उसके स्वार्थ के कारण ही उसका अर्धांग–नारी जाति पीडित है। एकागी दृष्टिकोण से सोचने के कारण ही पुरुष न तो स्त्री को सती बनाकर ही सुखी कर सका और न वेश्या बना कर ही। इसी कारण वह स्वय ही झकोले खाता है और खाता रहेगा।[1]' यही उपन्यासकार का उद्देश्य जान पडता है।

'सुहाग के नुपूर' सामाजिक उपन्याम है। माधवी, कन्नगी और कोवलन के प्रेम और विवाह के त्रिकोण और विषाक्त जीवन की जड मे समाज की परम्पराएँ, समाज के सडे गले नियम और समाज की रूढिया हैं इसलिए सामाजिक उद्देश्य के कारण, सामाजिक–उपन्यासो की श्रेणी मे, इस उपन्यास को स्थान दिया है।

उदयशंकर भट्ट

उदयशकर भट्ट सामाजिक–चेतना के उपन्यासकार है। इनकी धारणा है 'मनुष्य मे साधारणत तीन प्रकार की प्रेरणा काम करती हैं (१) अपने अस्तित्व के प्रति अनुराग (२) अपनी आकाक्षाओ की तुष्टि का प्रयत्न (३) समाजविधान के प्रति दायित्व की चेष्टा। तीसरी ही समाज सुधारक, धर्म प्रवर्तक, नेता और कलाकार को उत्पन्न करती है। यह एक प्रकार की 'ग्रिगेरियस अर्ज' है। मालूम होता है दया, क्षमा, स्नेह, क्रोध, ईर्ष्या का जो विकास मनुष्य मे हुआ है, उसमे इसी सामाजिक दृष्टि का योगदान है फिर वाणी का वरदान जो मनुष्य को मिला है वह निश्चय ही व्यक्तिगत न होकर समाजगत है। यह मानना पड़ेगा कि कलाकार या सृष्टा, व्यक्ति न होकर एक समष्टि है। वह जनजीवन का प्रतिनिधित्व करता है। वह अपनी सृजन की भूख को

१, सुहाग के नुपूर (१९६०), पृ० २४४–२४५।

सन्तुष्ट करने के लिए जो कुछ करता है, उसमे सुख–दु ख, आसक्ति, विरक्ति, अनुराग, द्वेष उसके अपने नही हैं, समाज के है, युग के हैं, क्योकि वह व्यक्ति नही है।[1] लेखक की यह सामाजिक चेतना उनके सभी उपन्यासो मे स्पष्ट प्रतिध्वनित होती है। सशक्त सामाजिक चेतना का लेखक होते हुए भी एक अनुसधित्सु ने इन्हे व्यक्तिवादी चेतना का लेखक घोषित करते हुए कहा है कि व्यक्ति को विशेषकर नारी को सामाजिक बन्धनो मे जकड़ा हुआ पाकर लेखक विद्रोह की भावना को जागृत कर वैयक्तिक स्वतत्रता के स्वर को ध्वनित करता है। प्रेम के लिए व्यक्ति की ललक व्यक्तिवादी चेतना को मुखरित करती है। इसी तरह दूसरे उपन्यास मे रत्ना का चरित्र प्राचीन के प्रति विमुखता और नवीन के प्रति ममता को व्यंजित करता है। उसके जीवन की आशा-आकाक्षाए व्यक्तिवादी चेतना की प्रतीक हैं। डा० शैफाली और रत्ना के चरित्रांकन मे भट्ट ने समस्त सहानुभूति को उडेल कर निजी जीवन दृष्टि का परिचय दिया है जिसके आधार पर उनकी कृतियो को व्यक्तिवादी उपन्यास की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है।[2] लेखक की जीवन-दृष्टि निश्चित रूप से सामाजिक है और केवल प्रेम और विवाह को व्यक्ति-चेतना और सामाजिक चेतना का प्रतीक मानकर किसी कृति को सामाजिक या व्यक्तिवादी घोषित नही किया जा सकता है। उदयशकर भट्ट प्रेमचद की सामाजिक परम्परा के लेखक हैं और उनके सभी उपन्यासो मे सामाजिक चेतना का स्वर प्रतिध्वनित होता है।

'वह जो मैंने देखा' (१९४५), 'नये मोड' (१९५३), 'सागर लहरें और मनुष्य' (१९५५), 'लोकपरलोक' (१९५८), 'एक नीड दो पछी' (१९५९) और 'दो अध्याय' (१९६२) भट्ट जी की उपन्यास कृतियाँ है जिनमे 'वह जो मैंने देखा' के अतिरिक्त अन्य सभी कृतिया इस विवेच्यकाल की हैं। 'सागर लहरे और मनुष्य' लेखक की महत्वपूर्ण कृति है इसलिए इसकी विस्तृत विवेचना की गई है और अन्य उपन्यासो की सक्षिप्त विवेचना अन्य उपन्यासो के अन्तर्गत की गई है। 'नये मोड' का परिवर्द्धित एव सशोधित सस्करण 'डा० शैफाली' (१९६०) के रूप मे पुन: प्रकाशित हो चुका है।

---

१ उदयशकर भट्ट : आलोचना १५ . पृ० ६१।

२ डा० सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास . पृ० १४६।

'सागर लहरें और मनुष्य'

कथासार—'सागर लहरे और मनुष्य' में तूफानो मे संघर्ष करते, समुद्र की लहरो मे साम लेते, जीवट के धनी मछुआरो की अन्तरंग कहानी है। यह बम्बई के निकट मछुआरो की बस्ती मे रहने वाली मछुआ लडकी रत्ना की कहानी है। उसकी शिक्षा-दीक्षा और बम्बई शहर की चकाचौंध ने उसकी महत्वाकांक्षाओं को जगा दिया। वह जीवन मे परिवर्त्तन चाहती है क्योकि वह मछुआ जीवन से असन्तुष्ट है। बम्बई के वैभव, ऊंचे महल, मोटर और वहाँ के निवासियो की आनबान उसे आकर्षित करती है। वह ऐसे आदमी की खोज करना चाहती है जो उसकी आवश्यकताओं को पूरा कर सके। उसकी महत्वाकाक्षाओ को जगाने का काम उसकी मित्र सारिका ने किया। यशवन्त को छोडकर रत्ना का झुकाव माणिक की ओर हो गया। उसका मोह माणिक के प्रति इतना नही था जितना सौंदर्य का प्रलोभन। वह बरसोवा को 'नरक और गाँवडा[1]' मानती थी। माणिक के साहचर्य से उसे पता लगा कि उसका बरसोवा का मकान अच्छा था। वह सोचने लगा कि क्या जिन्दगी भर उसे यही रहना पडेगा? यशवन्त के जिन पुष्ट अंगो को वह अंक मे भरना चाहती थी, उसकी जगह माणिक का निर्बल और सासो से बोझिल हड्डियो का ढाचा उसे मिला। माणिक ने रत्ना का सौदा अपने 'पार्टनर' के साथ करना चाहा किन्तु रत्ना उसे पीटकर आ गई। रत्ना को माणिक धन कमाने का साधन बनाना चाहता था। उधर यशवन्त ने रत्ना की याद मे लोक सेवा मे अपना जीवन अर्पित कर दिया। रत्ना ने माणिक को छोडकर नौकरी कर ली और टाइप सीखने लगी। उसने सारिका को बताया कि अगर उसे अच्छा आदमी मिल जाय तो वह शादी कर लेगी, अब मछलीमार नही बनी रहना चाहती है। रत्ना घीरूवाला से मिली और दोनो सहजीवन व्यतीत करने लगे। विवाह से पहले उसे घीरूवाला के समक्ष आत्मसमर्पण करना पड़ा। घीरूवाला विवाह का बहाना बनाता रहा। एक पारसी बुढिया के द्वारा घीरूवाला का कच्चा-चिट्ठा, रत्ना के समक्ष खुल गया। अब रत्ना नर्स हो गई और उसका विवाह डा० पाण्डुरग से हो गया।

वस्तु-विधान—'सागर लहरें और मनुष्य मे' रत्ना की कथा मुख्य है और अन्य कथाए उसके इर्दगिर्द दौडती है। इर्दगिर्द दौडने वाली कथाओ मे मुख्य रूप से माणिक और यशवन्त की कथाए हैं। रत्ना माणिक और यश-

---

१. उदयशंकर भट्ट 'सागर, लहरें और मनुष्य' पृ० ११२।

वन्त की अलग-अलग जीवनियाँ मालूम होती हैं, किन्तु यह जीवनियाँ मिलकर उपन्यास बन गई हैं। माणिक के रूप मे वह जीवन की चकाचौंध को तुष्ट करना चाहती है, किन्तु उसे केवल अतृप्ति मिली और यशवन्त उसके आदर्शों और कर्त्तव्यो का प्रतीक रहा। अन्त मे, डा० पाडुरग के प्रसग मे, केवल आदर्शवादी मान्यताओ की स्थापना के लिए, मुख्य कथा के साथ सम्बन्ध जोडने का प्रयास किया है। माणिक उपन्यास की मुख्य कथा के विकास मे सहायक हुआ है, किन्तु उसके भूत जीवन का विस्तृत वर्णन निरर्थक प्रतीत होता है। केवल माणिक के जीवन और चरित्र को स्पष्ट करने के लिए इस खण्ड की आवश्यकता महसूस हुई है, अन्यथा उपन्यास के वस्तु-विधान की दृष्टि से यह खण्ड निरर्थक है। अंतिम खण्ड मे आदर्शवाद के फलस्वरूप घटनाए उलझती चली जाती हैं। इतना होने पर भी यह उपन्यास सजीवता और चित्रोपमता के कारण निश्चित रूप से सुगठित स्थापत्य का सुन्दर नमूना है क्योंकि इसको पढते समय लगता है कि हम वरसोवा के तट पर खडे हैं, रत्ना, वशी, सारिका, माणिक और यशवन्त हमारी आखो के सामने खडे हैं, हम उन्हे अपनी आखों से देख रहे हैं, उनकी उपस्थिति का अनुभव कर रहे हैं। उपन्यास का अंत आदर्शवादी उद्देश्य के कारण, उपन्यास की अन्विति मे अवश्य बाधक होता है। उपन्यास मे घटनाओ का विकास तर्क सगत रूप से हुआ है। 'सागर, लहरें और मनुष्य' मे लेखक मछुआरो के जीवन का चित्रण करना चाहता है, इस दृष्टि से भी पाण्डुरग और घीरूवाला के प्रसग निरर्थक हैं। अत. माणिक के भूत-जीवन और अन्त के प्रसग को छोडकर उपन्याम मे वस्तु-अन्विति की रक्षा हो सकी है।

चरित्र-विधान—यह नायिका-प्रधान उपन्यास है क्योंकि रत्ना का विकास ही इस उपन्यास मे मुख्य रूप से हुआ है। अन्य पात्रो मे माणिक, यशवन्त, वशी, जागला, घीरूवाला और डा० पाण्डुरग आदि हैं। गौण पात्रो मे दुर्गा और उसकी मा गूँगी आदि हैं। रत्ना, माणिक, घीरूवाला और दुर्गा-सभी यथार्थवादी पात्र हैं, किंतु यशवन्त और डा० पाण्डुरग आदर्श के प्रतीक हैं। डा० पाण्डुरग पूर्णरूप से आदर्शवाद का प्रतिनिधित्व करते हैं किंतु यशवंत यथार्थोन्मुख आदर्शवादी पात्र है, जो जीवन की दुर्बलताओ और कमियो पर विजय पाता हुआ, लोक सेवा की ओर उन्मुख होता है। डा० पाण्डुरग थोथे आदर्शवाद के कारण, अस्वाभाविक जान पडता है। यशवन्त श्रम का प्रतीक है, तो जागला दमित श्रमिक चेतना का प्रतीक है। माणिक पूँजीवादी सस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। घीरूवाला स्वार्थपरता, नीचता और दुष्टता का

प्रतीक है। रत्ना मछुआरो की युवती नारी होते हुए जीवन की महत्वाकांक्षाओ की प्रतीक है। गूँगी अपने जामाता के प्रति यौन आकाक्षा होने के कारण, अपने मछुआ नारी के जीवन से ऊपर नहीं उठ सकी है। रत्ना, माणिक और यशवन्त, अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हुए भी, व्यक्ति-चरित्र हैं। उपन्यास के प्रारम्भ से ही महत्वाकांक्षाओ के कारण रत्ना के मन मे यशवन्त और माणिक, वरसोवा और वम्बई की चकाचौंध के बीच अन्तर्द्वन्द्व उठता है किंतु वह यशवन्त और वरसोवा को छोडकर, माणिक और वम्बई की चकाचौंध मे खो जाती है। रत्ना का चरित्र विकसनशील है क्योकि जिन्दगी के उतार-चढावो के बीच जीवन के परिवर्त्तनो को झेलती हुई आगे बढ़ती है। उपन्यासकार ने पात्रो का निर्माण किया है और उनको तटस्थता से चित्रित करके छोड दिया है। वे अपनी वोली बोलते हैं और उनमे जीवन संचरित होता है। लेखक के व्यक्तित्व और विचारो से अलग उनकी साँसें, लेखक की साँसें न होकर उनकी अपनी साँसें है, उनके विचार लेखक के विचार न होकर उनके अपने विचार हैं। आत्माभिमानी-वशी, महत्त्वाकाक्षिनी-रत्ना, भौतिकवादी-माणिक, परिश्रमी यशवन्त-सभी अपना अस्तित्व रखते हुए प्राणवान पात्र हैं।

उद्देश्य.

केवल रत्ना की जीवन-गाथा ही इस उपन्यास का उद्देश्य नही है, यह एक समाजशास्त्रीय उपन्यास है। इस उपन्यास पर यह आक्षेप लगाया जाता है कि मातृ सत्ता पर आधारित समाज मे पुरुष और स्त्री का क्या स्थान है, उनके पारस्परिक व्यवहारो का क्या रूप है, इन सबके अध्ययन के कारण उपन्यास समाजशास्त्र से कम महत्वपूर्ण नही है।[1] उपन्यासकार उपन्यास मे समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण अपना सकता है और इसके लिए उसको समाजशास्त्र की पुस्तक कहना ठीक नही है। वरसोवा के मछुओ का जीवन इस उपन्यास का विषय है। लेखक ने मछुओ के आचार विचारो, पारस्परिक व्यवहारो और उनकी परम्पराओ को प्रकट किया है। इन जन-जातियो मे शिक्षा के प्रवेश मे, रत्ना जैसी लडकिया अपने जीवन को हीन समझकर भटक जाती हैं। वे सोचा करती हैं पुराने मकान, पुराने विचार, पुरानी बातें। उसने इतना पढा है तो क्या मछली मारकर मार्किट मे जाकर बेचने के

---

१. डा० गणेश . हिन्दी उपन्यास-साहित्य का अध्ययन : पृ० २४०।

लिए ?[1] मोहमयी नगरी के सौंदर्य का प्रलोभन उन्हे अपनी ओर खीचता है। वे अपने जीवन को नरक मानती हैं। वे सोचा करती हैं कि यहां के लोगो मे इस काम से नफरत है। दुनिया इतनी आगे बढ गई है और ये अभी तक बाप-दादो की तरह मछली मार रहे है।[2] आदर्शवादी अत करके लेखक समस्या से भटक गया है। रत्ना को, जीवन से पलायन कर, डा० पाण्डुरंग से विवाह, समस्या का समाधान नही है। यह निश्चित है कि उपन्यास का समाजशास्त्रीय उद्देश्य है।

यह व्यक्तिवादी चेतना का उपन्यास नही है। इस बात मे कोई सार ध्वनित नही होता है कि इन मछुआरो के जीवन मे धीरे धीरे नगर की व्यक्तिवादी चेतना सचरित होने लगती है, उनके पुराने रूढिवादी संस्कार शिथिल पडने लगते हैं। इस चेतना को व्यजित करने के लिए लेखक ने एक नारी के व्यक्तित्व का अंकन किया है, जो उपन्यास का केन्द्रबिन्दु है, जिसके चारो ओर समस्त घटनाचक्र घूमता है।[3] यह व्यक्तिवादी चेतना का उपन्यास न होकर सामाजिक चेतना का उपन्यास है। रत्ना केवल व्यक्ति नही है, रत्ना मछुआ समाज की एक नारी है, जो मछुओ के जीवन के सुख दु ख, हास्य-अश्रु, आनन्द और पीडा को अभिव्यक्त करती है। यह एक जनजाति का सभी पहलुओ से समाजशास्त्रीय अध्ययन है। अपनी भाषा मे, वरसोवा की यह जनजाति पूर्ण रूप मे अभिव्यक्त होती है। लेखक कहता है कि 'बरसोवा' का असली नाम 'विसावा' है। यह बम्बई समुद्र तट के पूर्व मछलीमारो की बडी बस्ती है—अंधेरी से पश्चिम को लगभग तीन चार मील दूर। इस जाति को कोली जाति कहा जाता है। बरसोवा मे दो तरह के 'कोली' बसते हैं—थलकर और शिवकर। अधिक संख्या मे शिवकर और कम सख्या मे थलकर रहते हैं। दोनो का आपस मे विवाह नही होता।[4] अत लेखक का उद्देश्य इस जनजाति मे पली एक शिक्षित लडकी रत्ना की कहानी कहना है, जो वस्तुत, एक व्यक्ति की कथा न होकर, समूह की कथा है। शिक्षा के प्रवेश ने जनजातियो के जीवन मे क्या समस्याए पैदा करदी हैं, इसका रत्ना के चरित्र और जीवन के माध्यम से बताने का प्रयास लेखक ने किया है, इसलिए यह व्यक्तिवादी चेतना

---

१. उदयशंकर भट्ट : 'सागर, लहरें और मनुष्य' पृ० १०६।
२. वही, पृ० ११२।
३ डा० सुषमा धवन हिन्दी उपन्यास . पृ० १४८–१४९।
४. उदयशंकर भट्ट : 'सागर, लहरें और मनुष्य' : पृ० १०।

का उपन्यास न होकर, समाजशास्त्रीय और सामाजिक चेतना का उपन्यास है। यह वरसोवा के जीवन को; मछुओ के आचार—विचारो को; उनके ग्रामीण व्यवहारो को; उनकी सहज सरल भाषा को और सम्पूर्ण संस्कृति को यथार्थवादी शैली मे अभिव्यक्त करता है। मछुआ जीवन की सामाजिक रीति नीति, सदाचार—दुराचार प्रेम वियोग, ईर्ष्या द्वेष, कलह—सुलह, हास–परिहास, नैतिकता—अनैतिकता, आर्थिक–संघर्ष, विश्वास—अविश्वास, आस्था अनास्था का यथार्थ और प्राणवान चित्र प्रस्तुत किया है, इसलिए यह सामाजिक चेतना का उपन्यास है।

अन्य उपन्यास—'लोकपरलोक' (१९५८) मे उत्तरप्रदेश के एक गाव का चित्रण है, जो पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से पतन की ओर अग्रसर हो रहा है। उपन्यास की नायिका चमेली के माध्यम से, युग के सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त किया है। यह प्रेमचद परम्परा का यथार्थोन्मुख आदर्शवादी उपन्यास है। सडे गले नाटकीय जीवन से ऊबकर, चमेली लोक परलोक को सुधारने मे लग जाती है। 'एक नीड दो पछी' (१९५९) आत्मकथात्मक शैली मे नारी के सामाजिक–जीवन पर लिखा गया सामाजिक उपन्यास है। 'शेष-अशेष' (१९६२) साधु-जीवन पर लिखा गया एक सामाजिक-उपन्यास है। 'दो अध्याय'(१९६२) आत्मकथात्मक शैली मे सामाज की विकृतियो को घिनौने रूप मे प्रस्तुत किया है। 'सागर लहरें और मनुष्य' की तुलना मे भट्ट जी के अन्य उपन्यास साधारण हैं।

फणीश्वरनाथ रेणु

फणीश्वरनाथ रेणु को निर्विवाद प्रेमचन्द—परम्परा की सामाजिक–चेतना का सशक्त उपन्यास लेखक माना गया है। प्रेमचन्द के बाद फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने निश्चित रूप से सामाजिक मूल्यो की पुष्टि कर, प्रेमचन्द की सामाजिक—चेतना का विकास किया है। 'मैला आचल' (१९५४), 'परती परिकथा' (१९५७), 'दीर्घतपा' (१९६३) और 'जुलूस' (१९६५) लेखक की उपन्यास कृतिया हैं। यह पूर्णत इस विवेच्यकाल का उपन्यासकार हैं।

'मैला आंचल' (१९५४)

कथा-सार—यह है मैला आचल, एक आचलिक उपन्यास। कथानक है पूर्णिया। पूर्णिया बिहार राज्य का एक जिला है, जिसके एक ओर नेपाल है, दूसरी ओर पाकिस्तान और पश्चिमी बगाल।[1] मेरीगज गाव मे तीन मुख्य

---

१. 'मैला आंचल' : भूमिका (१९६३ चतुर्थ संस्करण)

दल है—कायस्थ, राजपूत और यादव । ब्राह्मण लोग अब भी तृतीय शक्ति हैं । गाव के अन्य लोग भी सुविधानुसार इन्ही दलो मे बटे हुए हैं । कायस्थ टोली के मुखिया विश्वनाथ प्रसाद मलिक, राजपूत टोली के ठाकुर रामकिरपाल सिंह और यादव टोली के खेलावन यादव हैं । मेरीगंज मे मलेरिया केन्द्र की स्थापना होती है और डा० प्रशातकुमार गाव मे मलेरिया के अनुसन्धान हेतु आते हैं । बलदेव सुराजी गाव मे राजनैतिक चेतना जागृत करता है; बावनदास महात्मा गाधी का सच्चा अनुयायी है कालीचरण सोशिलष्ट नेता हैं; कोठारिन लक्ष्मी सूरदास सेवादास की सेवा करती है; तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद की पुत्री कमला अविवाहित और रोगग्रस्त है; डाक्टर प्रशान्त अज्ञातकुलशील है, मगलादेवी चरखा सेन्टर की सचालिका है और कामरेड वासुदेव कम्युनिस्ट पार्टी का नेता है । बलदेव और लक्ष्मी एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं और बलदेव कठी ग्रहण कर मठ मे ही रहने लग जाता है, कालीचरण मगलादेवी की बीमारी मे सेवा परिचर्या करता है और वही प्रेम में परिवर्तित हो जाता है, सेवादास का शिष्य रामदास लक्ष्मी को पाने की आकाक्षा से हताश होकर चमारिन रामप्यारी को मठ मे स्थान दे देता है, डाक्टर और कमला मे प्रेम सम्बन्ध स्थापित हो जाते है, डाक्टर पर कम्युनिष्ट होने का आरोप लगाकर उन्हे गिरफ्तार कर लिया जाता है और डाक्टर की सहपाठिन ममता डाक्टर को जेल से मुक्त कराती है, डाक्टर अपने नवजात शिशु के साथ कमला को अपना लेता है बिहार के मत्री मण्डल के एक भूमि सुधार कानून की अफवाह सुनकर सथालो और गाव वालो के बीच सघर्ष होता है और इस सघर्ष मे नए तहसीलदार हरगौरीसिंह की मृत्यु हो जाती है और इस तरह कितनी ही घटनाए उपन्यास मे घटित होती हैं फिर भी इस उपन्यास मे कहानी का अभाव है ।

वस्तु-विधान—'मैला आचल' मे मुख्य कथा डा प्रशातकुमार और कमला की प्रेम-कथा है । अन्य कथायें विश्वनाथप्रसाद मल्लिक, ठाकुर रामकिरपाल सिंह खेलावन यादव, बलदेव सुराजी, बावनदास, सेवादास, कोठारिन लक्ष्मी, मगलादेवी, कालीचरण और कामरेड वासुदेव आदि की हैं । तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद का डा प्रशातकुमार और कमला की कथा से सीधा सम्बध है, क्योकि वह कमला का पिता है । 'मैला आचल' के लेखक का उद्देश्य कोई कहानी कहना नही है, वह तो 'मैला आचल' की ही एक कहानी कहता है । अनेकानेक पात्रो की कहानियो के द्वारा एक भारतीय ग्राम

के माध्यम से भारतीय जनजीवन भारतीय जीवन की दुर्बलताओ, अभावो, कमियो और भारतीय जीवन की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक स्थितियो को अभिव्यक्त करना लेखक चाहता है, इसलिए कथा कहने का मोह लेखक को नही रहा है। उपन्यास का पूर्वार्द्ध अत्यन्त रोचक एव गठित है और धीरे-धीरे वह शिथिलता की ओर बढ़ गया है। डा प्रशात-कुमार और कमला के प्रसग से कथा मे एक गति आती है, जिसका प्रभावो-त्पादक अत दोनो के मिलन से हो गया है। उपन्यासकार के द्वारा उठाए गए राजनीतिक आदोलनो की रूपरेखा इस प्रेमकथा में दब गई है। यह एक दृश्यात्मक उपन्यास है क्योकि यहाँ वर्णन न होकर छोटे-छोटे दृश्य है। नलिनी-विलोचन शर्मा की मान्यता है कि यह सुसम्बद्ध स्थापत्य का उपन्यास है।[1] परम्परागत शिल्प को आधार मानकर इस उपन्यास का विवेचन-विश्लेषण करे, तो यह अनुभव करेंगे कि केन्द्र मे मूलकथा के अभाव मे और अन्य कथाओ का मुख्य कथा से सैकडो स्थलो पर सबध न होने के कारण अन्विति का अभाव खटकेगा किंतु भारतीय–जन–जीवन के चित्रण को उपन्यास का कथ्य मानें तो यह शिल्प की नवीनता के फलस्वरूप सुन्दर स्थापत्य का नमूना है।

चरित्र-विधान—व्यक्तिपरक उपन्यासकार एक दो स्त्री–पुरुष के चरित्र को उपन्यास मे वैयक्तिकता के साथ प्रकट करता है, किंतु सामाजिक उपन्यासकार समष्टि को ही प्रधानता देता है। मैला आचल एक सामाजिक उपन्यास है। उपन्यासकार तटस्थ रहकर पात्रो का ढेर हमारे सामने रख देता है। सचाई मे यह उपन्यास चरित्रो की अभिव्यक्ति के स्थान पर, एक गाँव की आत्मा को प्रकट करना चाहता है। 'मैला आचल' मे एक गाँव की आत्मा की गाथा है और यह गाँव विशिष्ट गाँव न होकर उत्तर भारत का प्रत्येक गाँव है जो जाग रहा है। अनेक चरित्र व्यक्ति चरित्र के प्रतीक हैं। सेवादास मठ के महन्त का, बलदेव राजनीतिक चेतना का, बावनदास गांधी जी का, कालीचरण सोशलिस्ट नेताओ का, वासुदेव कम्युनिष्ट नेता का, लक्ष्मी मठ की कोठारिन का, डाक्टर आदर्शवाद और मानवतावादी विचारधाराओ का प्रतीक है। बलदेव, बावनदास और कालीचरण का चरित्र-चित्रण अपूर्व उतरा है। लेखक को बलदेव का बडा ममत्व मिला है और उसका चरित्र बडा ही दर्दभरा और सजीव उतरा है। बावनदास महात्मा गाधी का प्रति-

१. आलोचना : १५ : पृ० १०६।

रूप है, और प्रतिरूप है उन देश के नेताओ का जो लोभ मे नही पडे। कालीचरण का चरित्र, देश की बढती हुई जागरूक जनता के प्रतिनिधि का। बलदेव, बावनदास और कालीचरण के चरित्रचित्रण द्वारा ही लेखक ने सामाजिक और राजनीतिक जीवन और उसके खोखलेपन का खाका खीचा है। डाक्टर और कमला उपन्यास के नायक और नायिका न होकर, प्रधान पुरुष और प्रधान स्त्री पात्र हैं। यह नायक नायिकाविहीन उपन्यास है। रेणु के पात्रो के बारे मे यह गलत आरोप है कि रेणु का शिल्पविधान पात्रो के एक भावतत्व को नही, उनकी विच्छिन्ति को प्रकट करने के लिए उपयुक्त है।··· ··· सभी पात्र यथार्थ और सजीव रूप मे हमारे सामने आते है, परतु उनकी भावात्मक सत्ता की दुर्बलता के कारण उनसे तादात्म्य प्राप्त करना कठिन लगता है।[1] उपन्यासकार की दृष्टि मे व्यक्ति से अधिक परिवेश महत्वपूर्ण था, किंतु पात्रो की भावात्मक सत्ता है। 'रेणु' ने अपने हृदय की सवेदना, ममता और करुणा उडेलकर प्राणवान पात्रो का निर्माण किया। रोग शैया पर लेटी कमला, कोठारिन लक्ष्मी और मानवतावादी प्रशातकुमार के हृदय की धडकन और स्पन्दन हम स्पष्ट सुन सकते हैं। इसमे पात्रो की आशाएँ और आकाक्षाएँ, कुण्ठाएँ और ईर्ष्या, प्रेम और घृणा, विश्वास और अविश्वास सभी हमारे सामने आते हैं। उपन्यास की पार्श्वभूमि मे आने वाली युवती–पात्र–ममता मे भी ममता और सवेदना कम नही है। प्रशात सोचता है 'शरतबाबू के उपन्यासो की यह नारी अपने विश्वास पर अडिग रहकर आज भी आगे बढ़ रही है। रूप बदल दो, नाम बदल दो, जगह बदल दो, पर यह कभी नही बदल सकती।'[2] शरत की नारियो की तरह "मैला आचल" के स्त्री-पात्र पुरुष-पात्रो की अपेक्षा अधिक प्राणवान हैं। परिवेश की प्रधानता होते हुए भी 'रेणु' ने अनगिनत प्राणवान पात्र दिये हैं।

उद्देश्य—डा० प्रशातकुमार के जीवन और विचारो ने उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट किया है क्योंकि डाक्टर लेखक का प्रवक्ता है। डाक्टर लोक– कल्याण करना चाहता है। मनुष्य के जीवन का क्षय करने वाले प्राणघातक और भयानक रोगो के मूल का पता लगाकर नई दवा का आविष्कार करना चाहता है। रोग नष्ट हो जायेंगे, इंसान स्वस्थ हो जाएगा।[3] रोग का पता लगाने के लिए आसपास के पद्रह गाँवो का

---

१. डा० गणेशन : हिन्दी उपन्यास—साहित्य का अध्ययन पृ० २६२।
२. फणीश्वरनाथ 'रेणु' मैला आंचल : पृ० ४०८।
३. वही, पृ० १८१।

परिचय प्राप्त किया है, भयातुर इसानो को देखा है, वीमार और निराश लोगो की आखो की भाषा समझने की कोशिश की है।[१] डाक्टर ने चारो ओर राजनीतिक कुचक्रो और सामाजिक रूढियो मे लिपटी गरीबी और जहालत को देखा। डा. प्रशातकुमार ग्रामवासिनी का धूलभरा मैला आचल देखना चाहता है और गाधी का प्रतीक बावनदास भी मानता है कि भारतमाता जार-वेजार रो रही है।[२] उपन्यासकार मेरीगज के जनजीवन का चित्रण कर भारतीय-जीवन के रुदन-गरीबी और वीमारी को अभिव्यक्त करना चाहता है किंतु ममता प्रशातकुमार को पत्र के माध्यम से आधुनिक युग की युद्धजनित पीडित मानवता से जोडना चाहती है। वह आधुनिक सभ्यता की विभीषिका पर तीखा व्यग प्रकट करती है कि युद्ध के विषैले गैसो ने सारे समाज के मानवो को विकृत कर दिया है।[3] उपन्यासकार, ममता और डाक्टर के मानवतावादी स्वर मे स्वर मिलाकर कहता है "लेवोरेटरी !...... विशाल प्रयोगशाला !... . . ऊची दीवारो मे वद प्रयोगशाला !... ... साम्राज्य लोभी शासको के साये मे वैज्ञानिको के दल खोज रहे है। .. .. गजी खोपडियो पर लाल हरी रोशनी पड रही है। . ... मारात्मक, विध्वसक और सर्वहारा शक्तियो के सम्मिश्रण से एक ऐसे वम की रचना हो रही है, जो सारी पृथ्वी को हवा के रूप मे परिणत कर देगा। . . . ऐटम बम ब्रेक कर रहा है...... मकडी के जाल की तरह...... चारो ओर से एक महा अन्धकार .. .. वेदात...... भौतिकवाद ...... सापेक्षतावाद ... ... मानवतावाद। हिंसा से जर्जर प्रकृति रो रही है। व्याघ के तीर से जख्मी हिरणशावक–सी मानवता को पनाह कहा मिले ?"[४] यहा मेरीगज की पीडित मानवता, एक ओर व्याघ के तीर से हिरण–शावक–सी जख्मी मानवता है, तो दूसरी ओर युद्धजनित पीडित-मानवता के समान है। अत मानवतावाद ही उपन्यास का मूल सदेश है।

यह एक आचलिक सामाजिक उपन्यास है। लेखक राजनीतिक मतवादो से मुक्त होकर मानव-कल्याण की कामना करता है। एक गाँव के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन का अकन सामूहिक

१　वही, पृ० १८८।
२.　फणीश्वरनाथ रेणु : 'मैला आचल' पृ० १७५।
३.　वही, पृ० २००।
४.　वही, पृ० ४०६।

दृष्टिकोण से करता है। यहा व्यष्टि प्रमुख न होकर समष्टि का अंकन ही लेखक का उद्देश्य है। प्रेमचद परम्परा के सामाजिक उपन्यासो मे इस उपन्यास ने अपना स्थान वना लिया है। यहा, व्यक्ति चिंतन न होकर समाज-चिंतन है, व्यष्टि सत्य न होकर समाज-सत्य, व्यक्ति न होकर समाज है। मेरीगज के समाज मे व्यक्ति खो जाते हैं और उभरता है तो केवल समाज। उपन्यास की विषयवस्तु सामाजिक है, पात्र सामाजिक और उद्देश्य सामाजिक है। गाँव के परिवेश मे व्यक्ति से अधिक समाज उभरता है। अंचलविशेष का चित्रण होने से यह एक आचलिक-सामाजिक उपन्यास है।

'परती : परिकथा'

कथासार—परती:परिकथा रेणु का दूसरा उपन्यास है। धरती नही, धरती की लाश, जिस पर कफन की तरह फैली हुई है–वालूचरो की पक्तिया। उत्तर-नेपाल से शुरू होकर, दक्षिण गगातट तक, पूर्णिया जिले के नक्शे को दो असम भागो मे विभक्त करता हुआ फैला-फैला यह विशाल भूभाग।[1] इस परानपुर ग्राम के अंचल की कथा लेखक ने कही है। कैमरामैन मवेशनाथ एम ए की परीक्षा देकर, परती के विभिन्न रूपो का अध्ययन करने आया है। सुरपतिराय परानपुर के लोक-कथा और लोक-गीतो के सहारे थीसिस लिखते हैं। इस गाव मे विभिन्न जातियो के तेरह टोले हैं। गाँव मे जातिवाद का जोर है और राजनीतिक पार्टियाँ भी जातिवाद का सहारा ले रही हैं। शिवेन्द्रनाथ मिश्र का पुत्र जितेन्द्रनाथ मिश्र या जित्तन दस-पद्रह वर्षों के वाद गाँव लौटा है। मुन्शी जगधारीलाल तहसीलदार और रायखारनसिह सिपाही, ने जित्तन की जमीदारी की रक्षा की है। 'लैंड सर्वे सेटलमेट' का कार्य चल रहा है। जित्तन परती जमीन पर गुलाव की खेती करना चाहता है। गाँव मे ताजमनी नाहिन की वेटी है। लोगो मे चर्चा है कि उसका सवध जित्तन वावू से है। 'हुआ सवेरा' पत्र ने जित्तन की आलोचना की—'कि राजनीति, साहित्य और पत्रकारिता को कलकित करके यह आदमी गाँव के पवित्र दामन को कलकित करने पहुचा हुआ है। ..... वेश्याओ और वदमाशो के जरिये भले घर की भोली-भाली लडकियो को अपने वगले पर वुलाना और गुलछर्रे उडाना, यही एकमात्र पेशा है इसका। गाँव की जनता त्राहि-त्राहि कर रही है।'[2] हुआ सवेरा के पीछे कुवेरसिह का हाथ था। जित्तन के तीन फुफेरे

---

१. फणीश्वरनाथ रेणु : परती : परिकथा, पृ० १।
२ वही, पृ० १०४।

भाई—वतनभद्दर, वीरभद्दर और शिवभद्दर उसके दुश्मन हैं। हाकिमो ने लैड सर्वे का फैसला सुना दिया। गाँव की सभी टोली राजनीतिक कुचक्र मे फस गयी है और जित्तन उनमे सास्कृतिक-चेतना फूँकना चाहता है। जित्तन ने परानपुर के सभी नौजवानो को, नाटक-प्रेमी व्यक्तियो को आमत्रित किया है, परानपुर नाट्यशाला का पुनरुद्धार करने के लिए।

वस्तु-विधान

यह सही है कि परती परिकथा मे न कोई मुख्य कथा हैं, न कोई नायक किन्तु अनेक कथाओ के बीच जितेन्द्र और ताजमनी की कथा इतनी स्पष्टता से उभरकर आई है कि यही मुख्य कथा के रूप मे विकसित होती है। इस उपन्यास की कथा जनश्रुतियो, लोक-गीतो, लोकगाथाओ और मिसेज रोजउड की डायरी के पृष्ठो के सहारे आगे बढी है। फणीश्वरनाथ 'रेणु' एक कथा निर्माता हैं और इस उपन्यास मे भी अनेक कथाओ का निर्माण लेखक ने किया है। 'मैला आचल' की तरह परम्परागत शैली से भिन्न होने के कारण दो प्रकार की मान्यताए इसकी वस्तु अन्विति के सम्बन्ध मे प्रचलित हैं। एक समीक्षक की मान्यता है कि यह उपन्यास एक कथा-सागर है। लेखक ने बडे कौशल से छोटी बडी कथाओ को, जितेन्द्र की प्रमुख कथा से सम्बद्ध करने का प्रयत्न किया है और परती के विशाल रगमच पर होने के कारण तारतम्यता आ गई है।[1] दूसरी ओर इस उपन्यास पर यह आरोप लगाया जाता है कि इसकी वस्तु बिखरी बिखरी है, इसमे प्रवाह नहीं है। शायद जमकर क्रमबद्ध कहानी कहना लेखक को उद्दिष्ट भी नही है। वह केवल व्यक्ति—वैचित्र्य यथार्थ सामाजिक वातावरण को चित्रित करना चाहता है। अतएव वह जल्दी—जल्दी चित्र परिवर्तित करता चला जाता है। इतिवृत्तात्मक प्रसगो, कथा को जोडने वाली कडियो को उसने पाठक के लिए छोडकर अधिकतर शब्द—चित्र अकन मे ही सम्पूर्ण कौशल दिखाया है।[2] उपन्यास का केन्द्र—बिन्दु ताजमनी और जितेन्द्र की कथा न होकर 'परती' है और परती की परिकथाओ के परिपार्श्व मे लेखक भारत के बदलते गाव की सास्कृतिक—चेतना को अभिव्यक्त करना चाहता है इसलिए वस्तु—अन्विति का आरोप लगाना सरासर गलत है। परम्परागत वस्तु—शिल्प से यह भिन्न कोटि का उपन्यास है।

---

१. आलोचना २४, पृ० ६७।

२. शिवनारायण श्रीवास्तव : हिन्दी उपन्यास पृ० ४०३.।

चरित्र विधान—परती परिकथा पात्रो का अजायबघर है किन्तु नगण्य पात्र भी अपना व्यक्तित्व लेकर आते हैं। जिनेन्द्र और ताजमनी प्रधानपात्र हैं और अन्य पात्र परती की विभिन्न दशाओ का प्रतीक बनकर आते हैं। पात्र केवल वर्ग का प्रतिनिधित्व नही करते हैं किन्तु अपना जीवन भी जीते हैं। पात्रो का चरित्रांकन रेखाओ से हुआ है। हर छोटे मे छोटे पात्र को लेखक ने व्यक्तित्व दिया है। अन्य पात्रो मे शिवेन्द्रमिश्र, सायवत्ती, गरुड झा, मुन्शी जगधारीलाल भिम्मल माया, लुत्तो, प्रेमकुमार दीवान, सुरपतिराव और पीताम्बर झा आदि हैं। शिवेन्द्र मिश्र सामन्ती विचारधारा के, जितेन्द्र नई विचार धारा का, लुत्तो कलुषित राजनीति का, प्रेमकुमार दीवान कलात्मक प्रेम का, गरुडध्वज झा आधुनिक नारद का, मु शी जगधारीलाल मु शीगिरी का, सुरपतिराय लोकसाहित्य और पीताम्बर झा कामरेड का प्रतीक है किंतु सभी अपने व्यक्तित्व की रक्षा कर सके हैं। चरित्रचित्रण मे लेखक तटस्थ रहा है इसलिए एकाध पात्र को छोड़कर एक भी पात्र लेखक के विचारों और भावनाओ का पुतला नही है। जितेन लेखक के आशावादी विचारो का प्रवक्ता है। श्रीपतराय का आक्षेप है कि जित्तन सर्वथा महान् दिखाया गया है, जबकि वह बैंकडोर से आया हुआ, भागा हुआ इन्सान है। इस तरह प्रश्न यह नही है कि जितेन ऐसा है या वैसा वल्कि यह वह जो कुछ भी है 'परती परिकथा' की मूल दृष्टि के अनुकूल या उसमे उद्भूत है या नही? अर्थात् देखना यह चाहिये कि जितेन का चित्रण उपन्यास की मूल दृष्टि से समन्वित है या नही?[1] जितेन न तो श्रीपतराय के आक्षेप के आधार पर भागा हुआ इन्सान है और न वह पूर्ण रूप से लेखक के विचारो मे मुक्त है। लेखक के आशावादी विचारो के बोझ को उसे वहन करना पडता है इसलिए वह एक तटस्थ लेखक का पूर्ण तटस्थ पात्र नही है। प्रेमचन्द के पात्र प्रतिनिधि मात्र होते है, यशपाल और अश्क के पात्रो मे उनकी सामाजिकता भी उभरती है, अज्ञेय के पात्र व्यक्तिवादी हैं, इलाचद्र जोशी के पात्र मनोविश्लेषण की भूमि पर उतरते है किन्तु रेणु के पात्र वैयक्तिकता की दृष्टि से पूर्ण हैं। इनमे व्यक्ति के हास्य और अश्रु, आशाए और आकांक्षाए है। निस्सदेह चरित्र—सृजन मे रेणु बेजोड है। 'मैला आचल' की तरह इसे भी ताजमनी और जितेन के होते हुए भी नायक नायिकाहीन उपन्यास मानना पड़ेगा क्योकि परानपुर की परती जमीन ही इसकी नायिका है।

---

१. आलोचना : २४ . पृ० ७७–७८।

उद्देश्य—रेणु ने इस उपन्यास मे जीवन के प्रति विशेष दृष्टि को नही, समूचे जीवन को ही अभिव्यक्त किया है। जीवन की गति, जीवन की धड़कन, जीवन का स्पन्दन और जीवन का विस्तार सब इसमे है। यह उपन्यास के रूप मे बहता हुआ जीवन ही है। परानपुर ग्राम के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक उथल-पुथल का चित्र खीचकर राजनीतिक के कुचक्र के स्थान पर, सांस्कृतिक चेतना फूकना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। जितेन आशावादी है। अपने विरोध के बावजूद जितेन की आत्मा जितेन को कहती है घृणा से मुह विकृत मत करो जितेन्द्र। राजनीति ने हमे बहुत कुछ दिया भी है—फिर भी तुम विस्थापित नही। गाव के लोग तुमको न पहचाने। गाँव की मिट्टी, अपनी जन्मभूमि का पानी तुम को प्राप्त हैं, जहा तुम खेले कूदे, बढ़े—।[1] जितन्द्र अकेलेपन के अधकार से बाहर निकलना चाहता है। वह मानता है कि सास्कृतिक–जीवन पर राजनीतिक प्रभाव अवश्य पडे है। किंतु, उसकी काली प्रतिच्छाया सर्वग्रास नही कर सकी, अभी भी।[2] वह स्वीकार करता है यहा के सास्कृतिक जीवन मे डुबकी लगाए विना प्रीति के छिन्न–सूत्र को पकडना असम्भव है।[3] अतः भारतीय जन–जीवन मे सास्कृतिक चेतना फूकना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। इतना होने पर भी अगर यह माना जाय कि उपन्यासकार किसी निश्चित जीवन–दर्शन या मतवाद को अभिव्यक्त अवश्य करे, तो परती परिकथा' से हमे निराश होना पड़ेगा। यह उपन्यास किसी मतवाद के पूर्वाग्रह से नही बधा है।

उपन्यासकार मानता है कि समाज को मानवीय और मनुष्य को सामाजिक बनाना ही एक मात्र पथ है,[4] और, जित्तन भी स्वीकार करता है—गाँव समाज मे, मनुष्य के साथ मनुष्य का व्यक्तिगत सम्पर्क घनिष्ट था। किन्तु, वह अब नहीं रहा। एक आदमी के लिए उसके गाँव का दूसरा आदमी अज्ञात कुलशील छोड़ और कुछ नही।—कहा है आज का कोई उपयोगी उत्सव–अनुष्ठान जहा आदमी एक दूसरे से मुक्तप्राण होकर मिल सके? मनुष्य द्वारा मनुष्य के प्राण का योग–सूत्र नहीं।—प्रतिवन्धन के खोए हुए सूत्र को खोजकर निकालना होगा। नहीं तो, इस सार्वभौम रिक्तता से मुक्ति की कोई आशा नही।[5]' अत सांस्कृतिक चेतना ही मनुष्य मे सामाजिक–चेतना जगा-

१. फणीश्वरनाथ रेणु : परती : परिकथा . पृ० ४८१।
२ फणीश्वरनाथ रेणु . परती परिकथा . पृ० ४७०।
३ वही, पृ० ४८१।
४. वही, पृ० ४८४।
५. वही, पृ० ४७१।

एगी। जीवन के प्रति सामाजिक–चेतना की अभिव्यक्ति के कारण यह सामाजिक—चेतना का उपन्यास है। प्रेमचन्द की सामाजिक उपन्यासो की परम्परा मे रेणु की 'परती—परिकथा' ने भी एक महत्वपूर्ण कडी जोडी है।

दीर्घतपा (१९६३)

कथासार—दीर्घतपा 'रेणु' का तीसरा उपन्यास है। बाकीपुर के वर्किंग वीमैन्स होस्टल की एक रात के ग्यारह बजे मे कथा प्रारम्भ होती है। उपन्यास के प्रारम्भ से ही मिस बेला गुप्ता और मिसेज ज्योति आनन्द के सघर्ष का स्वर स्पष्ट सुनाई देता है। लेखक ने आरम्भ मे ही स्वीकार किया है" तब सोचा गया था कि वर्षो से दिनरात सिर पर सवार पाच (प्रेतनियों ?) देवियो को अलग अलग रुपायित करके एक 'अलबमनुमा' उपन्यास सक्षिप्त वक्तव्यो से गूथगाथ कर पञ्चकन्या' के नाम से प्रस्तुत किया जाय। अन्तत. यह योजना—अनेकानेक कारणो मे—सफल नही हो सकी। अब इन्हे अलग अलग ही पेश करने के क्रम मे यह है पहली दीर्घतपा नारी।[1]' यह दीर्घतपा नारी 'वर्किंग वीमैन्स होस्टल' की सुपरिन्टेन्डेन्ट मिस बेला गुप्ता है। पहले रमला बैनर्जी इस होस्टल की मनोनीत सेक्रेटरी थी। रमला दीदी के पश्चात् श्रीमती ज्योति आनन्द ने वह स्थान ले लिया। श्रीमती ज्योति आनन्द पहले एक महापात्र की पत्नी थी, फिर महान्ती की पत्नी बनी। दलाल आनन्द के प्रेरित करने पर लकडी के थोक–विक्रेता नेपाली जनरल नरबहादुर की भोग्या बनी। ज्योति आनन्द के साथ भाग कर आ गई और श्रीमती महान्ती से श्रीमती आनन्द बन गई और दूसरी ओर बेला की कहानी भी सघर्षों से भरी हुई है। अपने अध्यापक पिता के शिष्य बिहारी की चिकनी चुपडी बातो मे आकर उसके साथ भाग जाती है। उसके सतीत्व को नष्ट कर बिहारी उसे सरफरोश खा के हवाले कर देता है। सरफरोश खां से वह अपने को नही बचा सकी और अन्त मे वह क्रान्तिकारी रमाकात से प्रभावित होती है। यह घटनाए उपन्यास की पृष्ठभूमि के रूप मे प्रकट हुई हैं। श्रीमती आनन्द लडकियो का व्यवसाय करना चाहती है और इसमे वह बेला गुप्ता को बाधक समझती है। श्रीमती आनन्द देहाती लड़कियो को 'शुद्ध ग्रामोद्योगी माल' समझती है। दो जुडवा बहिनो अजु, मजु को राजी करके छात्रावास की लड़कियो का नाटक देखने को बुलाया जाता है और गोरादेवी और विभावती को

१ फणीश्वरनाथ रेणु : दीर्घतपा भूमिका।

उडाकर उनके साथ बलात्कार किया जाता है। निरपराव वेला गुप्ता को गिरफ्तार किया जाता है और वह झूठ ही मजिस्ट्रेट के सामने अपने पर आरोपित अभियोगो को स्वीकार कर लेती है।

वस्तु–विधान—'दीर्घतपा' मे मिस वेला गुप्ता की कथा इस उपन्यास की मुख्य कथा है और अन्य कथाओ मे मुख्यत श्रीमती ज्योति आनन्द की कथा मुख्य कथा को आगे वढाती है। श्रीमती ज्योति आनन्द का पूर्व जीवन वेला गुप्ता और श्रीमती ज्योति आनन्द के खुले सघर्ष को तीव्रता देने के लिए अभिव्यक्त हुआ है। दो जुडवा बहिनो अजु, मजु, गौरा देवी और विभावती की कथाओ को नारी सस्थाओ मे होने वाले सघर्ष को आगे वढाया है। फणीश्वरनाथ 'रेणु के उपन्यासो के वस्तु–गठन के बारे मे परम्परागत शिल्प से अलग होने के कारण हमेशा शिकायत रही है किंतु सीमित धरातल होने के कारण लेखक ने इस उपन्यास मे इसको निर्मूल सिद्ध कर दिया है। 'वर्किंग वीमेन्स होस्टल' मे कुछ दिनो की घटनाए नाटकीय गति से क्रमवद्ध प्रवाहित होती हैं। इन घटनाओ की शृखला क्रम से जुडी हुई है। उपन्यास के आरम्भ और अत मे लेखक की सफाई अनावश्यक प्रतीत होती है। यह अधिकतर आरोप लगाया जाता है कि फणीश्वरनाथ 'रेणु' के आचलिक उपन्यासो मे कथा का अभाव और विषय की व्यापकता का अभाव मिलता है किंतु यह उपन्यास इनके इस दोष से पूर्णतया मुक्त है। क्षिप्र गति से कथा का प्रारम्भ होता है और वह विकास की ओर वढती है। बीच बीच मे मिस वेला गुप्ता की स्मृति भूत और वर्त्तमान घटनाओ के बीच सेतु सम्बन्ध जोड़ती जाती है। अत वस्तु—अन्विति की दृष्टि से यह सशक्त और कलात्मक है।

चरित्र विधान वेला उपन्यास की नायिका है और इसके अतिरिक्त दूसरी पात्र श्रीमती ज्योति आनन्द है। वेला के रूप मे एक सशक्त चरित्र उपन्यासकार दे सका है जो केवल आदर्श की पुतली मात्र नही है। वेला गुप्ता हो या ज्योति आनन्द, दोनो जिन्दगी के उतार चढावो के बीच डूबती उतराती हैं इसलिए विकसनशील पात्र हैं, किंतु अन्य पात्रो मे अजु, मजु, गौरी और विभावती के व्यक्तित्व का विकास नही हुआ है। मिस वेला गुप्ता और श्रीमती आनन्द जीवन की विकृतियो को भोग चुकी हैं। एक जीवन की विकृतियो को भोगकर उनमे बिलकुल अलग हट गई है और दूसरी ने इन विकृतियो को ही अपना व्यवसाय बना लिया है। श्रीमती आनन्द आज के सडे गले पतित जीवन का प्रतिनिधित्व करती है और मिस वेला गुप्ता एक प्रगतिशील नारी

है। उपन्यास के सभी पात्र अपना सशक्त व्यक्तित्व रखते हैं, वे लेखक द्वारा चलाए जाने वाले काठ के मोहरे नही हैं, उनकी धमनियो मे जीवन स्पन्दित होता है। जीवन का स्पन्दन और जीवन की धडकन हम इन पात्रो के जीवन से सुन सकते हैं।

उद्देश्य—आधुनिक युग की सफेदपोश महिला सस्थाओ मे अनैतिकता और व्यभिचारो का भडाफोड करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। यह केवल बाकीपुर का 'वर्किंग वीमेंस होस्टल' ही नही है, हिन्दुस्तान के हर शहर मे इन अड्डो को देखा जा सकता है। लेखक ने अपने उद्देश्य की स्वीकारोक्ति मे कहा है मैंने यह भी कल्पना की थी—वेला गुप्ता अपने 'पेमेण्ट प्रिजनर' रमाकान्त को याद कर 'मीनीलाग मे बातें करेगी–रमाकात! तुम चले गये वरना मैं तुम्हारे आदर्शों की इस सडी गली हुई लाश को तुम्हारे कन्धे पर डालकर पूछती, यही है तुम्हारी आजादी, यही है तुम्हारे समाजवादी समाज की रूपरेखा?——सच्चाई नामक गुण मनुष्य के हृदय से धीरे धीरे लोप हो रहा है। स्वार्थसिद्धि के लिये आदमी किसी भी शर्त पर अपनी आत्मा को बेच सकता है।——जहा जीवन मे कोई अवलम्ब नही, आधार नही, विश्वास नही, चारो ओर व्यर्थता का राज——?[1]' अत· महिला समाज सस्थाओ के कुरूप जीवन को अभिव्यक्त करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है।

फणीश्वरनाथ रेणु प्रेमचन्द परम्परा का कथाकार है, इसलिए इनके उपन्यासो मे सामाजिकता का आग्रह मिलता है। लेखक का कथन है, 'एक हीन मनोवृत्ति का कोहरा—युद्ध के बाद से ही घना होकर—सारे समाज पर छा रहा है। इस धुन्ध मे, दीपकली की तरह खिली बेला गुप्ता अचानक बुझ गई——।[2]' मिस बेला गुप्ता और मिसेज ज्योति आनन्द के जीवन को समाज के इस घिनौने रूप को बताने का प्रयत्न लेखक ने किया है। अजु–मजु, गौरी और विभावती जैसी कितनी ही युवतिया इन सभ्य चकलो मे फस कर अपने जीवन को बरबाद कर देती हैं। ऐसा घिनोना और कुत्सित व्यवसाय श्रीमती ज्योति आनन्द जैसी शहरी स्त्रियां और आधुनिक महिलाए करती हैं। बेला गुप्ता जैसी नारिया जीवन भर ऐसे समाज से सघर्ष करती आ रही हैं। यहा

१. फणीश्वरनाथ रेणु दीर्घतपा : पृ० १०७।
२. वही, पृ० १५६।

व्यक्ति के स्थान पर समाज का स्वर प्रमुख है, इसलिए दीर्घतपा निस्सन्देह एक सामाजिक उपन्यास है।

अन्य उपन्यास—'रेणु' के 'जुलूस' मे दीर्घतपा की दूसरी नारीपवित्रा-चटर्जी की जीवन-कथा है। नवीनगर मे पवित्रा चटर्जी मिडिल स्कूल बनाने, समाज सुधार और विकास कार्यों मे लगी रहती हैं। गाव के लोग उसका विरोध करते हैं। पवित्रा और विनोद मिलकर लोक सस्कृति-मूलक-समाज का गठन करते हैं। विनोद यानी नरेश ने पीडित गावो की सहायता के लिए सास्कृतिक आयोजन किया।

जुलूस पवित्रा की कथा उपन्यास की प्रधान कथा है और अन्य पात्रो-तालेवर गोढी, रनवीरसिंह, मुसम्मात ठकुराइन, गोपाल पाइन, जयरार्यसिंह और हरियादव, की कथाए पवित्रा की ही कथा को आगे बढ़ाती हैं। घटनाओ का उपन्यास मे अभाव है। पवित्रा के पूर्व जीवन की घटनाए पूर्वस्मृति के रूप मे चित्रित की गई हैं इसलिए अन्विति मे किसी प्रकार को बाधा नही पहुची है। स्कूल की स्वीकृति और अत मे अकाल यही दो घटनाए उपन्यास मे है। अल्पकथा होने के कारण इसे उपन्यास न कहकर लम्बी कहानी भी कह सकते हैं। विरल घटनाओ की तर्कसंगत योजना उपन्यास मे मिलती है इसलिए अन्विति की पूर्णरूप से रक्षा हुई है।

यह नायिका प्रधान उपन्यास है और पवित्रा इसकी नायिका है। पवित्रा मे जीवन के यथार्थ और आदर्श दोनो का मिश्रण है। एक आलोचक की भ्रान्त धारणा है कि दीर्घतपा की नायिका बेला गुप्ता और जुलूस की नायिका पवित्रा दो अलग अलग स्त्रिया नही, एक ही स्त्री के अलग अलग टुकडे हैं।[1] बेला गुप्ता विद्रोहिनी है और पवित्रा समझौतावादिनी। वह कहती अवश्य है 'मैं सिर्फ पवित्रा नही, मैं आग हू—मैं तलवार हू, मैं बर्छी हूँ मैं जहर हू, सापिन हू।[2] पवित्रा बुझी हुई आग है। रेणु के हर उपन्यास मे प्राणवान पात्र मिलते हैं 'रेणु' भी इसके अपवाद नही है। रेणु की सफलता उसके चरित्र चरित्र मे है। पवित्रा, तालेवर गोढी, रनवीर सिंह, मुसम्मात ठकुराइन,

---

१. अणिमा · अक्तूबर, दिसम्बर ६५, पृ० ३४६।

२. फणीश्वरनाथ रेणु जुलूस : पृ० १८३।

गोपाल पाइन, जयरामसिंह हरियादव, और इसके अतिरिक्त सबको 'रेणु' ने आत्मीयता से चित्रित किया है। इस चित्रण मे पात्रो के वैयक्तिक और सामाजिक पहलू दोनो उभरते हैं।

लेखक ने जुलूस की भूमिका मे लिखा है : 'पिछले कुछ वर्षों से मैं एक अद्भुत भ्रम मे पडा हुआ हू। दिन–रात, सोते–बैठते, खाते–पीते, मुझे लगता है कि एक जुलूस के साथ चल रहा हू। अविराम !—यह जुलस कहा जा रहा है, ये लोग कौन हैं, कहा जा रहे है, क्या चाहते हैं—मैं कुछ नही जानता।[1]' यह भिखारियो का जुलूस है, यह उन लोगों का जुलूस है जो अभावो से पीडित हैं। इस जुलूस के साथ पवित्रा जा रही है। पवित्रा अनुभव करती है . 'मैं जी गई फिर। मै अकेली नही। मैं निम्सग नही। मैं कही निर्जन मे नही। मैं एक विशाल परिवार की बेटी हू।—इन आत्मीय स्वजनो के बीच पारस्परिक सहानुभूति और सहयोगिता को फिर से पनपाऊगी मैं।—अपने गांव समाज मे—लोगो के वीरान हृदय मे—आनन्द मुखर स्वर फिर से भरना होगा।—खोई हुई चीजो का उद्धार करना होगा।—अपरिचय, अजनबीपन, उदासीनता, अकेलापन, आत्मकेंद्रिता, विच्छिन्नता को दूर करके भूले भटके लोगो को पास लौटाकर लाना होगा। मैं अपनी सत्ता को समाज मे विलीन कर रही हू।—लोक सस्कृति मूलक समाज के गठन के लिए –[2]' लोक सस्कृति–मूलक समाज का गठन ही इस उपन्यास का उद्देश्य है और जीवन की सामाजिक चेतना को आगे बढाया है, इसलिए इसको निस्सदेह सामाजिक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया गया है।

धर्मवीर भारती :

धर्मवीर भारती सामाजिक चेतना के उपन्यासकार हैं किंतु लेखक ने व्यक्ति को अनुभूतियो, व्यक्ति की स्वतन्त्रता और व्यक्ति की मुक्ति के प्रश्न को अक्षुण्ण रखते हुए सामाजिक चेतना के स्वर को ध्वनित किया है। व्यक्ति कभी–कभी इतना अधिक उभर कर आता है कि सामाजिक चेतना का स्वर दबा दबा और घुटा–घुटा सा महसूस करता है। लेखक की मान्यता है : 'मुझे लगता है कि मेरे अपने जीवन का रस, सार्थकता, सकल्प और तलाश इसलिए है कि मेरी जिन्दगी दूसरी अनेकानेक जिन्दगियो की भावना के बहुविध (प्यार,

---

१. वही, भूमिका।

२. फणीश्वरनाथ रेणु . जुलूस : पृ० १८७।

घृणा, विरोध, सगति) रिश्तो से जुडी हुई है। जिन्दगियो के इस पारस्परिक उलझाव मे सुख भी है, भास भी, कष्ट भी है, यत्रणा भी और आश्वासन भी।—रचनाकार होने के नाते और नागरिक होने के नाते भी मै अपने परिवेश से सबसे पहले सम्बद्ध हू।[1]' भारती स्वयं को जीवन से प्रतिवद्ध महसूस करते हैं इसलिए व्यक्तिवादी—जीवन दृष्टि नही है। कुछ अशो मे व्यक्तिपरक जीवन दृष्टि प्रकट होती है किंतु सूरज का सातवा घोडा मे निम्न-मध्य-वर्गीय समाज की अभिव्यक्ति ही लेखक का इष्ट रहा है इसलिए भारती को सामाजिक-चेतना का उपन्यासकार मानना पडेगा।

'गुनाहो के देवता' (१९४६) और 'सूरज का सातवा घोडा' (१९५२) लेखक की दो उपन्यास कृतिया है जिसमे केवल सूरज का सातवा घोडा ही इस विवेच्यकाल की कृति है।

'सूरज का सातवां घोड़ा'

कथासार—'सूरजका सातवा घोडा' की कथा माणिक मुल्ला ने सुनाई है। माणिक मुल्ला ने सात दोपहर तक कहानिया सुनाई। माणिक मुल्ला के मोहल्ले मे जमुना रहती थी। जमुना तन्ना मे खूब पटती थी। तन्ना से उसके विवाह की बातचीत टूट गई और जमुना का विवाह हो गया। जमुना के पति और जमुना मे वहुत अतर था। जमुना का आकर्षण अपने नौकर रामधन की ओर हो गया। अपने पति की मृत्यु पर जमुना दहाडे मारकर व्यर्थ ही रोई। रामधन का भाग्योदय हुआ और उसने अपनी कथा माणिक मुल्ला को सुनाई। उधर तन्ना ने आर्थिक-विषमता से ग्रस्त होकर आर० एम० एस० की नौकरी कर ली। तन्ना का विवाह हो गया। तन्ना की पत्नी धनी, पढी और रूपवती थी। तन्ना सूखकर काँटा हो गया, कनपटियो के वाल सफेद हो गये, झुककर चलने लगे, दिल का दौरा पडने लगा और वहुत कमजोर हो गये। उनके घर मे फाके पडे। नौकरी से वहाल हुए और ट्रेन से टाग कट गई और फिर दुनिया से विदा हो गये। तन्ना की पत्नी का नाम लिल्ली है। तन्ना के पिता महेसर दलाल की सत्तो से सम्बन्ध था। सत्तो के रहन-सहन मे विलासता झलकती थी। लोगो का कहना था कि उसका चाचा, जिसके साथ वह रहती है, रिश्ते मे उसका कोई नही है। माणिक मुल्ला की सत्तो से भी मित्रता थी। माणिक और सत्तो को पाने के लिए पाँच सौ रुपये नगद दिये। महेसर दलाल ने सत्तो को खुश करने के लिए अगूठी दी। एक रात पता लगा कि

---

१. नई धारा : फरवरी-मार्च, १९६६, पृ० ९८-१००।

चमन ठाकुर और महेसर दलाल ने सत्तो के विरोध के कारण सत्तो का गला घोट दिया। माणिक मुल्ला ने तन्ना की खाली जगह पर आर० एम० एस० मे नौकरी कर ली। एक दिन चमन ठाकुर और सत्तो को माणिक मुल्ला ने भिखारियों के रूप मे देखा। अतिम दोपहर मे उन्होने सूरज का सातवा घोडा की कहानी सुनाई। यह घोडा है भविष्य का घोडा———।

वस्तु–विधान—'सूरज का सातवा घोडा' मे माणिक मुल्ला की कहानी के इर्दगिर्द जमुना, तन्ना, लिल्ली और सत्तो की कहानिया घूमती है। माणिक मुल्ला ने छ दोपहर मे छ कहानियाँ कही हैं और अन्तिम अध्याय सूरज का सातवां घोडा मे समन्वय सूत्र जोडा है। इन कहानियो मे माणिक मुल्ला हर जगह और हर स्थान पर है। यह अलग अलग कहानियो की एक कहानी है। 'यह बहुत सीधी, बहुत सादी, पुराने ढग की—बहुत पुराने जैसा आप बचपन से जानते हैं—अलफलैला वाला ढग, पचतत्र वाला ढग, बौकोच्छियो वाला ढग, जिसमे रोज किस्मागोई की मजलिस जुटती है, फिर कहानी से कहानी निकलती है।[1]' पंचतत्र वाला किस्सोगोई के पुराने शिल्प को नवीन रंगरूप देकर लेखक ने उपस्थित किया है। इसमे अलग अलग कहानियाँ है और सभी कहानिया स्वतत्र रूप से बहती हैं। माणिक मुल्ला ने इन सभी कहानियो के बीच प्रवक्ता होने के कारण सबध-सूत्र जोडा है। अतिम अध्याय मे सभी कहानियो की एक ही परिणति बताकर सबध-सूत्र स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु अंतिम अध्याय आरोपित सा लगता है। अतिम अध्याय के अभाव मे भी माणिक मुल्ला ने समन्वय स्थापित कर दिया था क्योकि सभी कहानिया निम्न मध्यवर्गीय जीवन की दुर्बलताओ और अभावो को अभिव्यक्त कर रही हैं। यह निश्चित है कि इन शृखलाहीन कहानियो के बीच एक शृखला है। उपन्यास की कुछ घटनाए असगत और अस्वाभाविक लगती है जैसे तन्ना की टाग कटना और मृत्यु और सत्तो का भिखारिणी बनना। यहा लेखक ने अतिशयोक्ति कर दी है। इस लघु उपन्यास मे इतनी अधिक कहानियो को कुशलता से चित्रण कर वस्तु–अन्विति की रक्षा करना लेखक के वस्तु–कौशल को अभिव्यक्त करता है।

चरित्र–विधान—उपन्यास का केन्द्रबिन्दु कोई नायक-नायिका न होकर निम्न मध्यवर्गीय समाज है, इसलिए इसे नायक–नायिकाहीन उपन्यास मानना चाहिये। जमुना का जीवन निम्न मध्यवर्गीय नैतिक विकृतियो के प्रति

---

१. अज्ञेय : सूरज का सातवाँ घोड़ा : भूमिका : पृ० १२।

एक समझौता है। जमुना की जिन्दगी को देखकर माणिक मुल्ला को कहना पडा 'हमारी जिन्दगी मे जरा सा पर्त उखाड कर देखो, तो हर तरफ इतनी गन्दगी और कीचड छिपा हुआ है कि उस पर रोना आता है।[१]' माणिक लेखक का प्रवक्ता है और साथ ही कायर, काल्पनिक और आदर्शवादी पात्र हैं। जमुना, लिल्ली और सत्ती—निम्न मध्यवर्गीय नारी के तीन रूप है, यह नारी के क्रमश: भूत, वर्तमान और भविष्य की ओर सकेत करती हैं। जमुना अर्द्ध शिक्षित, लिल्ली शिक्षित और सत्ती अशिक्षित है। ज़मुना भारतीय नारी की नैतिक विकृति, लिल्ली आधुनिक—यथार्थ और सत्ती श्रमिक नारी के रूप मे अभिव्यक्त हुई है। माणिक मुल्ला यहा हर एक के साथ है और हर एक से अलग है। हर लडकी उसके जीवन मे आती हैं और हर एक से वह अलग है। सभी पात्र निम्नमध्यवर्गीय विकृतियो, अभावो, कमजोरियो और खोखलेपन को अभिव्यक्त करते हुए भी अपने व्यक्तित्व की रक्षा करते हैं क्योकि वे लेखक के हाथो के साचे नही हैं। माणिक मुल्ला के अतिरिक्त सबने आदर्शवाद का नकाब उतार फेका है इसलिए विकास की सम्भावनाओ को लिए हुए प्राणवान पात्र हैं। तन्ना और सत्ती के साथ अत मे ज्यादती की है क्योकि तन्ना की टाग तोड दी, नौकरी से निकाल दिया, मौत के घाट उतार दिया और सत्ती को तो भिखारी बना दिया। अस्वाभाविक घटनाओ के होते हुए भी पात्रो मे निस्सन्देह चेतना और स्पन्दन है।

उद्देश्य—माणिक मुल्ला का कथन है 'ये कहानिया वास्तव मे प्रेम नही वरन् उस जिन्दगी का चित्रण करती है जिसे आज का निम्न मध्यवर्ग जी रहा है। उसमे प्रेम मे कही ज्यादा हो गया है आज का आर्थिक सघर्ष, नैतिक विश्रृंखलता, इसलिए इतना अनाचार, निराशा, कटुता और अधेरा मध्यवर्ग पर छा गया है।[२]' जमुना, तन्ना, लिली, सत्ती और खन्ना आदि सभी पात्र सामाजिक, आर्थिक और नैतिक विकृतियो से ग्रस्त हैं। माणिक मुल्ला को विश्वास है 'पर कोई न कोई ऐसी चीज है, जिसने हमे हमेशा अधेरा चीर-कर आगे बढने, समाज-व्यवस्था को बदलने और मानवता के सहज मूल्यो को पुन स्थापित करने की ताकत और प्रेरणा दी है।[३]' निम्न मध्यवर्ग सूर्य के

---

१. धर्मवीर भारती : सूरज का सातवां घोडा : पृ० ३७।

२. धर्मवीर भारती : सूरज का सातवां घोडा : पृ० ११३।

३ वही, पृ० ११३।

रथ के समान है। सूर्य का रथ टूट गया है और घोडो, की हालत खराब है किन्तु अब सिर्फ एक घोडा बचा है। यह घोडा है भविष्य का घोडा, तन्ना, जमुना और सत्तो के नन्हे निष्पाप बच्चो का घोडा, जिनकी जिन्दगी हमारी जिन्दगी से ज्यादा अमन चैन की होगी, ज्यादा पवित्रता की होगी, उसमे ज्यादा प्रकाश होगा, ज्यादा अमृत होगा। वही सातवा घोडा हमारी पलको मे भविष्य के सपने और वर्तमान के नवीन आकलन भेजता है ताकि हम वह रास्ता बना सकें जिस पर होकर भविष्य का घोडा आयेगा।[1]' अत निम्न-मध्यवर्गीय जीवन की विकृतियो का चित्रण कर, भविष्य के लिए आशा का सन्देश देना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

एक आलोचक की धारणा है कि 'भारती अपने इस उपन्यास मे दौराहे पर खडे हैं। वह ऐसे लेखक सरीखे हैं जिसे प्रेमचद भी अच्छा लगता है और प्रसाद भी, जो प्रेमचद और प्रसाद दोनो का अनुसरण करना चाहता है।[2]' धर्मवीर भारती स्पष्ट रूप से इस उपन्यास मे प्रेमचद की सामाजिक परम्परा का लेखक है। सामाजिक उपन्यासो के पात्र भी अपने सामाजिक व्यक्तित्व के साथ वैयक्तिक चरित्र का अस्तित्व रखते हैं। इसकी कथावस्तु हमारे निम्न मध्यवर्ग का सही सही चित्रण है। माणिक, जमुना, लिल्ली, तन्ना और सत्तो अपनी वैयक्तिक विशेषताएं रखते हुए निम्नमध्यवर्गीय सामाजिक जीवन का प्रतिनिधित्व करते है और लेखक का उद्देश्य निम्नमध्यवर्गीय खोखलेपन को बताकर जीवन को आशा का सन्देश दिलाना है। एक आलोचक ने इस उपन्यास को मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की श्रेणी मे रखने की भयानक भूल की है।[3] यह सामाजिक उपन्यास है। अज्ञेय के शब्दो मे 'सूरज का सातवा घोडा एक कहानी मे अनेक कहानियाँ नही, अनेक कहानियो मे एक कहानी है। वह एक पूरे समाज का चित्र और आलोचना है, और जैसे उस समाज की अनन्त शक्तिया परस्पर—सम्बद्ध परस्पर आश्रित और परस्पर सम्भूत है।'[4] यह जमुना, लिल्ली, सत्तो तन्ना और माणिक मुल्ला आदि पात्रो की व्यक्तिगत कहानिया न होकर पूरे निम्न मध्यवर्गीय समाज की कहानी है, इसलिए इसे सामाजिक उपन्यासो मे स्थान दिया है।

---

१. वही, पृ० ११४।
२. उपेन्द्रनाथ अश्क : आलोचना-४, पृ० १०८।
३. सुषमा धवन . हिन्दी उपन्यास, पृ० २६१।
४. सूरज का सातवां घोड़ा : भूमिका : पृ० ४३।

सर्वेक्षण—'बूंद और समुद्र,' 'सागर लहरे, और मनुष्य,' 'मैला आचल,' 'परती परिकथा,' और 'सूरज का सातवा घोडा,' इस विवेच्यकाल के महत्वपूर्ण सामाजिक उपन्यास हैं। बूद और समुद्र' व्यक्ति और समाज के समन्वय को लेकर लिखा गया गद्यात्मक महाकाव्य है, जो भारतीय-परिवार और भारतीय-समाज की कहानी है और यहा लखनऊ का चौक नही भारत का हर शहर है, हर पुरुष और स्त्री है। भारतीय-समाज अपनी दुर्बलताओ और अभावो के साथ व्यक्ति और समाज के अलग रूपो को लेकर, यहा उपस्थित है। 'सागर लहरे और मनुष्य' मे मछुहारो की समाजशास्त्रीय अभिव्यक्ति है। 'मैला आचल' मे मानवतावाद के परिपार्श्व मे भारतीय जन-जीवन अभिव्यक्त हुआ है और 'परती परिकथा' मे परानपुर के आचलिक जीवन का चित्रण करते हुए भारतीय गावो की सास्कृतिक चेतना को प्रकट किया गया है। 'सूरज का सातवा घोडा' मे निम्न मध्यवर्गीय समाज अनूठे शिल्प मे प्रकट हुआ है। 'दीघतपा' मे समाज की अनैतिकता और व्यभिचार हैं तो 'जुलूस' मे लोक सस्कृति मूलक समाज का गठन करने का प्रयत्न किया गया है। अत 'सूरज का सातवा घोडा' का व्यग, 'सागर लहरें और मनुष्य' मे समाजशास्त्रीय विवेचन 'मैला आचल' और 'परती परिकथा' मे उपन्यासकार की निर्वैयक्तिकता और बूद और समुद्र भारतीय समाज की दुर्बलताओ और अभावो का चित्र, इस विवेच्यकाल के सामाजिक—उपन्यासो की नयी और महत्वपूर्ण उपलब्धिया हैं।

'सूरज का सातवां घोडा' और 'दीर्घतपा' आलोचनात्मक सामाजिक उपन्यास, 'मैला आचल' और 'परती—परिकथा' आचलिक सामाजिक उपन्यास हैं। प्रेमचद युग के सामाजिक उपन्यासो मे उपदेशात्मक सामाजिक उपन्यासो का स्वर यहा क्षीण पड गया है। 'सागर लहरें और मनुष्य,' 'मैला आचल' और 'जुलूस' मे यथार्थोन्मुख आदर्शवाद का स्वर प्रतिध्वनित होता है। इस विवेच्यकाल के सामाजिक उपन्यासो मे नग्न जीवन का चित्रण नही हुआ है, इसलिए नग्नवादी सामाजिक उपन्यासो का सर्वथा अभाव है। प्रेमचद युग के बाद और विशेषत: इस विवेच्यकाल मे यथार्थवाद का रग अधिक प्रखर होता गया है।

सामाजिक उपन्यासो की वस्तु और चरित्र मे स्थूलता मिलती है क्योकि इनमे मनोवैज्ञानिक ऊहापोह का अभाव है। इन उपन्यासो मे सामाजिकता का स्वर प्रमुख है, व्यक्ति समूह मे खो गया है। माणिकमुल्ला, निल्ली,

जमुना और तन्ना आदि मध्यवर्ग की विकृतियो मे, 'डा० प्रशान्तकुमार, ममता और कमला विहार के पूर्णिया जिले मे, रत्ना, माणिक और यशवन्त मछुहारो के बीच, सज्जन और महिपाल भारतीय समाज की भीड़ मे, जितेन्द्र और ताज-मनी परानपुर की परती--जमीन मे दीर्घतपा की वेला और जुलूस की पवित्रा नारी के दो रूपो मे खो गई है। इन सामाजिक उपन्यासो मे समाज उभरता है, व्यक्ति नही। इनमे व्यक्ति मूल्यो के स्थान पर सामाजिक मूल्यो की स्थापना हुई है। इनमे सामाजिक कथा व्यक्ति का सामाजिक व्यक्तित्व और उद्देश्य मे सामाजिकता का स्वर स्पष्ट झलकता है।



सामाजिवादी उपन्यास

समाजवाद

समाजवाद मे पूजीवाद की प्रतिक्रिया स्वरूप मम्पत्ति और पूजी के सावनो पर समाज के आधिपत्य द्वारा वर्गहीन समाज की स्थापना की गई है। यह वर्ग सघर्ष द्वारा द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद मे विश्वास करता हुआ, वर्गहीन समाज की स्थापना मे सलग्न होता है। आधुनिक समाजवाद मुख्य रूप से आधुनिक–समाज की वर्ग सघर्ष की उपज है। मार्क्स ने आदिम–समाजवाद को वैज्ञानिक–आधार दिया। द्वन्द्वात्मकता, विज्ञान के सामान्य गति के नियम, प्रकृति, मानव–समाज और विचार के विकास से अधिक नहीं है।[1] द्वन्द्वात्मकता भौतिकता पर आधारित है क्योंकि इसका जन्म दो ऐतिहासिक वर्गो प्रोलेतेरित और बुर्जुआ के सघर्ष के फलस्वरूप हुआ है और यह सघर्ष आर्थिक है।[2] अत यह एक ऐसे समाज का निर्माण करता है जहा उत्पत्ति के साधनो पर पूजी के स्थान पर श्रम का आधिपत्य होता है और मूल्य का आधार,

---

१. फ्रेडरिक ऐंगिल्स : रिवोल्यूशन इन साइन्स ऐंटी डर्हिंग . पृ०२१०
'डायलेक्टिक्स इज् नथिंग मोर दैन द साइन्स जनरल लॉज ऑफ् मोशन ऐण्ड डवलपमेंट ऑफ नेचर, ह्यूमान सोसाइटी ऐंड थॉट।

२. वही, पृ० ४४।
सोशलिज्म नो लार्जर ऐपियर्ड इन द एक्सीडेण्टल डिस्कवरी ऑफ दिस ऑर दैट ब्रीलिवण्ट माइड, बट ऐज् नैसेसरी आउटकम ऑफ द स्ट्रगल ऑफ टू हिस्ट्रीकल्ली डवलप्ड क्लासेज द प्रोलैट ऐरियट ऐंड द बोरगिसी। इट्स टास्क वाज् नो लोंगर टु मैन्यूफैक्चर ए सिस्टम ऑफ सोसाइटी हिस्टोरिक इकनोमिक प्रोसेज।

पूंजी न होकर श्रम होता है। यह समानता और स्वतन्त्रता की भावना पर आधारित होता है, किन्तु यह बुर्जुआ समानता और स्वतन्त्रता न होकर, प्रोलेतेरियत समानता और स्वतन्त्रता होती है। वस्तुत, यह समाजवादी समाज की स्थापना मे सलग्न होता है। समाजवादी समाज कानून, न्याय, दर्शन, धर्म राज्य, कला और साहित्य के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण रखता है। समाजवादी-यथार्थवाद समाजवाद की साहित्यिक प्रवत्तिया समाजवाद के निर्माण की दिशा मे सलग्न होती हैं। यह सैद्धान्तिकता के धरातल से उतारकर व्यावहारिकता के धरातल पर लाता है। इसकी मान्यता है कि सैद्धान्तिकता के प्रति उदारता वरतकर, उसे निश्चित लक्ष्य की ओर उन्मुख किया जाय। समाजवादी–साहित्यकार अपनी कृतियो मे समाजवादी–यथार्थ को अभिव्यक्त करता है। समाजवादी यथार्थवाद समाजवादी–साहित्य का प्रतिमान बन गया है। यह यथार्थजीवन को समाजवादी दृष्टि से आकता है और यह मानता है कि लेखक, समाज की द्वन्द्वात्मक–भौतिकवादी भूमिका के सहारे, यथार्थ चित्रण मे अग्रसर हो। समाजवादी लेखक प्रतिक्रियावादी ताकतो के खिलाफ प्रगतिगामी शक्तियो को चित्रित करता है। समाजवादी यथार्थवाद के प्रतिपादको के अनुसार, साहित्य मे व्यक्तिवादी प्रवृत्तियो के फलस्वरूप, अधिकाश लेखक यथार्थवाद से दूर हट चुके हैं, इसलिए सामाजिक नवनिर्माण और प्रगति मे उनका कोई योग नही है। समाजवादी यथार्थवाद के तत्वो को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है, जो आशिक दृष्टि से सत्य है —

—वस्तुगत यथार्थ का समाजवादी दृष्टि से चित्रण।

—समाज विकास की भूमिका मे द्वन्द्वात्मक–प्रक्रिया की भूमिका मे प्रगतिशील और प्रगतिगामी शक्तियो की परख।

—नये को समर्थन देकर जर्जर प्राचीन का वहिष्कार।

—समाज मे व्याप्त वर्ग संघर्ष तथा वर्गीय असगतियो का गहरा और सूक्ष्म विश्लेषण तथा उद्घाटन।

—मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का अंकन, जीवित, सक्रिय तथा सामाजिक मनुष्य की प्रतिष्ठा, 'पोजिटिव होरो' की प्रतिष्ठा।

—भविष्य के एक क्रातिकारी, रचनात्मक और वैज्ञानिक दृष्टि से सम्पन्न तर्क सम्मत और 'विजन' का मूर्तीकरण।[१]

---

१. आलोचना · २८ . पृ० ३०।

वस्तुगत यथार्थ की अभिव्यक्ति सामाजिक–चेतना के लभी लेखक करते हैं, किन्तु समाजवादी लेखक समाजवादी दृष्टि से वस्तुगत यथार्थ का चित्रण करता है। केवल नये के समर्थन और जर्जर प्राचीन के वहिष्कार से समाजवादी यथार्थवाद की स्थापना नही होती जब तक जर्जर प्राचीन का सम्बघ वुर्जुआ मान्यताओ और नये का सम्बघ समाजवादी मान्यताओ से नही हो। समाजवादी यथार्थवाद 'पोजिटिव हीरो' की प्रतिष्ठा अवश्य करता है। उद्देश्यपरकता का पूर्वाग्रह होने के कारण यह मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को स्पष्ट करने मे असमर्थ होता है। केवल क्रातिकारी रचनात्मक और वैज्ञानिक दृष्टि ही समाजवादी यथार्थवाद मे सलग्न नही होती है, जब तक समाजवादी दृष्टि नही हो। प्रकृतवादी लेखको मे वैज्ञानिक दृष्टि होती है किन्तु वहां समाजवादी यथार्थवाद का सर्वथा अभाव होता है। हर मौलिक लेखक का सृजन रचनात्मक होता है और समाजवादी लेखको के अतिरिक्त अन्य लेखक क्रातिकारी कदम उठाकर भी, यथार्थवाद का अकन नही करते हैं। मनुष्य के जीवन का कोई क्षेत्र–आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक आध्यात्मिक, नैतिक और सास्कृतिक जीवन, समाजवाद से अछूता नही रहता है।

समाजवादी उपन्यास

समाजवादी उपन्यासो मे उपन्यास का लक्ष्य समाजवादी जीवन की स्थापना रहता है। यह मानना गलत है कि सामाजिक उपन्यास मार्क्सवादी दृष्टिकोण के फलस्वरूप समाजवादी या प्रगतिवादी उपन्याम की सज्ञा पा लेता है।[1] समाजवादी उपन्यास सामाजिक उपन्यास का अगला चरण न होकर व्यक्तिवाद की प्रतिक्रिया स्वरूप अवतीर्ण हुआ है। एक मार्क्सवादी आलोचक की मान्यता है कि मार्क्सवाद ने, व्यक्ति का वहिष्कार नही किया है, यह केवल आर्थिक शक्तियो के बीच भीड ही नही देखता है।[2] अधिकाश समाजवादी उपन्यासो ने आर्थिक शक्तियो और वर्ग–सघर्ष के बीच व्यक्ति के व्यक्तित्व की उपेक्षा की है क्योकि समाजवादी उपन्यासकार का केन्द्र व्यक्ति न होकर समाज होता है। सामाजिक उपन्यास मे व्यक्ति सामाजिक चेतना के लिए जीवन मूल्यो की स्थापना करता है, किन्तु समाजवादी उपन्यासो मे वह वर्ग सघर्ष का साधन वन जाता है। सर्जकशीलता होने पर ही, समाजवादी उपन्यासकार

---

१. डा० सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास : पृ० २८६।

२. राल्फ़ फोक्स · द नॉवल ऐण्ड द पिपिल : पेज ६४।
'फॉर मार्क्सिज्म इज़ नोट डेनी द इनडिविजुनल। इट इज नोट सी मैसेज इन द ग्राइप ऑफ इनेक्सोरेबिल इकनोमिक फोरसेज़।"

अपने उद्देश्यपरकता के बीच व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी पूर्णतः उभार सकता है। यह माना गया है कि विश्व–दृष्टि और जीवन को समझे विना मानव-व्यक्तित्व की पूर्ण और युक्त अभिव्यक्ति नही मिल सकती। उपन्यास मे नया जीवन और मानवता का पुनर्जन्म इस दृष्टिकोण को उपलब्ध किये विना नही हो सकता है। यह दृष्टि द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी दृष्टि है जिसने कला को नया समाजवादी–यथार्थवाद दिया है।[1] यह मार्क्सवादी आलोचक का दुराग्रह है क्योंकि वह केवल समाजवादी दृष्टि को ही उपन्यास मे देखता है। यह सही है कि मनोविश्लेषण ने व्यक्तित्व की गहराईयो का पता लगाने मे यह नही समझा कि उनका सामाजिक पहलू भी है। मनुष्य को आज बाह्यकेन्द्रित भय, फासिज्म, युद्ध, वेरोजगारी, कृषि का पतन, यत्रो का नियत्रण और सामाजिक जीवन की विघटनकारी शक्तियो के खिलाफ सघर्ष करना पडता है।[2] मनोविश्लेषण केवल व्यक्तित्व की गहराईयो का पता लगाने मे जुट जाता है किन्तु समाजवादी उपन्यासकार, प्रतिक्रियावादी शक्तियो के विरुद्ध प्रगतिवादी शक्तियो का विजयघोष करता हुआ, समाजवादी जीवन की स्थापना मे सचेष्ट रहता है।

समाजवादी–उपन्यासकार

यशपाल, रागेयराघव, नागार्जुन, भैरवप्रसाद गुप्त और अमृतराय आदि इस विवेच्यकाल के समाजवादी उपन्यासकार है।

---

१. रॉल्फ फोक्स ' द नॉवल अेंड द पिपिल, पृ० १२६।
'इन द अॅबजेंन्स ऑफ वर्ल्ड आउटलुक ऑफ अॅन अण्डरस्टेंडिंग ऑफ लाइफ, नो फुल अेंड फ्री ऐक्सप्रेशन ऑफ ह्यूमन पर्सनलिटी इज पोसीबिल। दे कॅननोट फाइण्ड न्यू लाइफ, ह्यूमानिज्म कॅवनोट वी बोर्न, अन्टिल सच अॅन आउटलुक हैज बीन अॅनटेण्ड दॅट आउटलुक ऑफ डाइलैक्टिकल, मैटरियलिज्म गिविंग वर्थ इन अॅन आर्ट सो ए न्यू सोशलिस्ट रिअलिज्म''।

२. साइकोअनालिजिज, फोर आल इट्स व्रिलियण्ट अॅण्ड करॅजस प्रोविंग इण्टू द सीक्रेट डेप्थ्स ऑफ पर्सनलिटी हैज नेवर अण्डरस्टूट दॅट द इण्डिविजुअल इज ओनली ए पार्ट ऑफ सोशल होल' ··· मैन टू डे इज कम्पिल्ड टू फाइट अगेन्स्ट द कॉलैप्स ऑफ आवर सोशल सिस्टम, अगेन्स्ट, फासिज्म, अगेन्स्ट वार, अनएम्प्लाइमेंट द डिके ऑफ एग्रीकल्चर, अगेन्स्ट डोमिनेशन ऑफ मेशीन।

यशपाल

यशपाल समाजवादी चेतना के उपन्यासकार हैं। लेखक ने समाज की उपेक्षा कभी नही की है। लेखक की धारणा है 'कि उसके विचार मे किसी भी व्यक्ति का जीवन उसके चारो ओर की जिन्दगी के प्रभावो से अप्रभावित नही रह सकता। जब व्यक्ति अपनी परिस्थितियो अथवा चारो ओर की जिन्दगी मे विद्रोह का साहस करता है, तब उस पर उसके चारो ओर की जिन्दगी और परिस्थितियो के दबाव का प्रभाव होता है। साहित्य भी व्यक्ति द्वारा किये जाने वाले प्रयत्नो मे से एक है। वह जीवन की परिस्थितियो से प्रभावित होता है परन्तु व्यक्ति अथवा समष्टि के अन्य प्रयत्नो की भांति जीवन को प्रभावित भी करता है यहा तक कि जीवन मे नवीन दिशाओ और मार्गो के सुझाव मे सहायक ही रहा है।[1]' यशपाल के उपन्यास मानव-जीवन की परिस्थितियो से पूर्णत प्रभावित हैं। इन परिस्थितियो का चित्रण कर इन्होने अपने उपन्यासो मे समाजवादी जीवन–दृष्टि अभिव्यक्त की है। एक अन्य स्थान पर यशपाल ने कहा है . 'मेरा सुनिश्चित दृढ विश्वास है कि मैं समाज और अपने समाज के व्यक्तियो के प्रतिक्षण सहयोग और सहायता के बिना क्षण भर भी नही जी सकूगा। इसलिए मैं जीवन की प्रक्रिया और जीवन के मार्ग में अनुभव होने वाली अडचनो और उचित तथा विकासशील जीवन की सम्भावनाओ के सम्बन्ध मे, अपना दृष्टिकोण अपनी रचनाओ द्वारा समाज के सन्मुख रखने का आग्रह करता हू। मैं अपनी अभिव्यक्ति और रचनात्मक प्रवृत्ति को सामाजिक भावनाओ और परिस्थितियो से स्वतत्र आत्मनिष्ठ प्रवृत्ति और आत्मा की पुकार नही समझता। अपनी अभिव्यक्ति अथवा रचना प्रवृत्ति को मैं समाज की परिस्थितियो, अनुभूतियो और कामनाओ की सचेत प्रतिक्रिया ही समझता हू और उन्हे अपनी चेतना और सामर्थ्य के अनुसार अपने सामाजिक हित के प्रयोजन से अभिव्यक्त करता रहता हू।[2]' यह सामाजिक हित का प्रयोजन जीवन के प्रति समाजवादी–जीवन दृष्टि है। एक आलोचक की मान्यता है कि यशपाल राजनीतिक आतकवादी का जीवन बिताकर मार्क्सवादी साहित्यकार के जीवन मे प्रविष्ट हुए हैं। मार्क्सवादी–दृष्टि से जीवन और इतिहास को समझने और अकित करने का प्रयास आपने अपने कथा–साहित्य मे किया है।[3]' यशपाल की प्रारम्भिक रचनाओ मे केवल

---

१ नईधारा : फरवरी–मार्च ६६ पृ० १०२।
२ आलोचना : २८ : पृ० ८५।
३ आलोचना १३, पृ० ८३।

साम्यवाद का प्रचारात्मक स्वर था, किन्तु क्रमश उनकी रचनाओ मे स्वस्थ समाजवादी चेतना के दर्शन होने हैं।

'दादा कामरेड' (१६४१), 'देशद्रोही' (१६४३), 'दिव्या' (१६४५), 'पार्टी कामरेड' (१६४६), 'मनुष्य के रूप' (१६४६), 'अमिता' (१६५५), 'झूठा-सच' (वतन और देश) (१६५८), 'झूठा सच' (देश का भविष्य) (१६६०) और 'बारह घटे' यशपाल की उपन्यास कृतिया हैं जिममे केवल 'अमिता' एक समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। 'झूठा सच' की विवेचना के पश्चात 'अन्य उपन्यास' के अन्तर्गत 'बारह घटे' को स्थान दिया गया है।

'झूठा-सच'

कथासार—'झूठा सच' (वतन और देश) मे भारत विभाजन की विभीषिकाओ के परिपार्श्व मे एक मध्यवर्गीय भारतीय-परिवार की कहानी कही गई है। जयदेव पुरी प्रथम श्रेणी मे एम० ए० कर किसी कालेज मे अध्यापक बनना चाहता है, किन्तु १६४२ के आन्दोलन की पुकार पर स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए, राजनीतिक जीवन मे कूद पडता है। तारा जयदेव की स्वतंत्र और उदार विचारवाली बहिन है। वह एक कम्युनिस्ट युवक असद से प्रेम करती है। तारा का विवाह एक व्यभिचारी लम्पट और दुराचारी युवक सोमराज मे हो जाता है किन्तु पुरी चुप रहता है। पुरी का विवाह कनक से हो जाता है। सुहागरात के दिन तारा का पति तारा को बुरी तरह पीटता है और हिन्दू मुस्लिम दगो के कारण भाग जाता है किन्तु तारा को ऊपर की मजिल मे भागना पडता है। मुसलमानो के हाथो मे पडने के कारण तारा का सतीत्व भग होता है। वह व्यथाओ और पीडाओ को झेलती हुई असद से मिलती है किन्तु उसकी बाट न जोहकर उसे अमृतसर पहुचना पडता है। देश का भविष्य मे तारा, कनक और पुरी की कथा वतन को छोडकर देश मे प्रारम्भ होती है। अनेक कठिनाईयो को झेलते हुए तारा भारत-सरकार के एक मत्रालय मे 'अडर सेक्रेटरी' बन जाती हैं और पुरी एक कांग्रेसी नेता सूद के चक्कर मे जीवन के पतन का मार्ग अपनाकर एक पत्र का सम्पादक बन जाता है। पुरी के जीवन मे उर्मिला का आगमन होता है किन्तु पुरी का अंश उसके भीतर होते हुए भी वह नारी-केन्द्र की शरण लेती है। कनक बौद्धिक और शारीरिक दोनो धरातलो पर पुरी से घृणा करती है और पुरी को असहाय होकर तलाक को मानना पडता है। कनक गिल को आत्मसमर्पण कर देती है। अन्त मे तारा और डा० प्राणनाथ का विवाह हो जाता है।

वस्तु–विधान—इस उपन्यास मे भारत–विभाजन के पश्चात् भारतीय परिवार की कहानी है। इसमे तारा की कथा मुख्य रूप से चलती है। अन्य कथाए तारा की कथा के इर्दगिर्द घूमती है। अन्य कथाओ मे तारा के भाई जयदेवपुरी, तारा का लम्पट और दुराचारी पति सोमराज, तारा की भाभी कनक, तारा के प्रेमी असद तारा के दूसरे पति डा० प्राणनाथ और तारा के सहयोगी गिल की कथाए मुख्य हैं। जयदेवपुरी और कनक की कथा प्रारम्भ से अन्त तक, तारा की कथा के साथ–साथ चलती है। पुरी को अगर इस उपन्यास का नायक नही मानें तो पुरी के जीवन मे घटने वाली अनेकानेक घटनाओ का तारा की कथा के साथ दूर का भी सम्बध नही है। 'देश का भविष्य' मे पुरी और तारा का जीवन दो प्रतिकूल दिशाओ मे बहा है। पुरी और कनक के बीच होने वाले वैमनस्य को लेखक ने तारा के जीवन से साहश्य दिखाने के लिए उपस्थित किया है। यह स्वातन्त्र्योत्तर–भारतीय–परिवार की कहानी है, किन्तु अंत मे तारा और प्राणनाथ के विवाह को न्यायोचित सिद्ध करने के प्रयत्न मे, लेखक इसको तारा की जीवन कथा मे समेट देना चाहता है। 'झूठा–मच' का चित्रफलक बहुत बडा है, लेकिन एक सुगठित कथानक ने घटनाओ को अपने भीतर समेट लिया है। यशपाल कहानियो और उपन्यासों मे कथानक का हमेशा ध्यान रखते हैं और कथानक को गढने मे सिद्धहस्त है। यही कारण है कि 'झूठा–सच' मे इतने बडे चित्रफलक के बावजूद शिथिलता नही आती और घटनाए अस्वाभाविक नही जान पडती हैं।[१] अगर तारा को उपन्याम का केन्द्र विन्दु मानते हैं और तारा के दूसरे विवाह का औचित्य ही उपन्यास का उद्देश्य हो तो उपन्यास की वस्तु–अन्विति में अभाव खटकता है, क्योकि यह वृहद उपन्यास विशाल घटनाओ और कथाओ का अम्बार है और अनेक घटनाओ का तारा के जीवन से कोई सम्बध नही है। स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय–समाज और भारतीय–परिवार को उपन्यास का केन्द्र विन्दु माने तो कथाओ मे सगुम्फन सुन्दर रूप से दिखाई पडता है। कला मे 'छाट और चुनाव' माने तो हमें इस उपन्यास को पढ़कर निराशा होगी। यह तो विशाल महासागर है, और महासागर की कुछ लहरो और बूदो को चुनने का प्रयत्न लेखक ने नही किया है। इसका वस्तु–शिल्प अमृतलाल नागर के 'बूद और समुद्र' भगवती चरण वर्मा के 'भूले बिखरे चित्र' और प्रेमचद के अधिकाश उपन्यासो का शिल्प है। इसके वस्तु–विधान मे विस्तार है गहराई नही।

---

१. आलोचना . २८, पृ० १०० ।

चरित्र-विधान—'झूठा-सच' मे अनगिनत पात्र है-पुरी, तारा, कनक, रामज्वाया, रामलुभाया, पडित गिरधारीलाल, नैयर, डा० प्राण, सूद, शीला, उर्मिला और सोमराज-सभी पात्र मध्यवर्गीय समाज के विभिन्न स्तरो का प्रतिनिधित्व करते हैं, सभी पात्र सामाजिक और आर्थिक सघर्षो से जूझते हैं, अधिकाश पात्र प्रेम और विवाह की समस्या को अनेक पहलुओ से सामने रखते हैं। यशपाल की वर्ग लेखनी इतनी सशक्त है कि वह अनगिनत पात्रो के व्यक्तित्व को उभार सकती है। पुरी उपन्यास का प्रमुख पात्र है, जो अपने समस्त अभावो और दुर्बलताओ को लेकर उपन्यास मे उपस्थित है। यह निश्चित है कि वह मार्क्सवादी नायक नही है इसलिये उपन्यासकार का प्रवक्ता भी नही है। उपन्यासकार का विचारपक्ष कनक और तारा के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। एक विवेचक के शब्दो मे : 'कनक मुनिकन्या लगती है और तारा ऋषि कन्या।[1]' आधुनिक मुनि तथा आधुनिक ऋषि की कन्याए अस्वस्थ हैं। तारा ऋषि कन्या है क्योकि उसका विचारपक्ष कनक से प्रबल है। इन दोनो पात्रों को दुर्बलताओ के प्रतीक रूप मे यशपाल ने चित्रित नही किया है। कुछ अशो मे इनको फ्रायड और मार्क्स का प्रतीक मान सकते हैं। उपन्यास के सभी पात्रो के जीवन मे कितने ही उतार-चढाव आते हैं इसलिये पुरी जहा एक ओर अपनी विशेषताओ को लेकर व्यक्त है, वहा दूसरी ओर वर्गगत भावनाए भी उनमे अपने उच्चतम रूप मे विकसित हैं। यह 'टाइप' मनोविज्ञान की कसौटी पर खरे उतरने वाले हैं। इन पात्रो के माध्यम से आज के समाज को चित्रित करने का-ऐतिहासिक यथार्थ को मूर्त करने का प्रयत्न किया गया है। पुरी प्रगतिशील पात्र होते हुए प्रतिक्रियावादी ताकतो के सामने घुटने टेक देता है। तारा प्रतिक्रियावादी ताकतो के खिलाफ प्रगतिवादी चेतना का प्रतीक बनती है। पुरी मार्क्सवादी मान्यताओ के अनुसार पाजिटिव हीरो नही है। कनक प्रतिक्रियावादी पुरी से अपने को स्वतत्र कर नारी-स्वतत्रता की प्रतीक बनती है। रामज्वाया और रामलुभावा मध्यवर्गीय समाज की दुर्बलताओ का, पण्डित गिरधारीलाल समाज-सुधारको का, पुरी युवक की विकृतियो का, सोमराज दुष्ट युवक का, डा० प्राण सज्जनता का, उर्मिला मूक युवती का और सूद राजनीतिक कुचक्रो का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रतिनिधि परिस्थितियो के प्रतिनिधि पात्र होते हुए भी तारा, कनक और पुरी अपने व्यक्तित्व की रक्षा करते हुए प्राणवान पात्र हैं।

---

१. माध्यम, नवम्बर १९६५, पृ० ७९।

उद्देश्य—लेखक ने समर्पण मे ही कहा है : 'सच को कल्पना से रग-कर उसी जनसमुदाय को सौंप रहा हूं, जो सदा झूठ से ठगा जाकर भी सच के लिये अपनी निष्ठा और उसकी ओर बढने का साहस नही छोडता।[1]' जीवन के सत्य का अनावरण करना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। इस देश के जीवन का राजनैतिक सत्य है, जनता निर्जीव नही है। जनता सदा मूक भी नही रहती। 'देश का भविष्य' नेताओ और मन्त्रियो की मुट्ठी मे नही है, देश की जनता के ही हाथ मे है।[2] इसके अतिरिक्त इस उपन्यास मे लेखक ने प्रेम और विवाह के सामाजिक सत्य का उद्घाटन किया है। कनक का पुरी को त्यागकर गिल के प्रति आत्मसमर्पण और तारा का विवाहित होते हुए डा० प्राणनाथ से विवाह कहा तक ठीक है ? नय्यर लेखक का प्रवक्ता बनकर कहता है, 'घटना तो झूठ सच नही होती, झूठ-सच तो घटना को प्रकट करने के प्रयोजन मे होता है। मूल सत्य को प्रकट करने के लिये प्रयत्न करना या उसे जमाना भी आवश्यक होता है।[3]' उपन्यास के इन शब्दों मे उपन्यासकार का स्वर ध्वनित होता है। प्रेम और विवाह के मार्क्सवादी पहलू को यशपाल ने इस उपन्यास मे प्रस्तुत किया है। अतः स्वातन्त्र्योत्तर भरत के भारत-विभाजन के परिपार्श्व मे युग के सामाजिक और राजनीतिक सत्य को प्रस्तुत करना ही उपन्यास का उद्देश्य है।

'झूठा सच' की रचना तक यशपाल के मार्क्सवादी या समाजवादी लेखक के रूप मे स्वीकार करने मे कोई शका नही थी किन्तु इस उपन्यास मे इस सन्दर्भ मे एक प्रश्न चिन्ह खडा कर दिया है। यह निश्चित है कि यशपाल मार्क्सवाद के सैद्धान्तिक प्रचार के पूर्वाग्रह से मुक्त हुए हैं और यह उनकी एक महान उपलब्धि है। इतना होने पर भी 'झूठा सच' मे सामाजिक यथार्थ के स्थान पर समाजवादी यथार्थवाद का रग स्पष्ट रूप से उभर कर आता है। वर्ग-सघर्ष के फतवे इस उपन्यास मे नही दिये हैं किन्तु प्रेम और विवाह की समस्या को समाजवादी दृष्टिकोण से देखा है। पुरी समाजवादी 'हीरो' नही है किन्तु कनक और तारा का जीवन उनके समाजवादी-चिन्तन को स्पष्ट करता है। समाजवादी-विचारधारा के अनुसार विवाह केवल मूक सामाजिक

---

१. यशपाल झूठा सच : समर्पण।

२. वही, पृ० ६८०।

३. वही, पृ० ६७३।

समझौता नही है। शोषण और अन्याय की स्थिति मे हर पक्ष को यह अधिकार है कि वह पुराने समझौतों को भग करके नये समझौतो की स्थापना कर सकता है। विवाह को अधिकारो के धरातल पर खीच लाना मार्क्सवादी चिन्तन का परिणाम है इसलिये इस उपन्यास को समाजवादी–उपन्यासो की श्रेणी में स्थान दिया गया है।

अन्य उपन्यास—'बारह घटे' यशपाल का नवीनतम उपन्यास है। इस उपन्यास में विनी पति की समाधि के दर्शनो के लिए लखनऊ से नैनीताल अपनी बहिन जिनी के पास पहुंचती है। उसकी भेट प्रौढ विधुर फेहम से होती है। सड़क टूटी होने के कारण जिनी के यहां न जाकर फेहम के यहा रह जाती है। उपन्याम मे कसाव और योजना है इसलिए वस्तु–विधान सुन्दर है। उपन्यास के मुख्य पात्र हैं विनी, फेहम, विनी की बहन जिनी, उसका पति पामर और पुलिस अफसर लारेंस। उपन्यास विचारो से अनुप्राणित है, अधिकाश पात्र आदर्शो और विचारो की नकाब ओढकर आते हैं। पामर और जिनी परम्परागत नैतिकता और विनी और फेम नवीन नैतिकता के प्रतीक हैं। लारेंस के स्वर मे उपन्यासकार बोलता है. 'हमारी औचित्य और अनौचित्य सम्बधी धारणाए ही नैतिकता होती है।[1]' यही उपन्यास का उद्देश्य जान पड़ता है। लेखक समाजवादी जीवन पद्धति के आधार पर नैतिकता के प्रश्न को अभिव्यक्त करता है अन्यथा वर्गसघर्ष के प्रश्न को लेकर इसको समाजवादी उपन्यास की संज्ञा नही दे सकते हैं। 'बारह घटे' मे यशपाल ने समाजवादी जीवन पद्धति को वैचारिक धरातल पर स्वीकार किया है।

रांगेयराघव

रांगेयराघव समाजवादी–उपन्यासकार माने गए हैं। रागेयराघव ने साहित्य के स्थायी मूल्यो के सबध मे विचार व्यक्त करते हुए कहा कि साहित्य सामाजिक जीवन को बिम्बित करके चुप नही रह सकता, वरन मानव मे एक व्यापक दृष्टिकोण जागृत करता है। वर्ग सघर्ष के माध्यम से साहित्य और समाज मनुष्य को यान्त्रिक बनाते हैं, वे रूढिवादी दृष्टिकोण अपनाते हैं। वे लोग जो आत्मवाद के नाम पर व्यक्ति को समाज से निरपेक्ष बनाकर देखते हैं, वे अवैज्ञानिक दृष्टिकोण रखते हैं। पहला कुत्सित समाजशास्त्री है, दूसरा समाजशास्त्र को नही मानता। इन दोनो के बीच का रास्ता ही ठीक है। पहला

---

१. बारह घंटे, पृ० १०३।

समाजीकरण मे व्यक्ति को अस्वीकृत करता है, दूसरा व्यक्ति के नाम पर समाजीकरण का तिरस्कार करता है।[1] व्यक्ति और समाज के समन्वय से शोषणमुक्त जिस जीवन की कल्पना लेखक करता है वह मानवतावाद[2] है। लेखक का यह मानवतावादी स्वर वस्तुन भारतीय-समाजवाद है। लेखक ने एक अन्य स्थान पर कहा है 'साम्यवादी—यथार्थवाद के बारे मे यह भ्रम है कि केवल मजदूर किसान के विषय मे लिखा गया साहित्य ही साम्यवादी यथार्थवाद है। मार्क्स के महत्व को स्वीकार कर सकते हैं। मार्क्स ने इतिहास का गम्भीर अध्ययन करके यही तथ्य निकाला कि समाज का भी द्वन्द्वात्मक विकास होता है। साम्राज्यवाद और पूँजीवाद आज के ऐतिहासिक दौर मे मनुष्य के अन्तिम शत्रु हैं। समाजवाद मे व्यक्ति को पूर्ण अधिकार तब प्राप्त होंगे, जब वह पढ़ेगा, खाने को पायेगा, चिन्तामुक्त होगा, रोगमुक्त होगा और कला और विज्ञान के पास जाने की सहूलियत होगी।[3] अनर्गल प्रचार से बचते हुए और जनवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हुए, रागेयराघव के उपन्यासो मे समाजवाद का स्वर ध्वनित होता है।

'घरोदे' (१९४६) से 'आखिरी आवाज' (१९६३) तक रागेयराघव ने उपन्यासो के लेखन की एक लम्बी मंजिल पार की है। 'घरोदे' (१९४६), 'विपादमठ' (१९४६) और 'मुर्दों का टीला' (१९४८) को छोडकर अन्य सभी उपन्यास इस विवेच्यकाल मे आते हैं किन्तु उपन्यासो की इस विपुलता के कारण अलग-अलग इनकी विवेचना के लिए इस प्रबन्ध मे स्थान नही दिया गया है। 'कल की वात' (१९५४), 'रत्नाकी वात', 'देवकी का वेटा' (१९५४) 'लोई का ताना' (१९५४), 'भारती का सपूत' (१९५४), 'लाखन की आँखें' (१९५७), 'प्रतिदान' (१९५७), 'मेरी भवबाधा हरो' (१९६०) और 'आंधी की नीवें (१९६१) को उपन्यास न कहकर जीवनिया मात्र कहना ही ठीक है। 'सीधासादा रास्ता' (१९५१), 'चीवर' (१९५१), 'अधेरे के जुगनू' (१९५३), 'उवाल' (१९५४), 'वोलते खण्डहर' (१९५५), 'अधेरे की भूख' (१९५५), 'वोना और घायल फूल' (१९५७), 'कब तक पुकारूँ' (१९५७), 'वदूक और वीन' (१९५८), 'पक्षी और आकाश' (१९५८), 'जब काली घटा आएगी' (१९५८), 'राई और पर्वत' (१९५८), 'राह न रुकी' (१९५८), 'छोटी सी

---

१ आलोचना १४, पृ० ९ और १०।

२. वही, पृ० १६।

३. वही ३, पृ० ७८-८०।

वात' (१९५९), 'पथ का पाप' (१९६०), 'महायात्रा गाथा', 'अधेरा रास्ता' (१९६०), 'कल्पना' (१९६१), 'धरती मेरा घर' (१९६१), 'पतझर' (१९६२), 'प्रोफेसर' (१९६२), 'काका' (१९६३) और 'आखिरी आवाज' (१९६२) लेखक की उपन्यास कृतिया हैं जिसमे इस विवेच्यकाल के उपन्यासो मे 'कब तक पुकारूँ' के अतिरिक्त शेष को 'अन्य उपन्यास' के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।

कब तक पुकारूँ (१९५७)

कथासार—'कब तक पुकारूँ' मे जरायम पेशा समझी जाने वाली नटो की करनट जाति का चित्रण हुआ है। इसमे ऐसे ही एक करनट सुखराम अपनी जीवनगाथा इस उपन्यास मे कहता है। करनट सुखराम अपने को ठाकुर समझता है। उसका विवाह करनट जाति की प्यारी से होता है, जो पहले एक दरोगा द्वारा भ्रष्ट की जाती है और फिर एक सिपाही की रखैल बन यौन कुण्ठाओ का शिकार बन जाती है। कजरी भी अपने पति को छोडकर सुखराम के साथ रहती है। कजरी इस ससार को छोड देती है। उस बच्ची का वह कोमल कान्त रुदन वह रुदन जिसमे इतिहास की विभीषिकाएँ खो गई हैं, वह बच्ची जिसके पवित्र नयनो मे नया जागरण ऐसे देदीप्यमान हो रहा है, जैसे आदि महान आदि मे—जीवन कुलबुलाया था।[1] चन्दा अग्रेज युवती सूसन की कन्या होती है, जिसे सुखराम पालता है। वह लडकी चन्दा ठाकुर नरेश से प्रेम करती है और वह भी ठकुराइन बनने का स्वप्न देखती है। अन्त मे मानसिक आवेग की अवस्था मे ही चन्दा की मृत्यु हो जाती है।

वस्तु-विधान—'कब तक पुकारूँ' मे सुखराम की कथा मुख्यकथा है और प्रासगिक कथाओ मे कजरी और प्यारी की कथा है। सुखराम, कजरी और प्यारी के चारो ओर उपन्यास की कथा घूमती है। अन्य कथाओ मे चदा सूसन और लारेंस आदि की कथाएँ हैं। उपन्यास को लेखक ने मनोवैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करते हुए इतिवृत्तात्मक बना दिया है और यह जासूसी और अय्यारी उपन्यासो की तरह किस्सागोई से कम नही है। लेखक ने कई पीढीयो को एक साथ गूथने का प्रयास किया है, इसलिए इसका वस्तु विधान बोझिल हो गया है। जिस प्रकार 'भूले बिखरे चित्र' मे ज्वालाप्रसाद की चार पीढीयो के कथानक को जोडने का प्रयत्न किया गया है, वही कार्य सुखराम यहा करता है किन्तु यहा बिखराव आ गया है। चन्दा की विस्तृत कथा को

---

१. रागेयराघव, 'कब तक पुकारूँ' पृ० ५९५।

उपन्यासकार उपन्यास का अ ग नही वना सका है। अनेकानेक स्थलों पर अनावश्यक विस्तार हैं। यह अनावश्यक विस्तार आंचलिक चित्रण की प्रवृत्ति अ चल के रीति-रिवाजो, लोकाचारो, वातावरण-चित्रण, प्रकृति-चित्रण और नैतिक-सामाजिक मान्यताओ की स्थापना के फलस्वरूप हुआ है। लेखक क.ा से अधिक कष्टो के जीवन चित्रण करना चाहता है, इसलिए अनावश्यक प्रसगो को उपन्यास मे स्थान मिल गया है। अत. समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के फल-स्वरूप उपन्यास की वस्तु अन्विति मे वाधा पहुँची है।

चरित्र-विधान—सुखराम, कजरी और प्यारी इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं, इसलिए इनके चारो ओर इसकी कथा घूमती है और अन्य पात्रो में चन्दा, सूसन और लारेंस आदि हैं किन्तु चन्दा को छोडकर अन्य पात्र गौण हैं। सुखराम ही उपन्यास का केन्द्रबिंदु है, इसलिए उसे उपन्यास का नायक मानना चाहिये। सुखराम मे आभिजात्य-वर्ग की महत्वाकाक्षाये हैं। 'अधूरा-किला' उसकी महात्वाकाक्षाओ का प्रतीक है। शोषण के प्रति उसके हृदय मे विद्रोह है। पुलिस और समाज के शोषक वर्गों के प्रति उसके हृदय मे विद्रोह की भावना है। उसकी पत्नी प्यारी रुस्तमखा की रखैल बन जाती है, किन्तु वह पत्नी का गुलाम बनना नही चाहता। लेखक की मानवतावादी भावनाओ को सुखराम ही अभिव्यक्त करता है। वह अभावो, कमियो, दुर्बलताओ और शक्तियो का पुञ्ज है। प्यारी अपने वर्ग की नारियो की दुर्बलताओ और अभावो को अभिव्यक्त करती है। प्यारी का चित्रण लेखक ने करनटो के नारी जीवन की दुर्दशाओ और भोग्या नारी के चित्रण करने के लिए किया है। प्यारी, अपनी परिस्थितियो से पीडित होकर, करनटो के नारी समाजशास्त्रीय अध्ययन को अभिव्यक्ति का माध्यम बन कर रह जाती है, किन्तु कजरी परि-स्थितियो से ऊपर उठकर अपने को अभिव्यक्त करती है। कजरी भी भोग्या है किन्तु उसमे प्रतिष्ठा के साथ-साथ नारी सुलभ ईर्ष्या भी है और नारी का ममत्व भी। नारी की संवेदनशीलता और करुणा भी उसमे कम नही है। प्यारी के समान परिस्थितियो से पीडित बनकर उपन्यास मे अभिव्यक्त होती है। पात्रो के सृजन मे लेखक पूर्ण रूप से निर्वैयक्तिक नही रहा है, क्योकि वह समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के पूर्वाग्रह से मुक्त नही हो सका है। इतना होने पर भी सुखराम, प्यारी और कजरी हास्य और अश्रु, आशाओ और निराशाओ मे झूलते हुए अपना जीवन जीते है। सुखराम और कजरी बदलती परिस्थितियो के साथ उठते गिरते आगे बढते हैं किन्तु प्यारी मे विकास की सम्भावनायें नही हैं। निस्सदेह सुखराम, कजरी और प्यारी प्राणवान पात्र हैं।

उद्देश्य—करनटो के नैतिक जीवन को प्रस्तुत करना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। लेखक का कथन है, 'मैंने इनकी नैतिकता को समाज का आदर्श बनाकर प्रस्तुत नही किया है। बल्कि पाठको को इसमे 'सेक्स' की ऐसी जानकारी के रूप में हासिल करना चाहिये कि यह इनमे होता है। यह सारा समाज खानाबदोश है, उत्पीडित है, शोपित है। न इनके सामाजिक नियम शाश्वत हैं। न हमारी नैतिकता के बन्धन ही शाश्वत है।'[1] सुखराम के शब्दो मे लेखक उपन्यास के आशय को स्पष्ट कर रहा है, 'यह कमीने, नीच ही आज इन्सान हैं। इनके अतिरिक्त सबमे पाप घुस गया है क्योंकि इन सबके स्वार्थ और अहकारो ने इनकी आत्मा को दास बना दिया है। ये कमीने और गरीब अशिक्षा और अंधकार मे छटपटा रहे हैं। जब तक ये शिक्षित नही होते, तब तक इन पर अत्याचार होता ही रहेगा। जब तक ये शिक्षित नही होते, तब तक इनके अज्ञान, फूट और घृणा पर ससार मे जघन्यता का केन्द्र बना रहेगा। तब तक इनके पुत्र धरती की मिट्टी मे पैदा होते रहेगे। ...... शोषण की घुटन सदा नही रहेगी। वह मिट जायेगी, सदा के लिए मिट जायेगी।'[2] इस उपन्यास मे लेखक ने जीवन के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

यह समाजवादी चेतना का उपन्याम है। इस उपन्यास मे लेखक ने समाजवादी-यथार्थवाद का सफल चित्राकन किया है। शोषण, सामाजिक अन्याय बुर्जुआ मनोवृत्ति एव असमानता के विरुद्ध आवाज उठाई है। प्रगतिशील चेतना के फलस्वरूप इसको समाजवादी चेतना का उपन्यास कह सकते हैं क्योकि करनटो के जीवन का चित्रण कर, शोपित वर्ग पर होने वाले शोषण का चित्र खीचकर जनवादी परम्परा मे अपना स्थान बना दिया है। वर्ग सघर्ष की कहानी होने के कारण समाजवादी उपन्यासो की श्रेणी मे इस उपन्यास को स्थान मिलना चाहिये।

अन्य उपन्यास

'सीधा सादा रास्ता' (१९५१) भगवतीचरण वर्मा के 'टेढे मेढे रास्ते' के उत्तर मे लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास मे प्रतिक्रियावादी शक्तियो और प्रगतिगामी शक्तियो के बीच सघर्ष दिखाकर आशावादी स्वर की घोषणा की है : "दुनिया मे अभी इन्सानियत बाकी है। जिस दिन वह कही

---

१ कब तक पुकारूँ : भूमिका।
२. वही, पृ० ६२८।

नागार्जुन

नागार्जुन समाजवादी उपन्यासकार हैं। 'रतिनाथ की चाची'(१९४८), 'वलचनमा' (१९५२,) 'नई पौध' (१९५३), 'ग्रावा वटेसरनाथ' (१९५४), 'वरुण के वेटे' (१९५७), 'दुखमोचन' (१९५७), 'कुम्भीपाक' (१९६०), 'हीरक जयन्ती' (१९६१) और 'उग्रतारा' (१९६३) इनकी उपन्यास-कृतियाँ हैं जिनमें 'रतिनाथ की चाची' को छोडकर सभी इस विवेच्यकाल की कृतियाँ है। 'उग्रतारा' मे समाजवादी चेतना का अभाव है।

'वलचनमा' [१९५२]

कथासार—वालचंद राठत उर्फ वलचनमा का पिता जमीदारो के अत्याचार सहता हुआ मर गया। उसको मलिकाइन ने उसे गुलाम वना दिया और वह मलिकाइन के भतीजे फूलवावू के साथ अपने गांव से पटना आ गया। फूलवावू पटना मे पढते थे। कांग्रेस के जनआंदोलन मे फूलवावू गिरफ्तार हो गये और वलचनमा ने मोहनवावू की सेवा प्रारम्भ की। छोटे वावू ने इसकी वहिन रेवती के साथ बलात्कार करने का प्रयत्न किया और इसकी मा को बुरी तरह पीटा। फूलवावू के प्रति वलचनमा को श्रद्धा थी किन्तु उन्होने कुछ नही किया। लहरियासराय के गांधी आश्रम के व्यवस्थापक ने उसे वालटियर रख लिया। ५०) रुपये लेकर गौना करानें की उमग मे गाँव आकर नई वहू (सुगनी) को ले आया और रेवती को ससुराल भेज दिया। राधेवावू सोशिलिष्ट हो गये थे और वलचनमा ने भी किसान आंदोलन मे भाग लेना शुरू किया। एक रात वलचनमा को शोषक-वर्ग ने सदैव के लिए धराशायी कर दिया।

वस्तु-विधान—इसमे वलचनमा की कथा मुख्य है और अन्य कथाएँ वलचनमा के इर्दगिर्द चक्कर काटती हैं। इसमे एक ओर जमीदारो के शोषण की कथा है, जिसमे मोहनवावू का रेवती के साथ वलात्कार और मां को पीटना आदि है। दूसरी ओर जनआंदोलन की कथा है। जिसमे एक ओर फूलवावू हैं तो दूसरी ओर राधेवावू। आत्मकथात्मक शैली मे लिखे इस उपन्यास मे घटनाओ के कई मोड हैं, जिनमे वलचनमा का पटना आकर कांग्रेस का जन-आंदोलन देखना, जनवादी प्रवृत्तियो मे परिचित होना, शोषकवर्ग का उसके परिवार पर अन्याचार और शोषण, फूलवावू से निराश होकर राधेवावू की ओर मुडना और वलचनमा का जीवन मे डटकर किसान आंदोलन को नया मोड देना और उसकी मृत्यु आदि हैं। इस उपन्यास की घटनाये तीव्रगति से उद्देश्य की स्थापना की ओर आगे वढती हैं। अनावश्यक घटनाओ का उपन्यास

मे स्थान नही है। सभी घटनाओ का लक्ष्य शोषक और शोषित वर्ग के सघर्ष को प्रकट करना है। इसमे राजनीतिक विचारधारा उपन्यास पर आरोपित की गई है। उसका पूर्ण सगुफन कथानक के साथ नही हो पाया है। उद्देश्य परकता के फलस्वरूप यह आरोप अधिकाश समाजवादी उपन्यासो पर लगाया जा सकता है।

चरित्र-विधान—'गोदान' के होरी के पश्चात् वलचनमा निश्चित रूप से एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। एक लेखक की धारणा है: 'होरी किसान था, धरती से बधा था। परिस्थिति क्रम से सक्रमित होने वाले समाज के कारण गोबर शहर मे जाकर मजदूर बना था, मजदूरो की हडताल मे उसने भाग लिया था और समदुखता ने उसे बन्धुत्व का आधार भी दिया था, किन्तु वह भी धरती से उच्छिन्न नही। वलचनमा किसान नही, नाम मात्र की ही उसकी किसानी थी। वह धरता से बधा न था, उसके सस्कार भी अतः बधे न थे। वह विभिन्न व्यक्तियो और सस्थाओ के सम्पर्क मे आता है, उनकी दलीलें और भाषा सीखता है, उनके दोषो और अक्षमताओ का निरीक्षण-परीक्षण करता है।[1] होरी भारतीय किसान की दुर्वलताओ और अभावो का प्रतीक था, किंतु वलचनमा निम्नवर्गीय शोपित चेतना की जागती हुई चेतना का प्रतीक है। वह मानता है कि धरती किसान की है, वह धरती को जोतता और बोता है[2] यह भ्रामक धारणा है कि 'बलचनमा पाठक की सवेदना सजग नही करता, वैयक्तिक सस्पर्शिता को नही जगाता, कारण वह व्यक्ति नही समाज का प्रवक्ता है।'[3] यह सही है कि वलचनमा समाज का प्रवक्ता है, किन्तु दीनहीन शोपित इन्सानो को उसने सोते से जगाया है और उन्हे वाणी दी है, इसलिए पाठक की सवेदना उसे मिली है। उसकी पीड़ा, उसकी वेदना, उसका असह्य दुःख साधारणीकृत होता है और वह केवल आरोपित नही है। अधिकाश पात्र अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और सभी प्रतिनिधि परिस्थितियो के प्रतिनिधि पात्र हैं। बलचनमा सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधि पात्र हैं।

उद्देश्य—'वलचनमा' में लेखक का उद्देश्य वलचनमा के माध्यम से दीनहीन सर्वहारा वर्ग के साधन सम्पन्न शोषक वर्ग के प्रति वर्ग सघर्ष का चित्रण कर साधनहीन वर्ग मे वर्ग-सघर्ष की ज्वाला को प्रदीप्त करना है।

---

१. आलोचना, १३, पृ० १४८।
२. नागार्जुन : बलचनमा, पृ० २२०।
३. आलोचना, पृ० १४८।

भी नही मिलेगी, उस दिन हम एक दूसरे का गला घोट लेंगे।"[१] लेखक ने भूमिका मे ही स्पष्ट कहा है "मैं नही कह सकता कि मैंने पहले उपन्यास का उत्तर लिखा है। किन्ही विशेष पात्रो, परिस्थितियो का वर्माजी ने अपने अनुकूल विशेष चित्रण किया है। मै समझता हू उसमे कुछ विकृतियाँ हैं। मेरी राय मे असली चित्रण नही हुआ है। वह अब मैंने अनुकूल किया है। यह विचारो का सघर्ष है।"[२] अत लेखक की प्रतिक्रिया मात्र होने से मौलिक उपलब्धि नही है।

'हुजूर' (१९५२) एक अभिनव प्रयोग है क्योकि इसमे एक विलायती कुत्ता अनेकानेक स्वामियो के यहाँ रहकर उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग के खोखले जीवन को अभिव्यक्त करता है। अग्रेज पुलिस अफसर, विलासी रईस हरिप्रसाद, मेहतर, मटरूमल, शिवसिह और अन्त मे एक असहाय भिखारिन की वगल मे स्थान ग्रहण करता है। यह विलायती कुत्ता शोषितवर्ग का प्रतीक बन कर कहता है "जीवन के अनेक पहलू देखे। आज मैं महसूस करता हू कि मैं दूसरो के टुकडो पर पलने वाला जानवर ही तो था। क्यो मैं अपनी ताकत को दूसरो की ताकत समझता रहा? क्यो मैं उनके अधिकारो को अपने अधिकार मानता रहा? मैं कोई नही हूँ। मैं तो गरीब हू।"[३] इस तरह सम्पूर्ण उपन्यास मे समाजवादी-यथार्थवाद का रग बहुत गहरा है। अग्रेज अफसर की कामुकता और सेठ हरिप्रसाद का व्यभिचार सभी इस उपन्यास मे है। इस उपन्यास मे पूँजीपति और शोषक वर्ग के घिनोने रूप और निम्नवर्ग की दीनहीन अवस्था का चित्रण कर समाजवादी जीवन दृष्टि को अभिव्यक्त किया गया है।

'उबाल' (१९५४) जासूसी और घटनाप्रधान-उपन्यासो की श्रेणी का घटिया उपन्यास है। 'बोलते खण्डहर' (१९५५) को भी जासूसी और ऐयारी उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिलना चाहिये। बन्दूक और बीन (१९५८) मे युद्ध की पृष्ठभूमि मे शाति का सदेश दिया गया है। 'राई और पर्वत'(१९५८) मे बताया गया है कि समाज की विषमता एक पर्वत है और व्यक्ति केवल राई के समान है। सघर्ष, यथार्थ, जाति-प्रथा, विवाह-प्रथा, न्याय, पुलिस, पत्र-

---

१. रागेयराघव . सीधा सादा रास्ता : पृ० ४३० ।
२ वही, भूमिका ।
३. रागेयराघव हुजूर : पृ० ११७।

कारिता—सबको लेखक ने अभिव्यक्त किया है। इसमे समाजवादी यथार्थवाद का स्वर प्रतिध्वनित होता है किन्तु उपन्यास का वस्तु-शिल्प घटनाप्रधान है। 'पथ का पाप' (१९६०) मे समाजवादी यथार्थवाद का स्वर नही है, केवल आदर्शवाद और भावुकता उपन्यास मे झलकती है।

'धरती मेरा घर' (१९६१) आत्मकथात्मक शैली द्वारा लिखा गया उपन्यास है इसमें लेखक का मानवतावादी स्वर प्रतिध्वनित होता है। कृष्ण नामक युवक की डायरी मे लिखा था · "आकाश को ऐसा ही खुला रहने दो', धरती को भी मत बाधो। तुमने जो बीच मे दीवालें खडी करली हैं उन्हें गिरा दो क्योंकि वे तुम्ही ने बनाई हैं। ... ... आज मैं निर्मल और स्वतन्त्र हू क्योकि आकाश मेरी छत और धरती मेरा घर ..।"[1] लेखक की अतिशय भावुकता से समाजवादी स्वर के स्थान पर मानवतावादी स्वर उभर कर आया है। प्रोफेसर (१९६२) दो-दो हत्याओ के फलस्वरूप घटनाप्रधान उपन्यासो की कोटि मे रखा जा सकता है। आखिरी आवाज (१९६२) रांगेय-राघव की आखिरी आवाज है।

'आखिरी आवाज' (१९६२) की भूमिका मे लेखक ने प्रकट किया है 'आज भी समाज मे संघर्ष होता है और पुराने और नये सस्कारो का सघर्ष होता है।.... मेरा नरायन सघर्ष का जीवन्त स्वरूप है। · मैंने इतिहास सबधी उपन्यास लिखे हैं। सामाजिक भी। कथा साहित्य को एक नया विकास देने की ओर मेरी चेष्टा रही है। यह उपन्यास उसी कडी का है।"[2] इसमे लेखक ने बताया है कि 'व्यक्ति का व्यक्तित्व युग से समन्वित होकर भी आदर्श के विजन मे सीमित नही हो जाता।'[3] इस उपन्यास मे एक बलात्कार और हत्या के मुकदमे के इर्दगिर्द कथा घूमती है। उस कथा के माध्यम से स्वातन्त्र्योत्तर भारत मे शासक दल के नेताओ और सरकारी अधिकारियो की रिश्वतखोरी का भण्डाफोड किया गया है। शासकवर्ग और अधिकारियो की रिश्वतखोरी का भण्डाफोड होने के कारण इसको समाजवादी-उपन्यास की सज्ञा नही दे सकते हैं। घटनाप्रधान उपन्यास होने के कारण वस्तु और चरित्र की दृष्टि से, उपन्यास कोई नयी उपलब्धि नही दे सका है।

---

१ रांगेयराघव धरती मेरा घर : पृ० १७१–१७२।

२. रांगेयराघव . आखिरी आवाज, भूमिका।

३. वही।

वर्ग सघर्ष का चित्रण कर समाजवादी चेतना का निर्देश करना ही लेखक का उद्देश्य है। वलचनमा मे परम्परा और समाज की रूढियो मे लिपटे हुए लोक-जीवन को भविष्य से परिचित कराने का दृढ सकल्प दिखाई पडता है।

यह एक समाजवादी उपन्यास है। एक आलोचक की भ्रामक धारणा है 'वलचनमा के जीवन मे अगडाई और विद्रोह की ज्वलन्त चेतना का सस्पर्श भी उपस्थित किया गया है, जो नागार्जुन के जीवन्त साम्यवादी दृष्टि को व्यक्त करने वाला है।'[1] वलचनमा मे भारतीय किसानो पर होने वाले अमानुषिक अत्याचारो की अभिव्यक्ति और उससे उत्पन्न वर्ग-सघर्ष की अभिव्यक्ति और समाज-सघर्ष की अभिव्यक्ति होने के कारण कम्युनिष्ट पार्टी की अपेक्षा भारतीय समाजवादी दल के सिद्धातो की अभिव्यक्ति मिलती है। वर्ग सघर्प होने से मार्क्सवाद इस उपन्यास का आधार रहा है किन्तु समाजवादी और समाजवादी-चेतना का भारतीय रूप ही अभिव्यक्त हुआ है। यह मानना गलत है कि 'वलचनमा' मे मार्क्स के सिद्धातो के प्रचार की गन्ध मिलती है। प्रचार के पूर्वाग्रह से रक्षित यह शुद्ध समाजवादी चेतना का उपन्यास है।

अन्य उपन्यास

'नई पौध' (१९५३) मे पुरातन पीढी के प्रतीक खोखाई भा अपनी चौदहवर्षीय नतिनी विसेसरी के लिए साठ वर्षीय वूढे चतुरानन चौधरी से रुपये विनिमय के लिए तय करते हैं, किन्तु मिथिला के सोराठ के मेले मे समाजवादी नेता दिगम्बर वाचस्पति नामक समाजवादी दल के एक सदस्य के साथ कर देते हैं, जो जनआदोलन मे भाग ले चुका है। इसकी वस्तु यद्यपि पुरानी है किन्तु लेखक ने नई परिस्थिति और नये वातावरण मे चित्रित किया है। अनमेल-विवाह की समस्या की पृष्ठभूमि पर नई-पीढी और पुरानी पीढी के सघर्प का चित्रण कर नई पीढी का विजयघोष ध्वनित करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। नये समाज की स्थापना के लिए समाजवादी चेतना का उद्घोष ही इस उपन्यास का लक्ष्य है। 'नई पौध' खोखली और सडी-गली परम्पराओ पर नई पीढ़ी की विजय है और समाजवादी दृष्टिकोण का परिचय मिलता है।

'वावा वटेसरनाथ' (१९५४) मे जैकिसुन के परदादा का लगाया हुआ वटवृक्ष या वावावटेसरनाथ रूपहली ग्राम की चार पीढियो की कथा को सामने

---

१. आलोचना, २४, पृ० २०० ।

रखा है। रूपडली ग्राम की कथाएँ १९४२ तक की विभिन्न राजनीतिक दलो की जनआंदोलन की कथा है । वह जैकिसुन को सर्वहारा वर्ग पर होने वाले शोषण को बताकर नवीन व्यवस्था स्थापित करने की प्रेरणा देता है। लेखक ने बडी कुशलता से एक कहानी के कथानक को फैलाकर लघु-उपन्यास का आकार दिया है। एक कहानी के कथानक को फैलाकर लघु-उपन्यास का रूप देने का मूलाधार यही वातावरण का सजीव चित्र है। वातावरण के कारण ही कथानक का अनुबंध रह सका है और इस वातावरण मे पात्र खो जाते हैं और भारत का दो सौ वर्षों का इतिहास ही एक पात्र बनकर आता है। नवीन राजनैतिक व्यवस्था की स्थापना, जहा स्वाधीनता, शांति और प्रगति हो, यही उपन्यास का लक्ष्य जान पडता है। यह उपन्यास सशक्त जनवादी चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। एक स्थान पर बाबा कहता है 'झींगुर एक तुच्छ कीडा होता है। सैंकडो-हजारो की तादाद मे जब ये एक स्वर होकर आवाज करने लगते है तो एक अजीब सा समा बध जाता है। झींगुरो की यह अखण्ड झंकार कई-कई प्रहर तक चलती है। सामूहिक स्वर की इस एकाग्र महिमा के आगे मेरा मस्तक सदैव नत होता रहा है और होता रहेगा।'[1] जनवादी चेतना इस उपन्यास मे है इसलिए समाजवादी उपन्यासो मे इसे स्थान मिलना चाहिये।

'वरुण के बेटे' (१९५७) मे समाजवादी चेतना को मछुआ सघ के द्वारा प्रस्तुत किया है, जिसमे शिथिल कथावस्तु, पत्रात्मक चरित्र और उद्देश्य मे नारेबाजी स्पष्ट प्रतिध्वनित होती है। लोग नारे लगाते हैं—'इन्कलाब जिन्दाबाद! मछुआ सघ जिन्दाबाद, हक की लडाई जीतेंगे। गढ पोखर हमारा है, हमारा है।'[2] बाबा बटेसरनाथ की समीक्षा करते हुए एक आलोचक ने जो बात बाबा बटेसरनाथ के बारे मे प्रकट की है वह वरुण के बेटे के बारे मे ठीक उतरती है। नारेबाजी होने के कारण 'वरुण के बेटे' लेखक की विशेष उपलब्धि नहीं है।

'दुख मोचन' (१९५७) मे एक गाँव के नवनिर्माण की कहानी कही है। दुखमोचन पाच वर्ष तक कलकत्ता मे रहकर अपने गाँव हमका कोइली के निर्माण के लिए जुट गये। अपनी पत्नी गुजेश्वरी के विरह को भुलाकर गाव को नया जीवन दिया। दुखमोचन के कार्यों मे उनके भाई सुखदेव और

---

१. नागार्जुन बाबा बटेसरनाथ, पृ० ८।
२. नागार्जुन वरुण के बेटे · पृ० १३०।

अन्य व्यक्ति रोडे अटकाते रहे किन्तु लफलता दुखमोचन को मिली। इस उपन्यास मे वस्तु-पात्र और उद्देश्य विकलाग है। दुखमोचन व्यक्ति न रहकर 'टाइप' बन गया है। पूरे उपन्यास का कथानक इस ढग से गढ़ा गया है जैसे समस्याओ की पहले एक सूची बनाकर सामने रखली गई हो और उनको उत्पन्न करने तथा उनका समाधान करने के लिए पात्र गढकर उन्हे कथानक मे गूथ दिया गया हो। अधिकाश पात्र यत्रचालित हैं। वे व्यक्ति न रहकर 'टाइप' बन गये हैं। दुखमोचन विकास विभाग के आदर्शवादी प्रवक्ता के समान लगता है। दुखमोचन देश के नवनिर्माण का प्रवक्ता है और यह नवनिर्माण समाजवादी समाज की स्थापना का एक प्रयन्न है इसलिए यह समाजवादी कृति है।

'कुम्भीपाक' (१९६०) मे समाज मे होने वाले वर्गवैषम्य और अत्याचार को कुम्भीपाक मे नरक के समान बताकर नवीन नारी का प्रगतिशील दृष्टिकोण से चित्रण किया है। यह एक साधारण कृति है और उपन्यास के पीछे प्रचारवादी दृष्टि झलकती है इसलिए समाजवादी उपन्यासो मे उपलब्धि नही है।

'हीरक जयन्ती (१९६१) मे विहार के प्रमुख मत्री बाबू नरपतनारायण सिंह की हीरक जयन्ती मनाकर इस अवसर पर उनको अभिनन्दन ग्रन्थ और इकत्तर हजार रुपयो की थैली भेट की गई है। मजुमुखी एम.एल.सी. और अन्य कार्यकर्त्ता इस भूमिका को तैयार करते है। इस पूरे दौर मे कथा कही भी अपनी स्वाभाविक गति से नही चल पाती। पात्रो की चारित्रिक विशिष्टताओ का भी प्रभावशाली चित्रण नही हो पाया है। कथा मे सगठन का भी अभाव है। लेखक ने रिपोर्ताज-शैली का प्रयोग किया है। ये पात्र हर प्रान्त की राजनीतिक, सास्कृतिक शोरगुल मे दिखाई देते हैं।[1] इन पात्रो को देश की वर्तमान राजनीति मे सरलता से खोजा जा सकता है। नागार्जुन की व्यगकृति 'हीरक जयन्ती' का उद्देश्य वर्तमान राजनीति, सास्कृति आयोजनो और अभिनन्दन समारोहो की शल्य क्रिया प्रस्तुत करना है। सडी गली शोषक वर्ग की बुर्जुवा प्रवृत्तियो का चित्रण होने के कारण यह समाजवादी कृति है।

भैरवप्रसाद गुप्त

भैरवप्रसाद गुप्त समाजवादी चेतना के उपन्यासकार हैं। 'मशाल', 'गगा मैया', 'आदमी और जजीरे', 'नया आदमी' और 'सती मैया का चौरा' सभी इस विवेच्यकाल की कृतिया हैं जिसमे 'सती मैया का चौरा' एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

---

१. कल्पना १५० . अप्रेल १९६४, पृ० ७।

'सती मैया का चोरा' (१६५६)

कथासार—'सती मैया का चोरा' (१६५६) एक व्यक्ति मन्ने के जीवन की एक गांव की कहानी है। मन्ने अपनी महत्वाकाक्षाओ और प्रतिभा से जीवन मे प्रगतिशीलता की उपलब्धि चाहता है। उसे लग रहा था कि सब से वह शून्य हो गया है। उसने जो अब तक किया, सब शून्य है। इतनी परेशानी, इतनी तकलीफें, इतनी मेहनत, इतना सघर्ष ''''' नौकरी'' '''' रिश्वत '''' रोजगार'''' '''' रुपया '' '''' सब व्यर्थ हो गया कुछ भी हासिल न हुआ और जिन्दगी ऐसी ही रह गई।[1] मशहर मे विवाह हुआ, अपनी साली आयशा से प्रेम का दौर चला और उसका विवाह हो गया। केन इन्सपेक्टर बना और रिश्वत पर जिया। अपने ही गाव मे बसमतिया मे प्रेम का दूसरा दौर चला और फिर जिन्दगी को नया मोड दिया। सती मैया का चोरा और स्कूल के लिए प्रगतिवादी और प्रतिक्रियावादी तत्वो के बीच सघर्ष छिडता रहा और प्रगतिवादी विचारो के लिए, उसने अपने जीवन को होम दिया। उसका मित्र मुन्नी कम्युनिष्ट बनकर प्रगतिवादी तत्वो का समर्थन करता रहा और मन्ने गाव मे वर्गचेतना की आवाज बुलन्द करता रहा।

वस्तु-विधान—इसमे मन्ने अपने गाव की कथा कहता है, अत मुख्य कथा मन्ने की है। इस कथा के साथ दूसरी मुख्य कथा मन्ने के मित्र मुन्नी की है। अन्य कथाओ मे कैलासिया, नमूना, मशहर आयशा और बसमतिया आदि की कथायें हैं। मन्ने की कथा को आगे बढाने मे नमूना और बसमतिया से उसके इश्क के प्रसग हैं। मशहर मे उसका विवाह हुआ और साली आयशा से प्रेम इसलिए इन दोनो की कथायें भी उसके जीवन कथा को आगे बढाती हैं। कैलासिया का प्रसग उसके अब्बा की पीढी को स्पष्ट करता है। भैरव-प्रसाद गुप्त के वस्तु-शिल्प की दुर्बलता है कि उसमे अनावश्यक विस्तार है और समस्त कथाओ को अपने उद्देश्य प्राप्ति हेतु प्रयुक्त नही करा सकें है। 'सती मैया का चोरा' साम्प्रदायिक विद्वेष का प्रतीक रहा है और साम्प्रदायि-कता के जहर को दूर करने के लिए मन्ने और मुन्नी जुट गये। दोनो कॉलेज मे एक साथ पढे और तत्पश्चात् इस उद्देश्य प्राप्ति के लिए जीवन सग्राम मे उतर पडे। मुन्नी ने गाव के बाहर कम्युनिस्ट बनकर प्रतिक्रियावादी ताकतो के खिलाफ प्रगतिवादी शक्ति का विजयघोष ही इस उपन्यास की मुख्य कथा-वस्तु

---

१. भैरवप्रसाद गुप्त · सती मैया का चोरा, पृ० ५२०।

है। यह मानना गलत है कि भैरवप्रसाद गुप्त कथा के समस्त कोणो एवं शिल्प को अपने अभिप्राय के लिए प्रयुक्त नही करा सके। नमूना और वसमतिया के इश्क के प्रसग, कॉलेज की डिवेट (अपने आप मे वह घटना चाहे घटना जितनी भी महत्वपूर्ण हो, पर प्रस्तुत प्रसग मे वह हमारे प्रसग मे वह हमारे अर्थ को कोई शक्ति प्रतीत नही होती) कलकत्ता प्रवास और कैलासिया की मेहमानदारी का लम्बा, चौडा वर्णन, बाबू साहब के चरित्र की अन्तिम परिणति आदि ऐसे ही वर्णन हैं।[1] इस उपन्यास मे लेखक वर्णनो मे उलझ गया है किन्तु कॉलेज की डिबेट के प्रसग, नमूना और वसमतिया के इश्क के प्रसग, आयशा से प्रेम के प्रसग, कैलासिया की मेहमानदारी प्रतिक्रियावादी ताकतो के खिलाफ जूझते हुए प्रतीत होते हैं। लेखक का लक्ष्य साम्प्रदायिक सघर्ष के साथ मन्ने के चरित्र की रेखाओ को स्पष्ट कर उसमे प्राणतत्व फूकना चाहता था इसलिए अपने उद्देश्य से अलग उसे वर्णनो मे उलझना पडा है। इसलिए वस्तु-अन्विति मे कई प्रसग बाधक हैं। वर्णनो की बहुलता अवश्य है किन्तु अधिकाश प्रासगिक घटनायें मन्ने की मुख्य कथा को आगे बढाती हैं। वर्णनो की बहुलता नही होती तो यह उपन्यास वस्तु-अन्विति का सुन्दर उदाहरण होता।

चरित्र-विधान—मन्ने इस उपन्यास का नायक है और अन्य पात्रो मे मुन्नी, मशहर, वसमतिया, नमूना और बाबू साहब आदि हैं। मुन्नी और मन्ने प्रगतिगामी शक्तियो के प्रतीक है किन्तु प्रतिक्रियावादी व्यक्तियो को व्यक्तित्व प्रदान नही किया है। मन्ने का व्यक्तित्व पूर्ण रूप से विकसित हुआ है। अपने अभावो, दुर्बलताओ और कमियों के बावजूद वह शक्ति का पुञ्ज है। नमूना, बसमतिया और आयशा का चरित्र मन्ने की दुर्बलताओ को अभिव्यक्त करता है। उपन्यासकार अपने उद्देश्य को मन्ने के चरित्र द्वारा व्यक्त करता है। मन्ने के सघर्ष द्वारा सब कुछ घटित होता है। जीवन के सघर्षों के बीच डूबता इतराता आगे बढता है। ट्यूशन करके पढाई करता है, कॉलेज की डिबेट मे प्रतिक्रियावादी शक्तियो से सघर्ष करता है, बिरादरी की प्रतिक्रियावादी ताकतो से लडकर बहिन का विवाह करता है, विवाह, नौकरी, रिश्वत, इश्क, कलह और सघर्ष सभी उसके जीवन मे घटित होते हैं। मन्ने का जीवन प्रतिक्रियावादी ताकतो के खिलाफ, प्रगतिवादी ताकतो के सघर्ष का इतिहास है। मुन्ने मुन्नी की तरह केवल समाजवाद या साम्यवाद का प्रवक्ता बनकर

---

१. कृति : अप्रेल १९६०, पृ० ५०।

ही नही रह जाता है । जीवन के यथार्थवाद को भोगता हुआ शक्ति सचय करता है। उसकी मित्रता और इश्क के प्रसग मे उसकी सवेदनशीलता प्रकट होती है। मन्ने और मुन्ना विकसनशील हैं किन्तु बाबू साहब और कैलासिया आदि अविकसनशील हैं क्योकि उनका जीवन सपाट रूप से बहता है। कैलासिया मे पर्याप्त सवेदनशीलता है किन्तु नमूना, बसमतिया और आयशा केवल मन्ने के इश्क की पात्र बनकर रह जाती है इसलिए उसमे अधिक प्राण शक्ति नही है। मन्ने के जीवन मे कितनी ही युवतिया आती है। इन युवतियो के व्यक्तित्व को पूर्ण रूप से लेखक नही उभार सका है।

उद्देश्य—इस उपन्यास मे ग्रामीण–भारत के सामन्ती मूल्यो और व्यवस्थाओ का विघटन है। पूजीवाद की पतनोन्मुख वृत्तिया हैं और हिन्दू मुस्लिम एकता के द्वारा नये जीवन मूल्यो की स्थापना की गई है। 'सती मैया का चोरा' साम्प्रदायिक सघर्ष का प्रतीक है और साम्प्रदायिक सघर्ष के बारे मे मुन्नी की धारणा है ; 'असल मे यह लड़ाई ऊपर के तबको की है और यह हमारे देश को सामन्तवाद की देन है। इसका इतिहास बहुत पुराना है, लेकिन इसके रूप मे कभी कोई परिवर्तन नही आया। पहले वह हिन्दू या मुसलमान राजाओ की लडाई बनी। इन लडाइयो से केवल हिन्दू या मुसलमान राजाओ, सामन्तो और पूजीपतियो को ही लाभ हुआ। आम जनता, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान, हमेशा ही पिसती रही, क्योकि सामन्त धर्म के नाम पर जनता को अपना मुहरा बनाते रहे, उन्हे ही लडाते रहे, उन्हे ही मखाते और कटवाते रहे, पहले युद्ध-भूमि मे और बाद मे दगो मे। —इसका इलाज केवल एक है वह है वर्ग–चेतना पैदा करना, जनता की मुक्ति की लड़ाई को वर्ग सघर्ष के स्तर पर ले आना। मुस्लिम जनता और हिन्दू–जनता मे जैसे ही वर्ग चेतना का प्रादुर्भाव होगा, उन्हें धर्म के नाम पर कोई सामन्त या पूजीपति भड़का नही सकेगा। वर्ग चेतना धर्मो की दीवार को हमेशा के लिए गिरा देगी।[1]' भारतीय जनता मे साम्प्रदायिकता का विष समाप्त करने के लिए वर्ग चेतना जगाना ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है।

यह समाजवादी उपन्यास है किन्तु इसमे प्रचारात्मक स्वर नही है। मुन्नी कहता है 'उत्पादन के सभी साधनो पर राष्ट्र अपना अधिकार करके, पूजीपतियो द्वारा मजदूरो तथा उपभोक्ताओं का शोषण समाप्त कर दे, तो गरीबी–अमीरी का सवाल क्यो पैदा हो और समाज मे व्यक्ति की मानमर्यादा

---

१. भैरवप्रसाद गुप्त : सतीमैया का चोरा, पृ० ५९३–५९४।

का माप पैसा ही क्यो हो—[1]' मुन्नी ने लेखक के समाजवादी विचारों को अभिव्यक्त किया है और साम्प्रदायिक सघर्ष को वर्ग सघर्ष के माध्यम से देखा है इसलिए निस्सदेह यह एक समाजवादी कृति है। मुन्नी कहता है 'स्कूल और सत्ती मैया का चौरा के रूप मे हमारा सघर्ष एक ऐसी मजिल पर पहुंच गया है, जिसके आगे गावो की तरक्की का दरवाजा हमेशा के लिए खुल जाता है और यह लडाई हम हार गए, तो हमारी गाडी लुढककर दस वर्ष पीछे चली जायगी।[2]' स्कूल और सती मैया का चौरा तो सघर्ष की एक मजिल है और साम्प्रदायिक सघर्ष मे गाव मे समाजवादी समाज स्थापित करने की कल्पना ही इस उपन्यास का लक्ष्य है इसलिए यह निश्चित रूप से समाज़वादी उपन्यास है।

अन्य उपन्यास—'मशाल' (१६५१) उपन्याम का नायक नरेन गाँव मे सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व कर समाजवादी चेतना का उद्घोष करता है। लेखक ने भूमिका मे कहा है . 'मजदूरो के इस सयुक्त मोर्चे की आवाज कानपुर के मजदूर आन्दोलन के इतिहास मे सदा अमर रहेगी। आठ मजदूर शहीदो और सत्तर घायल मजदूरो ने जो जगी एकता और क्रातिकारी सयुक्त मोर्चे की मशाल जलाई है वह कभी न बुझेगी। उसकी लाल रोशनी धीरे धीरे हिन्दुस्तान मे फैल जाएगी और शोषित वर्गों को भी इन्कलाबी रास्ता दिखाएगी।[3]' नारेबाजी के कारण उपन्यास की वस्तु-गठन और चरित्र दब गए हैं।

'गगा मैया' (१६५३) मे मटरु अपनी भाभी का विवाह सम्पन्न करा देता है। गगा मैया का मटरु नए भारतीय-किसान की चेतना का प्रतीक है। भाभी का विवाह गोपी से हो जाता है। मटरु और गोपी के दो परिवारो से कथानक आगे बढता है। गगा-मैया नये किसान की चेतना का प्रतीक है। गगा मैया का, उनकी धरती का, इन खेतो का, इस हवा और पानी का, इस जगल और किनारो का और अपने सब साथियो का मोह मुझे अपने बाल बच्चो की तरह, बल्कि उससे भी कही ज्यादा है।—हमारा जोर बढता जा रहा है। हमारे साथी बढते जा रहे हैं। जमाना आगे बढ रहा है।[4]' यही

१　वही, पृ० ५२८।

२.　भैरवप्रसाद गुप्त : सतीमैया का चौरा, पृ० ६८०।

३　भैरवप्रसाद गुप्त　मशाल　भूमिका।

४.　भैरवप्रसाद गुप्त . गगामैया, पृ० १३७।

उपन्यास का उद्देश्य है और इन शब्दो मे समाजवादी समाज की स्थापना का स्वर ध्वनित होता है।

अमृतराय

अमृतराय समाजवादी उपन्यासकार हैं। छात्रावस्था से ही वे मार्क्सवाद के प्रति आकर्षित होकर आदर्शवादी बन गए थे और साहित्य मे प्रगतिशीलता के सिद्धान्त को स्वीकार कर चुके थे।[1] 'बीज', 'नागफनी का देश' और 'हाथी के दांत' लेखक की सभी उपन्यास कृतिया इस विवेच्यकाल की है।

'बीज' आत्मकथात्मक शैली मे लिखा हुआ एक वृहत्त उपन्यास है जिसमे युद्धकालीन भारत की राजनीतिक सामाजिक जीवन की पृष्ठभूमि पर साम्यवादी सम्पत्ति के सघर्षों और उतार चढ़ावो का चित्र खीचा है। नायक साम्यवाद की ओर झुकना है। एम० ए० करने के पश्चात् उषा से विवाह करता है और मजदूरो के आन्दोलन के फलस्वरूप जेल यातनाए भुगतता है। उषा अध्यापिका बनकर मजदूरो के आन्दोलन कराती है। लेखक ने छोटी छोटी घटनाओ से कथानक का जाल बुना है किन्तु कही कही अनावश्यक प्रसगो से कथानक की स्वाभाविकता मे बाधा उपस्थित हुई है। विपिन और जमुना कथानक की स्वाभाविकता मे बाधक सिद्ध होते हैं। सत्य और उषा प्रतिनिधि परिस्थितियो मे प्रतिनिधि पात्र हैं। वीरेन्द्र उषा और सत्य साम्यवादी विचारो का प्रतिनिधित्व करते हैं। साम्यवादी सिद्धान्तो के पोषण हेतु उपन्यास की रचना हुई है इसलिए प्रचार का स्वर ध्वनित होता है किन्तु उपन्यास का स्वर आशावादी है। सत्य के स्वरो मे उपन्यास का उद्देश्य ध्वनित होता है 'उषा तू नही जानती, तेरे इस घाव मे हमारे जीवन का बीज छिपा हुआ है, हमारे नये सुख का बीज, नये प्रभात का बीज।[2]' समाजवादी उपन्यासकार वर्गहीन समाज की स्थापना को यथार्थरूप देने की कल्पना करता है इसलिए यह निश्चित रूप से समाजवादी यथार्थवाद का स्वर ध्वनित करता है।

'बीज' की तुलना मे 'नागफनी का देश' और 'हाथी के दात' महत्वपूर्ण उपन्यास नही है। 'नागफनी का देश' मे साम्यवादी सिद्धान्तो का पोषण नही है, केवल भ्रमित नारी की जीवनगाथा है। रणजीत पति, पत्नी बेला मित्र श्रीकान्त और उसकी पत्नी मदालसा के बीच कथा घूमती है। बेला

---

१ प्रकाशचन्द्र गुप्त आलोचना ३४. पृ० १८१।

२. यशपाल . बीज, पृ० ५२७।

श्रीकान्त की ओर आकर्षित होती है किन्तु श्रीकान्त के विवाहित जीवन के विद्रूप रूप को देखकर पछताती है। जिस जीवन के प्रति उसको आकर्षण होता है वह नागफनी का देश है। 'हाथी के दात' वर्ग सघर्ष का उपन्यास है जिसमे सामन्ती शोषण की कथा कही है।

सर्वेक्षण—समाजवादी उपन्यासो पर प्रचारात्मक का आरोप लगा कर कहा गया है कि समाजवादी उपन्यासो मे लोक–जीवन की चर्चा तो बहुत होती है, किन्तु उस जीवन मे एकात्मक स्थापित करके उसका सवेदनात्मक चित्रण स्वाभाविक और यथार्थ रूप मे बहुत कम हो पाया है। इनमे अधिकाश लेखक मार्क्सवादी सिद्धान्तो और मान्यताओ से परिचित हैं और उस दर्शन की मान्यताओ का जामा पहनाकर उपस्थित करते हैं।[1] यह आरोप आशिक दृष्टि से निराधार है। राल्फ फाक्स ने भी इस कमी को अनुभव कर कहा है कि यह समाजवादी उपन्यासकारो की कमी है कि उन्होने अपनी योग्यता और शक्ति को हडताल, सामाजिक आन्दोलन, समाजवाद के निर्माण, क्राति या युद्ध मे लगा देते हैं और वे नही समझते हैं कि सामाजिक वातावरण से अधिक महत्वपूर्ण मनुष्य और उसके पर्यावरण मे उसका विकास है।[2] इस विवेच्यकाल के कुछ समाजवादी उपन्यासों पर प्रचारात्मकता का आरोप लगाया जा सकता है। रागेय राघव के 'हुजूर' और 'आखिरी आवाज' नागार्जुन के 'वरुण के वेटे' और 'कुम्भीपाक', भैरवप्रसाद गुप्त के 'मशाल' और अमृतराय के 'बीज' मे सिद्धान्तो के प्रचार प्रसार का स्वर है और सामाजिक वातावरण मे मनुष्य का दमघुट गया है। यहा मनुष्य उभरकर नही आया है, किन्तु यशपाल के 'झूठा सच' मे कनक और तारा, भैरवप्रसाद गुप्त के 'सती मैया के चौरा' मे मन्ने सामाजिक वातावरण के बीच अपने व्यक्तित्व का विकास करते हैं। 'झूठा सच' की तारा और कनक, 'कव तक पुकारु' का सुखीराम 'वलचनमा' का वलचनमा 'सतीमैया का चौरा' का मन्ने 'टाइप' और व्यक्ति दोनो है, अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हुए उनके व्यक्तित्व का विकास हुआ है।

सामाजिक उपन्यासों से समाजवादी उपन्यासो के वस्तु–विधान मे स्थूलता आती गई है, पात्रो की दृष्टि से व्यक्ति और टाइप दोनो होते हुए भी प्रतिनिधि परिस्थितियो के प्रतिनिधि पात्र है, उद्देश्य की दृष्टि से सामाजिक

---

१. आलोचना १३, पृ० २११।

२. राल्फ फोक्स · द नॉवल अेंड द पिपिल, १९५६ पृ० १३४।

उपन्यासो की तुलना मे उद्देश्यपरकता का आग्रह अधिक होता गया है और समाजवादी दर्शन की अभिव्यक्ति का कही प्रचारात्मक स्वर है तो कही उसको कथा मे गूथ कर प्रस्तुत किया है ।

'झूठा सच' मे भारत विभाजन के समय स्वातन्त्र्योत्तर भारत का चित्र खीचकर विवाह की समस्या के प्रति समाजवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है, 'वलचनमा' का वलचनमा भारतीय समाजवाद और निम्नवर्गीय शोषित चेतना के प्रति विद्रोह का प्रतीक है, 'हीरक जयन्ती' राजनीतिक और सास्कृतिक आयोजनो पर व्यग है, और 'सती मैया के चौरा' मे साम्प्रदायिक सघर्ष को समाजवादी धरातल पर प्रस्तुत किया है किन्तु अन्य कृतियो मे मार्क्सवाद का खुला प्रचार है, इसलिए 'झूठा–सच', 'कब तक पुकारू' 'वलचनमा' और 'सती मैया का चौरा' समाजवादी उपन्यासो के रूप मे इस विवेच्यकाल की महत्वपूर्ण उपलब्धिया हैं ।



समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

मनोविश्लेषण ·

व्यक्ति मनोविज्ञान व्यक्ति की चेतन मन की क्रियाओ का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान ने अचेतन मन के अस्तित्व को स्वीकार नही किया था किन्तु मनोविश्लेषण ने व्यक्ति के अचेतन मन के अस्तित्व को स्वीकार किया है। फ्रायड के अनुसार 'मनोविश्लेषणो के अनुसार मन की परिभाषा है कि इसमे भावना विचार और इच्छा की प्रकृति की प्रक्रिया निहित है और यह मानता है कि वहाँ अचेतन विचार और अचेतन इच्छाए हैं।[1]' फ्रायड ने मन को चेतन, अवचेतन और अचेतन इन तीन स्तरो पर माना है और अवचेतन के प्रति उसे शका है किन्तु अचेतन–मन के अस्तित्व को सभी मनोविश्लेपको ने स्वीकार किया है। इसके अतिरिक्त मानवीय मन ईड, ईगो और सुपर ईगो से निर्मित है। ईड, अस्तव्यस्त, प्रवृत्तिमूलक भाग का स्रोत है जिसकी एक दूसरे के साथ और न वाह्य यथार्थ के सत्य के साथ अनुरूपता है। ईगो, व्यक्तित्व का वह समन्वित भाग है जिसका परिवर्द्धन होता है और चुनाव और नियन्त्रण की प्रक्रिया के द्वारा ईड की मौलिक प्रवृत्तियो मे अनुरूपता स्थापित करता है, उनको छोड़ देता है जो वाह्य यथार्थ के साथ सघर्ष स्थापित करते हैं। अन्त मे मस्तिष्क यत्र का तीसरा भाग 'सुपर ईगो' है जिसमे समाज के

---

१ सिगमड फ्रूड : मेजर वर्क्स ऑफ सिगमड फ्रूड, पृ० ४५२।
द साइकोअनालिटिक डैफिनिशन ऑफ द माइड इज दैट इट कम्प्राइजेज प्रोसेज ऑफ नेचर ऑफ फीलिग, थिंकिग एण्ड विशिग एण्ड इट मेनटेन्स दैट दैयर आर सच थिंग्स ऐज अनसैनसियस थिंकिग एण्ड अनसैनसियस विशिग।

नियम निर्धारित हैं ।[1] यौन प्रवृतियो को मुक्त रूप से प्रकट नहीं किया जा सकता है। मनोविश्लेषण यौन प्रवृतियो को विस्तृत अर्थ मे समझते हैं। दमित इच्छाए अचेतन मन के भीतर रहती है। अचेतन मन की दमित इच्छाए बाहर निकलने के लिए तैयार रहती हैं। ईड और ईगो के सघर्ष से और सुपर ईगो के पूर्णत. सन्तुलन न रखने से व्यक्ति की अमुक्त कामनाए अचेतन मन का एक भाग वन जाती है। दमित इच्छाओ की अभिव्यक्ति के लिए कोई स्थान नही होता है इसलिए व्यक्ति के व्यवहार मे असामान्य परिवर्तन होता है। मनोविश्लेपक असामान्य व्यक्ति के व्यवहारो का अनेकानेक विधियो से अध्ययन करता हैं जिससे वह अचेतन मन का विश्लेपण कर रोगी को असामान्य व्यवहार से मुक्ति दिला सके। मनोविश्लेषण शास्त्र, चेतन व अवचेतन मन का विश्लेषण कर अचेतन मन की दमित इच्छाओ को चेतन स्वर पर लाने का प्रयास करता है।

परवर्ती विचारक

फ्रायड ने मनोविश्लेपण के बारे मे जिन धारणाओ और मान्यताओं की स्थापना की है, उनमे धीरे धीरे दूसरे मनोविश्लेपण शास्त्रियो द्वारा परिवर्तन हो रहे हैं। मुख्य रूप से सी० एफ युग और अलफ्रेड अडलर है। फ्रायड ने यौन–प्रवृतियो पर अधिक बल दिया है किन्तु परवर्ती–विचारको के विचार फ्रायड से भिन्न है युग ने मनोवैज्ञानिक प्रकारो (अन्तर्मुखी, वहिर्मुखी और

---

१. फ्रान्स अलेक्जेण्डर : डवलपमेट ऑफ ईगो साइकोलोजी, पृ० १८६।
(१) द इनहरीटेड रिसरोइर ऑफ केऑटिक, इन्स्टिक्चुअल डिमाण्ड्स ह्विच आर नोट यट इन हरमनी विद ईच अदर नॉर विद इन फैक्ट्स आफ एक्सटर्नल रिवलिटी इज कॉल्ड ओन अकाउण्ट आफ इट्‌य इम्पर्सनल क्वालिटी द ईड।
(२) द एग इज द इनटिग्रेटिंग पार्ट आफ द पर्सनलिटी ह्विच मोडीफाईज एण्ड बाई ए, प्रोसेज आफ सलैक्शन एण्ड कण्ट्रोल ब्रिंग्स द ओरिजिनल टैनडैन्सीज ऑफ द ईड इन्टू हारमनी अैक्सक्लूडिंग दोज द रियलाइजेशन आफ ह्विच वुड ओकेशन कनफ्लिक्ट विद एक्सटर्नल रियलिटी।
(३) फाइनल्ली, द थर्ड पार्ट आफ दैन मेण्टल अपैरेटस, द रिजल्ट ऑफ द लेटैस्ट अड्जस्टमैन्ट, इज द सुपर ईगो, ह्विच इमबोडीज द कोड आफ सोसाइटी।

उभयमुखी) पर वल देकर उसे प्रकार-मनोविज्ञान (type psychology) वना दिया है। यु ग ने सामूहिक अवचेतन की खोज की। युग की मान्यता है कि व्यक्ति अचेतन का सम्बध व्यक्ति से है जो शिशुकाल की कामनाओ और इच्छाओ के दमित होने का परिणाम है।[1] सामूहिक अवचेतन व्यक्ति अवचेतन से भिन्न है। सामूहिक अवचेतन व्यक्ति अवचेतन से भिन्न एक अनजान वस्तु है जहा से चेतनता उपजनी है।[2] हजारो पीढियो से चली आई दमित इच्छाए सामूहिक अवचेतन के भीतर दबी रहती हैं। मनुष्य की सामूहिक-अवचेतना के भीतर शक्ति के स्रोत वर्त्तमान है। अडलर ने हीनतानुभूति की भावना को प्रकट किया है। अडलर की मान्यता है यह हीनतानुभूति असुरक्षा ही है जो व्यक्ति के अस्तित्व के लक्ष्य को निर्धारित करती है।[3] यह हीनतानुभूति एक ग्रंथि का रूप धारण कर लेती है और असामान्य व्यक्ति मे प्रभुता की भावना उत्पन्न हो जाती है। अत फ्रायड ने मानव-मन को समझने के लिए एक सुदृढ आधार दिया और परवर्ती मनोविश्लेषको ने उस पर सुन्दर मजवूत महल का निर्माण किया। मनोविश्लेषक अनेकानेक विधियो से मानव-मन को समझने मे सहायक हुए हैं।

विधियां (Techniques)

अचेतन मन मे दमित इच्छाओ को चेतन स्तर पर लाने के लिए अनेकानेक विधियो का प्रयोग किया जाता है जिनमे मुक्त आसग प्रणाली, वाधकता-विश्लेषण, स्वप्न विश्लेषण, निराधार प्रत्यक्षीकरण, सम्मोहक विश्लेषण, प्रत्यक्षावलोकन-विश्लेषण और पूर्ववृत्तात्मक प्रणाली मुख्य है।

---

१. फ्रीदा फोरधम : अॅन इन्ट्रोडक्शन टु जंग्स साइकोलोजी : पृ. २२।
"द पर्सनल अनकॉन्शस बिलोंग्स टु द इण्डिविजुअल, इट इज फोर्म्ड फ्रोम हिज रीप्रेस्ड इनफैन्टाइल इम्पल्सेज एण्ड विशेज"।

२. ईविड पृ. २३। कलैक्टिव अनकान्शस इज ए डीपर स्ट्रेटम आफ अनकान्शस दैन द पर्सनल अनकान्शस, इज न नोन मैटेरिअल फोर्म व्हिच कान्शसनैस एमर्जीज।

३. अलफ्रेड अॅडलर : अण्डरस्टैंण्डिग ह्यूमान नेचर : पृ० ६६।
"इट इज द फीलिंग इन फीरियरिटी इनैडीक्वासी, इन्सिक्योरिटी व्हिच डिटरमाइन्स द गोल आफ अॅन इनडिविजुअल्स अॅक्सिस्टेंस"।

मुक्त आसंग प्रणाली मे रोगी को निर्बाध रूप से अपने विचारो और भावो की अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता मिल जाती है। पात्र जब कुछ घटनाओ को जानबूझकर छोड़ देता है या छिपा देता है तो मनोविश्लेषक ऐसे स्थलो पर सतर्क होकर उन्हे अचेतन-मन से चेतन मन पर लाने का प्रयत्न करता है। स्वप्न विश्लेषण मे फ्रायड प्रत्येक स्वप्न और स्वप्न की घटनाओ का अर्थ लगाता है। स्वप्न के अर्थ का पता लगाकर व्यक्ति की कुण्ठा को जाना जा सकता है। निराधार प्रत्यक्षीकरण एक ऐसी अवस्था है जब पात्र चेतनावस्था मे अचेतन मन की ग्रंथियों से संघर्ष करता है। प्रत्यक्ष अवस्था मे वह उन ध्वनियो व्यक्तियो और वस्तुओ को प्रत्यक्ष सुनता और देखता है जिनका बिल्कुल अस्तित्व नही होता। मनोविश्लेषक निराधार प्रत्यक्षीकरण का विश्लेषण करता है। सम्मोह विधि मे पात्र को सम्मोहित करके उसकी दमित इच्छाओ का पता लगाया जाता है। मनोविश्लेषक उस सम्मोह क्रिया और उसके फल का विश्लेषण करता है। प्रत्यक्षावलोकन मे मनोविश्लेषक पात्र की प्राचीन स्मृतियो और बचपन की इन अचेतन मन मे पडी स्मृतियो को चेतन मन मे लाता है और विश्लेषण करता है। पूर्ववृत्तात्मक प्रणाली मे पात्र की वर्त्तमान दशा इकठी कारण के आधार पर पात्र के मन पर पडे प्रभाव की छानबीन करता है।

मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास मे लेखक अपने उपन्यासो मे मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तो को अभिव्यक्त करता है। वह उपन्यास के मुख्य पात्र या अन्य पात्रो के जीवन और उनकी घटनाओ को उपन्यासकार के साथ साथ मनोविश्लेषक के रूप मे भी अनुभव करता है। यहा मनोवैज्ञानिक और मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो को एक ही कोटि मे नही रखा जा सकता है। यह भूल डा० सुषमा धवन ने अपने शोध प्रबन्ध मे की है।[1] मनोवैज्ञानिक उपन्यास का अभिप्राय उपन्यास की मनोवैज्ञानिक शैली से है। मनोवैज्ञानिक उपन्यास मे 'कथाकार अपनी कथावस्तु की योजना एक विशिष्ट ढग से करता है, एक विचित्र भाषा का प्रयोग करता है, घटनाओ को धुनिये की तरह धुन-धुन कर रूई के मुलायम गल्ले की तरह बना देता है अथवा आब्जेक्टिव का सब्जेक्टिव बनाकर उपस्थित करता है।[2] जब तक मनोविश्लेषण को उप-

---

१ सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास, पृ० १६५–१६८।
२. डा० देवराज उपाध्याय : आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान : पृ० ४:५।

न्यासकार विषयगत रूप से स्वीकार न करले तव तक वह मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास की कोटि मे नही आ सकता है। व्यक्तिवादी उपन्यासकारो ने मनोविश्लेषण की विवियो मुक्त–आसग–प्रणाली, बाघकता–विश्लेषण, स्वप्न–विश्लेषण, सम्मोह–विश्लेषण, प्रत्यक्षावलोकन और पूर्ववृत्तात्मक प्रणालियो का प्रयोग किया है किन्तु उपन्यासकारों की जीवन दृष्टि व्यक्तिवादी ही रही है इसलिए इन उपन्यासकारो के उपन्यासो को मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की कोटि मे स्थान नही दिया गया है।

समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

मनोविश्लेषणात्यक उपन्यासो मे उपन्यास, व्यक्ति के अचेतन मन को चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न करता है इसलिए मुख्य रूप से व्यक्ति ही उसका केन्द्र विन्दु है किन्तु इस विवेच्यकाल के कुछ मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे उपन्यास का केन्द्र विन्दु व्यक्ति न होकर समाज है। यह सही है कि व्यक्ति का सामाजिक जीवन से अलग अध्ययन सम्भव नही है। मनोविश्लेपण का समाज से गहरा सम्वध है। अब तक प्राणीशास्त्रीय मत को विशेष बल दिया गया है। एक मनोविश्लेपक के अनुसार 'मनोविश्लेषण विशेष रूप से विकास मनोविज्ञान पर आधारित है जो सामाजिक तत्वो के मनोवैज्ञानिक अध्ययन मे प्राणीशास्त्रीय महत्व भी रखता है। मै शब्दो की धुधली प्रकृति से परिचित हू और यह मवसे अच्छा है कि यह विभिन्न क्षेत्र समाजशास्त्र और प्राणीविज्ञान मे स्थान पा जाते हैं। मैं यहा समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण रखता हूँ क्योकि यह मेरे विषय की आवश्यकता है। मै प्राणिशास्त्रीय दृष्टिकोण को भी कम महत्व नही देता।[1]' फ्रायड ने मनोविश्लेषण मे सामा-

---

१. हार्टमैन एम. डी. : साइकोअनालिजिज अैण्ड सोशियोलोजी, पृ० ३२६।
एज ए मैटर आफ फैक्ट, साइकोअनालिजिज इज पार्टीक्यूर्जाल इन्ट्रेस्टेड अैण्ड फोर गुड रीजन्स वेस्ड ऑन इट्स कन्सैप्ट्स आफ डवलपमेट साइकोलोजो, इन द साइकोलोजिकल स्टडी आफ सोशल फैक्टर्स अैज हैव ए "वायलोजिकल" इम्पोर्टेन्स अैज वैल। आइ एम वैल अवेअर आफ द वैजिन कैरैक्टर आफ दीज टर्म्स, एण्ड इट माइट वी वैस्ट सिम्प्ली टू स्टेट दैट दीज डिफरैंट फील्ड्स कैन फाइन्ड देअर प्लेस इन द फ्रेम वर्क आफ सोशलोजो अैज वैल अैज वायलोजी। इफ आई कन्सन्ट्रेट हियर सोललि आन द सोशलोजिकल अप्रोच, इट इज बिकाज माई सब्जैक्ट काल्स फार इट।

जिक पहलू पर भी प्रकाश डाला है। व्यक्ति–मनोविज्ञान समाज–मनोविज्ञान बन जाता है क्योंकि व्यक्ति समाज का अविभाज्य अग है। व्यक्ति के असामान्य व्यवहार का कारण सामाजिक परिस्थितिया भी होती हैं। अत मनोविश्लेषक व्यक्ति के अचेतन मन को सामाजिक परिपार्श्व मे चेतन स्तर पर लाता है उसी प्रकार समाज परक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकार भी समाज के परिपार्श्व मे व्यक्ति के अचेतन मन का अध्ययन करता है और उसे चेतन स्तर पर लाता है। यहा उपन्यासकार का केन्द्र विन्दु व्यक्ति न होकर, समाज होता है। अतः समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकार सामाजिक मूल्यो को आधार मानते हुए, सामाजिक मूल्यो की स्थापना करते हुए, समाज के परिपार्श्व मे सामाजिक व्यक्ति के अचेतन मन का अध्ययन करते है इसलिए ऐसे उपन्यासो को समाजपरक मनोविश्लेषणवादी उपन्यास कहना उचित जान पड़ता है।

इलाचंद्र जोशी

श्री इलाचद्र जोशी मनोविश्लेपणात्मक उपन्यासकार है। उनकी मान्यता है कि मनुष्य की सामूहिक अवचेतना के भीतर (पायडियन अवचेतनता जिसके एक कण भी बरावर नही हैं) सृष्टि के प्रचड आदि शक्ति के स्रोत वर्तमान हैं। ठीक उसी प्रकार जिस तरह पृथ्वी के गर्भ मे कोयला, लोहा, धातुगत तेल, कोवाल्ट, यूरेनियम, थोरियम आदि के कच्चे माल के भण्डार भरे पडे हैं। फ्रायड ने मनोविश्लेषण को एक सुगठित, वैज्ञानिक आधार पर प्रतिष्ठित करके यह सिद्ध किया है कि आज का मनुष्य जिन धार्मिक और नैतिक विश्वासो पर जी रहा है वे दमित यौनवृत्ति के ही विभिन्न प्रतीक हैं और मनुष्य की आज तक की सारी प्रगति दमित सैक्स जनित विकृतियो का ही इतिहास है। उसने बताया कि मनुष्य की सभ्यता केवल एक बाहरी नकाब है और झीने नकाव के भीतर मनुष्य एकदम नगा है। फ्रायड के सिद्धान्तो की कोई खास गलती नही है, पर उन सिद्धान्तो की सीमा अत्यत सकीर्ण होने के कारण अपने मानवीय विकास के सारे इतिहास को एक गलत परिप्रेक्षण (पर्सपेक्टिव) पर लाकर खडा कर दिया है।[1] फ्रायड के साथ युग के सामूहिक अवचेतन से जोशी जी बहुत प्रभावित हैं। मनोविश्लेषण को स्पष्ट करते हुए कहा है कि हमारी मूल भावनाए, सहज स्वाभाविक जन्मजात मनो-

---

१. आलोचना ११, पृ० १६,१८,१९।

वृत्तिया सब सामाजिक शासनचक्र द्वारा वाधा पाती हैं, तब हमारा सचेतन मन उन सहज प्रवृतियो को अन्तश्चेतना के भीतर ढकेल देता है। वहा वे ऐसी दबी पडी रहती है कि फिर आसानी से ऊपर उठ नही पाती। पर बीच बीच मे जब वे शेषनाग के फनो की तरह आन्दोलित हो उठती हैं, तब हमारे सचेत मन को भूकम्प के प्रचण्ड प्रवेग से हिला देती हैं।[1] फ्रायड की काम अतृप्ति और युग के सामूहिक अवचेतन का मिलाजुला रूप जोशी जी के उपन्यासो मे दिखाई पडता है।

इलाचद्र जोशी व्यक्तिवादिता से सामाजिकता की ओर अग्रसर हो चुके हैं, व्यक्ति मनोविश्लेषणवादी विचारधारा से समाज मनोविश्लेषणवादी विचारधारा की ओर अगसर हो सके हैं। व्यक्तिवादी उपन्यासकार पर छीटाकसी करते हुए जोशी जी कहते हैं, 'आजकल के महत्वाकाक्षी किन्तु मनोविकारग्रस्त, अपनी प्रतिभाशालिता के कारण जनता के आखो के आगे धोखे का रगीन जाल फैलाकर अपनी श्रेठता प्रमाणित करने के इच्छुक, घोर व्यक्तिवादी और आत्मकामी चरित्रो का पर्दाफाश करना वह अपना कर्त्तव्य समझता है।——मेरे सभी उपन्यासो का उद्देश्य व्यक्ति के अहमाव की ऐकान्तिकता पर निर्मय प्रहार करने का रहा है। सामाजिक पर्दे के भीतर छिपे हुए इसी सत्य का उद्घाटन मनोवैज्ञानिक उपायो से करने का प्रयास मैंने किया है।[2]' यह भ्रान्त धारणा है कि इलाचद्र जोशी की उपन्यासकला का मूल उद्देश्य पाश्चात्य सिद्धान्तो के आधार पर व्यक्ति चिन्तन और व्यक्ति विश्लेषण है।[3] इलाचद्र जोशी ने सामाजिक पृष्ठभूमि पर व्यक्ति के चेतन–अवचेतन और अचेतन मन का विवेचन विश्लेषण किया है। जोशी जी मानते हैं कि युग की आर्थिक विषमता और राजनीतिक प्रभुत्ववाद से कोई लेखक अछूता नही रह सकता है। आर्थिक और राजनीतिक समस्याओ ने जीवन को चारो ओर से ढक लिया है कि चाहने पर भी साहित्यकार उनसे कतराकर भाग नही सकता। व्यक्तिगत जीवन के घेरे मे बद्ध प्रतिभा का आज कोई मूल्य नही है।[4] जोशी जी सामूहिक अवचेतन मे विश्वास करने हैं। फ्रायड, युग तथा आडलर आदि प्रमुख मनोविश्लेपक वैज्ञानिको ने मानव मन के भीतर दबी

---

१. इलाचन्द्र जोशी, विवेचना, पृ० ५५।
२. विवेचना : पृ० १०२, १२३।
३. इन्द्रनाथ मदान : इलाचन्द्र जोशी : साहित्य और समीक्षा : भूमिका
४. आलोचना ३, पृ० ५०।

पड़ी असख्य उलझनो को सुलझा कर उस सुलझाव के साथ मानव प्रकृति को स्वस्थ, आत्मोत्कर्षोन्मुख तथा सामूहिक कल्याणकारी रूप देने का जो दावा किया था, उसकी ओर उपन्यासकारो ने कोई ध्यान नही दिया।[1]

'मुक्तिपथ' (१९५०), 'सुबह के भूले' (१९५२), 'जिप्सी' (१९५२) और 'जहाज का पछी' (१९५६) इस विवेच्यकाल की इलाचद्र जोशी की उपन्यास कृतियां हैं। 'जिप्सी' और 'जहाज का पछी' के अतिरिक्त उपन्यासो को 'अन्य उपन्यास' मे स्थान दिया गया है।

जिप्सी (१९५२)

कथासार—'जिप्सी' (१९५२) मे नृपेन्द्ररजन ने अपनी आत्मकथा कही है। जिप्सी की नायिका मनिया मसूरी मे एक छोटी सी दुकान करती है। नृपेन्द्ररजन का आकर्षण मनिया के प्रति वढता है और वह उसकी पूरी दुकान का सामान खरीद लेता है। उमकी मा ने अपने पति की हत्या कर दी थी। नृपेन्द्ररजन सम्मोहन क्रिया की सहायता से उसकी कुठा पर विजय प्राप्त करके, उसको वशीभूत कर लेता है। मिसेज रालिन्सन और उनकी पुत्री सिल्विया के सम्पर्क मे आने के कारण मनिया ईसाई धर्म की ओर खिचती है अत. मनिया को न खोने के कारण नृपेन्द्ररजन मनिया से विवाह कर लेता है। मनिया मे ईसाई धर्म–ईसा और मेरी के प्रति अटूट आस्था हो जाती है और घटो प्रभु के ध्यान मे रहती है। कालान्तर मे मनिया मातृत्व पद प्राप्त करती है और अपने पुत्र मे ईसा की झलक देखती है। पुत्रवती मनिया अपने पुत्र तक जीवन को सीमित कर लेती है। रजन और मनिया कलकत्ता मे अपने मित्र वीरेन्द्र और शोभना के यहा ठहरते हैं। रजन अपने मित्र वीरेन्द्र की पत्नी शोभना के प्रति आकर्षित होने के कारण घटो उसके साथ घूमता है। वीरेन्द्र का एक क्रातिकारी दल से सम्बध होता है इसलिए अधिकाश समय घर से अनुपस्थित रहता है। मनिया पहली बार घर से बाहर निकलती है किन्तु क्रातिकारियो द्वारा तेजाब का गोला फेंके जाने के कारण, उसका मुह कुरूप हो जाता है। एक आन्दोलन मे वीरेन्द्र की मृत्यु हो जाती है और मनिया वीरेन्द्र के दल के साथियो के साथ अपना सम्बध जोड लेती है। मनिया और रजन मे मनमुटाव हो जाने से मनिया घर छोड़-कर चली जाती है। रजन धीरे धीरे शोभना के आकर्षण मे बध जाता है और विवाह का प्रस्ताव कर बैठता है। शोभना के बुर्जुआ सस्कार लौट आते

१. विवेचना, पृ० १४५।

हैं और वह अधिकाश समय क्लबो और पार्टियो मे बिताती है तथा शराब पीना भी प्रारम्भ कर देती है। शोभना पतन की ओर कदम बढाती है। कलकत्ता से कुछ दूर शोभना और रजन एक कोठी मे रहते हैं, किन्तु महामारी के कारण शोभना वहा से भाग जाती है। कुछ डाक्टरो और नर्सों का दल वहा सेवा के लिए आता है और रजन मजुला नामक नर्स से अपना सम्बध बढाता है। मजुला के प्रति वशीभूत होने के कारण रंजन अपनी समस्त सम्पत्ति मजुला और कन्हाईलाल की सस्था 'जन–सस्कृति समन्वय केन्द्र' को सौंप देता है और अन्त मे उसे पता चलता है कि मजुला उसकी मनिया ही है जिसने अमरीका जाकर 'प्लास्टिक–सर्जरी' करवाली है। रजन बुर्जुवा सस्कारो को त्यागकर, जन–जीवन की सेवा के लिए उतर पडता है।

वस्तु–विधान—नृपेन्द्ररजन का मनिया को हिप्नोटिक प्रभाव मे वशीभूत करना, मिसेज रालिन्सन और उनकी पुत्री सिल्विया की काटेज के पास मकान होना, सिल्विया का मनिया को अग्रेजी पढाना, सिल्विया का मनिया को ईसाई धर्म की ओर मोडना, ईसाई धर्म स्वीकार करके नृपेन्द्ररंजन और मनिया का विवाह, नृपेन्द्ररजन और मनिया का कलकत्ता पहुचना, कलकत्ता के बालीगज मे वीरेन्द्र और उसकी पत्नी शोभना के साथ रहना, मनिया का मुह तेजाब से कुरूप होना, वीरेन्द्र की मृत्यु, मनिया का नृपेन्द्ररजन को छोडकर क्रातिकारियो के साथ सम्मिलित होना, शोभना और रजन के बीच प्रगाढ सम्बध होना, मनिया का मजुला और मृणालिनी के रूप कायाकल्प कर नृपेन्द्र की धन सम्पत्ति 'जन मस्कृति–समन्वय केन्द्र' को दान रूप मे देना और अन्त मे नृपेन्द्ररंजन का बुर्जुवा संस्कृति का खोल उतार कर जनजीवन की सेवा के लिए उतर पडना, इस उपन्यास की घटनाओ के मोड़ हैं। उपन्यास की घटनाओ को मनोविश्लेपण और हिप्नोटिज्म की अनावश्यकता के कारण अस्वाभाविक मोड मिला है। मनिया का मुंह तेजाब के जलने तक नृपेन्द्र रजन के कारण कथानक आगे बढता है और अन्त मे कथा मनिया के कारण आगे बढती है। वस्तु–शिल्प की दृष्टि से यह एक असफल उपन्यास है। नीरस–कथा सगठन और सम्मोहन–क्रिया की बोझिलता से वस्तु–विधान मे अन्विति नहीं है। जहा तक कथाओ और उपकथाओ का प्रश्न है कथानक का उचित निर्वाह हुआ है। उपन्यास मे तीन प्रमुख कथाए हैं—नृपेन्द्ररजन और मनिया, सिल्विया और फादर जेरमिया और शोभना और वीरेन्द्र की। सिल्विया और जेरमिया ने मनिया मे ईसाइयत का बीज बोया और कथा आगे बढी है। शोभना और वीरेन्द्र की कथा ने रजन और मनिया के बीच व्यवधान

डाला और अन्त मे सिल्विया और फादर जेरमिया की कथा ने मनिया और रजन को फिर मिला दिया । लेखक ने समस्त कथा को विशालकाय बना दिया है जिसमे लम्बे लम्बे भाषण और हिप्नोटिक कला तथा मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति है ।

चरित्र-विधान—मनिया, नृपेन्द्ररजन, सिल्विया, फादर जेरमिया, शोभना और वीरेन्द्र इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं । नृपेन्द्र नायक और मनिया नायिका है । जिप्सी लडकी मनिया को लेकर यह उपन्यास लिखा गया है इसलिए इसे नायिका-प्रधान उपन्यास मानना चाहिये । उपन्यासकार के पात्र नृपेन्द्ररजन के अनुसार उपन्यास का कथानायक बडी ही दुर्बल प्रकृति चारित्रिक शक्ति से एकदम रहित, बेपैंदे का लोटा सा सिद्ध होगा 'और लेखक के अनुसार वीर नायको की गाथा लिखने वाले उपन्यासकारो की कमी नही है पर दुर्बल स्वभाव व्यक्तियो को कथा—नायक बनाने का सौभाग्य अकेले मुझे ही प्राप्त हैं ।'[1] उपन्यास के सभी पात्र जीवन की कुठाओ से पीडित है । सभी पात्र असामान्य है और उनमे से रजन, मनिया शोभना और वीरेन्द्र को 'मनोवैज्ञानिक केस' माना जा सकता है । उपन्यासकार ने मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग चरित्र चित्रण के क्षेत्र मे किया है । मनोविश्लेषणात्मक पद्धति मे मुख्य रूप से 'सम्मोहक—प्रक्रिया' का प्रयोग मिलता है । रजन एक सपाट पात्र हैं और अन्त मे जन जीवन के क्षेत्र मे उतर पडना अस्वाभाविक और अप्रत्याशित लगता है । मनिया एक विकसनशील चरित्र है, जिसके जीवन मे कितने ही उतार चढाव आते हैं । जिप्सी लडकी मनिया अमेरिका से प्लास्टिक सर्जरी करवाकर पारगत मजुला देवी बन जाती है । यह उतार चढाव को हमे केवल 'फिल्मी रोल' ही मानना चाहिये । वीरेन्द्र और सिल्विया अविकसनशील पात्र है और फादर जेरमिया एक विकसनशील पात्र हैं । सिल्विया कट्टर ईसाई धार्मिकता, फादर जेरमिया प्रगतिवादी पादरी के प्रतीक, वीरेन्द्र एक क्रान्तिकारी और रजन बुर्जुआ सस्कृति का प्रतीक है । सुसस्कृत शोभना का विकास अशोभन हैं और इसे नैतिक पतन की पराकाष्टा माननी चाहिये । अधिकाश पात्र उनका चरित्र विधान, विकास और उतार चढाव सभी लेखक की इच्छानुसार होता है । मनोविश्लेषण की सम्मोहन प्रक्रिया को स्पष्ट करने के कारण पात्र लेखक के विचारो की कठपुतली के रूप मे जान पड़ते है ।

---

१ इलाचन्द्र जोशी, जिप्सी, पृ० ७०६ ।

उद्देश्य—एक आलोचक की धारणा है कि बीसवी शताब्दी के अधिकतर मनोवैज्ञानिक उपन्यासो की भाँति चेतन के नाम पर मनोराज्य की एकान्त तथा अन्धकारा मे कराहती हुई नैतिक पतन की पीडा के दर्शन से यह उपन्यास मुक्त है। उत्तेजना और स्थिर चेतना जीवन की जुडवा संतान हैं। इनका विरोध जीवन को सन्तुलन नष्ट करने वाला और सहयोग उसे सुव्यवस्थित करने वाला है। उपन्यास का रजन और मनिया स्थिर चेतना का प्रतिनिबिम्व करते है। उत्तेजना का सबसे बडा श्रेष्ठ धन है, शक्ति है और स्थिर चेतना का आधार श्रम है। इस दृष्टि से उपन्यास को सम्पत्ति और श्रम के सघर्ष का महाकाव्य भी कह सकते हैं।[1] उपन्यास को सम्पत्ति और श्रम के सघर्ष का महाकाव्य नही कह सकते हैं क्योकि सम्पत्ति और श्रम का सघर्ष अत मे आरोपित सा लगता है। बुर्जुवा—सस्कृति के प्रतीक रजन और 'प्रालेतेरित'—सस्कृति की प्रतीक मनिया का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन कर 'जन सस्कृति समन्वय' ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। कन्हैयालाल और मनिया के बारे मे रजन के शब्दो मे उपन्यास का उद्देश्य प्रकट होता है, 'वे अपने को समन्वयवादी बनाते हैं। किसी भी मतवादी की अच्छाइयो को ग्रहण करने के लिए वह सब तैयार रहते हैं—चाहे वह सर्वोदयवाद हो चाहे साम्यवाद। साथ ही सत्य और अहिसा पर उन्हे पूरा विश्वास है। वे यह भी मानते हैं कि इसी देश की सास्कृतिक मिट्टी के परिपूर्ण उत्कर्षण और यही की सस्कृति के बीजो के विकास से ही यहा की जनता का वास्तविक उद्धार हो सकता है, बाहर से लाए गए बीजो से नही।[2] 'मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का सहारा लेकर 'जनसस्कृति समन्वय' ही इस उपन्याम का उद्देश्य है।

यह एक समाजपरक मनोविश्लेषणवादी उपन्यास है। मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का सहारा लेकर सामाजिक मूल्यो की स्थापना करने के कारण, इसे समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास माना जाना चाहिये। सम्मोहक प्रक्रिया का प्रयोग लेखक ने स्थान स्थान पर किया है। एक स्थान पर रजन मनिया को स्पष्ट कहता है कि वह रजन के वशीभूत हो चुकी है और तब तक नही जा सकती जब तक रजन जाने को न कहे।[3] कभी रजन स्वय हिप्नोटिक कला के सम्बन्ध मे चिन्तन करता है कि वह किसी के सिखाए से आयत्ताधीन नही

१. आलोचना : ११, पृ० ९१।
२. इलाचन्द्र जोशी : जिप्सी पृ० ७०५।
३. वही, पृ० ५६।

होती।[1] सम्मोहक प्रणाली से मनिया को हिप्नोटिक स्लीप[2] भी एक स्थान पर आ गई। रजन ने प्यार के लिए इस कला का प्रयोग किया।[3] हिप्नोटिक अवस्था मे होने के कारण मनिया ने रजन के गले मे वाहे तक डाल दी।[4] एक समय ऐसा भी आया कि रजन को सम्मोहक प्रक्रिया मे भयानक असफलता मिली।[5] भयानक असफलता के वावजद मनिया ने रजन की इस कला को नाटकीय कला माना।[6] सम्मोहक प्रक्रिया के प्रयोग के अतिरिक्त सभी व्यक्ति कुठित हैं—यौन कुण्ठा से पीडित हैं। यौन जनित कुण्ठा के कारण रजन ने सिल्विया के हाथ को हलका सा झटका दिया।[7] सिल्विया ने अपनी दमित वासनाओ का उदात्तीकरण पहले ईसा के प्रति आस्था और तत्पश्चात 'जनसस्कृति समन्वय केन्द्र' के आदर्शों की स्थापना के लिए किया। सिल्विया ने मनिया को ईसा की तरफ मोडने के लिए सुझाव[8] का प्रयोग किया। एक स्थान पर दिवा स्वप्न[9] का प्रयोग भी लेखक ने किया है। उपन्यास का पूर्वार्द्ध मनोविश्लेषणात्मक पद्धति और उत्तरार्द्ध सामाजिक मूल्यो को आत्मसात करता है। मनिया रजन मे सामाजिक चेतना उद्‌बोधन करती है: तुम सब समय खेतो मे काम करो, पत्थर तोडो या लकड़ी चीरो। जहा भी तुम जाओ वही तुम जनता के सम्पर्क मे आ सकते हो।[10] अतः उपन्यास की मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का पर्यवसान सामाजिक मूल्यो की स्थापना के रूप मे हो गया है, इसलिए इस उपन्यास को समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया गया है।

'जहाज का पंछी'

कथासार—जहाज का पछी मे एक व्यक्ति की सामूहिक पीडा की आत्मकथा कही गई है। उपन्यास मे एक शिक्षित युवक की जीवन यात्रा है जो कदम कदम पर समाज द्वारा ठुकराया जाता है। उसके जीवन का प्रारम्भ

---

१ वही, पृ० ५५।
२ वही, पृ० ५८।
३ वही, पृ० ५९।
४ वही, पृ० १११।
५. वही, पृ० १३९।
६. वही, पृ० १५१।
७. वही, पृ० १६४।
८. वही, पृ० २५३।
९. जिप्सी, पृ० २६४।
१०. वही, पृ० ७००।

कलकत्ता महानगरी के नरक मे होता है। जीवन के विविध चक्करो मे उलझने और तरह-तरह के सघर्षों का सामना करने के बाद जब परिस्थितियों ने उसे विराट नगरी मे लाकर पटक दिया तब उसे कही इतनी भी जगह सुलभ न हो सकी जितने मे वह दो हाथ और दो पाव पसारकर लेट सकता।

पुलिस ने उसे गिरह कट समझा और धक्का दिया और बेहोश होने पर अस्पताल भिजवा दिया गया। अस्पताल मे उसकी प्यारे और उसके परिवार के अन्य व्यक्तियो से भेंट हुई। जीवन की परिस्थितियो के क्रूर यथार्थ से बचने के लिए पेट के दर्द का बहाना किया किन्तु पोल खुल गई। डाक्टर ने पुलिस की सहायता लेकर बाहर निकाल दिया।

उसका अर्द्धचेतन मन यह भाषण देता गया। घूमते घूमते बुक स्टाल पर उसके अहम् को बडी चोट लगी। उसने 'कानफेशन्स आफ एक ठक' पुस्तक खरीदी। एक सेठ जी के बगले पर नौकरी मांगने गया। वहा ठुकराए जाने पर आत्मग्लानि की अनुभूति हुई। बगले की स्त्रियो ने दया कर उसे भोजन दिया और पुन. पार्क मे छोड दिया। जहाज पर 'आस्ट्रोलोजर' बन कर लोगो के 'पाम' देखे। एक केबिन मे वह पकड लिया गया और उसे पुन. पुलिस के हवाले कर दिया गया। मजिस्ट्रेट के सामने उसे उपस्थित किया गया। मजिस्ट्रेट के सामने भी उसका भाषण बद नही हुआ।

करीम चाचा की बिटिया को पढाने के लिए पच्चीस रुपये मे वह खरीदा गया। दस बारह महीने करीम चाचा के यहा बिताए। करीम चाचा से पचास रुपये लेकर पुन जीवन के चौराहे पर खडा हो गया। एक सी० आई० डी० के अफसर से उलझ कर उसकी जेब काटी। कथानायक ने रुपये एक गरीब लडकी को दिये और आगे बढ गया। भादुडी महाशय के यहा रसोइया बना और एक आयोजन मे रविन्द्रनाथ पर सारगर्भित भाषण दिया। कम्युनिस्ट बनाया जाकर वह घर से निकाल दिया गया।

वह कुछ समय प्यारे की लौंड्री मे रहा। प्यारे धोबी की लडकी बेला उस पर रीझ गई। एक कोयले की टायले मे ब्राउन से वह मिला। जिनकी कुठित मनोभावना थी और उस कुण्ठा का मूल कारण उनके जीवन की व्यक्तिगत असफलताए ही नही बल्कि एग्लो इडियन समाज का सामूहिक ह्रास्य था। उसका कुठित मन कभी चाहता कि डाकुओ के दल मे मिले और कभी सांस्कृतिक और सामाजिक सेवा करे।

मिस साइमन एक वेश्या के चकले को चला रही थी और वही उसे भी रसोइये की नौकरी मिल गई। उस चकले मे अमला और उसकी बच्ची के दुखदर्द को देखा। वहा पन्द्रह स्त्रिया भूतनियो से भी भयावनी थी और हर रात को उन्हे भौडा स्वाग रचना पडता था। मिस साइमन चल बसी और इस चकले को टेलरिंग हाउस मे बदलने मे पश्चात् पुलिस द्वारा छानबीन हुई।

टेलरिंग हाउस से निकल कर एक धनी महिला (लीला) के यहा नौकरी की। महिला के यहा उसने सगीत, काव्य, इतिहास, राजनीति और विश्वव्यवस्था पर पूरा भाषण दे डाला। धनी महिला के सम्मोहक प्रभाव से वह अभिभूत हो गया। हीनतानुभूति के कारण वह भाग गया। लीला के यहा से भाग कर वह कुछ मानसिक रोगियो के साथ एक अस्पताल मे रहा। अत मे लीला के साथ वह पुन. कलकत्ता चला आया क्योकि लीला ने सब कुछ अर्पित कर समाज की सेवा मे अपने जीवन को लगा दिया था।

वस्तु-विधान—इस उपन्यास मे एक आवारा युवक की कथा मुख्य है और अन्य कथाओ का उपयोग इस युवक की जीवन यात्रा के विकास लिए प्रसगगत हुआ है। अन्य कथाओ मे प्यारे और उसके परिवार, करीम चाचा और उसकी बिटिया, भादुड़ी महाशय के परिवार के व्यक्तियो, मिस साइमन के चकले, उस चकले के हर स्त्री पात्र, और अन्त मे लीला की कथा ने उपन्यास की मुख्य कथा का विकास किया है। इस युवक के अतिरिक्त एक भी पात्र की कथा प्रारम्भ से अन्त तक उपन्यास मे नही है इस लिए इन कथाओ को पताका न कह कर प्रकरी कहना ही समीचीन जान पडता है। अन्य कथाओ के साथ साथ नायक की जीवन घटनाओ मे भी मोड आते हैं। यह निश्चित है कि एक व्यक्ति विशेष के ताने बाने से बुना हुआ यह घटनाओ का विशाल अम्बार है अनेकानेक घटनाए अनावश्यक और बेसिर पैर की दिखलाई पडती हैं किन्तु लेखक ने इन समस्त घटनाओ को नायक की 'सामूहिक पीड़ा' की अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए प्रयोग किया है। नायक जहाज का पछी है, वह सामुद्रिक भावना (औसनिक फीलिंग) से आक्रान्त है। पछी जिस तरह जहाज से उड़कर समस्त समुद्र का चक्कर काटकर पुन: अपने जहाज पर लौट आता है उसी तरह नायक कष्टो और पीडाओ को झेलता हुआ आगे बढता है। अपने स्वार्थ को छोडकर अन्य मानव प्राणियो के लिए अधिकाधिक कष्ट भोगता है। अस्पताल मे प्यारे से उसकी भेंट होती है और वह पुन: उसके जीवन मे आता है अन्यथा अन्य कथाओ मे घटित होने पर पुन. उसके

जीवन मे नही आती हैं। इन घटनाओ के आधार पर, मनोविश्लेषण के परिपार्श्व मे, व्यक्ति के सामाजिक सघर्षो को, लेखक बताना चाहता है। यह सही है कि उपन्यासकार जानबूझकर घटनाओ को घटित करवाता जा रहा है और इस दृष्टि से एक घटना का दूसरी घटना के साथ कोई अन्विति और तर्कसगत योजना नही है, किन्तु नायक ने उपन्यास की अनगिनत कथाओ के सम्बध सूत्रो को जोडा है। उपन्यास के कथानायक की कथा अनेक कथाओ के बीच त्रिशकु की तरह लटक जाती अगर लीला इस कथा को कही न सभाल पाती। अत. यह निश्चित है कि कथाओ के बीच कोई शृङ्खला नही है किन्तु नायक ने इनको शृङ्खलाबद्ध करने का प्रयास किया है। उपन्यास अस्वाभाविक घटनाओ से भरा पडा है। इसका घटनाचक्र चन्द्रकान्ता से कम रोचक नही है। वस्तु-विधान मे तर्क सगत योजना को देखते है तो इस उपन्यास से हमे निराश होना पड़ेगा।

चरित्र-विधान—नामहीन आवारा युवक ही उपन्यास का नायक है और अन्य पात्रो का प्रयोग नायक के चरित्रविकास और उपन्यास के उद्देश्य-स्थापन के लिए हुआ है। अन्य पात्रो मे प्यारे, बेला, करीम चाचा, करीम-चाचा की बिटिया, भादुडी महाशय और उनके परिवार के व्यक्ति, मिस साइमन और पन्द्रह अबला नारिया और लीला आदि हैं। उपन्यास के पात्रो और वस्तु विधान मे पूर्णत: सामजस्य होना चाहिये, तभी उसमे स्वाभाविकता का रग आ सकता है। इस उपन्यास के कथानायक के जीवन और उसके आदर्शों मे खोखलापन दिखाई पडता है। ऐसा लगता है कि उपन्यासकार नायक के व्यक्तित्व को, अपनी निश्चित मान्यताओ की स्थापना के लिए, उतारना चाहता है। अनगिनत पात्र उपन्यास मे नायक के जीवन के रंगमच पर आते हैं और विलीन हो जाते हैं। प्यारे को सवेदनशील धोबी, बेला को प्रेमिका, करीम चाचा को बुजुर्ग व्यक्ति, करीम चाचा की बिटिया को गुमसुम युवती, भादुडी महाशय के परिवार के लोगो को अभिजात्य वर्ग के व्यक्ति, साइमन को शोषक नारी के रूप मे अभिव्यक्त किया है। ईरानी लडकी जुलेखा, बगाली लडकी अमला, यूरोपियन लडकी सुजाता और फासी, अग्रेज आस्ट्रे-लियन ईरानी, बर्मी, एग्लोइण्डियन, ऐंग्लो बर्मीज, हिन्दुस्तानी लडकियां शोषित नारियो की और लीला खोखले आदर्शवाद को अपनाकर धनिक महिला के रूप मे अभिव्यक्त होती है। लेखक ने नायक को मनोवैज्ञानिक केस और नायिका लीला को मनोविश्लेषक के रूप मे अभिव्यक्त किया है जो नायक के अचेतन मन को चेतन मन के स्तर पर लाकर अस्वस्थ मन को स्वस्थता प्रदान करती

है। 'जहाज का पछी' का नायक समुद्र मे भटक गया था, उसे पुन. जहाज पर ले आती है। नायिका लीला का चरित्र पूर्णत बनावटी लगता है। उपन्यास के एक भी पात्र के व्यक्तित्व मे उभार नही आ सका है। गौण पात्र नायक की जीवन कथा और चरित्र को स्पष्ट करनें मे अपना अस्तित्व खो देते हैं और नायक नायिका लेखक की सैद्धान्तिक मान्यताओ के पुतले बनकर आते है। सभी पात्र सपाट और समतल है। सभी पात्रो के जीवन का एक–एक पहलू ही उभर कर आता है इसलिए घटनाओ के घटित होने पर भी चरित्र के उतार चढाव से वचित रह जाते हैं। एक आलोचक का कथन है कि जोशी जी के पहले उपन्यासो के अधिकाश कथानायक, कामकुण्ठाग्रस्त, अत्यधिक आत्मपरायण पाशववृत्ति प्रधान, प्रतिहिंसा प्रिय, सदेहशील, शकालु, पलायन-प्रिय, आत्मनिष्ठ और मानसिक रोगो के शिकार है। 'जहाज के पछी' का नायक इससे किंचित भिन्न है।[1] जोशी जी के इस उपन्यास का कथानायक सामाजिकता का आवरण ओढ लेने के कारण किंचित भिन्न है अन्यथा यह भी पलायनप्रिय और मानसिक रोग का शिकार है। यह निश्चित है कि सिद्धान्त-वादिता के आग्रह के कारण जोशी जी प्राणवान पात्र नहीं दे सके है किन्तु व्यक्तिपरक पात्रो से समाजिक पात्रो का सृजन उनकी चरित्रनिर्माण मे विशेष उपलब्धि है।

उद्देश्य—उपन्यास का कथानायक युग के खोखलेपन और विकृतियो को स्पष्ट करता है। अपनी सम्पूर्ण जीवन यात्रा मे समाज के अभावो और दुर्बलताओ का चित्र प्रस्तुत करता है। वह मानता है कि आज के युग की हजारो विकृतियो के ताने बाने से उलझी विषम आर्थिक और सामाजिक परिस्थिति व्यवस्था के शिकारो के प्रति स्वयभू समाजपतियो का यह रुख जनता द्वारा इसी तरह उपेक्षित रहता चला जाएगा।[2] समाज मे प्रतिदिन अपराधो और कुकर्मो की सस्थाए बढती चली जा रही है उसका प्रधान कारण आज के युग की सहानुभूति रहित, सम्वेदना शून्य प्रवृत्तिया, विषम सामाजिक परिस्थितिया और सामूहिक भ्रष्टाचार ही है।[3] परन्तु उसे मानवता पर विश्वास है और मानता है कि मनुष्यता अभी मरी नही है? अभी माताओ की छातियो मे

---

१. शिवनारायण श्रीवास्तव, हिन्दी उपन्यास, पृ० ३०८।

२. इलाचन्द्र जोशी, जहाज का पछी, पृ० ३२।

३. वही, पृ० ६०।

दूध शेष है ? मानवीय हृदय के अतल मे निरीह करुणा का स्रोत अभी एक दम सूख नही गया है। अभी मनुष्य के सभी आँसू पत्थर मे परिणत नही हुए हैं।[१] कथानायक के हृदय मे विद्रोह की आग है। वह पुलिस अफसर को कहता है कि अब समय आ रहा है—बल्कि आ गया है—जब आप लोगो की यह संगठित झुठाई, इस सामूहिक भ्रष्टाचार और अत्याचार के विरोध मे धरती का एक एक छोटा सा छोटा छिद्र चीख उठेगा।[२] इसके अतिरिक्त पुलिस के अत्याचार, सेठ जी के बगले पर स्त्रियो की दया, मादुड़ी महाशय के यहा से कम्युनिस्ट बनाकर निकाला जाना, मि० ब्राउन मे एग्लोइडियन समाज का सामूहिक हास्य देखना और साइमन के चकले मे नारी-जीवन का विद्रूप नायक की जीवन-गाथा मे सामाजिक चेतना को अभिव्यक्त करती है। वस्तुत, सामाजिक चेतना के मूल मे मनोविश्लेषण है। वह स्वय अनुभव करता था कि किस विचित्र मनोवैज्ञानिक कारणो से पिछले दो वर्षों से एक निराले मानसिक-रोग का शिकार अपने को पा रहा था।[३] लेखक मनोविश्लेषण की बाधकता हटाने को विश्लेषण और सुझाव का प्रयोग करता है। वह लीला के समक्ष स्वीकार करता है 'वह विश्वकल्याण ही क्यो न हो, यह एक मानसिक बीमारी है और इधर कुछ समय से मैं अपने को इस बीमारी का शिकार पाता हू।[४]' मनोविश्लेषण के साथ साथ सामाजिक-चेतना और सामाजिक-मूल्यो की स्थापना ही इसका उद्देश्य है। इलाचद्र जोशी स्पष्ट कहते हैं कि व्यक्ति के अहभाव की एकातिकता पर निर्मम प्रहार करने का लक्ष्य रहा है। सामाजिक पर्दे के पीछे छिपे इसी सत्य का उद्घाटन मनोवैज्ञानिक उपायो से करने का प्रयास किया है।[५] अतः मनोविश्लेषण के परिपार्श्व मे सामाजिक-मूल्यो की स्थापना ही इस उपन्यास का लक्ष्य है।

यह स्वीकार किया गया है कि 'मुक्तिपथ,' 'सुबह के भूले', 'जिप्सी' और 'जहाज का पछी' जोशी जी की उपन्यास कला मे एक तीव्र सजग सामाजिक-भावना का प्रतिनिधित्व करते हैं।[६] अत. कई आलोचको ने इसे

---

१. वही, पृ० ५१।

२ वही, पृ० ३०५। ३. वही, पृ० २०८–२०९।

४. इलाचन्द्र जोशी, जहाज का पंछी, पृ० ४२७।

५. विवेचना, पृ० १२३–१२४।

६ प्रकाशचन्द्र गुप्त, आलोचना १८, पृ ९३।

प्रेमचद की सामाजिक उपन्यासो की कोटि मे रखने की चेष्टा की है। डा० गगाप्रसाद पाडेय की मान्यता है कि इस कृति मे लेखक की व्यक्ति चरित्र विश्लेषण की शैली को एक व्यापक सामाजिक परिधि के भीतर रखकर व्यक्तिवाद और समाजवाद के चिर उपेक्षित कला का सूत्रपात करने की अद्भुत क्षमता दिखलाई पडती है और अत मे निष्कर्ष देते हुए निर्णय दिया है कि यह उपन्यास समाजवादी यथार्थवादी कला मे पथप्रदर्शन का कार्य करते हुए स्वतत्रता के बाद लिखे गए उपन्यासो मे एक महत्वपूर्ण स्थान का अधिकारी रहेगा।[1] यह न सामाजिक उपन्यास है और न समाजवादी।

यह समाज मनोविश्लेषणवादी उपन्यास है। मनोविश्लेषणात्मक विचारधारा से जोशी जी अलग नही हटे हैं। उनका ध्रुव विश्वास है कि 'फ्रायड ने मनोविश्लेषण को एक सुगठित, वैज्ञानिक आधार पर प्रतिष्ठित करके यह सिद्ध किया कि आज का सभ्य मनुष्य जिन धार्मिक और नैतिक विश्वासो पर जी रहा है वे दमित यौनवृत्ति के ही विभिन्न प्रतीक है और आज की सारी प्रगति दमित सैक्स जनित विकृतियो का ही इतिहास है। उसने बताया है कि मनुष्य की सभ्यता केवल एक बाहरी नकाब है और झीने नकाब के भीतर मनुष्य एकदम नगा है।[2]' साथ मे उनकी यह धारणा भी है कि 'फ्रायड के सिद्धान्तो की कोई खास गलती नही है पर उन सिद्धान्तो की सीमा अत्यत सकीर्ण होने के कारण मानवीय इतिहास के सारे इतिहास को एक गलत परिप्रेक्षण पर लाकर खडा कर दिया है।[3]' नायक के मन के भीतर सुकुमार और गोपन कामना छिपी है।[4]' यह उसकी इच्छाओ का प्रतीक है। उसके अह के कारण उसकी इच्छाओ का प्रस्फुटन नही होता है और उसका अन्त . करण उसकी इच्छाओ और अह पर सन्तुलन रखने मे असमर्थ है। जहाज का पछी का आवारा नायक सामुद्रिक भावना से पीडित है। फ्रायड ने अपने भाषण 'सभ्यता और उसकी असन्तुष्टि' (Civilization and its discontents) मे बताया है कि यह सामुद्रिक भावना कई लोगो मे पाई

---

१ आलोचना, ३४, पृ १९१, १९७।

२. आलोचना ११, पृ० १८।

३. वही, पृ० १९।

४ इलाचन्द्र जोशी, 'जहाज का पछी' पृ० ६३।

जाती है। अपने अहं के कारण व्यक्ति समस्त सृष्टि के साथ एकात्मकता स्थापित करने का यत्न करता है।[1]

इस उपन्यास का नायक अमुक्त कामवासनाओं से पीड़ित है। यह व्यक्ति समुद्र के लिए पीड़ित है। यह समुद्र सृष्टि का प्रतीक है। जहाज उसकी अमुक्त कामनाओं और इच्छाओं का प्रतीक है। उपन्यास का शीर्षक भी फ्रायड के 'ओसनिक फीलिंग' से प्रभावित जान पड़ता है। समाज के परिपार्श्व में एक व्यक्ति के मन का मनोविश्लेषण है और व्यक्ति के मनोविश्लेषण के द्वारा उसने सामाजिक व्यक्तित्व को उभारा है इसलिए उसे समाजपरक मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों की कोटि में रखना समीचीन जान पड़ता है।

अन्य उपन्यास

'मुक्तिपथ' का कथानायक राजीव स्वतन्त्रता उपलब्धि के पश्चात् बेकार है। जीवन में उसे निराशा हाथ लगती है। सुनन्दा के प्रति उसके मन में आकर्षण पैदा होता है। सुनन्दा बालविधवा है इसलिए सुनन्दा की मामी अपने परम्परागत विचारों के कारण उसको सहन नहीं कर पाती है। उमाप्रसाद की लड़की अपनी बुआ का पक्ष लेती है। राजीव और सुनन्दा गृहस्थी के घेरे को छोड़कर 'नवनिर्माण संघ' की स्थापना में लग जाते हैं। सुनन्दा नारी हृदय की भावनाओं की उपेक्षा करती है और संघ से अलग हो जाती है। राजीव भी सुनन्दा के अचेतन मन में उठने वाली भावनाओं से अनभिज्ञ था इसलिए अपनी भूल पर पछताता है।

उपन्यास का कथानक सुगठित है। सिद्धान्त प्रतिपादन के फलस्वरूप जोशी जी पात्रों को नहीं उभार सके हैं। राजीव और सुनन्दा मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकार के हाथों मनोवैज्ञानिक केस बनकर रह जाते हैं। उमाप्रसाद की पत्नी परम्परागत नारी भावनाओं की, प्रमिला चंचलता की, राजीव सामूहिक श्रम और सुनन्दा कुंठित नारी भावनाओं का प्रतिनिधित्व करती

---

१. फ्रायड : मेजर वर्क्स आफ सिग्मण्ड फ्रायड, पेज ७७०, ७७६।
"...द ओसीनिक फीलिंग ऐक्जीस्ट्स इन मैनी पीपिल एण्ड वी आर डिस्पोज्ड टु रिलेज इट टु एन-अर्ली स्टेट आफ ईगो-फीलिंग ७७०। इट इज ए फीलिंग व्हिच आई वुड लाइक टु काल ए सेन्सेशन आफ ऐटरनिटी, ए फीलिंग आफ समथिंग लिमिटलैस, अनबाउंडेड, समथिंग ओसीनिक ७७६।

है। जोशी जी की मान्यता है कि श्रम-सामूहिक श्रम द्वारा व्यक्ति को मुक्ति मिल सकती है। जीवन का मुक्तिपथ सामूहिक श्रम से उपलब्ध किया जा सकता है। राजीव कहता है. 'उस श्रम का क्या महत्व जिसके सुख का अनुभव विश्राम के एकान्त के क्षणो मे न किया जा सके। उस मुक्ति का क्या मूल्य जो सहस्रो वन्धनो के वीच अपना आभास न दे सके।[1]' राजीव के आदर्शवाद पर करारी चोट करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है।

राजीव और सुनन्दा के अचेतन मन का विश्लेषण लेखक कर सका है। राजीव ने मन की इच्छाओ का उदात्तीकरण सामूहिक श्रम में कर दिया। सुनन्दा ने इच्छाओ का उदात्तीकरण सामूहिक श्रम मे करना चाहा किन्तु वह न कर सकी। राजीव ने इच्छाओ (ईड) का उदात्तीकरण तो कर दिया किन्तु सुनन्दा की भावनाओ और इच्छाओ से परिचित न हो सका। केवल आदर्शों की आड लेने से व्यक्ति की इच्छाए भूलुठित हो जाती हैं और समाज मे व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता है। समाज और सामाजिक जीवन के परिपार्श्व मे इस उपन्यास मे व्यक्ति मन का मनोविश्लेषण है इसलिए यह मनोविश्लेषणात्मक (समाजपरक) उपन्यास है।

'सुवह के भूले' (१९५२) मे लेखक ने गुलविया का चित्रण किया है। वम्बई की गन्दी वस्ती मे वैजनाथ और महावीर रहते हैं। वैजनाथ एक विधवा लड़की झमिया के प्रेमपाश मे पडकर उसको वम्बई लाता है। वैजनाथ चल वसता है। झमिया के आग्रह से महावीर मालती नामक लड़की से विवाह कर लेता है। झमिया की लडकी गुलविया वडी होती है। गुलविया मे असाधारण प्रतिभा है। सभ्यता की चकाचौंव उसकी आखो को अन्धा वना देती हैं। अभिनेत्री वनने की कामना उसमे लगती है। वह गुलविया से गिरिजा वन जाती है। वालपन के साथी किशन को भूल जाती है और फैशनेवल युवक हेमकुमार के सम्पर्क मे आती है। कुछ काल के लिए वह भटकती है और अन्त मे सुवह के भूले हुए यात्री की तरह शाम को घर लौट आती है।

उपन्यास का केन्द्र विन्दु गुलविया है और गुलविया के इर्दगिर्द उपन्यास की वस्तु घूमती है। वैजनाथ और झमिया के प्रसग उपन्यास मे अनावश्यक जान पडते हैं। उपन्यास को सुगठित वस्तु–विधान की उपन्यास परम्पराओं मे

---

१. इलाचन्द्र जोशी, मुक्तिपथ, पृ. ४१४।

स्थान दिया जा सकता है। गुलविया हीन अनुभूति की प्रतीक है। महावीर वैजनाथ, भमिया और किशन आदि सभी पात्र अपना व्यक्तित्व लेकर आते है। महावीर मे वात्सल्य है और किशन मे सरलता। हेमकुमार और गुलविया की मित्रता वर्ग सभ्यता की चकाचौंध की प्रतीक है। गुलविया और गिरिजा एक चरित्र और व्यक्तित्व के दो पहलू हैं इसलिए इन्हे विकसनशील पात्र कहा जा सकता है। गुलविया की हीनता ग्रंथि का उन्नयन ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है।

समाज के परिपार्श्व मे गुलविया का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन इस उपन्यास मे लेखक ने किया है इसलिए मनोविश्लेषणात्मक (समाजपरक) उपन्यासो की कोटि मे 'सुवह के भूले' को स्थान दिया जा सकता है।

सर्वेक्षण—इलाचद्र जोशी एक मात्र मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकार हैं जो मनोविश्लेषण को अपने उपन्यासो का आधार मानते हुए सामाजिक मूल्यो की स्थापना कर रहे हैं। शिल्प की कमियो के वावजूद 'जहाज का पछी' इस विवेच्यकाल की सामाजिक मूल्यो की स्थापना के कारण एक महान् उपलब्धि है। जोशी जी के इन उपन्यासो के वस्तुविधान मे स्थूलता से सभी पात्र मनोवैज्ञानिक हैं किन्तु मनोविश्लेषण का आधार लेते हुए सामाजिक मूल्यो की स्थापना उनकी विशेष उपलब्धि है। 'जिप्सी' मे सम्मोहक प्रणाली का उपन्यासीकरण हो गया है और 'सुवह के भूले' में मूल प्रवृतियो का उन्नयन है किन्तु 'जहाज के पछी' को युग की प्रवृतियो का आधार दिया है।

'जहाज का पंछी' मे युग की अभिव्यक्ति है इसलिए यह एक युग परक रचना है। श्रेष्ठ औपन्यासिक कृति के वारे मे उनकी मान्यता है: 'असल वात यह है कि न केवल घटनाचक्र की वहुलता मे कोई औपन्यासिक रचना श्रेष्ठ मानी जाती है, न घटनाओ के वारे मे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और तटस्थ दार्शनिक विवेचन से। देखना यह होगा कि लेखक की रचना ठोस जीवन केन्द्र पर स्थित है यानी जीवन के मार्ग को छूती है या नही, कठोर वास्तविक सघर्ष के माध्यम से ही रुग्ण जीवन का उपचार सुझाने मे समर्थ है या नही।[1]' 'जहाज का पछी' मे घटनाचक्र की वहुलता है और सुगठित शिल्प नही है, पात्रो का अजायवघर है और वे लेखक के मनोविश्लेषणात्मक अक्स किरणो के कठपुतले हैं। यह रचना मनोविश्लेषणात्मक कृति होने के साथ

---

१ इलाचन्द्र जोशी, विवेचना, पृ ९७।

ठोस जीवन के धरातल पर स्थित है इसलिए श्रेष्ठतम कृति भले ही न हो किन्तु श्रेष्ठतर कृतियो मे इसे स्थान मिल सकता है।

जोशी जी हिन्दी उपन्यासो के क्षेत्र मे मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति के अगुआ बने हैं किन्तु अन्य मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकारो से अलग लकीर बनाकर खडे हो गए हैं क्योकि जोशी जी के अतिरिक्त एक भी मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारो ने सामाजिक मूल्यो का पोषण नही किया है। इस विवेच्यकाल की कृतियो ने एक आलोचक की धारणा को निर्मूल सिद्ध कर दिया है जो यह मानते है कि इलाचद्र जोशी की उपन्यास कला का मूल उद्देश्य पाश्चात्य सिद्धान्तो के आधार पर व्यक्ति चिन्तन और व्यक्ति विश्लेषण है। लज्जा से जहाज के पछी तक उनका उपन्यासो मे अह की समस्याओ का निरीक्षण एव परीक्षण हुआ है। जोशी जी का उपन्यास साहित्य फ्रायड के यौन सम्बंधी सिद्धान्तो से इतना प्रभावित नही जितना एडलर की हीनताभाव सम्बधी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तो से प्रेरित हैं। उनके प्राय सभी नायक नायिकाएं हीनताभाव से प्रेरित हैं।'[1] इलाचद्र जोशी के इस विवेच्यकाल के उपन्यासो का मूल उद्देश्य व्यक्ति चिन्तन और व्यक्तिहित न होकर समाजचिन्तन और सामाजिक मूल्यो की स्थापना करना है और इन कृतियो मे युग की समस्याओ को सामाजिक परिपार्श्व मे उपस्थित किया है जिसमे व्यक्ति के स्थान पर मनोविश्लेषण के बावजूद, समाज उभर कर आता है। जहा तक मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तो का प्रश्न है उन्होने फ्रायड को मानकर भी यौन प्रवृत्ति पर बल नही दिया है, एडलर की हीनता ग्रथि को मानकर भी हीनताग्रथि को सब कुछ नही माना है किन्तु युग के सामूहिक अवचेतन पर उनको अटल विश्वास है। फ्रायड की यौन कुण्ठाओ के साथ, युग के सामूहिक अवचेतन का आधार लेकर मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति को सामाजिक धरातल पर स्थापित कर नवीन प्रवृत्ति को जन्म दिया है, इसलिए जोशी जी के उपन्यास अन्य मनोविश्लेपणात्मक उपन्यासो से सहज ही अलग किए जा सकते हैं। सामाजिक मूल्यो की स्थापना करने वाले मनोविश्लेपणात्मक उपन्यासो मे 'जहाज का पछी' एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

---

१. इंद्रनाथ मदान इलाचन्द्र जोशी, साहित्य और समीक्षा, भूमिका।

समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास

इतिहास ·

इतिहास केवल भूतकालीन तथ्यो का सग्रह नही है, क्योकि वह तथ्यो के साथ सत्य को आधार मानकर चलता है । 'इतिहासकार उच्च दृष्टि के आधार पर इतिहास का निर्माण करता है जिसमे केवल घटनाओ का कालक्रम नही है[1]' इतिहासकार घटनाओ के जोडो के बीच अनुमान का सहारा लेता है । प्राप्त आधारो और अनुमानो के सहारे इतिहास लिखता है । 'यह घटनाओ का व्यवस्थित रूप है, जो राष्ट्र, सस्थाए, विज्ञान या कला को प्रभावित करती हैं और जिनके कारणो की दार्शनिक व्याख्या प्रस्तुत की जाती है ।[2]' अत अनुमान के सहारे घटनाओ की व्याख्या भी इतिहासकार प्रस्तुत करता है । किन्तु इतिहास केवल बीती हुई घटनाओ का व्यवस्थित विवरण और व्याख्या नही है, वह अतीत और वर्त्तमान के बीच सेतु-सम्बध जोडता है । 'इतिहास अतीत और वर्त्तमान के बीच न खत्म होने वाला वार्त्तालाप है ।[3]' अतएव इतिहास, वर्त्तमान को समझने के लिए, विभिन्न दृष्टिकोणो से अतीत की व्याख्या मात्र है । युगो के बदलने के साथ धारणाए और विचारो मे परिवर्त्तन होता है, इसलिए युग के अनुरूप इतिहास का पुनर्लेखन होता है ।

---

१. ए. एच. मरे : ए न्यू इंगलिश डिक्शनरी १९०७ पेज ३०८ ।

२ वही, पृ० ११८३ ।

३. ई. एच. कार : ह्वाट इज हिस्ट्री, पेज २४ ।

ऐतिहासिक उपन्यास ·

ऐतिहासिक उपन्यास मे उपन्यासकार का सम्बन्ध इतिहास से होता है, वह इतिहास को आधार बनाता है और ऐतिहासिक घटनाओ के आधार पर उपन्यास का निर्माण करता है। ऐतिहासिक–उपन्यास एक प्रयत्न है, जिसके आधार पर वातावरण का पुनर्निर्माण होता है। वातावरण के पुर्ननिमाण के लिए उसे पात्रो की वेशभूपा, वार्त्तालाप, शिष्टाचार, सभ्यता को अभिव्यक्त करना पडता है। महान् ऐतिहासिक–उपन्यासकार को केवल सभ्यता से सन्तुष्ट न होकर, सस्कृति को भी अभिव्यक्ति देनी पडती है जिससे उस युग की आत्मा को समझा जा सके।

वातावरण के पुर्ननिमाण मे ऐतिहासिक उपन्यासकार को कला का सहारा लेना पडता है। उपन्यासकार ऐतिहासिक वातावरण का पुर्ननिमाण करके उपन्यास को इतिहास नही बना देता है। इतिहास केवल पात्रो के पुतले देता है किन्तु उनमे प्राण फूकने का काम उपन्यासकार करता है। इतिहास शृंखला की कडियो के रूप मे कथा देता है, किन्तु 'छाट और चुनाव' के पश्चात् उनमे तर्क सगत योजना के द्वारा कथा को वस्तु मे परिवर्तित करने का काम उपन्यासकार करता है। उपन्यासकार किसी निश्चित उद्देश्य को लेकर ऐतिहासिक–उपन्यास की रचना करता है। यह माना गया है कि उपन्यासकार को अनेकानेक उद्देश्य अतीत की ओर ले जाते है। अनेकानेक ने, वर्त्तमान को आलोकित करने का प्रयत्न किया है, कुछ की कल्पना की पकड मे विशिष्ट व्यक्तित्व आ गए हैं। कुछ उपन्यासकार मनोवैज्ञानिकपुनर्मूल्याकन में रुचि लेते हैं। फिर कुछ ऐतिहासिक–कथा–साहित्य की उत्पत्ति राष्ट्रीयता, पूजीवाद या साम्यवाद के आदर्शात्मक सघर्प के साथ हुई है।[1]

---

१. रैगर डैटैलर · द प्लेन मैन एण्ड द नॉवल, पेज ४८।
ए ग्रेट वैराइटी आफ मोटिव्स टर्न द नॉवलिस्ट बैक इण्टू द पास्ट, मैनी हैव डन सो इन ऐन एन्डेवर टू इलीमिनेड द प्रेजेण्ट। अदर्स बिकाज सम आउटस्टैंण्डिग पर्सनलिटीज कैप्चर्ड देअर इमेजिनेशन। सर्टेन नॉवलिस्ट्स आर इण्ट्रैस्टैड इन साइकोलोजिकल रिवैल्युएशन। दैन अगेन, हिस्टोरिकल फिक्शन हैज बीन कनसीव्ड अलोग लाइस आफ आइडियोलोजिकल कन्फिलक्ट—द हिस्टोरिक बिअरिंग आफ नेशनलिज्म कैपिटलिज्म ऑर कम्यूनिज्म।

वस्तुतः ऐतिहासिक उपन्यासकार व्यक्ति या समाज को केन्द्र मानकर ऐतिहासिक उपन्यास की रचना करता है। यह अशत. सत्य है कि ऐतिहासिक उपन्यासकार केवल वर्त्तमान से पराजित अथवा पलायन की भावना, वर्त्तमान को शक्तिशाली बनाने के लिए अतीत से उपजीव्य खोजने, कतिपय ऐतिहासिक पात्रो के प्रति न्याय की भावना, इतिहास मे लिप्त रहने की सहज–भावना और जातीय गौरव, राष्ट्र प्रेम, आदर्श स्थापन तथा वीरपूजा की भावना के लिए ऐतिहासिक उपन्यास की रचना करता है।[1] पलायन अतीत के पुन-स्थापन, अतीत रस और इतिहास रस मे लिप्त रहने के लिए ऐतिहासिक उपन्यास की रचना नही होती है किन्तु कतिपय ऐतिहासिक पात्रों के प्रति न्याय करने और जातीय गौरव, राष्ट्र प्रेम, आदर्श स्थापन आदि को ध्यान मे रखते हुए उपन्यासकार ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना करते हैं। राहुल सांकृत्यायन ने ठीक ही कहा है ऐतिहासिक उपन्यास मे ऐसे समाज और व्यक्तियो का चित्रण किया जाता है, जो सदा के लिए विलुप्त हो चुका है।[2]'

समाजपरक ऐतिहासिक–उपन्यास :

समाजपरक उपन्यास मे उपन्यासकार व्यक्ति–चेतना और व्यक्तिमूल्यो के स्थान पर सामाजिक–चेतना और सामाजिक मूल्यो को अभिव्यक्त करता है। उपन्यासकार का केन्द्र विन्दु कोई व्यक्ति और केवल उसका चरित्र उद्घाटन न होकर समूचा समाज होता है। वह उपन्यास मे वर्णित युगीन सभ्यता और सस्कृति की परतो को खोलकर, उस युग मे चलने वाले सामाजिक घात–प्रतिघातो को प्रस्तुत करता है। उपन्यासो की कथा व्यक्ति के स्थान पर समाज से सम्वधित होती है, पात्र सामाजिक व्यक्तित्व लेकर उस युग के वर्गों का प्रतिनिधित्व करते है और सामाजिक–चेतना और मूल्यो की उपन्यासकार स्थापना करता है। कुछ समाजपरक–उपन्यासो मे जीवन की समाजवादी व्याख्या प्रस्तुत होती है। इस विवेच्यकाल मे, हिन्दी के समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे या तो सामाजिकता का आग्रह है या समाजवादी चेतना प्रतिध्वनित है और मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति का सर्वथा अभाव है, इसलिए ऐसे उपन्यासो को समाजपरक ऐतिहासिक–उपन्यास कहना समीचीन जान पडता है।

---

१. आलोचना १३, पृ० १७८।

२. वही, पृ० १७०।

चतुरसेन शास्त्री, वृदावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, अमृतलाल नागर, रागेयराघव और हजारीप्रसाद द्विवेदी इस विवेच्यकाल के समाजपरक–ऐतिहासिक–उपन्यासकार है।

तुरसेन शास्त्री

चतुरसेन शास्त्री ऐतिहासिक उपन्यासकार भी है। 'हृदय की परख' (१९१८) से लेकर 'शुभदा' (१९६२) तक विपुल उपन्यास कृतियो की रचना की है, किन्तु इस विवेच्यकाल मे 'सोमनाथ' (१९५४), 'आलमगीर' (१९५४), 'वय रक्षाम.' (१९५५ प्रथम भाग), 'सोना और खून' (१९६०), 'अमरसिंह' (१९६०) और वयरक्षाम' (द्वितीय भाग, १९६०) इस विवेच्यकाल के ऐतिहासिक उपन्यास हैं। 'वय रक्षाम' समाजपरक–ऐतिहासिक–उपन्यास है। शेष उपन्यासो की 'अन्य उपन्यास' के अन्तर्गत चर्चामात्र की गई है क्योकि वे महत्वपूर्ण उपलब्धिया नही हैं।

वयं रक्षाम : (१९५५ और १९६०)

कथासार—इसमे पौलस्त्य वैश्रवण रावण की कथा है जो रक्ष सस्कृति की स्थापना करना चाहता है और कुमारी का हरण उनके लिए वैध है। एक दैत्य बाला के साथ सहवास करने के पश्चात् रावण रक्ष सस्कृति की स्थापना मे लग जाता है। दानवराज ने रावण को बन्दी बनाया और बन्दियो के बीच उसकी प्रेयसी भी थी। समुद्र के गर्जन तर्जन के बीच दैत्य बाला ने मुग्ध होकर रावण को बचाया। रावण और दैत्य बाला पुन कैद कर लिए गए। दानवो ने दैत्य बाला का सिर काटकर यज्ञ की वेदी पर चढ़ा दिया। रावण और दानवेन्द्र के बीच भयानक युद्ध मे दानवेन्द्र का अन्त हुआ। दनुपुत्र ने अपनी पुत्री मन्दोदरी रावण को दी। रावण और मन्दोदरी का सयोग शौर्य और शृंगार का सयोग था। रावण का नारा था 'वय रक्षाम'।

भारत मे रावण के दो सैनिक केन्द्र स्थापित हुए—दण्डकारण्य और नैमिषारण्य। दण्डकारण्य मे उसने अपने साढू शम्बर से मिलने के पश्चात् साली मायावती के साथ बलात्कार किया। गन्धर्वराज की पुत्री चित्रागदा के साथ रावण का विवाह हुआ और अनेकानेक राजाओ ने अपनी कन्याओ का विवाह रावण से करके उससे मित्रता बढाई। हर नई रानी के साथ रति-विलास कर वह आगे बढता गया। बलि–रावण मल्लयुद्ध मे रावण पराजित हुआ। लका मे उसकी बहन कुम्भीनसी मधु दैत्य और सूर्पणखा विद्युज्जीह्व से मिला करती थी। रावण ने विद्युज्जीह्व को मार दिया और दण्डकारण्य सूर्पणखा को दे दिया।

सूर्पणखा के नाकछेदन के पश्चात् रावण ने सीता का हरण किया और उसका पतन आरम्भ हो गया। रावण ने सीता को अशोक-वन मे स्थान दिया और सीता की खोज मे राम जगलो को छानते फिरे। राम ने बालि का वध किया, और सुग्रीव को मित्र बनाया। हनुमान ने लका का अन्वेषण कर सीता का पता लगाया। राम रावण की सेनाओं के बीच तुमुल युद्ध हुआ। कुम्भकर्ण आदि योद्धा मारे गए। लक्ष्मण ने मेघनाथ का वध किया और अन्त मे सात दिन तक राम-रावण सघर्ष के पश्चात् रावण का वध हुआ। राम विजयी हुए।

वस्तु-विधान—'वय रक्षाम' का शिल्प वर्णनात्मक और पूर्णतः इतिवृत्तात्मक है। रावण के जीवन की घटनाओ के बीच, अतीत की घटनाओ की शोधपूर्ण व्याख्या ने, वस्तु को जटिल बना दिया है। रावण के रक्ष सस्कृति की स्थापना और उसके पतन को लेकर उपन्यास की घटनाए गुंथी हुई है जिसमे निश्चित रूप से जटिलता है। अनेकानेक स्थानो पर अनावश्यक प्रसगो की उद्भावना हुई है और उनका उपन्यास से कोई सम्बध नही है। रावण के अनेक विवाह और विद्युज्जीह्व का मातृ-वध आदि अनेकानेक घटनाए निरर्थक हैं। उपन्यास मे विवाह पर विवाह और युद्ध पर युद्ध की योजना है और इन घटनाओ के बीच तर्क सगत सेतु सम्बंध नही है इसलिए इसे 'वस्तु' न कहकर केवल कथा मात्र कहना पडेगा। वस्तु-विधान की दृष्टि से यह साधारण रचना है और विवरणात्मक होने के कारण इसमे नीरसता है। जहाँ तक ऐतिहासिकता का प्रश्न है लेखक ने स्वय स्वीकार किया है. 'वय रक्षाम. एक उपन्यास तो अवश्य है, परन्तु वास्तव मे वह वेद, पुराण, दर्शन और वैदेशिक इतिहास ग्रंथो का दुस्सह अध्ययन है। ... सक्षेप मे मैंने सब वेद, पुराण, दर्शन, ब्राह्मण और इतिहास के पात्रो की एक बडी गठरी बाधकर इतिहास रस मे एक डुबकी दे दी है। सबको इतिहास-रस मे रग दिया है। फिर भी यह इतिहास रस का उपन्यास नही 'अतीत-रस' का उपन्यास है। इतिहास-रस का तो इसमे केवल रग है, स्वाद है, अतीत है।[1]' यह निस्सदेह प्रागैतिहासिक काल का उपन्यास है, जिसमे उपन्यास-रस से अधिक अतीत-रस है।

चरित्र-विधान—इस उपन्यास मे अनेकानेक पात्रो के रेखाचित्र हैं जिनमे रावण, मन्दोदरी, दैत्य बाला, मेघनाथ और सीता आदि मुख्य हैं।

---

१. चतुरसेन शास्त्री, वय रक्षाम, (प्रथम खण्ड), पृ० ४-५।

लेखक ने स्वीकार किया है : 'इस उपन्यास मे प्राग्वैदकालीन नर, नाग, देव, दैत्य, दानव, आर्य, अनार्य आदि विविध नृवंशो के जीवन के वे विस्मृत पुरातन रेखाचित्र हैं, जिन्हे धर्म के रगीन चश्मे मे देखकर ससार ने उन्हे अन्तरिक्ष का देवता मान लिया है। मैं इस उपन्यास मे उन्हे नर-रूप मे आपके समक्ष रखने का साहस कर रहा हू ।[1]' इसमे केवल पात्रो के रेखाचित्र हैं, व्यक्तित्व नही। रावण आदि मे भी व्यक्तित्व की रेखाए प्रकट हुई हैं। दैत्य बाला और अन्य अनगिनत नारी पात्र केवल भोग की प्रतीक बन कर रह गई हैं। रावण शिश्न और मेघनाथ भोग और शक्ति का, सीता पातिव्रत की, सुग्रीव मित्रता का, और विभीषण धार्मिकता के पुतले बनकर हमारे सामने आते हैं। सभी नर-नारियो के पुतले हैं, उनमे जीवन की चेतना नही है, भावनाओ और अनुभूतियो से शून्य हैं।

उद्देश्य—'वय रक्षाम.' मे प्राग्वैदकालीन जातियो के सम्बध मे सर्वथा कल्पित अकल्पित नई स्थापनाए हैं, मुक्त सहवास है, विवसन विचरण है, हरण और पलायन है। शिश्न-देवता की उपासना है, वैदिक-अवैदिक अश्रुत मिश्रण। नर-मांस की खुले बाजार मे बिक्री है, नृत्य है, मद है-उन्मुख अनावृत यौवन है।[2] 'वय रक्षाम.' मे प्राग्वेदकालीन रावण की रक्ष सस्कृति का प्रचार-प्रसार और विलासता के कारण पतन बताना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। रावण का मत था खाना—पीना मौज करना, जीवन का ध्रुव ध्येय नही, मेरा नारा है—'वय रक्षाम ।' हम प्रजापति के वशधर हैं। एक ही पिता कश्यप से, भिन्न भिन्न माताओ से दैत्य, दानव, नाग, असुर और अदैत्यो की उत्पत्ति हुई है। हम दायाद बाधव हैं। मैं नही चाहता कि आदित्य देव, दैत्य, दानव, नाग, असुर, अपनी पृथक जाति बनाए, उनमे सघर्ष हो, युद्ध हो। मैं विश्व मे नृजाति को एक ही सस्कृति के आधीन करना चाहता हू और वह संस्कृति मेरी स्थापित की हुई रक्ष-सस्कृति है। हम कहते हैं 'वय रक्षाम और हमारी सयुक्त जाति है राक्षस ।[3]' रावण नृजाति को एक सस्कृति की स्थापना मे, अपनी विलासता और अहम्मन्यता के कारण सफल नही हो सका, उसकी रक्ष सस्कृति का ही अन्त नही हुआ, उसका अस्तित्व भी मिट गया। अत रक्ष सस्कृति की विलासता, अहमन्यता और तदुपरान्त पतन दिखाना ही उपन्यासकार का उद्देश्य जान पड़ता है।

---

१. चतुरसेन शास्त्री, वयं रक्षाम' (प्रथम खण्ड), पृ. ४।
२ वही, पृ. २।
३. चतुरसेन शास्त्री, वयं रक्षाम (प्रथम खण्ड), पृ ६८।

यह समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें प्राग्वेदकालीन समाज का चित्रण हुआ है। उस युग से मुक्त सहवास विवसन विचरण नारी–अपहरण अनावृत यौवन और नरमांस भक्षण आदि का विवरण उपन्यासकार ने किया है। लेखक का कथन है कि अब से सात शताब्दी पूर्व, जब वारुणी द्वीप के विजन वन मे सरोवर के तट पर दैत्य बाला का अभिसार सम्पन्न हुआ तब तक नृवंश मे विवाह मर्यादा दृढवद्ध नही हो पाई थी। नर–नाग, देव, दैत्य, असुर मनुष्य, आर्य सभी मे ऐसे ही मुक्त-सहवास का प्रचलन था।[1] असुर संस्कृति के विचार मे लेखक कहता है कि उन दिनों असुर, दैत्यों और दानवो की अपेक्षा, संस्कृति मे आर्यों से अधिक साम्य रखते थे। वे अपने को आर्यों की ही शाखा मे मानते थे। इसी से विवाह–मर्यादा इनमें आर्यों के ही समान थी। उन दिनो असुर महिलाए आर्य पत्नियो से अधिक स्वाधीनता और समानता का उपभोग करती थी।[2] अत यह स्पष्ट है कि अतीत युग के सामाजिक जीवन का चित्र लेखक खीचना चाहता है। रावण गन्धर्व से कहता है : 'मेरा उद्देश्य केवल युद्ध जय ही नही है। मैं आर्यों की परम्परा पर, रक्ष–संस्कृति की स्थापना करना चाहता हूं। आर्यों की खण्ड नीति मुझे सह्य नही है। वे अपना अग काट काटकर आर्यजनो को वहिष्कृत करते हैं। मैं सब आर्य, अनार्य, देव, दैत्य, असुर, नाग, दानव, मानव और आदित्यो तथा गत आगत समागत जनो को एक धर्म एक संस्कृति के नीचे लाना चाहता हूं।[3]' निस्संदेह, यह प्राग्वैदिक काल का सांस्कृतिक और समाजशास्त्रीय अध्ययन है।

अन्य उपन्यास

'सोमनाथ' (१९५४) मे सोमनाथ पर गजनी के आक्रमण का वर्णन है। इसमे महमूद के उपेक्षित व्यक्तित्व को नया रूप दिया है। इसमे लेखक की मानवतावादी भावना प्रकट हुई है। 'आलमगीर' (१९५४) मे औरंगजेब की कथा है। महमूद की तरह आलमगीर मे भावना, कोमलता और संवेदनशीलता को प्रकट किया है। 'गोली' (१९५६) मे राजस्थान के रनिवास मे एक गोली का चित्रण है। 'सोना और खून' (१९६०) ऐतिहासिक उपन्यास है। इसके प्रथम भाग मे अकबर और शाहआलम का इतिहास है। दूसरे भाग मे

---

१. वही, पृ १३।
२ वही, पृ. १६६
३ वही, पृ १९२–१९३।

ईस्ट इडिया कम्पनी का शासन और भारतीय स्वाधीनता के आन्दोलन का सजीव इतिहास है । इसके पात्र निर्जीव कठपुतलिया हैं और 'सोना और खून' को ऐतिहासिक उपन्यास न मानकर इतिहास ही मानना चाहिये । 'सोना और खून' के प्राक्कथन मे शास्त्री जी ने लिखा है 'यदि शरीर ने मुझे धोखा न दिया तो इस उपन्यास को दस भागो मे लिखने का इरादा रखता हू । यह उपन्यास एक शताब्दी का मेरा राजनैतिक आर्थिक और सामाजिक अध्ययन होगा ।[1]' यह दो भागो मे लिखा हुआ उपन्यास मुगल साम्राज्य के पतन से लेकर स्वाधीनता का इतिहास है । इसमे लेखक के अनुसार लेखक का राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक अध्ययन है, उपन्यास नही । अत 'वय रक्षाम' को छोडकर उपन्यासो के क्षेत्र मे चतुरसेन शास्त्री इस विवेच्यकाल मे महत्वपूर्ण उपलब्धि नही दे सके हैं ।

वृन्दावनलाल वर्मा

वृन्दावनलाल वर्मा ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं । यह मानना सरासर गलत है कि समाज या व्यक्ति के यथार्थ को दृष्टि मे रखकर कुछ लेखको की रचनाओ का मूल्याकन सम्भव नही है, क्योकि उन्होने इतिहास से अपने कथानक चुनकर उनमे नये आदर्शों को खडा किया है । ऐसे लेखको मे वृ दावनलाल वर्मा का नाम सबसे महत्वपूर्ण है ।[2] वृ दावनलाल वर्मा कभी व्यक्ति और कभी समाज की ओर रहे हैं इसलिए व्यक्ति और समाज के प्रश्न को लेकर ही इनकी रचनाओ का मूल्यांकन किया जा रहा है । इन्होने गढ़कुढार (१९२७) से दुर्गावती (१९६४) तक ऐतिहासिक उपन्यासो के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण उपन्यास कृतिया दी है और इस विवेच्यकाल के अन्तर्गत 'मृगनयनी' (१९५०), 'टूटे काटे' (१९६४), 'अहिल्या बाई' (१९५५) 'भुवनविक्रम' (१९५७), 'माधवजी सिंधिया' (१९४७), 'रामगढ की रानी' (१९६१) और दुर्गावत्ती (१९६४) इनके ऐतिहासिक उपन्यास हैं जिसमें केवल 'टूटे काटे' समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास हैं और शेष उपन्यासो मे नायको या नायिकाओ की चरित्र गाथा है ।

टूटे-कांटे (१९५४)

कथासार—मोहन अपनी कर्कशा पत्नी रोनी से तग आकर मुहम्मद शाह के मीर बख्शी सादतखा की सेना मे भर्ती हो जाता है । नर्तकी नूरबाई

---

१ चतुरसेन शास्त्री, सोना और खून (१९६०), पृ १ ।

२. आलोचना, २०, पृ. २८ ।

मुहम्मदशाह के हरम से नादिरशाह के डर के कारण मोहन के साथ भाग जाती है। मोहन और नूरबाई, डाकू चिन्तामन जाट के यहां, कुछ दिन तक रहते है। चिन्तामन के घर से निकलने पर चिन्तामन अपने साथियो सहित मोहन और नूरबाई को घेर लेता है और नूरबाई अपने धन की थैली से मोहन को बचाती है। मोहन अपने मित्र शुबराती को डाकू चिन्तामन के चुगल से बचाता है जिसने एक समय मोहन के प्राणो की रक्षा की थी। मोहन और नूरबाई वृंदावन मे अपना जीवन यापन करते हैं और शुबराती मोहन, रानी और नूरबाई को, सहजीवन बिताने का आदेश देकर दक्षिण की ओर चला जाता है। सोने और हीरे की थैली को नूरबाई जमुना मे डालती हुई कहती है, 'सोने और हीरो के इन टुकडो की कहानी कितनी गन्दी है, तुम नही जानते। अब यह बतलाओ कि तुम नापाक नूरबाई को चाहते हो,जो कबर मे गाढ दी गई, या धुली धुलाई सरूपा को जो सामने खड़ी है ?[1]' सोने की थैली टूटे काटे की थैली के समान कसक रही थी। उस टूटे काटे को नूरबाई ने अपने जीवन से अलग कर दिया।

वस्तु–विधान—इस उपन्यास मे मोहन और नूरबाई की कथा मुख्य है और अन्य कथाओ मे मोहन की पत्नी रोनी, चिन्तामन जाट, शुबराती, मुहम्मदशाह, नादिरशाह, सादतखा, बाजीराव और मस्तानी की कथाए हैं। मोहन और रोनी की कथा से उपन्यास प्रारम्भ होता है, किन्तु उपन्यास के विकास मे, मध्य से अन्त तक, मोहन की कथा के साथ, नूरबाई की कथा मिल गई है। अन्त मे सहजीवन से रोनी की कथा का, मोहन और नूरबाई की कथा मे, पर्यवसान हो गया है। सादतखा, मुहम्मदशाह, नादिरशाह, बाजीराव और मस्तानी की कथाओ मे बाजीराव और मस्तानी की कथा का कोई सम्बध नही है और अन्य कथाओ का सम्बध भी नाम मात्र का है। यह भ्रान्त धारणा है कि उपन्यास मे सब कथाओ को एक कथासूत्र मे बाधा है।[2] उपन्यासकार ने युग के सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक जीवन का चित्र उपन्यास मे खीचा है। नादिरशाह की क्रूरता और बर्बरता, बाजीराव पेशवा, निजाम और मुहम्मदशाह के बीच चलने वाले राजनीतिक षडयत्र, साधारण मनुष्य के त्रस्त जीवन और राजमहलो की रगरेलियो का चित्रण करने के कारण, अनेकानेक कथाओ उपकथाओ की योजना लेखक को बनानी पडी है और वस्तु—विधान मे अन्विति की रक्षा करने मे लेखक असफल रहा है।

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा, 'टूटे कांटे', पृ. ३८९।
२. आलोचना १४, पृ १०७।

चरित्र–विधान—मोहन इस उपन्यास का नायक है और नूरबाई नायिका। अन्य पात्रो मे रोनी, मुहम्मदशाह, सादतखा, नारिदशाह, बाजीराव पेशवा और मस्तानी आदि हैं। उपन्यासकार ने कतिपय ऐतिहासिक पात्रो के व्यक्तित्व की रक्षा की है। नूरबाई के चरित्र का विकास आरोपित और अमनोवैज्ञानिक लगता है। नूरबाई और मोहन के व्यक्तित्व मे कोई साम्य नही है। ऐश्वर्य के बीच पली सर्व श्रेष्ठ गायिका नूरबाई और अपढ जाट मोहन के बीच समानता की हल्की सी रेखा भी नही है। धार्मिक पूर्वाग्रह के कारण, लेखक ने नूरबाई के चरित्र का विकास किया है। लेखक का कथन है 'नन्ददास, सूरदास आदि भक्त कवियो मे व्याप्त रस का जो प्रभाव अहिन्दू गायिका पर पड़ा, नूरबाई उसी का प्रतिबिम्ब है और उस प्रभाव के क्रमिक विकास का भी।[1]' नूरबाई के अतिरिक्त मोहन और रोनी के भी चरित्र का विकास नही हुआ है। मुहम्मदशाह, और नादिरशाह के चरित्र मे ऐतिहासिकता का रग है, किन्तु वे प्राणवान पात्र नही हैं। अत उपन्यास के पात्रो मे प्राणो के स्पन्दन का अभाव है और वे केवल घटनाओ और इतिहास के पुतले हैं।

उद्देश्य—उपन्यासकार ने भूमिका मे कहा है 'बाजीराव का दिल्ली पर १७३७ मे यकायक झपट्टा मारना, मीरहसन खा दरबारी की हैकडी और गुण्डागिरी, निजामुलमुल्क और सादतखा की महत्वाकाक्षाए और अपनी अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए नादिरशाह का उन दोनो को न्योता देना, जाटो का उत्थान, शासन की घोर अव्यवस्था इत्यादि प्रसग तो इतिहास मे क्रम बद्ध ब्यौरे के साथ मिले, परन्तु जनसाधारण की आर्थिक स्थिति, जनसस्कृति का उतार चढाव और जन–जन की प्रगति का वर्णन विश्लेषण हाथ न लगा।[2]' अत भारतीय इतिहास के एक अध्याय के सामाजिक जीवन के चित्रण की पृष्ठ भूमि पर लेखक ने सामन्ती जीवन के खोखलेपन को दिखाकर नूरबाई के जीवन द्वारा सात्विकता का सन्देश दिया है।

समाजपरक ऐतिहासिक-यथार्थ का यह सुन्दर उदाहरण है। नूरबाई, सादतखा, मुहम्मदशाह, नादिरशाह, बाजीराव पेशवा और उसकी प्रेमिका मस्तानी की कथाए ऐतिहासिक हैं, किन्तु नूरबाई की हरम से भागने

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा, टूटे काटे, पृ. ७।

२. वृन्दावनलाल वर्मा, टूटे काटे, पृ १।

के बाद की कथा कपोल कल्पित है। मोहन और उसकी कर्कशा पत्नी रोनी, तोता, मोहन के मित्र शुबराती और चिन्तामन जाट की कथाएं कपोल कल्पित हैं। अत. इस उपन्याम मे लेखक ने इतिहास की पृष्ठभूमि पर कल्पना का महल खडा किया है। सामाजिकता के चित्रण मे वादशाह की तडक–भड़क,[1] सामन्तों का नाच और सगीत,[2] मुहम्मदशाह के हरम का ऐश्वर्य,[3] उज्जैन मे साधुओ का अड्डा,[4] मुहम्मदशाह की अकर्मण्यता और विलासता[5] और नादिरशाह का सार्वजनिक वध[6] सभी इसमे है। यह इतिहास के परिपार्श्व मे युग के राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक जीवन को अभिव्यक्त करने से, सामाजिक यथार्थ की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है, इसलिए इसे समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे स्थान दिया गया है।

राहुल सांकृत्यायन

राहुल साकृत्यायन समाजवादी उपन्यासकार हैं इसलिए इनके ऐतिहासिक उपन्यासो मे भी समाजवादी– चेतना के दर्शन होते हैं। बुद्ध और मार्क्स के दर्शन से प्रभावित हुए हैं किन्तु बौद्ध दर्शन से अधिक मार्क्स को महत्व देते हैं। उनका कथन है 'बुद्ध और मार्क्स पर मुझे बोलने को कहा गया। मेरी रुचि का विषय था। आर्य समाज के स्वतत्र विचारो के बाद मैं बुद्ध के पास पहु चा और उनके अनीश्वरवाद विचार, स्वातत्र्यवाद, आर्थिक–समतावाद से प्रभावित हुआ। उसके बाद मार्क्स के विचारो को अपनाना मुझे स्वाभाविक सा मालूम हुआ। बुद्ध का दर्शन इसमे और भी स्वाभाविक सिद्ध हुआ। बुद्ध विश्व को हरएक वस्तु को अनित्य मानते हैं। हर एक चीज क्षण क्षण बदल रही है, वह दुनिया मे है ही नही, वह केवल कल्पना मात्र, मिथ्या भ्रम है। अनात्मवाद अनीश्वरवाद, ग्रन्थ अप्रामाण्यवाद ये सभी आदमी के मानसिक बधन खोल देते है। यह सब होते हुए भी बौद्ध-धर्म या दर्शन वह काम नही कर सकता जिसे मार्क्स की शिक्षा कर सकती है।[7] यही मार्क्सवादी चेतना उनके 'जययौधेय', 'सिंह सेनापति,' 'मधुर स्वप्न' और 'विस्मृत–यात्री' मे मिलती है जिसमे केवल विस्मृत–यात्री (१९५५) इस विवेच्य काल का उपन्यास है।

---

१. वही, पृ. २१।
२ वही, पृ. ३२।
३. वही, पृ. ४५।
४ वही, पृ. ६०।
५. वही, पृ १३९।
६. वही, पृ· १८६।
७ उपमा राहुल स्मृति विशेषाक, अगस्त १९६३, पृ. १६५।

विस्मृत-यात्री (१९५५)

कथासार—इसमे बौद्धयात्री नरेन्द्रयश की यात्रा है, जिसको नरेन्द्र स्वय आत्मकथात्मक शैली मे अभिव्यक्त करते है। वह हमारे ही देश के—अब पश्चिमी पाकिस्तान के— स्वात (उद्यान) की भूमि मे ५१८ ई० मे पैदा हुए थे। उनके भिक्षु होने के बाद भारत सिंहल मध्य ऐशिया, घुमन्तुओं की भूमि और अन्त मे सियान महानगरी मे अपना शरीर छोडा। ...."नरेन्द्रयश उद्यान के क्षत्रिय परिवार के थे। १७ वर्ष की उम्र मे उन्होंने प्रव्रज्या ली और २१ वर्ष की उम्र मे बौद्ध सघ ने उन्हे उपसम्पदा प्रदान की। भिक्षु बनने के आरम्भ ही से उन मे बडी आकाक्षा थी कि उन पवित्र स्थानो की यात्रा करें, जहां बुद्ध की धातुए सुरक्षित हैं। वह बौद्ध-धर्म सम्बधी बहुत से स्थानो मे गए। दक्षिण में सिंहलद्वीप तक गए और उत्तर मे हिमालय से बहुत परे तक।[1]" उनकी यात्रा मे घटनाए घटती रही। चीन मे आकर उन्होने प्राणि मात्र के दु खो के कारणो का पता लगाया।

वस्तु-विधान—यह नरेन्द्रयश का यात्रा विवरण है इसलिए इसमे उपन्यास रस का अभाव है। उपन्यास विकास की निश्चित सीमाओ मे होकर आगे बढता है। विस्मृत यात्री नरेन्द्रयश के जीवन मे औपन्यासिकता का अभाव है। यात्रा विवरणो मे इतिवृत्तात्मकता है। उपन्यास के वस्तु-विधान के तानो बानो से अधिक उनका ध्यान इतिहास और भूगोल की तरफ था। लेखक का कथन है ' 'ऐतिहासिक उपन्यास मे इतिहास और भूगोल या तत्कालीन देश-काल-पात्र की असगति को मैं अक्षम्य-दोष और इसे किसी भी बहाने से लिखना बेकार समझता हू।' 'विस्मृत यात्री' के लिखने मे इन बातो पर कितना ध्यान दिया गया है, इसे सहृदय पाठक समझेगे।[2] ऐतिहासिक अनौचित्य और भौगोलिक दोष से बचने के कारण इस यात्रा-विवरण मे केवल यात्रा—रस की उपलब्धि हो सकी है, उपन्यास—रस की नही।

चरित्र-विधान—चरित्र-विधान उपन्यासकार का इष्ट नही था। नरेन्द्रयश केवल बौद्ध यात्री ही नही, किन्तु समस्त मानवीय चेतनाओ और सवेदनाओ को लेकर उपन्यासकार ने उन्हे अभिव्यक्त किया है। मानवीय दुर्बलताओ और अभावो के बीच उन्होने बौद्ध धर्म मे प्रव्रज्या ग्रहण की और

---

१. विस्मृत-यात्री, भूमिका, पृ. १-२।
२. वही, पृ. १।

अन्त मे उन्होने पता लगाया कि जीवन मे दु खो का कारण क्या है ? नरेन्द्र-यश लेखक के व्यक्तित्व के जीते जागते प्रतीक हैं। लेखक के व्यक्तित्व की समानता नरेन्द्रयश के साथ कर सकते है किन्तु लेखक ने उसके व्यक्तित्व को, अपने व्यक्तित्व से आक्रान्त नही किया है। सम्पूर्ण उपन्यास मे मार्क्स-वाद की सिद्धान्तवादिता ने भी उसको आक्रान्त नही किया है।

उद्देश्य—लेखक का उद्देश्य उपन्यास के नायक के शब्दो मे समय समय पर अभिव्यक्त होता है। नरेन्द्रयश कहते हैं 'मनुष्य के दु:खो को जब नजदीक से देखा जाये और उसके कारणो पर विचार किया जाय, तो उसकी जड बहुत गहरी मालूम होती है। जब तक जड को न हटाया जाये, तब तक पत्ते के नोचने मात्र से रोग को दूर नही किया जा सकता। वस्तुत. रोगियो और अनाथो की सेवा, अहिंसा–व्रत का प्रचार मेरे जीवन का अभिन्न अग बन गया, किन्तु इसका अर्थ यह नही कि मैं अपने काम से सन्तुष्ट था। जब उन पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगता, तो मुझे अपने पर अविश्वास होने लगता। लोग दीन और अनाथ हो, जिससे हमे उनकी सेवा का अवसर मिले, यह कौन सा अच्छा विचार है ? क्या उससे यह अच्छा विचार नही कि कोई दीन और अनाथ दुनिया मे रहे ही नही।[1]' अन्त मे उसने इस रोग का पता लगाया 'दूर करने का एक ही रास्ता है, और वह है पुरुष पुरुष मे धन-सम्पत्ति की विषमता न रह जावे।[2]' अत मार्क्सवादी दृष्टि के आधार पर मानव—समाज के दु.खो के कारणो का पता लगाना ही, उपन्यासकार का उद्देश्य जान पडता है। उपन्यास मे उद्देश्यपरकता का आग्रह है।

सम जपरक ऐतिहासिक उपन्यास

लेखक का कथन है . 'अतीत के समाज को ईमानदारी के साथ वास्त-विक रूप मे रखना मैं अपना प्रथम कर्त्तव्य समझता हू[3]' विस्मृत—यात्री मे लेखक ने अतीत के समाज का चित्र उपस्थित किया है और अन्त मे नरेन्द्र के माध्यम से समाजवादी भावना को अभिव्यक्त करते हुए कहा है . 'मै जब दु ख—सत्य की व्याख्या करने लगता हू तो परम्परा से सुनाई बातो को कहने मे भारी सकोच होता है। जन्म दु ख है, जरा दु.ख है, मरण दु:ख है, प्रिय का

---

१. विस्मृत-यात्री, पृ ३६७-३६६।
२. वही, पृ ६७०।
३ वही, पृ. १।

वियोग और अप्रिय का सयोग दु:ख है। इतना ही कहने से दुख का स्वरूप प्रकट नही होता है। दुख वह है, जो हमारी आखो के सामने बहुजन परिश्रम करते करते अपने अर्जित अन्न—घन का उपभोग नही कर सकता, उसे भूखा रहना पड़ता है, लुटेरे उसे लूट ले जाते हैं।[1]' लेखक ने बौद्ध धर्म के दु.खवाद के सिद्धान्त को मार्क्सवाद के धरातल पर स्थापित किया है। अतः समाजवादी चेतना की अभिव्यक्ति के कारण समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे विस्मृत यात्री को स्थान देना समीचीन जान पड़ता है।

अमिता (१९५६)

कथासार—'अमीता' यशपाल का ऐतिहासिक उपन्यास है। अशोक प्रथम बार कलिंग पर आक्रमण करता है तो कलिंग के सिपाही बहादुरी से लडते हैं किन्तु सम्राट की मृत्यु हो जाती है। कलिंग की महारानी बौद्ध धर्म मे दीक्षित हो जाती है। महामत्री और सेनापति महारानी की पुत्री अमिता के नाम पर शासन करते हैं। अन्तत अशोक विजयी होता है और अमिता की बालसुलभ सरलता से उसका हृदय परिवर्त्तन हो जाता है।

वस्तु–विधान—इस उपन्यास मे अमिता के इर्दगिर्द उपन्यास की घटनाए घूमती है। अमिता की कथा मुख्य है और प्रासगिक कथाओ मे दास मोद, हिता, महारानी, यूथप, महामात्य, आचार्य सुकण्ठ, नगर सेठ सौमित्र, दास मोद और अशोक की कथाए हैं। अमिता की कथा को आगे बढाने वाली मुख्य कथाओ मे महामात्य आचार्य सुकण्ठ, महारानी मन्दा और दासी हिता की कथाए हैं। आचार्य सुकण्ठ, दासी हिता और महारानी की कथाए पताकाए हैं, क्योकि वे प्रारम्भ से अन्त तक चलती हैं। यूथप की कथा अमिता के चरित्र को अभिव्यक्त कर विलीन हो जाती हैं। दासी हिता और दास मोद की कथा को युग की दास प्रथा की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त किया है। नगर सेठि सौमित्र की कथा के आधार पर युग की द्वन्द्वात्मक स्थिति अभिव्यक्त होती है। अत मे अशोक की कथा के आधार पर, उपन्यासकार ने अपने उद्देश्य की स्थापना की है। बभ्रु को सांकल से बांधना, अमिता का यूथप को सांकल से बाधना, महामात्य द्वारा दुर्ग को श्रमण और भिक्षुओ द्वारा खाली करवाना, महारानी का आदेश देना कि सार्थ का सम्पूर्ण

---

१. विस्मृत-यात्री, पृ० ३८५।

घन महाबोधि विहार मे राज्य मुद्रा मे सुरक्षित रहे, हिता को दण्डित करना, महारानी को राज्यप्रासाद से निकालना, अशोक का आक्रमण उपन्यास की मुख्य घटनाए हैं। अमिता को कथा का केन्द्र मानकर चलें तो दासी हिता और दास मोद और नगर सेठि सौमित्र की कथाओ का उससे अधिक सम्बन्ध नही है, अन्यथा सभी घटनाए उसके जीवन से सम्बंधित है। इतिहास के परिपार्श्व मे युद्ध की विभीषिका को दूर कर, शान्ति स्थापना के उद्देश्य के आधार पर उपन्यास मे अनेकानेक घटनाए निरर्थक जान पडती हैं। उपन्यास का उद्देश्य आरोपित जान पडता है, इसलिए उपन्यास का अंतिम भाग, शेष उपन्यास से कटा हुआ प्रतीत होता है। जहा तक उपन्यास मे घटनाओ की तर्क सगत योजना और स्वाभाविकता का प्रश्न है, वहा शेष उपन्यास के साथ अंतिम घटना का तर्क सगत योजना नही है। उपन्यास मे अस्वाभाविक घटनाओ का अभाव है। अधिकाश घटनाओ का अमिता से सम्बन्ध होने के कारण अन्विति मे अधिक बाधा नही पहुची है।

चरित्र-विधान—यह नायिका—प्रधान उपन्यास है और अमिता इस उपन्यास की नायिका है। अन्य पात्रो मे महारानी नन्दा, आचार्य सुकण्ठ, श्रेष्ठि सौमित्र, दासी हिता, दास मोद और अशोक आदि हैं। सम्पूर्ण उपन्यास मे अमिता मे बाल सुलभ सरलता और बालहठ की अभिव्यक्ति हुई है। महारानी नन्दा बौद्ध धर्म के प्रति आस्था रखने वाली नारी है और आचार्य सुकण्ठ मे देश प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। दासी हिता और दास मोद उस युग की दास—प्रथा के परिचायक हैं। श्रेष्ठि सौमित्र उस युग के शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। अशोक के ऐतिहासिक रूप को अभिव्यक्त करते हुए हृदय परिवर्तन के सिद्धान्त का पुतला बना दिया है। नायिका अमिता, महारानी नन्दा और आचार्य सुकठ आदि पात्र लेखक की सिद्धान्त-वादिता के आग्रह से मुक्त हैं, किन्तु दास मोद और दासी हिता के द्वारा लेखक युग के शोषण का चित्र खीचना चाहता है। दासी हिता और दास मोद की प्रेम कहानी ने उनकी मानव हृदय की रागात्मक वृत्तियो का परिचय दिया गया है। अमिता एक सप्राण पात्र है किन्तु वह पूर्ण रूप से सपाट है, उसके चरित्र मे उतार चढाव का अभाव है। महारानी नन्दा और आचार्य सुकठ, दासी हिता, दास मोद और श्रेष्ठि सौमित्र सभी सपाट हैं, जीवन के उतार चढावो का उनमे अभाव है। आचार्य सुकण्ठ और महारानी नन्दा राजनीति के कुचक्र बनकर रह गए है और अशोक की तरह उनमे भी लेखक

प्राण चेतना नही फूंक सका है । सभी 'प्रतिनिधि परिस्थितियो के प्रतिनिधि पात्र' हैं और वे अपनी अपनी परिस्थितियो का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

उद्देश्य—लेखक ने प्राक्कथन मे स्पष्ट किया है कि 'युद्धो की सम्भावना समाप्त कर देने और चिरस्थायी विश्व-शान्ति के लिये. केवल देश की ही नही बल्कि ससार के सभी राष्ट्रो की जनता व्याकुल है । अनैतिक विचार और व्यवहार व्यक्ति और समाज के शरीर को घुन और क्षय रोग के समान क्षीण कर देते हैं । व्यक्ति और समाज के विकास के लिए नैतिक बल की अनिवार्य आवश्यकता है ।[1]' आधुनिक युग की विश्व—शाति की समस्या को ऐतिहासिक परिपाश्व मे प्रस्तुत किया हैं । अशोक अमिता के समक्ष आत्म-समर्पण करता हुआ कहता है 'सम्राट अशोक प्रतिज्ञा करता है, वह किसी से छीनेगा नही, किसी को डराएगा नही, किसी को मारेगा नही । अब अशोक हिसा और युद्ध से विजय की कामना नहीं करेगा । वह कलिग की विजय महारानी की भाति निश्छल प्रेम से ससार के हृदय को विजय करेगा ।[2] युद्ध की विभीषिका का प्रत्याख्यान और शान्ति की स्थापना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है । यह उपन्यास का उद्देश्य आरोपित जान पडता है ।

इस उपन्यास मे ऐतिहासिक यथार्थ की अभिव्यक्ति हुई है। यह इतिहास की द्वन्द्वात्मक-भौतिकवादी दृष्टि है । मानव समाज की बदलती परिस्थितियो मे सामन्तवादी विचारधारा किस प्रकार दास-प्रथा को पनपाकर उनका शोषण कर रहे थे, इसका सही चित्र इस उपन्यास मे मिलता है । मार्क्सवाद के अनुसार दास प्रथा का चित्र इस उपन्यास मे है । हिता की मा हिता को कहती है 'तू राजकुल की दासी है, स्वतन्त्र वेश्या नही है । प्रेम और प्रणय गणिकाओ और वेश्याओ के विनोद होते हैं । कुल-कन्याओ को विवाह मे जिसे सौंप दिया जाये, उसी से प्रेम करना होता है और दासी को जो खरीद ले, उसकी सेवा करना धर्म है ।[3] दास प्रथा के अतिरिक्त युद्ध मे पूंजीपतियो के पूंजी बचाने के षड्यत्र के चित्र भी इस उपन्यास मे मिलते हैं । युद्ध समाज के जीवन के लिए घुन और क्षयरोग हैं इसलिए इतिहास के परिपार्श्व मे समाज मे शाति की स्थापना ही इसका प्रयत्न होने के कारण, समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे इसे स्थान दिया है ।

---

१. यशपाल, अमिता, पृ. ६ ।

२ यशपाल : अमिता, पृ. २३४ ।

३ वही, पृ ५७ ।

शतरंज के मोहरें (१९५९)

कथासार—'शतरज के मोहरे' (१९५९) अमृतलाल नागर का ऐतिहासिक उपन्यास है। उपन्यास का प्रारम्भ १९५७ वे समय अवध के नवाव नाजिम साहव के वसूली के कार्यक्रम और लूट खसोट के साथ हुआ है। रुस्तम नगर मे ऐसा ही कुहराम मचा और ऐसी दशा पूरी नवावी मे थी। रुस्तमखां की वीवी दुलारी अपने प्रेमी नईमखा से अभिसार करती पकडी गई और गुलाटी वीवी के कारण, शाही घराने मे वादशाह वेगम के पास, वादशाह वेगम के पोते की धाय के रूप मे पहुँच गई। साहवे आलम नसीरुद्दीन ने दुलारी को देखा और वह उसके मन प्राणो पर छा गई। नसीरुद्दीन को दुलारी शतरज के मोहरे की तरह नचाती रही। रेजीडेंट की पत्नी मिसेज रिकेट्स ने नसीरुद्दीन को अपना खिलोना वना लिया। 'मिसेज रिकेट्स ने दुलारी की तरह ही नसीरुद्दीन के शारीरिक पुसत्व से आध्यात्मिक नाता जोडने में सुविधा प्राप्त की।'[1] दुलारी के पश्चात् कुदसिया वेगम ने नसीरुद्दीन को फासा। कुद्सिया वेगम के विरुद्ध अन्य लोगो ने नसीरुद्दीन को भरा और झगडे के फलस्वरूप कुद्सिया वेगम ने आत्महत्या करली। नसीरुद्दीन और उसकी सौतेली मा, वादशाह वेगम मे अनबन हो गई। १९ अप्रेल १८३५ ई० के दिन शाही सेना ने वादशाह वेगम को कोठी पर घेर लियो और अन्तत वादशाह वेगम को झुकना पडा। 'नसीरुद्दीन हैदर वेहद घवरा उठा, चिड़चिडा हो उठा, टूटने लगा। दिन भर शराव यही उसके जीवन का एक मात्र सहारा था। मोहरवन्द शराव खास उसी की निगरानी मे रहती थी।'[2] भयानक पागलपन की स्थिति से गुजर कर नसीरुद्दीन हैदर की मृत्यु हो गई।

वस्तु-विधान—नसीरुद्दीन और दुलारी की कथा इस उपन्यास की मुख्य कथा है और अन्य कथा इन दोनो की कथाओ को आगे वढाने मे सहायक होती है। दुलारी की कथा स्वतन्त्र रूप से आगे वढती है और उपन्यास के मध्य नसीरुद्दीन की कथा से मिल जाती है। अत. दुलारी उपन्यास के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक है, नसीरुद्दीन हैदर नही। अन्य कथाओ मे दुलारी के पति रुस्तमअली, प्रेमी नईम, गुलाटी वेगम, कुद्सिया वेगम, गयसुद्दीन हैदर, रेजिडेंट और उसकी पत्नी मिसेज रिकेट्स और वादशाह वेगम की

---

१ श्री अमृतलाल नागर, 'शतरंज के मोहरे', पृ. २६२।
२. वही, पृ. ३६३।

कथायें इस उपन्याम मे अभिव्यक्त हुई हैं। नमीरुद्दीन की कथा को कथा का केन्द्र माने तो दुलारी और गयासुद्दीन हैदर के जीवन की घटनायें व्यर्थ जान पडती हैं। नसीरुद्दीन और दुलारी की कथाओ को कथा का केन्द्र मानने पर अनगिनत घटनाओ के बीच भी अन्विति दिखलाई पडती है। दुलारी का नईम के साथ अभिसार, गुलाटी वेगम का दुलारी को पकड़ना, दुलारी का शाही महलो मे प्रवेश, दुलारी और नसीरुद्दीन के बीच प्रगाढ सम्बन्ध स्थापित होना, नसीरुद्दीन और मिसेज रिकेट्स की ठिठोलिया, नमीरुद्दीन का दुलारी से मुह मोड़कर कुद्सिया वेगम से सम्वन्ध स्थापित करना, कुद्सिया वेगम की हत्या के पश्चात् नसीरुद्दीन का पागल होकर मृत्यु को प्राप्त करना इस उपन्यास की मुख्य घटनाये हैं। उपन्यासकार वताना चाहता है कि वादशाह शतरज के मोहरे हैं और इस उद्देश्य को लें तो अनगिनत घटनाये व्यर्थ दिखलाई पडती हैं। दुलारी का रुस्तम अली के यहा के जीवन से इस उद्देश्य का कुछ भी सम्वन्ध नही जान पडता है किन्तु उपन्यामकार युग के परिपार्श्व मे वादशाह को शतरज का मोहरा वताना चाहता है इसलिए युग की अभिव्यक्ति के लिए घटनाओ के सम्बन्ध सूत्र जोडता चला गया है। युग के परिपार्श्व मे वादशाह को शतरज का मोहरा वताकर नसीरुद्दीन और उसकी प्रेमिका की कहानी कही है और इस दृष्टि से उपन्यास की घटनाओ मे अन्विति है। स्मिथ द्वारा मूलनी के माथ वलात्कार सम्वन्धी घटनाओ का मुख्य वस्तु से कोई सम्वन्ध नही है। इतना होने पर भी इतने वडे उपन्यास मे पाठक जरा भी नही ऊवता है और न कही आकर्षण खोता है। युग की अभिव्यक्ति के फलस्वरूप सम्वन्ध-सूत्र जोडने पर भी वस्तु-विधान मे अन्विति का अभाव है।

चरित्र-विधान—नसीरुद्दीन हैदर और दुलारी नायक और नायिका हैं और अन्य पात्रो मे रुस्तमअली, नईम, गुलाटी वेगम, कुद्सिया वेगम, गयासुद्दीन, वादशाह वेगम, रेजिडेट और मिसेज रिकेट्स और गयासुद्दीन हैदर आदि है। नसीरुद्दीन हैदर और गयासुद्दीन वादशाह के रूप मे शतरज के मोहरे पुंसत्वहीन हैं। नसीरुद्दीन एक टूटा व्यक्तित्व है जो टूटन, निराशा, सशय और अनास्था को चारो ओर देखता है। वह अपने युग की उलझनो मे उलझ गया है और उसमे निकलने का उसे कोई रास्ता नही मिलता। उसमे टूटन, घुटन और छटपटाहट है। सहृदय पाठक नसीरुद्दीन हैदर की छटपटाहट के प्रति सवेदनशील हो उठता है इसलिए नायक के रूप मे नसीरुद्दीन, अभावो, कमियो और दुर्बलताओ के बावजूद एक प्राणवान पात्र है। गया-

सुद्दीन केवल शतरज का मोहरा बनकर रह जाता है। दुलारी एक सशक्त नारी के रूप मे प्रकट होती है जो साधारण नारी से बादशाह बेगम बन जाती है। गयासुद्दीन की बादशाह बेगम राजनीतिक कुचक्र का केन्द्र बन जाती है। कुद्सिया बेगम केवल थोडे काल तक दुलारी का स्थान लेती है किंतु उसकी मृत्यु पर पाठक सवेदनशील हो जाता है। रेजिडेंट की पत्नी मिसेज रिकेट्स की ठिठोलिया उसकी बचकाना प्रवृत्तियो की परिचायक हैं। उपन्यासकार युग का चित्र प्रस्तुत करना चाहता है, किंतु पात्रो को सजीव व्यक्तित्व प्रदान किये हैं। गयासुद्दीन और नसीरुद्दीन बादशाह, नईम प्रेमी, कुद्सिया बेगम और दुलारी नसीरुद्दीन की प्रेमिका होते हुए भी व्यक्ति-रूप मे अभिव्यक्त हुई है। उनमे अपनी वैयक्तिक विशेषताये हैं। गयासुद्दीन और नसीरुद्दीन, कुद्सिया बेगम और दुलारी अलग-अलग पहचाने जा सकते हैं। नसीरुद्दीन, दुलारी, नईम और रुस्तम-अली के जीवन उतार-चढावो से भरे पडे हैं इसलिए ये पात्र सपाट न होकर विकसनशील चरित्र हैं। इस उपन्यास मे लेखक ने पात्रो के अन्तर को खोलकर रख दिया है। यह आंशिक सत्य है कि नागर जी केवल पात्रो की सकटकालीन स्थितियो के कुशल चित्रकार हैं।[1] यह सही है कि इन्होने पात्रो की घुटन, टूटन और छटपटाहट को सुन्दरता से अभिव्यक्त किया है, किंतु हर स्थिति मे पात्र के अन्तर मे घुसकर पात्रो मे प्राण फूकना नागर जी का कार्य रहा है। लेखक के पात्र उसके मतवाद से मुक्त होते हैं और उनमे जीवन स्पन्दित होता है।

उद्देश्य—उन्नीसवी शताब्दी के मध्य मे घुटन भरे सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। "अग्रेजो के छलकपट भरे राजनीतिक पाश के क्रमश कड़े पडते जाने वाले युग में, नवाबो की इस टूटन को गयासुद्दीन और नसीरुद्दीन की टूटन के माध्यम से दिखाकर, उस युग की स्थिति को पाठक के मन मे उतारने मे सफल हो जाता है।[2]" "नवाबो का लगान वसूली के समय सेना के शोषण नवाबो के यहा बदियो का जीवन सभी इस उपन्यास मे है।" नवाबो को अपनी विलासता और शान दिखाने के लिए रुपयो की आवश्यकता थी, नवाबी—दरबार के अफसरो करिन्दो की लूट और रिश्वत की आवश्यकता थी, अग्रेजों को हडपने की हविश थी ही—इन सब बड़े लुटेरो मे आए दिन दबायी जाकर अवध की प्रजा हर

---

१. आलोचना ३५, पृ. १४४।

२. आलोचना, ३५ : पृ. १४५।

तरह से ग्रस्त हो चुकी थी।[1] अमीरो के सामाजिक जीवन को बताता हुआ लेखक कहता है कि अमीरो के घर का यह आम चलन था कि एक या दो तवायफें या खूबसूरत लडके अपनी नौकरी मे रखते थे। नीची जाति की स्त्रियो का उपभोग सामन्ती लोक के अलिखित विधान के अनुसार उचित था और विलासिता के बारे मे कहा है कि विलास मे सामाजिक जीवन डूबकर सड रहा था। अनेक निर्धन किन्तु कुलीन घरो के युवक गुण्डे बन गए थे। पिताओ और गुरुजनों से बहुत से उच्छ्खृल नौजवान नाते की प्रतिष्ठा तोडकर उद्दण्ड और अत्याचारी बन गए थे।[2] कही डाकुओ,[3] और कही सुन्दर स्त्रियो पर बलात्कार[4] आदि की चर्चाए उपन्यास के पृष्ठो मे भरी पडी है। सामाजिक जीवन की पृष्ठभूमि पर उन्नीसवी शताब्दी के मध्य मे नवाबों के जीवन का चित्रण ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है।

नवाबो के जीवन को शतरज के मोहरे बताते हुए युग की सामाजिक स्थिति का चित्रण इस उपन्यास मे मिलता है। युग का समस्त सामाजिक जीवन हमारी आखो के समक्ष रगमच की तरह उपस्थित हो जाता है। यह सही है कि नागर जी शतरज के मोहरे मे उन्नीसवी शताब्दी के नवाबी जमाने का एक ऐसा सम्यक् चित्र प्रस्तुत करते हैं कि युग के आचार विचार, भाषा के लहजे, आकाक्षाए, सघर्ष, सहयोग, उन्नति–पतन गरज कि तात्कालिक सारा जीवन हमारी आखो के सम्मुख एक पूरा रगमच ही उपस्थित कर देता है।[5] व्यक्ति समाज मे डूब जाता है और अभिव्यक्ति सामाजिक जीवन को मिलती है, इसलिए समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे इस उपन्यास को स्थान दिया गया है।

हजारीप्रसाद द्विवेदी

हजारीप्रसाद द्विवेदी समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासकार है। द्विवेदी जी को साहित्य के सामाजिक मूल्यो के प्रति आस्था है। इनका कथन है कि साहित्यकारो ने यह अनुभव किया कि है हमारे लिखने का लक्ष्य सामाजिक 'मनुष्य' का मगल विधान है। मनुष्य एक है। विषमताए मनुष्य मात्र को

---

१ शतरज के मोहरे, पृ. ८९।

२. वही, पृ ११८–११९। ३. वही, पृ २०१।

४ वही, पृ २०२।

५. आलोचना ३५, पृ. १४३।

प्रभावित करती है। सारी मनुष्य जाति को एक अखण्डनीय और अविच्छेदनीय मानकर ही हम उस सामाजिक मगल का मार्ग सोच सकते हैं जिसे उपलब्ध किये विना मनुष्य का त्राण नही है। हमने 'मनुष्य' को—सामाजिक मनुष्य को-इसी मृत्यु लोक मे सुखी और समृद्ध, अज्ञान और परमुखापेक्षिता से मुक्त बनाने के महान् सिद्धान्त को स्वीकार किया है। व्यक्तिगत सस्कारो और रूढियो के कारण हमारे भीतर मतभेद बहुत है। पर आज के किसी साहित्यकार से यदि आप कहे कि उसकी रचना सामाजिक मगल के आदर्श से च्युत है तो वह लज्जित अवश्य होता है।[1] 'चारुचद्र लेख' मे भी लेखक की सामाजिक-चेतना के दर्शन होते हैं।

चारुचंद्र लेख (१९६३)

कथासार—आत्मकथात्मक शैली मे लिखे गए इस उपन्यास की कथा राजा सातवाहन द्वारा लिखी गई है। मुनि श्री जिनविजय द्वारा सम्पादित प्रबन्ध चिन्तामणि मे वर्णित चन्द्रलेखा की कथा को लेखक ने आधार माना। आखेट मे सातवाहन को चन्द्रलेखा मिल जाती है। चन्द्रलेखा के रूप, व्यक्तित्व और शब्दो से वह सम्मोहित हो गया। चन्द्रलेखा और राजा सातवाहन का विवाह हुआ। रानी के आलिगन से राजा को अखण्ड सुखानुभूति अनुभूत हुई। आनन्द की स्रोतस्विनी उसके भीतर प्रवाहित हो रही थी। एक दिन राजा सीदी मौला को ढूंढने निकल पडे, क्योकि सीदी मौला विचित्र मनुष्य थे। सीदा मौला ने राजा को अपने भूत जीवन की कथा सुनाई। सीदी मौला ने राजा को बताया कि वे रसायन विद्या के जानकार हैं, सोने को ताबा और ताबा को सोने मे बदल सकते हैं। उन्होने राजा को कहा कि तुम्हारे भीतर के अहम् को निकाल कर फेंकना पड़ेगा। यह कहते-कहते सीदी मौला समाधिस्थ हो गए।

रानी चन्द्रलेखा नागनाथ-तरुण तापस की खोज मे थी और वह उन्हे मिल गया। नागनाथ ने राजा को बताया कि रानी साधारण नारी नही है, रानी उसकी सिद्धि है। नागनाथ ने शत्रुओ को पदाक्रान्त कर चक्रवर्ती होने का आदेश दिया। विद्याधर भट्ट ने राजा और रानी को शक्ति सचय के लिए उपदेश दिया। आर्यावर्त्त को शत्रुओ से बचाने का उपदेश दिया। विद्याधर भट्ट ने कहा कि रानी को अक मे लेकर प्रभजन की भाति बहो और मेघ की भाति बरसो। राजा रानी की रूप धारा मे ढरक गया किन्तु जगन्नायक भट्ट की वाणी सुनकर रणभूमि मे जाने के लिए निकल पडा।

---

१. आलोचना २, पृ. ४६।

रानी ने भी राजा के साथ युद्ध मे जाने की आज्ञा मागी। राजा ने वीरो को धीरवर्मा के श्लोक का अर्थ कर व्याख्यान दिया। रानी ने भी सैनिको को उद्बोधित किया। सैनिको मे उत्साह की भावना आ गई और समस्त मालवपद जाग उठा। शत्रु को लौट जाना पडा। विपत्ति टल गई। राजा और रानी उज्जयिनी गए और वहा गर्दताल देखा।

नागनाथ उज्जयिनी मे पहले से ही विद्यमान थे। वे मानते थे कि बत्तीस लक्षणो से सम्पन्न युवती के हाथो से मर्दित होकर रस सिद्ध हो सकता है। रानी रसमर्दन के लिए तैयार हो गई। रानी की सासारिक बातो मे रुचि नही रही। उसके शब्दो मे 'मैं' शब्द विरल हो गया। इस रस के द्वारा नागनाथ मानव मात्र के दु ख, शोक और वेदना को दूर करना चाहते थे। छ. महिनो तक राजा कालिजर, कान्यकुब्ज, काशी और मगध का चक्कर लगाते रहे। राजा को अनुभव होता कि रानी को न रोककर क्या वे पति धर्म से च्युत नही हो रहे हैं? मुल्तान की सेना पुनः आ गई थी। विद्याधर भट्ट ने उसे कुचलने का आदेश दिया। राजा को रानी का पत्र मिला।

चन्द्रलेखा के लेख से पता लगा कि वह भी अमोघवज्र की तापसबाला की तरह पति को छोडकर सिद्धियो के चक्कर मे पडी है। अवश चेतना से अभिभूत राजा एक दूसरे ही लोक मे जा खडा हुआ। रानी के लेख से पता लगा कि रानी सिद्धयोगिनी हो गई। राजा रानी से मिलने नारी माता के यहा पहुच गए। रानी मिलने पर फफक कर रो पडी। शत्रु ने पुन आक्रमण किया। अलहना रक्त से लथपथ हो गया, मैनसिंह अर्थात मैना की बुद्धि, सेवा, सहास और रणकौशल प्रकट हुआ। मैना रानी की गोद मे सज्ञाशून्य हो गई। पुन. लडाई हुई और मैना रक्त से भीगी हुई रानी की गोद मे पडी थी।

वस्तु—विधान—यहा राजा सातवाहन और रानी चन्द्रलेखा की कथा मुख्य है। इस कथा का विकास करने के लिए अन्य पात्रो की कथाओ का उपयोग किया गया है। अन्य पात्रो की कथाओ मे घटनाओ का अभाव है। अन्य कथाओ मे नागनाथ, सीदी मौला, विद्याधर भट्ट, अमोघवज्र, नारी माता, बोधा और मैना की कथाएँ हैं।

सातवाहन और चन्द्रलेखा की जीवन कथा के इर्दगिर्द प्रासगिक कथाए घूमती हैं। प्रासगिक कथाओ मे सीदी मौला, विद्याधर भट्ट, नागनाथ, अलहना, अमोघवज्र, जगन्नायक भट्ट और मैना आदि की कथाए हैं। यह सही है कि उपन्यासकार ने इन कथाओ को कही कही स्वप्न, कल्पना, मूर्च्छागत

चेतना बोध, शकुन–अपशकुन, भविष्यवाणी, ज्योतिष आदि अलौकिक तत्वो से जोडा है किन्तु उपन्यास घटनाओ का अजायबघर हो गया है। इसमें जिस ससार की रचना की है, वह पूर्णत' अविश्वमनीय है। अतिलौकिक और अतिमानवीय घटनाओ से उपन्यास भरा पड़ा है। असम्भाव्य घटनाए यथार्थ जीवन से दूर हटाकर मायावी ससार मे खडा कर देती हैं। चन्द्रलेखा का आकाशमार्ग मे उडना, गुरु गोरखनाथ और त्रिपुर भैरवी का सवाद सुनना आदि घटनाए अस्वाभाविक हैं। इस बात की शका लेखक को पहले ही थी। लेखक ने कथा-मुख मे स्पष्ट कहा है कि आजकल के लोग इन बातो पर विश्वास नही करने और उनकी कथा श्रद्धा की दृष्टि से नही देखी जाएगी[1] उपन्यासकार को उपन्यास की कथा की प्रामाणिकता की शका उठी थी इस-लिए अस्वाभाविक और असम्भाव्य घटनाओ को मनोवैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करके, सम्भाव्य और स्वाभाविक बनने का प्रयत्न किया है। चन्द्रलेखा का चरित्र उपन्यास का केन्द्र-विन्दु है। इसलिए युद्ध की घटनाओ का अधिक सम्बन्ध चन्द्रलेखा से नही है। उपन्यास दो धाराओ—कोटि वेधी रस और युद्ध की ओर वहा है इसलिए इन दो दिशाओ की ओर बढने वाली घटनाओ को राजा सातवाहन के द्वारा जोडा है। अनेकानेक घटनाओ, लम्बे-लम्बे वर्णनो और भाषणो के बावजूद उपन्यासकार ने वस्तु-अन्विति की रक्षा करने की चेष्टा की हैं।

चरित्र–विधान—चन्द्रलेखा उपन्यास की नायिका है इसलिए इसे नायिका प्रधान उपन्यास मानना चाहिए। राजा सातवाहन इस उपन्यास का नायक है। उपन्यास के सभी पात्र अपनी विशेषताओ से विभूषित हैं। धीर शर्मा पांडित्य, विद्याधर शर्मा कूटनीतिज्ञ, चन्द्रलेखा सौंदर्य, राजा सातवाहन शूर और उदार पति, बघेला रजपूती आन, मैनसिंह बुद्धि, सेवा, साहस और बल, नारी माता भक्ति और सीरी मौला अलौकिक सिद्धियो के प्रतीक हैं। समस्त बारीकियो के साथ प्रत्येक पात्र की विशेषतायें अंकित हैं इसलिए उपन्यास का चरित्र-विधान प्रयत्न साध्य है। उपन्यास के चरित्र विधान का आधार मनोवैज्ञानिक है, लेखक ने वैयक्तिक चेतना के स्तरो अर्थात् पात्रो के अन्तर्लोक, परिस्थितियो मे उनके सघातो प्रकृति के प्रति उनकी अन्तरानुभूति-मूलक रागवृत्तियो को ज्योतिर्मय किया है। इस दृष्टि से यह कृति 'अन्तरानु-

---

१. हजारीप्रसाद द्विवेदी : चारुचन्द्रलेख . पृ १०।

भूति का महाकाव्यत्व को लिए है।[1] मनोवैज्ञानिक अवतारणाओ के कारण पात्र मुक्त हैं और उनमे विकास की स्थितिया हैं।

उद्देश्य—उपन्यासकार का उद्देश्य सामन्त युग की सामन्त चेतना और धर्म साधना का चित्र आकना ही इस उपन्यास का लक्ष्य है। धर्म साधन का चित्र आकने मे वज्रयानी सिद्धो तथा नाथपथी योगियों की तत्र मत्र साधना आदि को भी लेखक ने उपस्थित किया है। दो साधनाओ के प्रसग में शाक्त और शैव—मतो के चित्रण भी हुए है। जैन साधनाओं के उल्लेख भी हुए हैं। मध्ययुगीन धर्म साधना का पूर्ण रूप इसमे वर्णित है। लेखक मध्ययुगीन साधनाओ का आस्वाद कराना चाहता है। सिद्धियो की कामुकता,[2] वैयक्तिकता,[3] वर्णाश्रम धर्म पर कुप्रभाव,[4] पाखण्ड और मिथ्याचार'[5] अधार्मिकता[6] देश की दरिद्रता रोग और शोक[7] आदि बुराइयो के उल्लेख भी हुए हैं। धार्मिक साधनाओ के अतिरिक्त मध्ययुग का वीरत्व भी इस उपन्यास मे ध्वनित हुआ है। मुख्य कथा धर्म साँधना से सम्वधित है, वीरत्व से नही। उपन्यास के सभी पात्र देश की आजादी के लिए प्राणप्रण से लगे रहते हैं। सातवाहन, चद्रलेखा और अन्य सभी गौण पात्रो मे देश प्रेम और वीरता का स्वर ध्वनित होता है। देश की दुर्दशा को दूर करने के लिए समस्या का समाधान भी है। 'इस देश को वही बचाएगा जिनके पास सहज जीवन का कवच होगा, सत्य की तलवार होगी, धर्म का रथ होगा, साहस की ढाल होगी, मैत्री का पाश होगा, धर्म का नेतृत्व होगा।[8]' अत' मध्ययुगीन सामाजिक, धार्मिक जीवन का चित्र खीचकर, वर्त्तमान भारत की कई समस्याओ और उनके समाधान का चित्र प्रस्तुत करना, उपन्यास का लक्ष्य रहा है। 'इसमे अतीत का इतिहास है, वर्त्तमान का विचार है एव भविष्य के लिए

---

१. आलोचना ३०, पृ. १३०–१३१।

२. चारुचन्द्र लेख, पृ. १६२।

३. वही, पृ. १६१।

४.. वही, पृ० १५७।

५. वही, पृ० ३०८।

६. वही, पृ० ३०७।

७ वही, पृ० ७।

८. चारुचन्द्र लेख, पृ० ३४२, २४८।

चेतना वोध, शकुन–अपशकुन, भविष्यवाणी, ज्योतिष आदि अलौकिक तत्वो से जोडा है किन्तु उपन्यास घटनाओ का अजायबघर हो गया है। इसमे जिस ससार की रचना की है, वह पूर्णत अविश्वसनीय है। अतिलौकिक और अतिमानवीय घटनाओ से उपन्यास भरा पडा है। असम्भाव्य घटनाए यथार्थ जीवन से दूर हटाकर मायावी ससार मे खडा कर देती हैं। चन्द्रलेखा का आकाशमार्ग मे उडना, गुरु गोरखनाथ और त्रिभुर भैरवी का सवाद सुनना आदि घटनाए अस्वाभाविक हैं। इस वात की शका लेखक को पहले ही थी। लेखक ने कथा-मुख मे स्पष्ट कहा है कि आजकल के लोग इन बातों पर विश्वास नही करते और उनकी कथा श्रद्धा की दृष्टि से नही देखी जाएगी[1] उपन्यासकार को उपन्यास की कथा की प्रामाणिकता की शका उठी थी इस-लिए अस्वाभाविक और असम्भाव्य घटनाओ को मनोवैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करके, सम्भाव्य और स्वाभाविक वनने का प्रयत्न किया है। चन्द्रलेखा का चरित्र उपन्यास का केन्द्र-विन्दु है। इसलिए युद्ध की घटनाओ का अधिक सम्वन्ध चन्द्रलेखा से नही है। उपन्यास दो धाराओ—कोटि वेधी रस और युद्ध की ओर वहा है इसलिए इन दो दिशाओ की ओर बढने वाली घटनाओ को राजा सातवाहन के द्वारा जोडा है। अनेकानेक घटनाओ, लम्बे-लम्बे वर्णनो और भाषणो के वावजूद उपन्यासकार ने वस्तु-अन्विति की रक्षा करने की चेष्टा की है।

चरित्र–विधान—चन्द्रलेखा उपन्यास की नायिका है इसलिए इसे नायिका प्रधान उपन्यास मानना चाहिए। राजा सातवाहन इस उपन्यास का नायक है। उपन्यास के सभी पात्र अपनी विशेषताओ से विभूषित हैं। धीर शर्मा पाडित्य, विद्याधर शर्मा कूटनीतिज्ञ, चन्द्रलेखा सौंदर्य, राजा सातवाहन शूर और उदार पति, वघेला रजपूती आन, मैनसिंह बुद्धि, सेवा, साहस और वल, नारी माता भक्ति और सीरी मौला अलौकिक सिद्धियो के प्रतीक है। समस्त वारीकियो के साथ प्रत्येक पात्र की विशेषतायें अकित है इसलिए उपन्यास का चरित्र-विधान प्रयत्न साध्य है। उपन्यास के चरित्र विधान का आधार मनोवैज्ञानिक है, लेखक ने वैयक्तिक चेतना के स्तरो अर्थात् पात्रो के अन्तर्लोक, परिस्थितियो से उनके सघातो प्रकृति के प्रति उनकी अन्तरानुभूति-मूलक रागवृत्तियो को ज्योतिर्मय किया है। इस दृष्टि से यह कृति 'अन्तरानु-

---

१. हजारीप्रसाद द्विवेदी . चारुचन्द्रलेख पृ १०।

भूति का महाकाव्यत्व को लिए है।[1] मनोवैज्ञानिक अवतारणाओ के कारण पात्र मुक्त हैं और उनमे विकास की स्थितिया हैं।

उद्देश्य—उपन्यासकार का उद्देश्य सामन्त युग की सामन्त चेतना और धर्म साधना का चित्र आंकना ही इस उपन्याम का लक्ष्य है। धर्म साधन का चित्र आकने मे वज्रयानी सिद्धो तथा नाथपथी योगियो की तत्र मत्र साधना आदि को भी लेखक ने उपस्थित किया है। दो साधनाओ के प्रसग मे शाक्त और शैव—मतो के चित्रण भी हुए है। जैन साधनाओं के उल्लेख भी हुए हैं। मध्ययुगीन धर्म साधना का पूर्ण रूप इसमे वर्णित है। लेखक मध्ययुगीन साधनाओ का आस्वाद कराना चाहता है। सिद्धियो की कामुकता,[2] वैयक्तिकता,[3] वर्णाश्रम धर्म पर कुप्रभाव,[4] पाखण्ड और मिथ्याचार'[5] अधार्मिकता[6] देश की दरिद्रता रोग और शोक[7] आदि बुराइयो के उल्लेख भी हुए हैं। धार्मिक साधनाओ के अतिरिक्त मध्ययुग का वीरत्व भी इस उपन्यास मे ध्वनित हुआ है। मुख्य कथा धर्म साधना से सम्बधित है, वीरत्व से नही। उपन्यास के सभी पात्र देश की आजादी के लिए प्राणप्रण से लगे रहते हैं। सातवाहन, चद्रलेखा और अन्य सभी गौण पात्रो मे देश प्रेम और वीरता का स्वर ध्वनित होता है। देश की दुर्दशा को दूर करने के लिए समस्या का समाधान भी हैं। 'इस देश को वही बचाएगा जिनके पास सहज जीवन का कवच होगा, सत्य की तलवार होगी, धर्म का रथ होगा, साहस की ढाल होगी, मैत्री का पाश होगा, धर्म का नेतृत्व होगा।[8]' अतः मध्ययुगीन सामाजिक, धार्मिक जीवन का चित्र खीचकर, वर्त्तमान भारत की कई समस्याओ और उनके समाधान का चित्र प्रस्तुत करना, उपन्यास का लक्ष्य रहा है। 'इसमे अतीत का इतिहास है, वर्त्तमान का विचार है एव भविष्य के लिए

१. आलोचना ३०, पृ. १३०–१३१।
२. चारुचन्द्र लेख, पृ. १६२।
३. वही, पृ. १६१।
४. वही, पृ० १५७।
५. वही, पृ० ३०८।
६. वही, पृ० ३०७।
७. वही, पृ० ७।
८. चारुचन्द्र लेख, पृ० ३४२, ३४८।

सदेश है, और इस अर्थ मे काल के एक खण्ड मे सीमित न रहकर कथा त्रिकाल व्यापिनी हो जाती है।[1]'

'चारुचद्रलेख' समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यास है, व्यक्तिमूलक—ऐतिहासिक उपन्यास नही। उपन्यास मे व्यक्ति की कथा न होकर, समाज की भारतीय समाज की, मध्ययुगीन भारतीय समाज की कथा है। उपन्यास के वस्तु विधान, चरित्र विधान और लक्ष्य विधान मे व्यक्ति नहीं उभरते, समाज उभरता है। व्यक्तियो की अपनी विशेषताए हैं किन्तु उनका सामाजिक व्यक्तित्व युग के सामाजिक जीवन को चित्रित करता है। उपन्यासकार ने इतिहास के इस पहलू को व्यक्ति की दृष्टि से न आककर समाज की दृष्टि से आका है, इसलिए इसे समाज-परक ऐतिहासिक उपन्यास कहना ही ठीक है।

एक आलोचक की भ्रमात्मक धारणा है 'चारुचद्रलेख' से ऐसा कोई निश्चित सकेत नही मिलता कि उसे ऐतिहासिक उपन्यास ही माना जाय, यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यास मानकर चर्चा की जा सकती है। कुछ ऐतिहासिक चरित्रों और घटनाओ के बावजूद उपन्यास कल्पना प्रधान ही रहता है।[2] उपन्यासकार ने मध्यकालीन इतिहास की पुर्नरचना की है नारी-माता, धीर शर्मा, जल्हण और गोरखनाथ ऐतिहासिक पात्र हैं, इसलिए यह ऐतिहासिक उपन्यास है। इसे केवल भारतीय साधनाओ का एक समाजशास्त्रीय शब्द-कोष[3] मानना भूल होगी क्योकि उपन्यास मे भारतीय धर्मसाधनाओ की समाजशास्त्रीय व्याख्या होते हुए भी पर्याप्त उपन्यास-रस है। इतिहास के परिपार्श्व मे समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण होने के कारण यह समाजपरक-ऐतिहासिक उपन्यास है।

सर्वेक्षण—इस विवेच्यकाल के समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो के विवेचन से ज्ञात होता है कि इन उपन्यासो मे सामाजिक या समाजवादी चेतना के दर्शन होते हैं और मनोवैज्ञानिक पुनर्मूल्याकन का प्रयत्न किसी ने नहीं किया है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'चारुचंद्रलेख' और अमृतलाल नागर के 'शतरज के मोहरे' को छोडकर अन्य उपन्यासो का शिल्प वर्णनात्मक और इतिवृत्तात्मक है। 'शतरज के मोहरे' के पात्रो मे सवेदनशीलता और 'टूटे

---

१. माध्यम, प्रवेशांक, पृ० ७८।
२ कल्पना, जून १९६४, पृ० १९।
३. आलोचना, ३०, पृ० १२७।

काटे' के पात्रो में अमनोवैज्ञानिकता है। 'अमिता' मे प्रतिनिधि परिस्थितियो के प्रतिनिधि पात्र हैं। 'वय रक्षाम' मे केवल घटनाओ के पुतले है और 'विस्मृत–यात्री' के पात्र मे सिद्धान्त स्थापना का आग्रह। 'चारुचन्द्रलेख' के पात्रो मे उनका अन्तर्लोक वर्णित है। 'अमिता' और विस्मृत यात्री' मे समाजवादी चेतना है और शेष उपन्यासो मे सामाजिक चेतना अभिव्यक्त हुई है। 'वय रक्षाम' मे प्राग्वैदिककालीन, 'अमिता' मे गुप्तकालीन 'टूटे काटे, मे मुस्लिमकालीन और 'शतरंज के मोहरे' मे पतनोन्मुख मुगलकालीन, भारत की दुर्बलताओं और अभावो का चित्र है। 'चारुचद्रलेख' मे मध्ययुगीन भारतीय-समाज की दुर्बलताओ और कमियो के स्थान पर देश की योग साधना, शक्ति और एकता का चित्र है।

सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो की तरह इन उपन्यासो के वस्तु-विधान मे स्थूलता है। पात्र सामाजिक व्यक्तित्व अवश्य रखते हैं किंतु 'शतरंज के मोहरे' और 'चारुचद्रलेख' के पात्र वैयक्तिक–विशेषताओं से भी अंकित हैं। यह उपन्यास सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो की तरह निश्चित लक्ष्य की ओर बढते हैं। समाजवादी चेतना के ऐतिहासिक उपन्यासो मे उद्देश्यपरकता अधिक है। 'अमिता' का उद्देश्य उपन्यास का अन्तर्भूत उद्देश्य नही है और 'विस्मृत–यात्री' मे बौद्ध दर्शन को मार्क्सवाद का आधार देने का आग्रह लेखक की उद्देश्यपरकता को स्पष्ट करता है।

समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो के विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि वृंदावनलाल वर्मा के 'टूटे काटे,' यशपाल का 'अमिता' अमृतलाल नागर का 'शतरज के मोहरे' चतुर सेन शास्त्री के 'वय रक्षाम' और हजारीप्रसाद द्विवेदी के 'चारुचद्रलेख' मे 'शतरज के मोहरे' और 'चारुचद्रलेख' इस विवेच्यकाल की इस श्रेणी की महत्वपूर्ण उपलब्धिया हैं।



व्यक्तिपरक उपन्यास

'ससार की सबसे बड़ी पहेली है, एक व्यक्ति का व्यक्तित्व और ससार की सबसे वडी समस्या है व्यक्तित्व की समस्या। एक स्थान मे व्यक्ति सबसे पृथक होकर अपने व्यक्तित्व की रक्षा मे सचेष्ट रहता है और दूसरे स्थान में परिवार, समाज, जाति और राष्ट्र मे सम्मिलित होकर सभी के साथ वह ऐसा सम्वद्ध हो जाता है कि किसी भी स्थिति मे वह अपने को सबसे पृथक् नहीं कर सकता।'[1] समाज मे रहते हुए भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता की रक्षा करते हुए व्यक्ति रूप मे अपने महत्व को अक्षुण्ण रखता है। सामाजिक—मनुष्य अपने व्यक्तित्व को खोकर समाज मे विलीन हो जाता है और व्यक्तिवादी मानव समाज मे अपने व्यक्तित्व को प्रतिष्ठित करता है।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने उन सभी उपन्यासो को व्यक्तिवादी उपन्यास कहा है जिनमे 'व्यक्तिगत—जीवन घटना, व्यक्तिगत—चरित्र, व्यक्तिगत—जीवन—दर्शन, व्यक्तिगत—मनोविज्ञान या व्यक्तिगत जीवन निरुपण या निर्देश सर्वोपरि रहता है[2]' इन्हे व्यक्ति सापेक्ष उपन्यास कहा जा सकता है। व्यक्तिवादी उपन्यासो मे केवल व्यक्तिवादी जीवन—दर्शन की अभिव्यक्ति रहती है और जिन उपन्यासो मे व्यक्तिपरक—मनोविश्लेषण रहता है उन्हे व्यक्ति—परक—मनोविश्लेषणवादी उपन्यास कहे जा सकते हैं। उन सभी उपन्यासो को व्यक्तिपरक उपन्यासों की सज्ञा दी जा सकती है। जिनमे 'व्यक्तिग जीवन—चरित्र और व्यक्तिगत जीवन घटना के साथ व्यक्ति—मूल्यो की प्रतिष्ठा होती है और उनमे व्यक्तिवादी जीवन—दर्शन और मनोविश्लेषण का अभाव रहता है।

---

१ पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी : हिन्दी कथा साहित्य : पृ० ८६।

२. नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य : नये प्रश्न : पृ० १८५।

सामाजिक—उपन्यासो मे व्यक्ति के सामाजिक—मूल्यो, के साथ व्यक्ति की सामाजिकता की अभिव्यक्ति होती है और जिनमे सामाजिक—जीवन का चित्रण सर्वोपरि रहता है। सामाजिक—उपन्यास व्यक्ति के व्यक्तित्व की उपेक्षा नही करते हैं किन्तु व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा से भी अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक जीवन की प्रतिष्ठा होती है। व्यक्तिपरक उपन्यासों मे सामाजिक मूल्यो, सामाजिक व्यक्तित्व और सामाजिक जीवन की भी अभिव्यक्ति होती है। उसमे उपन्यासकार का प्रधान लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसके वैयक्तिक—मूल्यो और उसकी स्वतन्त्रता को प्रतिष्ठित करने का रहता है। व्यक्ति—परक उपन्यासो मे व्यक्ति समाज के परिपार्श्व मे रहते हुए अपने व्यक्तित्व को अक्षुण्ण रखता है। यहा लेखक का केन्द्र समाज सापेक्ष व्यक्ति होता है, समाज नही। समाज के बीच यहाँ व्यक्ति उभरता है जो वैयक्तिक चेतना और व्यक्तिमूल्यो की प्रतिष्ठा करता है। इसकी अगली कडी व्यक्तिवादी उपन्यास है जिसमे व्यक्ति का अध्ययन समाज के परिपार्श्व मे न होकर केवल व्यक्ति रूप मे होता है।

डा सुषमा धवन की भ्रामक मान्यता है कि व्यक्तिवादी उपन्यास मे सामाजिक चेतना का आभास निरन्तर मिलता है। वास्तव मे व्यक्तिवादी उपन्यासकार संधिस्थल पर खडा है, न तो वह समाज से हट कर पूर्ण व्यक्तिवादी बन सकता है और न समाज की मान्यताओ से हटकर उसका कोई मेल हो पाता है।[1] निश्चयत व्यक्तिवादी उपन्यास मे सामाजिक चेतना के आभास की न तो किरण ही छू पाती है और न वह समाज की ओर व्यक्ति के संधिस्थल पर खडा रहता है। व्यक्तिवादी उपन्यासकार समाज-निरपेक्ष व्यक्तिवादी मानव की प्रतिष्ठा करता है किन्तु व्यक्तिपरक उपन्यासकार समाज सापेक्ष व्यक्ति मानव को अपने उपन्यास मे प्रतिष्ठित करता है। समाज सापेक्ष व्यक्तिपरक उपन्यासो को समाज-निरपेक्ष व्यक्तिवादी उपन्यासो से मिलाने के कारण यह भ्रम उत्पन्न हुआ है।

भगवतीचरण वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' और श्री राजेन्द्र यादव इस विवेच्यकाल के व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं।

भगवती चरण वर्मा

भगवतीचरण वर्मा व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं। उनकी मान्यता है 'हर व्यक्ति अपने मे अकेला है और शायद यह अकेलापन ही उसकी वैयक्तिक

---

१. डा० सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास, पृ० १६४।

प्रथम खण्ड मे मुन्शी शिवलाल के प्रयत्न से ज्वालाप्रसाद का नायब तहसीलदार बनना, प्रभुदयाल और बरजोरसिंह का सघर्ष, लालाप्रभुदयाल की, हत्या और बरजोरसिंह की आत्महत्या, घमीटे की मृत्यु ज्वालाप्रसाद और प्रभुदयाल की विधवा जंदेई के बीच आकर्षण आदि प्रमुख घटनायें हैं। दूसरे खण्ड मे प्रभुलाल के पुत्र लक्ष्मीचन्द की व्यापारिक योजनाये, राधेलाल के कुचक्र, मुन्शी शिवलाल की मृत्यु, गगा की पढाई की समस्या आदि से संबधित घटनायें हैं। तीसरे खण्ड मे गगाप्रसाद का डिप्टी कलेक्टर बनना, गगाप्रसाद और राधाकिशन की पत्नी सत्ती के सम्बन्ध, रिपुदमनसिंह की कथा, लक्ष्मीचन्द को दिल्ली दरबार मे सर की उपाधि मिलना, राजा बहादुर राधाकिशन का गगाप्रसाद को निमन्त्रण पत्र, सत्ती का पतन, जंदेई की मृत्यु आदि से सबधित घटनाये हैं। चतुर्थ खण्ड मे छिनकी की मृत्यु, रामसहाय के पुत्र ज्ञानप्रकाश का आगमन, नवलप्रकाश मे राष्ट्रीय चेतना अकुरित होना, गगाप्रसाद का पशुत्व जागकर शात हो जाना और कानपुर के गोलीकाण्ड सबंधी घटनाये हैं। पांचवे खण्ड मे गगाप्रसाद का क्षय रोग से पीडित होना, गगाप्रसाद की मृत्यु नवल प्रकाश का लाहौर काग्रेस मे सम्मिलित होना, कामतानाथ की इच्छाओ की नवलकिशोर द्वारा अवहेलना करना और ज्वालाप्रसाद द्वारा जीवन के उतार-चढावो को देखने से सम्बन्धित घटनायें है।

वस्तु-विधान—'भूले बिसरे चित्र' चार दशको की देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और नैतिक भूमिका के साथ बदलते व्यक्ति मूल्यो का इतिहास हैं। शिवलाल से नवलकिशोर तक की चार पीढीयो की कहानी इसकी मुख्य कथा वस्तु है। इस मुख्य वस्तु का मुख्य पात्र ज्वालाप्रसाद है, जो उपन्यास के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक उपस्थित है। यह उपन्यास का मेरुदण्ड है। इसी के जीवन को कीली की तरह बनाकर उपन्यास की घटना घूमती है। चार पीढियो की कहानी को मुख्य वस्तु मानें तो अन्य प्रासगिक घटनाओ मे छिनकी और घमीटा, गजराजसिंह और बरजोरसिंह, प्रभुदयाल और जंदेई, राधाकिशन और सत्ती, लक्ष्मीचन्द और राधा आदि की घटनायें, मुख्य कथा मे योगदान देती हैं। इस व्यापक चित्रफलक पर न जाने कितनी घटनाये घटती है और कथा विकास की ओर बढती हैं। अन्विति लाने का काम ज्वालाप्रसाद का है जिसने पिता शिवलाल की पीढी को देखा है, अपनी पीढ़ी मे नई मान्यताओ की स्थापना की है, गगाप्रसाद की पीढी को देखा है और सढसठ वर्ष की उम्र मे, राष्ट्रीय आदोलन में जूझती, नवलकिशोर की पीढी को देख रहा है। छिनकी और घसीटा, जंदेई, प्रभुदयाल और बरजोरसिंह की

घटनायें ज्वालाप्रसाद की पीढी की कथा का विकास करती हैं। राधाकिशन और सत्ती, लक्ष्मीचन्द और राधा की कथाये, गगाप्रसाद के जीवन की घटनाओ का विकास करती है। कामतानाथ, ज्ञानप्रकाश और विद्या की कथाये, नवलकिशोर की घटनाओ का विकास करती हैं। प्रभुदयाल और बरजोरसिंह के सघर्ष को लेखक ने सामन्तवाद और पूँजीवाद के सघर्ष के रूप मे चित्रित किया है। ज्वालाप्रसाद के बदलते मूल्यो को स्पष्ट करने का कार्य जँदेई की कथा से रहा है। ज्ञानप्रकाश, माया, कामतानाथ और विद्या आदि का आगमन उपन्यास के रगमच पर अप्रत्याशित लगता है। प्रभुदयाल और जँदेई की दूसरी पीढ़ी मे लक्ष्मीचन्द और राधा का विकास हुआ है, इसी तरह का विकास यहा अपेक्षित था। चार पीढियो के बदलते मूल्यो के चित्र की दृष्टि से, यह उपन्यास स्थापत्य का सुन्दर नमूना जान पडता है, किन्तु उपन्यास का विकास घटना प्रधान रहा है। बदलते जीवन मूल्यो के आग्रह मे लेखक लगातार पात्रो को उपन्यास से हटा देने के लिए मारता रहा है। कई घटनाओ का पिछली घटनाओ के साथ तक सगत योजना नही है। शिवलाल, छिनकी और प्रभुदयाल की मृत्यु और बरजोरसिंह की आत्महत्या ऐसी ही घटनायें हैं किन्तु उपन्यासकार जिस उद्देश्य से इस उपन्यास की रचना कर रहा है, उस दृष्टि से यह सुन्दर अन्विति का उदाहरण है।

चरित्र-विधान—उपन्यास का केन्द्रबिन्दु ज्वालाप्रसाद है, किन्तु चार पीढ़ियो के बदलते जीवन मूल्यो के चित्रण के फलस्वरूप इसे नायक नायिका-हीन उपन्यास मानना पडेगा। शिवलाल राजभक्ति का, ज्वालाप्रसाद सामतवाद पूँजीवाद के सघर्ष का, गगाप्रसाद नौकरशाही का, नवलकिशोर राष्ट्रीय-चेतना का और ज्ञानप्रकाश, गगाप्रसाद और नवलकिशोर के बीच की कडी का प्रतीक है। अन्य पात्रो मे प्रभुदयाल, बरजोरसिंह, गजराजसिंह, जँदेई, राधेलाल, राधाकिशन, सत्ती, छिनकी, घसीटा, लक्ष्मीचन्द, राधा, ज्ञानप्रकाश, कामतानाथ, माया और विद्या आदि हैं।

प्रभुदयाल पुरानी पीढी की पूँजीवादी प्रवृत्तियो का प्रतीक है जिसका विकास और पतन लक्ष्मीचन्द और राधाकिशन के रूप मे दूसरी पीढी मे हो जाता है। बरजोरसिंह सामन्तवादी अहम् का प्रतीक है जिसका विकास रिप्रुदमनसिंह के रूप मे होता है। छिनकी भोग्या नौकरानी होते हुए भी शिवलाल की पत्नी का स्थान पाती है, जँदेई ज्वालाप्रसाद की प्रेमिका होते हुए भी उसकी भौजाई बनी रहती है। राधेलाल को पारिवारिक कुचक्र का

उपलब्धि है। सामाजिक प्राणी होने के नाते मैं इस वैयक्तिक अकेलेपन को लिए हुए भी समाज से जब तक जुडा हू तब तक मैं स्थित हूं।'[1] भगवतीचरण वर्मा मानते हैं कि व्यक्ति के अकेलेपन और वैयक्तिक उपलब्धि का महत्व है किन्तु वह समाज से कटा हुआ नही है। व्यक्ति की वैयक्तिक उपलब्धि समाज सापेक्ष है, समाज निरपेक्ष नही है। वर्माजी को प्रेमचन्द परम्परा का 'सामाजिक उपन्यासकार'[2] मानकर एक आलोचक ने अपनी भ्रान्त धारणा का परिचय दिया है। वर्माजी के उपन्यास सामाजिक नही हैं, किन्तु सामाजिकता की पृष्ठभूमि मात्र है। समाज की पृष्ठभूमि पर व्यक्ति-मूल्यो की स्थापना, व्यक्ति की बौद्धिक चेतना, व्यक्ति के नये नैतिक भावो की स्थापना इन्होंने अपने उपन्यासो मे की है।

लेखक ने स्वीकार किया है कि इस दृष्टि से देखा जाय तो वर्माजी के पात्र व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे आते हैं। उपन्यासो मे सामाजिक समस्याओ के साथ-साथ व्यक्तित्वो का भी निर्माण हुआ है, व्यक्तित्व मे टक्कर हुई है और व्यक्ति की समस्या ने समाज की समस्या का रूप धारण कर लिया है, इसलिए व्यक्तिवादी पात्र रखते हुए भी उनके उपन्यास व्यक्तिवादी नही है और न वर्माजी व्यक्तिादी कलाकार ही। पापपुण्य, प्रेम और विवाह, विभिन्न राजनीतिक मतमतान्तरो के सघर्ष, अर्थ और नैतिकता का सम्बन्ध व्यक्ति की अपनी समस्याये होते हुए भी समाज की समस्यायें हैं और उनका हल भी व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से न दिया जाकर सामाजिक दृष्टिकोण से ही दिया है।[3] वर्माजी व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं और न सामाजिक, न उनके पात्र व्यक्तिवादी हैं और न सामाजिक। समाज के परिपार्श्व मे उनके पात्रो ने व्यक्तिमूल्यो की स्थापना की है और समाज की पृष्ठभूमि मे व्यक्तिपरक उद्देश्यो की स्थापना के कारण, वर्माजी व्यक्तिपरक उपन्यासकार है।

'चित्रलेखा' (१९३४), 'तीन वर्ष' (१९४६), 'टेढे मेढे रास्ते' (१९४६), 'आखिरी दाव' (१९५०), 'अपने खिलोने' (१९५७), 'भूले विसरे चित्र' (१९५९), 'वह फिर नही आई' (१९६०), 'शक्ति और सामर्थ्य'

---

१. नई धारा, फरवरी–मार्च : १९६६, पृ० ११५।

२. आलोचना : २०, पृ० ३५–३६।

३. आलोचना २०, पृ० ५०।

(१९६२) और 'रेखा' (१८६४) वर्माजी की उपन्यास कृतिया है जिसमे प्रथम तीन उपन्यास—'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष' और 'टेढे मेढे रास्ते' को छोडकर अन्य सभी कृतिया इस विवेच्यकाल की हैं।

भूले बिसरे चित्र (१९५९)

कथासार —'भूले बिसरे चित्र' युक्त प्रान्त के एक मध्यवर्गीय परिवार की चार पीढियो की कहानी है, यह अर्जीनवी मुन्शी शिवलाल से लेकर नवलकिशोर तक की चार पीढियो की कथा है। मुन्शी शिवलाल अर्जीनवीस है, अफसरो की कृपा का वरदान पाकर उनके दिन वदलते हैं। उनका पुत्र ज्वाला प्रसाद नायव तहसीलदार वनता है। शिवलाल की नैतिक धारणायें और सामाजिक मान्यतायें ज्वालाप्रसाद मे आकर बदल जाती हैं। ज्वालाप्रसाद का पुत्र गगाप्रसाद डिप्टी कलक्टर वनता है। गगाप्रसाद पुरानी परम्पराओ और आदर्शो को तोडकर नवीन मानदन्डो को लेकर आगे चलता है। सम्मिलित परिवार शिवलाल के लिए आदर्श था, ज्वालाप्रसाद अशत उससे दवे रहते हैं और गगाप्रसाद उनको नही मानता है। यौन सम्वन्धी नैतिक धारणाओ मे भी परिवर्तन होना है। शिवलाल और छिनकी, ज्वालाप्रसाद और जैदेई, गगाप्रसाद और सत्ती इन वदलते सम्वन्धो को प्रकट करते हैं। शिवलाल और छिनकी के सवन्ध परिवार मे स्वीकृत हो जाते हैं, ज्वालाप्रसाद और जैदेई के सवन्ध स्वीकृत तो नही होते, किन्तु ज्वालाप्रसाद की पत्नी यमुना जानबूझ कर मौन रहना चाहती है, गगाप्रसाद सत्ती के प्रति यौन सवन्धो को तोड फेंकता है। राजनीतिक धरातल पर भी इनकी मान्यताओ मे परिस्थितियो का अन्तर उत्पन्न करती है। शिवलाल पूर्णत राजभक्त है, ज्वालाप्रसाद पूँजीवाद सामन्तवाद के सघर्ष को देखता है, गगाप्रसाद पूँजीवाद सामन्तवाद को उतारकर उच्चवर्गीय जीवन के खोखलेपन को वताता है। नवल किशोर राष्ट्रीय चेतना को स्वीकार करता है। अन्त मे नवल ने ज्वालाप्रसाद की ओर देखा। कितनी गहरी वेदना थी इन शब्दो मे—सडसठ वरस का बूढा आदमी, चेहरा झुर्रियो मे भरा हुआ—न जाने कितने उतार-चढाव देखे थे उस आदमी ने।[1] ज्वालाप्रसाद सोचता है—'दुनिया की भावनाये बडी तेजी के साथ वदल रही हैं, हमारे भविष्य का रूप क्या होगा यह नही कहा जा सकता।'[2] इस तरह पांच खण्डो मे उपन्यासकार ने शिवलाल से लेकर नवलकिशोर तक की कहानी कही है।

---

१ भगवतीचरण वर्मा भूले बिसरे चित्र, पृ० ६८१।
२. वही, पृ० ७०२।

प्रतीक बनाकर उपस्थित किया है। छिनकी, जैंदेई और सत्ती को, बदलते यौन मूल्यो का प्रतीक बना कर उपस्थित किया गया है। किन्तु सत्ती पतनोन्मुखी पूँजीवाद की पतित-नारी का प्रतीक बनकर उपस्थित हुई है। कामतानाथ गगाप्रसाद की विकसित नौकरशाही और आभिजात्य का प्रतीक है। बदलते जीवन मूल्यो का चित्रण करते हुए भी, भगवतीचरण वर्मा, पात्रो की वैयक्तिक विशेषताओ का अकन कर पाये हैं। शिवलाल, ज्वालाप्रसाद, गंगाप्रसाद और नवलकिशोर केवल अपने युग के प्रतीक बनकर ही नही, किंतु व्यक्ति-रूप मे उपस्थित हैं। शिवलाल को ज्वालाप्रसाद, ज्वालाप्रसाद को गगाप्रसाद और गगाप्रसाद को नवलकिशोर मे अलग-अलग पहचाना जा सकता है। यह सही है कि उपन्यास का चित्रफलक व्यापक है, इसलिए ज्वालाप्रसाद को छोडकर अन्य पात्र प्रारम्भ मे अन्त तक उपस्थित नही है फिर भी शिवलाल, ज्वालाप्रसाद, गगाप्रसाद, नवलकिशोर, छिनकी, सत्ती, जैंदेई, प्रद्युदयाल, बरजोरसिंह और लक्ष्मीचन्द आदि, जीवन्त और यथार्थ पात्र हैं। इन पात्रो का व्यक्तित्व उपन्यास मे उभर कर आया है। सभी पात्र अपना स्वतन्त्र विकास करते हैं। पात्र सपाट न होकर विकसनशील हैं। कुछ गौण पात्र सपाट हैं, जैसे—बरजोरसिंह, ज्ञानप्रकाश, कामतानाथ और विद्या आदि। इन पात्रो को उपन्यास मे अपने विकास के लिए अधिक अवसर नही मिला है। उपन्यास का सबसे अधिक प्राणवान पात्र ज्वालाप्रसाद है और इसके अतिरिक्त गगाप्रसाद, छिनकी, सत्ती और जैंदेई आदि भी प्राणवान व्यक्तिचरित्र हैं।

उद्देश्य – यह उपन्यास एक मध्यवर्गीय परिवार की चार पीढियो के बदलते व्यक्तियो के जीवन मूल्यो का चित्र प्रस्तुत करता है जैसे अमरीकी लेखिका पर्ल एस बक ने, अपने उपन्यास 'गुर्ड अर्थ' (धरती माता) मे चीनी किसान की तीन पीढियो के बदलते जीवन मूल्यो को अभिव्यक्त किया है। यह बीसवी सदी के प्रथम चरण मे विकसित भारतीय जीवन का प्रतिबिम्ब है। व्यक्ति के बदलते जीवन मूल्यो को पारिवारिक जीवन मूल्यो का रूप दिया है। यह कहना गलत है कि इस कहानी के माध्यम से 'सामन्ती वर्ग का पूर्ण पतन एव मध्यवर्ग के उदय का पूर्ण विश्लेषण हुआ है।'[1] यह सामन्तवाद के ध्वसावशेष पर पूँजीवाद के उत्थान-पतन और तदनन्तर राष्ट्रीयता के

---

१. आलोचना २०, पृ० ५०।

परिपार्श्व मे पीढियो के बदलते हुए व्यक्तियो के जीवन मूल्यो की कहानी कहता है—"इस नई दुनिया का रूप क्या होगा, मुन्शी शिवलाल की समझ मे यह बात नही, फिर भी उनके लडके ने यह बात कही थी, जो नये युग का आदमी था और इसलिए यह बात गलत नही थी।"[1] ज्वालाप्रसाद ने चार पीढियो के बदलते चित्र देखकर सोचा, 'इधर पिछले तीन महिनो मे उसकी दुनिया बदल गई थी, उसकी मान्यताये बदल गई थी, उसका दृष्टिकोण बदल गया था।'[2] चौथी पीढी के प्रतीक नवल ने देखी, 'नई दुनिया, नया वातावरण और नया दृष्टिकोण ।'[3] उपन्यास का मेरुदण्ड ज्वालाप्रसाद सोचता है—'कुछ समझ मे नही आ रहा। आज पचास साल मे क्या से क्या हो गया सब कुछ बदल गया, एकदम बदल गया ... न जाने कितने नये लोग आये, न जाने कितने पुराने चले गये ... जिन्होने युग देखा था, जिन्दगी के उतार-चढाव देखे थे जिन्होने, जिनके पास अनुभवो के भण्डार थे, विवश थे, निरुत्तर थे और दूर हजारो, लाखो करोडो आदमी जीवन और जाति से प्रेरित नवीन उमग और उल्लास लिए हुए एक नवीन दुनिया की रचना मे चले जा रहे थे।'[4] अत जीवन की बदलती परिस्थितियो के साथ, बदलते जीवन मूल्यो का चित्रण करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। समाज की परिस्थितिया बदल रही हैं और बदलती परिस्थितियो के साथ व्यक्ति के जीवन मूल्यो मे परिवर्तन हो रहें हैं। यहा समाज के परिपार्श्व मे व्यक्ति उभरते हैं।

व्यक्ति और समाज के प्रश्नो को लेकर श्री भगवतीचरण वर्मा के बारे मे दो प्रतिकूल विचारधाराये प्रचलित हैं। एक वर्ग की मान्यता है कि 'भगवतीचरण वर्मा की जीवन दृष्टि विशुद्ध रूप से व्यक्तिवादी विचारधारा से प्रभावित है।'[5] दूसरे वर्ग की मान्यता है कि इन्होने समस्याओ का हल व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से न देकर सामाजिक दृष्टिकोण से दिया है।[6] भगवतीचरण वर्मा निश्चित् रूप से न प्रेमचन्द की सामाजिक परम्परा के

---

१ भगवतीचरण वर्मा, 'भूले विसरे चित्र' : पृ० १३२।

२. वही, पृ० ६११।

३. वही, पृ० ६८२।

४ भगवतीचरण वर्मा, 'भूले विसरे चित्र' . पृ० ७४६।

५ डा० सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास, पृ० ६०।

६. आलोचना २०, पृ० ५०।

उपन्यासकार हैं और न ही यह कहा जा सकता है कि इन्होंने समाज के परिपार्श्व में व्यक्ति का चित्रण किया है। वर्माजी स्वयं स्वीकार करते हैं कि यह स्वान्त. सुखाय समाजविरोधी न हो जाय इस पर हमें ध्यान रखना पड़ेगा।[1] सामाजिकता और व्यक्तिवादिता के संधिस्थल पर खड़े हैं और यह समाजसापेक्ष व्यक्तिपरक चेतना है।

सामाजिक रूढ़ियों और परम्पराओं के विरोध से ही कोई उपन्यास व्यक्तिमूलक उपन्यासों की श्रेणी में नहीं आता है। वर्णव्यवस्था का विरोध[2] परिवार का विघटन,[3] पूँजीवाद की सड़ी गली मान्यतायें,[4] राजनीतिक हलचलें,[5] नौकरशाही के पुर्जों के रूप,[6] हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर चर्चा[7] और न जाने कितने ही सामाजिक विषयों पर चर्चा और विवेचन विश्लेषण इस उपन्यास में हुआ है किन्तु व्यक्ति के बदलते जीवन मूल्यों को अभिव्य त करना ही लेखक का उद्देश्य है। गंगाप्रसाद का यह विश्वास है कि व्यक्तिगत भावना केवल चेतना के सहारे सामूहिक भावना बन जाती है।[8] अत समाज के परिपार्श्व में व्यक्ति को केन्द्र मानकर जीवन मूल्यों और व्यक्तिपरक चेतना की अभिव्यक्ति के कारण यह व्यक्तिपरक उपन्यास है।

सामर्थ्य और सीमा (१९६२)

कथासार—हिमालय की तराई में जंगलों के बीच सुमना स्टेशन से उपन्यास की कथा आरम्भ हुई और उसी गांव के आसपास समाप्त हो गई। स्टेशन मास्टर नवलसिंह ने उत्तरप्रदेश के विकास-मंत्री के प्राइवेट सेक्रेटरी ठाकुर विश्वनाथसिंह का स्वागत किया। ठाकुर विश्वनाथसिंह ने पांच महमानों का स्वागत किया—रतनचन्द, मकोला के प्रसिद्ध उद्योगपति वासुदेव चिंतामणि देवलकर, एक प्रसिद्ध इन्जीनियर, ज्ञानेश्वरराव तैलंग, दिल्ली का प्रसिद्ध पत्र

१　भगवतीचरण, आलोचना १५, पृ० ६६।
२.　भूले बिसरे चित्र, पृ० ५१।
३　भूले बिसरे चित्र, पृ० १३६।
४　वही, पृ० ३१५।
५.　वही, पृ० ४०३।
६　वही, पृ० ४१६।
७　वही, पृ० ४१८।
८.　वही, पृ० ४१८।

रिपब्लिक के प्रधान सपादक; शिवानन्द शर्मा, एक प्रसिद्ध उपन्यासकार और ए. पी. और मंसूर, एक प्लानिंग आर्टिस्ट। गाडी सुमनपुर की ओर दौडी किन्तु खराव होने पर सुमनपुर की रानी मानकुमारी ने उनकी सहायता की। मसूर कहते हैं कि 'मनुष्य डरता होता तो न तो वह इस प्रकृति पर विजय पाता और न वह स्वय अपने विनाश के साधन जुटाता, और शर्माजी कहते हैं कि 'आदमी को जो बुद्धि मिली है इसलिए वह समर्थ है।' देवलकर मानते है कि 'अगर हम इनमे डरते ही होते तो न हमने जंगल मे सडक बनाई होती और न हमने इस जगल मे प्रवेश किया होता।'

सभी व्यक्ति रानी के आकर्षण मे आकर रानी मानकुमारी की सहायता करना चाहते हैं। पडित शिवानन्द शर्मा ने कहा कि रानी मानकुमारी दिल्ली मे उनके वगले मे रहकर साहित्य साधना करे। ज्ञानेश्वर तेलग ने रानी को दिल्ली मे रहकर राजनीति मे उतरने के लिए उकसाया। उन्होने आश्वासन दिया कि रानी मत्री वन सकती है, गवर्नर बन सकती है, विदेशो मे राजदूत बन सकती है। मसूर साहब का प्रस्ताव था कि वे रानी को एक शानदार सास्कृतिक डेलीगेशन का हैड बनाकार अमेरिका भिजवा देगे, जिसका सारा खर्चा भारत–सरकार बरदाश्त करेगी। उद्योगपति मकोला ने कहा कि अमेरिकन फर्म 'कामर्स एलाइड' के साझे मे खोली जाने वाली, 'हिन्द कामर्स' कम्पनी की मैनेजिंग डाइरेक्टर, रानी साहिवा को बना देंगे और अजीनियर देवलकर ने विवाह का प्रस्ताव किया।

रानी के कक्का भविष्य को जानते थे। उन्होंने कहा, 'लेकिन तुम अपने को सक्षम और समर्थ समझते हो, इसलिए तुम अज्ञान हो। तुम्हारा सारा दर्प झूठा है ······कौन सक्षम और समर्थ है ·· · ·· सबके सब अपनी निर्वलता और मृत्यु की सीमा लेकर आए हो ·· ·· मृत्यु तुम्हारे सिर पर मण्डरा रही है।[1]' पानी का वेग बढा और रानी के जन्मोत्सव के दिन नगर, राजवश का अतिम चिराग–रघुराज, पूंजीपति मकोला, पत्रकार ज्ञानेश्वर राव उपन्यासकार शिवानन्द शर्मा, कलाकार मसूर, इजीनियर देवलकर और रियाजुल सभी डूब गए। महल भी ढह गया और अन्त मे मेजर नाहरसिह और रानी मानकुमारी भी डूब गई।

---

१ भगवतीचरण वर्मा : सामर्थ्य, और सीमा पृ० २६८।

वस्तु–विधान—सुमनपुर की रानी मानकुमारी उपन्यासकार की कथा का केन्द्र विन्दु है और अन्य पात्रो–प्रसिद्ध उद्योगपति रतनचन्द्र मकोला, प्रसिद्ध इजीनियर वासुदेव चिन्तामणि देवलकर, दिल्ली के पत्र रिपब्लिक के सम्पादक ज्ञानेश्वर राव, प्रसिद्ध उपन्यासकार शिवानन्द शर्मा, प्लानिंग आर्टिस्ट मसूर और मेजर नाहरसिंह की कथाए रानी की मुख्य कथा के चारो और ईर्दगिर्द चक्कर काटती है। उपन्यासकार मुख्य कथा से भटका नही है और अन्य पात्रो की जीवन कथाओ का उतना ही अश वर्णित है जितना अश रानी की जीवन-कथा को आगे बढ़ाने मे सहायक होता है। पाच मेहमानो का सुमना स्टेशन पर आगमन, उत्तरप्रदेश के विकास मत्री के प्राइवेट सैक्रेटरी ठाकुर विश्वनाथसिंह द्वारा उनका स्वागत, सभी पात्रो का रानी के सौंदर्य से आकृष्ट होना और सहायता करने की योजना बनाना, जलप्लावन और जलप्लावन मे सभी पात्रो का डूबना आदि, इस उपन्यास की मुख्य घटनाए हैं। रानी मानकुमारी की जीवन कथा को केन्द्र मानने के कारण अन्य पात्रो की जीवन कथाए शृ खला वद्ध रूप से उपन्यास मे अभिव्यक्त होती है और उपन्यास के उद्देश्य के अनुरूप ही घटनाओ का क्रमश· विकास होता है। प्रारम्भ मे सभी पात्र अपने शक्ति और सामर्थ्य की शेखी वघारते है और अन्त मे जलप्लावन मे डूबकर उनकी शक्ति और उनकी सामर्थ्य विपुल जल को समर्पित हो जाती है। सभी घटनाओ की योजना तर्क सगत और स्वाभाविक है किन्तु जलप्लावन की घटना अस्वाभाविक और आरोपित जान पडती है। जलप्लावन मे सभी पात्रो को डुवा देना अपने लक्ष्य की ओर खीचतान करके पहुचाना है। मनुष्य प्रकृति के समक्ष वाना और असमर्थ है, केवल इस उद्देश्य की स्थापना के लिए सबको अतल जल मे डुवो दिया है। जलप्लावन की घटना को छोड दे तो यह वस्तु-अन्विति का सुन्दर उदाहरण हैं।

चरित्र–विधान—मत्री जोखनलाल, उद्योगपति रतनचन्द्र मकोला, इंजीनियर देवलकर, उपन्यासकार शिवानन्द शर्मा, कलाकार मसूर और पत्रकार ज्ञानेवर राव सभी व्यक्ति चरित्र होते हुए अपने अपने वर्ग के प्रतिनिधि है। मेजर नाहरसिंह और रानी मानकुमारी सामन्तवाद के अवशेष है। नाहरसिंह उपन्यासकार का कमजोर पात्र है। इस पात्र के कारण कथा का अन्त अरोपित लगता है। यह पात्र केवल लेखक के विचारो और भावनाओ को लेकर जी रहा है और ऐसा लगता है कि उसका अपना कुछ भी व्यक्तित्व नही है। रघुराजसिंह और स्टेशन मास्टर नवलसिंह आदि पात्र उपन्यास मे सिगनी के रूप मे दिखाई पड़ते हैं। लक्ष्य प्राप्ति की झोक मे वस्तु विधान की

अन्विति मे वाधा उत्पन्न हुई और चरित्र-विघान केवल लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लेखक के हाथ की कठपुतलिया बन गए हैं। सभी चरित्र सपाट हैं। प्रारम्भ से लेकर अन्त तक उनमे विकास की सम्भावनाए नही है। वर्मा जी के दुर्वल व्यक्ति चरित्र के निर्माण के रूप मे यह उपन्यास सदैव याद रहेगा।

उद्देश्य—लेखक ने भूमिका मे कहा है कि 'मनुष्य का दावा है कि वह सक्षम है, समर्थ है। प्रकृति इस मनुष्य के वश मे है, वह इस प्रकृति के साथ न जाने कितने खिलवाड करता है। रोज ही जन्म होते हैं, रोज ही मृत्यु के फेरे लगते हैं। जीवन मरण की सीमाओ मे बद्ध जो प्रकृति का क्रम है वह तो चलता ही रहता है। मनुष्य प्रकृति से अलग एक स्वतत्र सत्ता है, यह केवल अर्द्ध सत्य है। अन्य प्राणियो की भाति मनुष्य भी प्रकृति से उभरा है, उसका समस्त अस्तित्व इस प्रकृति का भाग है। हाड, मास, मज्जा-ये सब प्रकृति से बना है।[1] उपन्यास के उद्देश्य को लेखक ने प्रारम्भिक पृष्ठो मे ही स्पष्ट कर दिया है। कथा का क्रमशः विकास इसको स्पष्ट करता चलता है। सभी व्यक्ति सक्षम और समर्थ बनकर रानी के चारो ओर चक्कर काटने लगे। रानी ने अपने जन्मोत्सव के दिन सबका भण्डाफोड़ दिया। उस समय 'हरेक व्यक्ति छिपी नजरो से दूसरो को देख रहा था, उनकी सामर्थ्य और सीमा का अन्दाजा करते हुए। हरेक आदमी समर्थ था दुनिया की नजर मे, अपने निजी क्षेत्र मे। अपनी सामर्थ्य पर हरेक आदमी को विश्वास था, गर्व था। बडी जबरदस्त बाजी लगी हुई थी सामर्थ्य की।[2]' किन्तु समय ने बता दिया कि 'सब निर्बल हैं, सब अक्षम हैं। सक्षम है केवल रोहिणी का जल, और यह जल मृत्यु है। मनुष्य समर्थ कब रहा हैं? वह तो विधाता और प्रकृति की कृपा पर ही जीवित रहता हैं। इतने समर्थ व्यक्ति, जिन्हे अपनी क्षमता और शक्ति पर इतना अधिक गर्व था, वे सब कहा गए? वह जोखनलाल मन्त्री, जो सारे प्रदेश को ग्रस्त किये हुए था; वह मकोला जो दुनिया को पैसो पर नचा रहा था; वह देवलकर जिसे आधी, पानी, पहाड पर शासन करने का गर्व था; वह एडीटर जो लोगो को तख्त पर विठाने और जमीन मे मिलाने के मसूबो को पूरा करता था; वह कवि जो विश्व की चेतना की धारा को मोड सकने का दावा करता था' वह आर्टिस्ट जो प्रकृति की काट छाट करके उसे सुन्दर बनाता था, जो सभ्यता और सस्कृति का नेता था। इस अपार जल राशि मे

---

१. भगवतीचरण वर्मा : सामर्थ्य और सीमा, पृ० १, २।

२. भगवतीचरण वर्मा . सामर्थ्य और सीमा, पृ० २९९, ३०३।

उनका कही भी पता नही चल रहा है।[१]' व्यक्ति अपने को सक्षम मानता है किन्तु प्रकृति के सामने वह अक्षम है, असमर्थ है, प्रकृति उसकी सामर्थ्य और सक्षमता की सीमाए निर्धारित कर देती है, यही उपन्यास का उद्देश्य है।

यह व्यक्तिपरक उपन्यास है। इस उपन्यास का विषय स्वातंत्र्योत्तर भारत के एक रूप को प्रस्तुत करता है और सभी चरित्र समाज के विभिन्न वर्गों के प्रतीक हैं। उपन्यास मे कही कही जीवन का सामाजिक पहलू और सामाजिक रूप अभिव्यक्त हुआ है किन्तु उपन्यासकार विभिन्न व्यक्तियो के व्यक्तिपरक रूप को प्रस्तुत करना चाहता है। उपन्यासकार व्यक्ति चरित्रो को प्रस्तुत करता है। सभी व्यक्ति समाज मे रहकर समाज से अलग हैं। व्यक्ति असमर्थ है। नाहरसिंह उपन्यासकार के व्यक्तिपरक पहलू को प्रस्तुत करता है, 'नियति का चक्र चल रहा है और इस नियति के चक्र की गति बदलने मे असमर्थ हू। तुम असमर्थ हो, हर एक आदमी असमर्थ है। बनाने और मिटाने वाला कोई दूसरा ही है, हम तो स्वय बनाए और मिटाए जाते हैं।[२]' रानी मानकुमारी, मकोला, देवलकर, शिवानन्द शास्त्री, मसूर ज्ञानेश्वर-राव और मेजर नाहरसिंह सभी व्यक्तिचरित्र हैं, और इन व्यक्तिचरित्रो की अक्षमता और असामर्थ्य को बताना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। व्यक्ति-परक उद्देश्य की स्थापना मे किसी मतवाद से लेखक प्रभावित नही हुआ है, इसलिए यह व्यक्तिवादी रचनाओ की कोटि मे न रखकर, व्यक्तिपरक-उपन्यासो की कोटि मे रखा गया है।

रेखा (१९६४)

कथासार—'रेखा' मे भगवतीचरण वर्मा ने शरीर की भूख से पीडित, एक असहाय नारी की कथा कही है। रेखा विश्वविद्यालय की एम० ए० की छात्रा थी और प्रभाशकर ख्यातिप्राप्त दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर। रेखा ने श्रद्धा-तिरेक से प्रभाशकर से विवाह कर लिया, किन्तु उनके प्रति उसका शरीर निष्ठावान न रह सका। रेखा ने अपनी आत्मा का अणु प्रभाशकर को समर्पित कर दिया। एक भयानक द्वन्द्व मचा हुआ था उसमे, भावना और बुद्धि का असह्य सघर्ष चल रहा था, जिसमे रेखा डूबती चली जा रही थी। कभी भावना बुद्धि पर विजय पाती और कभी बुद्धि भावना पर। सोमेश्वर, निरन्जन कपूर, शशिकपूर, यशवन्तसिंह और योगेन्द्रनाथ—एक के पश्चात्

---

१. वही, ३२१ और ३२४।

२ भगवतीचरण वर्मा : सामर्थ्य और सीमा पृ० ६६।

दूसरा प्रेमी आता गया और वह सबको अपना शरीर समर्पित करती गई। योगेन्द्रनाथ, उसे इस जीवन से उबारने के लिए, स्वीडिश विश्वविद्यालय में नौकरी स्वीकार कर लेता है। प्रोफेसर को पक्षाघात हो जाता है और रेखा योगेन्द्रनाथ के साथ जाना चाहती है किन्तु अन्तर्द्वन्द्व के कारण जा नही पाती। एयरपोर्ट पर जब पहुचती है योगेन्द्र का प्लेन जा चुका था और घर लौटने पर देखती है, मरणासन्न प्रोफेसर प्रभाशकर को और रेखा पागल हो गई।

वस्तु-विधान—रेखा उपन्यास का केन्द्रबिंदु है जिसके इर्दगिर्द अन्य पात्रो की कथायें चक्कर काटती हैं। प्रभाशकर और रेखा का विवाह, बदलते प्रेमियो के क्रम, डा. प्रभाशकर का क्रोध और विरोध, प्रभाशकर को पक्षाघात और प्रभाशकर का रेखा को छोडकर जाने के फलस्वरूप हार्ट एटेक से मृत्यु, इस उपन्यास की मुख्य घटनाये हैं। उपन्यास मे घटनाओ के विकास की तर्क-सगत योजना है। प्रभाशकर और रेखा के विवाह की पृष्ठभूमि तैयार की गई है, प्रेमियो के बदलते क्रम और अन्त मे हार्टएटेक से मृत्यु जैसी घटनाओ को मनोवैज्ञानिक उहापोह के कारण तर्क-सगत योजना मिल गई है। कार्यकारण की शृङ्खलाबद्ध कडी होने के कारण यह उपन्यास वस्तु-अन्विति का सुन्दर उदाहरण है क्योकि एक भी घटना रेखा के जीवन से अन्यत्र घटित नही हुई है।

चरित्र-विधान—रेखा इस उपन्यास की नायिका है इसलिए इस उपन्यास को नायिका-प्रधान उपन्यास मानना चाहिये। मनोवैज्ञानिक-शिल्प के आधार पर, चरित्र-चित्रण की दिशा मे, रेखा एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। सभी पात्रो के बीच लेखक रेखा, प्रभाशकर और योगेन्द्रनाथ के चरित्र को उभार सका है। इस उपन्यास के चरित्र-चित्रण और विशेषत. रेखा के चरित्र पर आक्षेप लगाया जा सकता है कि इस उपन्यास की नायिका रेखा असन्तुष्ट काम-वासना के कारण नारी जीवन के घिनौने चित्र प्रस्तुत करती है अश्लीलता और अनैतिकता का आरोप लगाया जा सकता है किन्तु मानसिक अन्तर्द्वन्द्व के कारण रेखा लेखक की एक सुन्दर रचना है। रेखा के जीवन पर लेखक ने अपना जीवन दर्शन थोपने का प्रयास नही किया है और विकास की रेखाओ को पार करती हुई, उसके जीवन मे उतार-चढाव आते रहते हैं। कभी भावना, बुद्धि पर विजय पाती चली जा रही है। उसका कुल है, समाज है और इस कुल और समाज की मर्यादाए है।[1]' एक स्थान पर उसका

---

१ भगवतीचरण वर्मा : रेखा, पृ० ११४।

अन्तर्द्वन्द्व प्रकट होता है 'उसके अन्दर से फिर किसी ने कहा, कडी आवाज मे झूठ ! झूठ !! झूठ !!! तुम यह क्यो नही स्वीकार करती कि तुम्हारे शरीर की भूख एकाएक जाग पडी है और इस भूख को दबाना तुम्हारे वश में नही है। इस शरीर की भूख से विकल होकर तुम जी रही हो और अपनी आत्मा को धोखा दे रही हो।[1]' रेखा का अन्तर्द्वन्द्व इस उपन्यास के चरित्र-विधान का प्राण है। अन्य पात्रो मे प्रभाशकर, सोमेश्वर, निरञ्जन कपूर, शशिकपूर, यशवतसिंह और योगेन्द्रनाथ-सभी प्राणवान पात्र है किन्तु रेखा के व्यक्तित्व के सामने वे नगण्य हैं।

उद्देश्य—इस उपन्यास को दाम्पत्यग्रस्त उपन्यास को सज्ञा देकर यह कहा गया है कि 'दाम्पत्य की दृष्टि से यह उपन्यास एक असमान प्रेमविवाह की मनोवैज्ञाननिक गुत्थियो और ग्रथियो की कथा है या एक पत्नी के क्रमिक पतन का इतिहास। लेकिन यह वृद्धस्य भार्या की कथामात्र नही है।[2] यह न केवल असमान प्रेम विवाह की मनोवैज्ञानिक गुत्थियो और ग्रथियो की कथा है, न केवल एक पत्नी के क्रमिक पतन का इतिहास और न केवल वृद्धस्य भार्या की कथा मात्र है। एक नारी के मन के भीतर उठने वाले वासना और विवेक के अन्तर्द्वन्द्व की कथा है। रेखा के जीवन मे प्रेमियो के क्रम बदलते गए। उसकी आखें अन्दरवाली आग से जल रही थी, उसका चेहरा उसके अन्दर वाली लाल आग से जल रहा था। वह प्यासी थी और उसे अपनी प्यास बुझानी थी।[3] लेखक का विश्वास है कि जीवन की प्रमुख भावना है भूख और प्यास। जिसे हम इच्छा या अभिलाषा कहते है वह भूख का ही तो दूसरा रूप है। यह सारा कोतूहल, उत्सुकता, इच्छा, अभिलाषा, प्रेरणा-ये सब इसी भूख के रूपान्तर है।[4] नारी अपने शरीर को समर्पित करके भी आत्मा से पति के प्रति विश्वस्त रह सकती है-यही उपन्यास का उद्देश्य है।

रेखा एक व्यक्तिपरक उपन्यास है। रेखा का अन्तर्द्वन्द्व एक नारी के व्यक्तिमन का अन्तर्द्वन्द्व है और यह एक सामाजिक समस्या नही है। दाम्पत्य-ग्रस्त उपन्यास का नाम देकर इस उपन्यास को सामाजिक उपन्यासो की श्रेणी

---

१. वही, पृ० ११७।

२. ज्ञानोदय : जनवरी १९६६, पृ० ११६।

३ रेखा, पृ० १६३।

४. रेखा, पृ० २६६।

मे स्थान देने का प्रयत्न किया जा सकता है किन्तु रेखा हमारे समक्ष केवल व्यक्ति रूप मे उभरकर आई है और उसमे सामाजिक चेतना का अभाव है। एक परिवार और दाम्पत्य जीवन की पृष्ठ भूमि के कारण और सामाजिक परिपार्श्व होने के कारण, इस उपन्यास को व्यक्तिपरक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिला है। रेखा के लेखक का विश्वास है कि व्यक्तिमन के भीतर अधकार ही अधकार है। 'उस अंधकार को दूर नही किया जा सकता। उसी अधकार मे रहना है हरेक को, जन्म से मृत्यु पर्यन्त। वह अन्धकार मनुष्य के अस्तित्व का ही तो एक भाग है। उस अन्धकार को स्वीकार करके, उस अन्धकार मे अपने को तन्मय करके जीवित करके जीवित रहा जा सकता है। उस अधकार को मनुष्य से पृथक करने वाली चीज है चेतना और चेतना जनित ज्ञान। यह ज्ञान, यह चेतना–ये मनुष्य के लिए अभिशाप हैं।[1]' अत व्यक्ति–मूल्यो और व्यक्ति–सत्य की स्थापना के कारण रेखा को व्यक्तिपरक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिलना चाहिये।

अन्य उपन्यास

'आखिरी दाव' (१९५०) मे चमेली के जीवन की परिस्थितिया उसे वेश्या बना देती हैं। रतन के साथ वह भाग जाती है और फिर रामेश्वर उसके जीवन मे आता है। राधा नामक वेश्या के चक्कर मे फसने के कारण, सेठ शिवकुमार की वासना का शिकार बनती है। रामेश्वर जुआरी हो जाता है, वह पकडा जाता है और चमेली आत्महत्या कर लेती है। इस उपन्यास मे बताया है कि आज की भौतिकवादी सभ्यता मे पैसा ही सब कुछ है। व्यक्ति के जीवन–मूल्यो का आधार पैसा हो गया है इसलिए उसका जीवन पथ पतनोन्मुख है। रामेश्वर एक स्थान पर कहता है- 'हम सब पैसे के गुलाम हैं धन हमारा ईश्वर है, हमारा अस्तित्व है–जो कुछ है वह धन है।[2]' पूंजीवादी समाज की बुराइयो की पृष्ठभूमि पर व्यक्ति के पतनोन्मुख जीवनमूल्यो को अभिव्यक्त किया है इसलिए यह व्यक्तिपरक उपन्यास है। 'अपने खिलौने' (१९५७) मे कलाभारती सस्था के इर्दगिर्द मडराने वाले व्यक्तियो के चित्र खींचे हैं जिनमे स्वार्थपरता है। यह भी आधुनिक व्यक्तियों के सडे गले जीवन मूल्यो का चित्र है।

---

१. रेखा, पृ० ३१८–३१९।

२. भगवतीचरण वर्मा आखिरी दांव, पृ० २३८।

'वह फिर नही आई' (१९६०) आत्मकथात्मक-शैली मे लिखा हुआ उपन्यास है। इसमे एक होटल मे श्यामला और नायक के बीच मित्रता हो जाती है। जीवनराम मे भी वही परिचय होता है। नायक जीवनराम को अपने दफ्तर मे नौकरी दे देता है। जीवनराम गबन कर देता है और श्यामला को अपनी वीभत्स कहानी नायक को सुनानी पडती है। भारत-विभाजन मे श्यामला को जीवनराम खो चुका था किन्तु सतीत्व भृष्ट होते हुए भी श्यामला मे पति के प्रति सच्ची भक्ति थी। पत्नी को प्राप्त करने के लिए जीवनराम ने गबन किया था और उसके नाम वारण्ट था। श्यामला ने अपना तन नायक को दिया और जीवन ने नायक का रुपया गबन किया। अन्त मे श्यामला नायक को रुपया लौटा देती है। नायक को हमेशा यह पीडा सालती है कि, श्यामला, वह फिर नही आई। लेखक ने नैतिकता के प्रश्न को व्यक्ति के जीवन मूल्यो के आधार पर अभिव्यक्त किया है। नायक सोचता है 'नैतिकता की दृष्टि से मै अपने आपको भयानक गिरा हुआ पाता हू। लेकिन मैं अपने से ही पूछता हू-यह नैतिकता क्या है? यह नैतिकता उतना ही बडा धोखा और छल है जितना हमारा सामाजिक सगठन।' व्यक्ति को केन्द्र मानकर, नैतिकता को नए जीवन-मूल्यो के आधार पर देखा है, इसलिए यह व्यक्तिपरक उपन्यास है।

भगवतीप्रसाद वाजपेयी

भगवतीप्रसाद वाजपेयी व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं। भगवतीप्रसाद वाजपेयी अपने उपन्यासो मे राजनीतिक और सामाजिक जीवन को चित्रित नही करते हैं, इसका कारण यह है कि वाजपेयी व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं। उनका मत है कि यदि व्यक्ति उन्नत होगा तो समाज स्वत उन्नत हो जायगा। भगवतीप्रसाद वाजपेयी न वर्गवादी है और न व्यक्तिवादी किन्तु व्यक्तिपरक हैं क्योंकि इन्होने समाज के परिपार्श्व मे व्यक्तियो को चित्रित किया है। इनके व्यक्ति समाज के अ ग है, समाज से भटके होकर व्यक्तिवादी दर्शन की उद्घोषणा नही करते है। 'प्रेमपथ' (१९२६) से लेकर आज तक दो दर्जन से अधिक उपन्यास रच चुके हैं और इस विवेच्यकाल के उपन्यासो मे 'चलते-चलते' (१९५१) 'पतवार' (१९५२), 'मनुष्य और देवता' (१९५४) 'धरती की सास' (१९५५) 'निर्यातन' (१९५५) 'भूदान' (१९५५) 'यथार्थ मे आगे' (१९५५) 'एक प्रश्न' (१९५६) 'हिलोर' (१९५६) 'सूनी राह' (१९५६) 'विश्वास का वल' (१९५६) 'उनसे न कहना' (१९५७) 'रात और प्रभात' (१९५७) 'एकदा' (१९५९) 'पाषाण की खोज' (१९५९) 'दरार और धुआ'

(१९६०) 'सपना बिक गया' (१९६१) 'टूटा टी सेट' (१९६२), 'चन्दन और पानी' (१९६२) और 'टूटते बन्धन' (१९६३) इनकी उपन्यास-कृतिया है। लगभग दो दर्जन उपन्यासो की विवेचना इस शोध-प्रबन्ध के सीमित आकार के भीतर सम्भव नही है।

यथार्थ से आगे (१९५५)

कथासार—इसकी कथा दो पुरुष पात्रो प्रदीप और वीरेन्द्र से सम्बधित है। प्रदीप रजना और अरुणा से प्रेम करता है। रजना गम्भीर और शान्त थी और अरुणा वाचाल। प्रदीप प्रेम के इस त्रिकोण मे वीरेन्द्र से रजना का विवाह हो जाता है। यह केवल एक प्रेम-कहानी है जो आदर्शवाद की ओर अग्रसर होती है।

वस्तु-विधान—उपन्यास मे रजना की कथा मुख्य है और प्रदीप, वीरेन्द्र और अरुणा की कथाए, रजना की कथा को आगे बढाती है। इसके वस्तु-विधान मे व्यक्ति और समाज का सघर्ष प्रतिध्वनित होता है। कथानक के विभिन्न सूत्रो के बीच सम्बन्ध स्थापित कर, उनमे सजीवता भरने का कार्य वाजपेयी जी ने किया है किन्तु वीरेन्द्र और हेमा और गोपीलाल और उसकी पत्नी की कथा का उपन्यास की मुख्य-कथा से कोई सम्बन्ध नही है, इसलिए उपन्यास मे अन्विति का अभाव है।

चरित्र-विधान—रजना इस उपन्यास की नायिका है और अन्य मुख्य पात्रो मे प्रदीप, वीरेन्द्र और अरुणा आदि है। अरुणा और रजना-नारी जीवन के दो रूपो को अभिव्यक्त करती है। अरुणा आधुनिक फैशनेबल नारी की प्रतीक है तो रजना एक आदर्शवादी नारी की। अरुणा मे वाचालता और चचलता है और रजना मे गम्भीरता। वीरेन्द्र व्यक्तिवादी चेतना का प्रतीक है। प्रदीप मे सामाजिक-चेतना है। चरित्रो का अकन मनोविज्ञान के सहारे किया गया है। मनोवैज्ञानिक शिल्प वाजपेयी जी की विशेषता है। रजना, अरुणा, प्रदीप और वीरेन्द्र सभी प्राणहीन पात्र हैं, उनमे जीवन की चेतना का अभाव है।

उद्देश्य—वाजपेयी जी भूमिका मे स्पष्ट करते है वास्तव मे मनुष्य वह मरता है जो भाग खडा होता है या हार मानकर रो पडता है। जीवन की हार मे असफलता यदि यथार्थ है, तो आदर्श की ओर हमारी गति, आदर्श की ओर हमारा प्रस्थान, आदर्श की ओर हमारा सर्वस्व-उत्सर्ग, यथार्थ का-अनुचर नही, उसके आगे का विजय-चिन्ह है।[1] यथार्थ से आगे वह

---

१. भगवतीप्रसाद वाजपेयी, यथार्थ से आगे, भूमिका।

आदर्श की स्थापना करना चाहता है। रंजना जीवन भर यह मानती है कि वह यथार्थ से समझौता करके आदर्श की लाज कभी नही लुटने देगी।

इस उपन्यास मे व्यक्ति और समाज का संघर्ष है और यह बताया है कि व्यक्ति अपने अस्तित्व और स्वतन्त्रता के लिए लगातार संघर्ष करता है। रंजना का आदर्श व्यक्ति मूल्यो की स्थापना करता है। वीरेन्द्र ने व्यक्तिवादी चेतना का प्रतिकार कर समाज के परिपार्श्व मे व्यक्ति के आदर्श और व्यक्ति मूल्यो की प्रतिष्ठा की है। इस उपन्यास मे समाज के स्थान पर, व्यक्ति मूल्यो की स्थापना करते-हुए व्यक्ति उभरते है इसलिए यह व्यक्ति परक उपन्यास है।

अन्य उपन्यास

'चलते-चलते' (१९५१) मे राजेन्द्र के जीवन मे कई नारिया आती हैं और सभी के साथ वह सम्पर्क स्थापित करता है। इसमे उसकी छोटी भाभी, पति परित्यक्ता अर्चना, विधवा लाली, हीरा, जमुना और वैशाली है। पहले राजेन्द्र बडी भाभी से प्रेम करता था, इसलिए उसकी भाभी ने पति का दूसरा विवाह करा दिया। राजेन्द्र छोटी भाभी से प्रेम करने लगा। उसके भैया की मृत्यु हो जाती है और उसका प्रेम अक्षुण्ण रहता है। अस्वाभाविक घटनाओ से यह उपन्यास भरा हुआ है। राजेन्द्र पतनोन्मुखी व्यक्ति का चित्र है। 'पतवार' (१९५२) मे गांधीवादी विचारधारा अभिव्यक्त हुई है। 'मनुष्य और देवता' (१९५४) मे यौन कुण्ठाओ से पीडित स्वर्णलता की कहानी है, जो आदर्शों का वरण करके मनुष्य से देवता बन जाती है। इनके सभी उपन्यासों मे अस्वाभाविक घटनाये, प्राणहीन पात्र और थोथा आदर्शवाद मिलता है और मनोविज्ञान का आधार और उपन्यासो की विपुलता होने पर भी, वाजपेयी जी की हिन्दी उपन्यास साहित्य को देन नगण्य है।

उपेन्द्रनाथ अश्क

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं। लेखक का कथन है 'मैं जिन्दगी से हमेशा जुडा रहा हू—वैयक्तिक तौर पर भी और साहित्यिक तौर पर भी। वास्तव मे मेरे जैसे लेखक की यह नियति है कि वह जिन्दगी से कटकर न लिख सकता है न जी सकता है। लेकिन अच्छा लेखक चौबीसो घडी जिन्दगी से जुड़ा रहे, यह सम्भव नही। वह जब उन अनुभूतियो को, जिनका वह उपभोक्ता होता है, कलम की नोक पर उतारता है तो उनसे नितान्त असम्पृक्त हो जाता है।''' अपने सृजन के क्षणो मे मैं असम्पृक्त

होता हू, बाकी वक्त जिन्दगी से जुडा हुआ ।............... लेकिन सागर किनारे की हल्की लहर, जैसे सागर बीच की तरग से जुडी होती है, वैसे ही मैं एक ओर बैठा भी जिन्दगी को अपने से जुडा पाता हूं ।'[1] व्यक्ति–वादी उपन्यासकार अपने अस्तित्व और अकेलेपन को शेष जिन्दगी से कटा हुआ महसूस करता है और सामाजिक उपन्यासकार केवल जीवन और समाज से जुडा हुआ महसूस करता है। उपेन्द्रनाथ जीवन और समाज से जुडे हुए होने पर भी अपने को जीवन से अलग महसूस करते हैं । इसलिए उपेन्द्रनाथ 'अश्क' व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं । एक आलोचक की मान्यता है कि अश्क की जीवन दृष्टि इन दो प्रगतिवादी विचारधाराओ के बीच उस पथ को प्रशस्त करती है जो व्यक्तिचिन्तन के अधिक निकट है, परन्तु समष्टिचिन्तन से भी दूर नही है । उनकी उपन्यास-कला का उद्देश्य व्यक्तिमूलक है और वह व्यक्तिसत्य की जीवन दृष्टि से अनुप्राणित है ।[2] अश्क व्यक्तिमूलक या व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं, व्यक्तिवादी उपन्यासकार नही है। डा सुषमा धवन की धारणा भ्रान्त है कि अपनी रचनाओ मे पात्रो के जीवन की समस्याओं को व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से निरूपित किया गया है ।[3] यह उपन्यास व्यक्तिवादी नही है, क्योकि समाज के परिपार्श्व और पृष्ठभूमि पर व्यक्ति चिन्तन और व्यक्ति–मूल्यो की स्थापना हुई है, इसलिए उपेन्द्रनाथ अश्क के उपन्यासो को व्यक्तिपरक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिलना चाहिये ।

'सितारो के खेल' (१९४०), 'गिरती दीवारें' (१९४७), 'गर्मराख' (१९५२), 'बडी बडी आखे' (१९५५), 'पत्थर अलपत्थर' (१९५५) और 'शहर मे घूमता आईना' (१९६३) उपेन्द्रनाथ अश्क की उपन्यासकृतियां हैं, जिनमे पहली दो कृतियो 'सितारो के खेल' और 'गिरती दीवारें' को छोड़ कर, अन्य सभी कृतियां इस विवेच्यकाल की है ।

गर्म राख

कथासार—सत्याकन्या पाठशाला की अध्यापिका है। अनेक पुरुष उसकी ओर आकृष्ट होते हैं । कवि चातक उससे प्रभावित होकर सस्कृति–समाज की स्थापना करते हैं । यहा सत्या जगमोहन के प्रति आकृष्ट होती है ।

---

१. उपेन्द्रनाथ अश्क . नई धारा, फरवरी–मार्च ६६, पृ० ११८ ।

२. इन्द्रनाथ मैदान : उपन्यासकार अश्क : पृ० १७–१८ ।

३. डा० सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास, पृ० ११९ ।

जगमोहन दुरो से प्रेम करता है और दुरो हरीश से। सत्या जगमोहन के साथ शारीरिक सम्बन्ध भी स्थापित कर लेती है। जगमोहन सत्या के साथ बधना नहीं चाहता है। सत्या का विवाह एक कुरूप और भोंड़े मेजर से होता है और वह अफ्रीका चली जाती है। जगमोहन यह मानता है कि सत्या के साथ विवाह करके उसकी प्रतिमा कुण्ठित हो जाएगी, इसलिये वह सत्या से दूर भागता है। जगमोहन के भीतर प्रेम की गर्म राख जलती रहती है।

वस्तु-विधान—सत्या और जगमोहन की कथा मुख्य है और अनेकानेक कथाए प्रासगिक है। अन्य कथाओ मे एक ओर सस्कृति समाज के पात्रो—धर्मदेव वेदालकार, कवि चातक जी, नीरव, डा० घनानन्द की है तो, दूसरीओर 'स्टडी सर्कल' के हरीश और उसके अन्य पात्रो की कथाए हैं। इन दोनो सस्थाओ के बीच सम्बव सूत्र जोडने का काम दुरो का रहा है और कुछ अशो मे जगमोहन का रहा है। सत्या और जगमोहन को कथा का केन्द्र मानें तो कवि चातक, दुरो, हरीश और धर्मदेव वेदालकार को छोडकर, अन्य पात्रो की जीवनकथाए निरर्थक जान पडती हैं। उपन्यास के सभी सूत्र बिखरे पडे हैं। उपन्यासकार अपने लक्ष्य मे भटक गया है क्योकि वह पजाब के निम्नमध्यवर्गीय व्यक्तियो और कुण्ठाओ का चित्रण करने मे उलझ गया है। 'सस्कृति समाज' और 'स्टडी सर्कल' की सभाए जुडती हैं और व्यर्थ के वर्णनो और बातचीत मे उपन्यासकार पृष्ठ के पृष्ठ रगता चला जाता है। व्यर्थ के वर्णनो और पजाबी जीवन के अकन ने उपन्यास के वस्तु—सगठन को समाप्त कर दिया है। उपन्यास का चित्रफलक विस्तृत है और कथाओ की अनेक धाराएं बहती हैं। कुशल वस्तु विधान की विशेषता होती है कि सभी घटनाओ के सम्बध सूत्र स्थापित करती हुई लक्ष्य की ओर बढ़ती है। यह अनेक दिशाओ मे बटकर बिखरने से शक्तिहीन हो गई है और इस दृष्टि से 'गर्मराख' पर सन्तोष नही होता है। हरीश, प्रो० ज्योतिस्वरूप और धर्मदेव वेदालकार की कथाए व्यर्थ हैं और यह मानना गलत है कि अश्क के तीसरे उपन्यास 'गर्म राख' का कथानक अपेक्षाकृत अधिक सुगठित एव सुनियोजित है।[1]'

चरित्र-विधान—यह उपन्यास पात्रो का अजायबघर है। लाहौर के परिपार्श्व मे अनगिनत पात्रो का चित्रण है। 'व्यक्तियो की आकृति, वेशभूषा, बोलचाल, विचार व्यवहार आदि के यथार्थ वर्णन मिलते है। जगमोहन और

---

१. शिवनारायण श्रीवास्तव हिन्दी उपन्यास, पृ० ३४८।

सत्या निम्न मध्यवर्गीय युवक-युवतियो का प्रतिनिधित्व करते हैं। मालती के सम्पादक गोपालदास, पडित धमदेव वेदालकार साप्ताहिक वीर-विक्रमादित्य के सम्पादक शुक्लाजी, शाता विद्यालय की प्रिन्सिपल श्रीमती शातादेवी प्रभाकर, श्री नीरवजी, सभी निम्नमध्यवर्गीय जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। जगमोहन एक कमजोर पात्र है। दुरो एक शक्तिशाली पात्र है, वह उपन्यास की नायिका बनने की क्षमता रखती है। चातक जी कवि प्रतिनिधि है। हरीश तथा दुरो प्रगतिशील शक्तियो का प्रतिनिधित्व करते हैं। जगमोहन का चरित्र गर्म राख का प्रतिनिधित्व करता है। उसका जीवन राख बन चुका है किन्तु वह अब भी गर्म है। 'गर्मराख' मे सम्पादक गोपालदास, कवि चातक, पण्डित धर्मदेव वेदालकार और साम्यवादी हरीश आदि केवल वर्गगत पात्र हैं। सत्या और दुरो मे व्यक्तित्व है, लेकिन उनके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं हो पाया है।

उद्देश्य—निम्न मध्यवर्गीय-समाज के परिपार्श्व मे एक युवक की यौन कुण्ठाओ का चित्रण ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। मुख्य रूप से प्रेम की भूख और पेट की भूख को उपन्यास मे प्रस्तुत किया गया है। लेखक का कथन है कि 'प्रेम की भूख और पेट की भूख—दो महान धुरिया है जिनके इर्दगिर्द अधिकाश लोगो के जीवन का चक्र घूमता है, लेकिन प्रेम प्रेम मे अन्तर है। प्रेम मारता भी है, जिलाता भी है, निष्क्रिय भी कर देता है और कर्मरत भी, मौन भी होता है और मुखर भी। गर्म राख मे उसके कई रग है।[1]' इसका नायक निम्न मध्यवर्गीय जीवन की ह्रासोन्मुख प्रवृत्तियो का प्रतीक है। प्रेम के सम्बध मे जगमोहन के विचार है, 'छिपकली सी यह मोहब्बत, आज के युग की लजीली भीरु, अपने नाम ही के सहम से जो सिमट जाय।[2] प्रेम के प्रति यह दृष्टिकोण सामाजिक न होकर, व्यक्तिपरक है। लाहौर का समाज भी यहा है। लाहौर अपनी सभी विशेषताओ के साथ यहा उपस्थित है राजेन्द्र यादव के अनुसार—'एक शहर अपनी अधिकतम विशेषताओ के साथ किसी भी उपन्यास मे इतना मुखर हुआ ही नही, जितना लाहौर गर्म राख मे हुआ है, यह इसलिये नही कि 'अश्क' ने लाहौर की पूरी टापोग्राफी का नक्शा बयान कर दिया गया है। नही, वहां की भीड, वहा की धूल धक्कड, कहकहे, गन्दगी, भैसो की पू छो से उछलती हुई कीचड, तागे, फैशन, सुबह-शाम, स्त्री पुरुष, पजाबी गालिया और सम्बोधन—सब कुछ इतने उभकर आये हैं कि आप उपन्यास समाप्त करते हैं तो लगता है, जैसे लाहौर के उसी वातावरण मे रहकर आ रहे हैं।[3]' 'इस उपन्यास मे लाहौर की पृष्ठभूमि पर निम्नमध्य-

---

१. उपेन्द्रनाथ अश्क गर्मराख, पृ० १६।
२ वही, पृ० २४५-२४६।
३ गर्मराख . पृ० २४।

वर्गीय युवक की कुण्ठाओं का चित्रण हुआ है और इस चित्रण मे लेखक का जीवन के प्रति व्यक्तिपरक दृष्टिकोण प्रकट हुआ है, इसलिए यह व्यक्तिपरक उपन्यास है।

इस उपन्यास मे पात्रो की सामाजिकता उभर कर नहीं आई है और वे व्यक्ति के रूप मे केवल स्त्री पुरुष हैं। जगमोहन सोचता है. 'भगत-राम, शुक्ला जी, कवि चातक और उसमे क्या अन्तर है? ... उसने सोचा—जैसे वे भूखे हैं, वैसे ही वह है। अन्तर केवल यह है कि वे उसे प्रकट कर देते हैं और वह नैतिकता का अवतार बना उन पर क्रुद्ध होता है।[१]' समाज के परिपार्श्व मे पात्रो को व्यक्तियो, स्त्री पुरुषो के रूप मे चित्रित कर, व्यक्तियो की यौन कुण्ठाओ को बताने के कारण, यह व्यक्तिपरक उपन्यास है। आलोचको ने इसे सामाजिक यथार्थवादी,[२] वैयक्तिक,[३], व्यक्तिवादी[४] और प्रकृतिवादी[५] माना है किन्तु यह केवल व्यक्तिपरक उपन्यास है क्योकि लाहौर के इस वातावरण के बीच केवल स्त्री—पुरुषों के रूप में व्यक्ति उभरते हैं, और व्यक्ति की यौन कुण्ठाओ को अभिव्यक्त कर, प्रेम के प्रति व्यक्तिपरक दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है।

बड़ी बड़ी आँखें (१९५५)

कथासार—'बडी बडी आखे' अश्क का आत्म कथात्मक शैली से लिखा हुआ उपन्यास है। इस उपन्यास के नायक सगीत की पत्नी पित्तो के दुखद निधन से नायक के मन मे एक गहरा अवसाद छा जाता है। पित्तो के मोती जैसे श्वेत दात और उसका मधुर साहचर्य उसे सदैव याद आता है। 'वह अशान्ति के झूले मे झूल रहा था, इसलिए उसके पिता के मित्र, निरन्जन सिह जी ने देवनगर के सस्थापक देवा जी के नाम, एक चिट्ठी देकर उसे रवाना किया। मन की अशान्ति को दूर करने हेतु वह देवनगर आया किन्तु वहा भी उसे शान्ति नही मिली। एक दिन सध्या को एक आयोजित उत्सव मे देवाजी की पुत्री वाणी उसके साथ बैठ जाती है तो देवाजी, तीरथराम और न जाने

---

१. उपेन्द्रनाथ अश्क : गर्मराख, पृ० २४२।
२ डा० गणेशन, हिन्दी उपन्यास—साहित्य का अध्ययन, पृ० ८३।
३. वही, पृ० २४७।
४. डा० सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास, पृ० १२७।
५. शिवदानसिह चौहान, साहित्यानुशीलन, पृ० २३७।

कितने लोगो को हैरत होती है। धीरे धीरे वाणी और सगीत के बीच रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। तीरथ राम उसके साथियो की जलन और ईर्ष्या 'अप्रिल फूल' के दिन प्रकट होती है, जब सगीत पर नाबालिग लडकी को बहकाने का झूठा अभियोग लगाकर सरे आम मजाक उडाया जाता है। एक गरीब बालक नवी के देवनगर की 'प्रैक्टिकल स्कूल' मे प्रवेश के लिये देवाजी से मतवैभिन्य हो जाता है, किन्तु वाणी नवी को प्रवेश दिला देती है। नवी को नौकरी से निकालने का षडयन्त्र चलता है और इस घटना के फलस्वरूप सगीत इस खोखले और झूठे आदर्शवादी देवनगर से त्यागपत्र देकर चला आता है।

वस्तु-विधान—इसमे अन्य प्रसगो और घटनाओ की व्यर्थ की भीड भाड नही है। सगीत की कथा उपन्यास की केन्द्र विन्दु है और उसके चारो ओर देवनगर के पात्रो—देवाजी, वाणी आदि मुख्य पात्रो की कथा जुड गई है। अन्य पात्रों तीरथराम और नवी आदि गौण कथाओं का प्रयोग पात्रो के चरित्र के विकास, उद्देश्य को बढाने मे हुआ है। इसके कथानक मे सक्षिप्तता है व घटनाओ के क्रम जुडे हुए हैं। घटनाक्रम मे सगठन और गति है। एकाध स्थान पर नायक ने पिछले जीवन को दोहराया है और नायक का पिछला जीवन उपन्याम की पृष्ठभूमि है, इसलिए वह कथा के बिखरे सूत्रो को जोडता है। कुछ-आलोचको ने इसको रोमान्टिक उपन्यास और कुछ ने इसको राजनैतिक उपन्यास की सज्ञा दी है। इसमे रोमान्स और राजनीति दोनो हैं और दोनो को इस उपन्यास की वस्तु सगठन मे स्थान मिल गया है। यह वस्तु सगठन का सुन्दर उदाहरण है।

चरित्र-विधान – सगीत एक आदर्शवादी युवक है, जिसके जीवन का ध्येय केवल आदर्शों की स्थापना करना है। वाणी की बडी बड़ी आखो मे सगीत के आदर्शो को पूरा करने के बडे—बडे सपने हैं। एक आलोचक के शब्दो मे 'सभी पात्र एक दूसरे से शकित हैं। ··· देवाजी स्वय अपनी धर्म पत्नी से आतकित हैं, मघावर साहब देवाजी की सौम्यता से आतकित हैं, ज्ञानी जी स्वय अपनी आदर्शवादिता के मिथ्या बोझ से सत्रस्त है, तीरथराम अपनी मूर्खता से पीडित, सगीत अपने वैचेत्रिक अहम् से पीडित है, वाणी अपने मानसिक दबावो के कारण रुग्ण है, नवी अपने संस्कारो से पीडित है, नन्दलाल एक पछतावे के साथ दूसरा समझौता करता घूमता रहा है, सारा आश्रम विकल मनस्यिति वाले व्यक्तियो का ऐसा विचित्र संग्रहालय है कि स्वाभाविकता और औचित्य दोनो को ठेस पहुचती है। साधारण मनोवैज्ञानिक

आधार पर 'बड़ी बड़ी आंखें, दमी, कुण्ठाग्रस्त मनःस्थितियों वाले पात्रों का एक समूह है, जो पुंसत्वहीन उमस मे घुट घुट कर विकसित होता है, और वह उमस और घुटन ऐसी है कि उसके शिकन्जे में सभी प्रायः अर्द्ध विक्षिप्त मनःस्थिति मे ऐंठ ऐंठ कर रह गए हैं।[1]' इसलिए आलोचक ने इस उपन्यास को सत्रस्त पात्रो की घटनाहीन कथा कहा है। उपन्यास के सभी पात्र सपाट और अविकसनशील हैं, वे केवल यान्त्रिक सांचे और लेखक के इशारों पर चलने वाले कठपुतले हैं। इन पात्रो का अपना अस्तित्व नहीं हैं और वे केवल लेखक द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं। प्राणों का स्पन्दन उनमें नहीं है।

उद्देश्य–सगीत कहता है देवनगर मुझे उस देश सा लगता है जिसका प्रधान–मन्त्री उदाराशय, स्वप्नशील और भविष्य द्रष्टा हो, पर जिसके सहकारी अवसरवादी, चाटुकार और खुशामदी हो और जिसके दफतरो मे भ्रष्टाचार और स्वजनपालन का दौर दौरा हो। उप प्रधानमंत्री की अच्छाई, स्वप्नशीलता और भविष्यदर्शन के बावजूद उस देश का क्या बन सकता है? यदि वह एक सिरे से दूसरे सिरे तक सारे नजाम को नहीं बदल सकता तो उसे एक के बाद एक समझौता करना पड़ेगा। उसके सपने और आदर्श धरे के धरे रह जाएगे और देश रसातल मे चला जाएगा।[2]' यह उपन्यास का आरोपित उद्देश्य है। इस आरोपित प्रतीक के कारण इसको प्रतीकात्मक उपन्यास माना जा सकता है। इस उद्देश्य के मूल मे व्यक्ति स्वातन्त्र्य का स्वर मुखरित होना है। राजनीतिक वातावरण के बीच व्यक्ति की घुटन इसमे है, इसलिए यह व्यक्तिपरक उपन्यास है। यह एक ऐसे आदर्शवादी युवक की कथा है जो आदर्शों की उपलब्धि के लिए छटपटा रहा है। इस उपन्यास का एक भी पात्र सामाजिक व्यवस्था समूह के प्रति आस्था नहीं रखता है। व्यक्ति का आश्रम जीवन के प्रति विद्रोह इस उपन्यास मे प्रकट हुआ है। देवनगर व्यक्ति स्वातन्त्र्य की हत्या करता है, इसलिए सगीत ने इस 'रेजिमेन्टेड' जीवन का विरोध किया है। देवाजी सामाजिक जीवन के खोखले आदर्शवाद के प्रतीक हैं। अश्क का विश्वास है कि व्यक्ति को आश्रमो और सस्थानो की घुटन से मुक्त किया जाना चाहिए। व्यक्ति स्वातन्त्र्य का स्वर प्रमुख होने से इस उपन्यास को राजनीतिक उपन्यास की सज्ञा न देकर, व्यक्तिपरक उपन्यास माना गया है।

---

१ आलोचना १७, जनवरी १९५६, पृ० १११–११२।
२. उपेन्द्रनाथ अश्क 'बड़ी बड़ी आंखें, पृ० २३५।

पत्थर अल–पत्थर (१९५५)

कथासार —मुर्ग की बाग के साथ हसनदीन घोडवान की आख खुली और वह पौ फटने के पहले अलपत्थर ले जाने के लिये तैयार हो गया। बस स्टैन्ड पर उसने खन्ना साहब को देखा, जिनके कन्धे पर एक सुन्दर सा कैमरा लटक रहा था। उस कैमरे को स्टैन्ड पर रखकर एक सिद्धहस्त फोटोग्राफर की तरह उन्होने अपनी बीबी और बच्चो के चित्र खीचे। सरदार हरनामसिंह ने खिलनमर्ग' जाने के लिये हसनदीन को खन्ना साहब के सामने प्रस्तुत किया। हसनदीन ने सोचा कि अगर ये सवारिया उसे सरकारी रेट पर ही पैसे दे तो उसे आने जाने के सतरह–अठारह रुपये मिलेंगे। अगर सेठ ने अलपत्थर लेक देखनी चाही तो वह गाइड के रूप मे साथ जाएगा। दो–एक रुपये बख्शीश मिलेगी चाय और खाने के पैसे अलग। यात्रा मे हसनदीन के सामने बीते हुए जीवन की स्मृतिया घूम गई। दस ग्यारह वर्ष पूर्व बायम ऋषि के हजूर मे गये थे और उन्ही की बदौलत उसके लडका हुआ था। उसने अपने बच्चे की तुलना खन्ना साहब के बच्चे से की। न जाने कितनी ही कल्पनाओ और सपनो मे डूबता इतराता वह चला जा रहा था। उसने सेठ को पह–चानने मे गलती की। 'अलपत्थर' तक जाने की अनिच्छा होते हुए भी उसे जाना पडा। 'अफरावट' की चोटी पर खन्ना साहब ने अपने परिवार का फोटो लेने के लिए कैमरा और स्टैन्ड निकाला। बाद मे कैमरा तो हसनदीन के कन्धे पर लटक रहा था, किन्तु 'स्टैन्ड' नदारद था। स्टैन्ड के लिये उसे चढाई चढनी पडी। चढते समय उसे याद आया कि शायद उसने बर्फ गाडी वाले की पीठ से बैग बाधते वक्त उसने रख दिया था। वहा स्टैन्ड नही था। सरदार हरनामसिह ने उसे घूसे और गालिया दी। खन्ना साहब ने अट्ठाईस नही,तीस नही,केवल पन्द्रह रुपये सरदार हरनामसिह के हाथ मे रखे। एक साईस बच्चे ने शोर मचाते हुए कहा कि स्टैन्ड उनके बैग मे था, मेम साहब ने उसे दबा दिया। सत्तरह रुपये मे से आठ रुपये ऊपर अफसरो को भिजवा दिये और शेष नी आपस मे बाट लिये। हसनदीन हवालात मे बन्द कर लिया गया और उस समय वे हसनदीन की बीबी को समझा रहे थे कि वह कहीं से पचास रुपये पैदा करे तो हसनदीन छूट सकता है। यह हसनदीन घोडावान की दर्दभरी कथा है।

वस्तु-विधान—शिल्प की दृष्टि से यह सगठित उपन्यास है। इस छोटे से लघु उपन्यास मे पर्याप्त कलात्मकता है। यह उपन्यास नही, केवल एक कहानी है। यह कहानी यात्रा वर्णन के रूप मे प्रस्तुत की गई है। लेखक

को भी इस विषय मे शका थी। लेखक का कथन है, 'हो सकता है जिस प्रकार 'वडी वडी आखें' मे सस्मरण के कुछ गुण आ गये हैं, उसी प्रकार 'पत्थर अल पत्थर' मे यात्रा के वर्णन के कुछ गुण आ गये हैं। मैंने तो अपने जाने जैसे 'वडी वडी आखें' सस्मरण नही उपन्यास लिखा, वैसे ही 'पत्थर अल पत्थर' भी यात्रा वर्णन नही, उपन्यास ही लिखा है।[1]' अश्क ने, टगमर्ग से अलपत्थर तक के पथ मे यह कहानी इतनी कुशलता से वुनी है कि हसनदीन की सारी ट्रेजडी साकार होकर हमारे सामने आ जाती है। प्रासगिक कथा मे खन्ना साहब के परिवार की कथा हसनदीन की कथा से पूर्ण रूप से जुडी है। खन्ना साहब के परिवार का अलग अस्तित्व ही नही है।

चरित्र-विधान—हसनदीन कश्मीर मे घोडावानो का प्रतिनिधि है। इसके अतिरिक्त मध्य वर्ग के कुछ पात्र हैं—खन्ना साहब, उनकी पत्नी, उप्पल साहब, उनकी भतीजी और कुछ अन्य सहयात्री। खन्ना साहब मध्य वर्ग के कन्जूस व्यक्ति के प्रतीक हैं। हसनदीन एक आस्तिक व्यक्ति है, नमाज से ही उपन्यास प्रारम्भ होता है और नमाज से ही समाप्त हो जाता है। हसनदीन एक परम्परागत शोषित पात्र है।' टन्गमर्ग से लेकर अलपत्थर की जमी हुई झील तक के पथ की पृष्ठ भूमि मे अश्क ने घोडावान हसनदीन को चित्रित किया है। पत्थर अल पत्थर देश विभाजन के वाद कश्मीर पर पाकिस्तानियो के आक्रमण के कारण आई तवाहियो के मारे और अपने रोजगार की आज की मन्दी के शिकार घोडावान हसनदीन का दर्द भरा चित्र प्रस्तुत करता है।[2] इस उपन्यास मे, हसनदीन की पीडा, अभाव और वेवसी का यथार्थ चित्रण हुआ है। लेखक ने हसनदीन के चरित्र और व्यक्तित्व को सपाट रूप मे हमारे सामने प्रस्तुत किया है, जिसमे उसकी वेवसी, निराशाए, अभाव और आर्थिक जडता प्रकट हो गई है। सपाट चरित्र होने से इसको हम ट्रेजडी का समतल पठार कह सकते हैं, पहाड की चढाई नही। यह हसनदीन के जीवन का केवल एक चित्र है, उसके जीवन के कई चित्रो का एलबम नही है। चरित्र की दृष्टि से भी इसका शिल्प कहानी के अधिक निकट है।

उद्देश्य—'अलपत्थर' की यात्रा के परिपार्श्व मे हसनदीन के अभावों पीडाओ, इच्छाओ, आकाक्षाओ और दर्द को चित्रित किया है। सौंदर्य की पृष्ठभूमि पर यह जीवन की विकृति का चित्र है। हसनदीन के माध्यम से

---

१. उपेन्द्रनाथ अश्क, पत्थर अल पत्थर, पृ० ९–१०।
२. भैरवप्रसाद गुप्त, पत्थर अल पत्थर, पृ० २५।

अश्क ने निम्नवर्ग को प्रस्तुत किया है । निम्न वर्ग के साथ अश्क ने मध्यवर्ग के खोखलेपन को उघाडकर सामने रखा है। अतः यह कहा जा सकता है कि मध्यवर्ग की कंजूसी और खोखलेपन की पृष्ठभूमि मे एक गरीब घोडावान हसनदीन के दर्द को प्रस्तुत करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। आस्था और आस्तिकता के कारण घोडावान हसनदीन शोषण और अत्याचारो को झेलता रहता है और उसका दर्द निम्नवर्ग का दर्द है, वर्फ का दर्द है, वर्फ मे रहते इन्सानो का दर्द है और इस दर्द की अभिव्यक्ति उपन्यास मे हो सकी है। यह निम्नवर्ग के व्यक्ति का यथार्थ चित्रण और उसकी पीडा को अभिव्यक्ति देने वाला उपन्यास है। यह व्यक्ति की पीडा है, समाज की पीडा नही, इसलिए यह एक व्यक्तिपरक उपन्यास है।

अश्क ने हमेशा समाज से अधिक व्यक्ति को महत्व दिया है। एक आलोचक की गलत मान्यता है, 'अश्क की उपन्यास कला मूलत. व्यक्ति चिंतन से प्रभावित होने पर भी 'पत्थर अल पत्थर' मे आकर हसनदीन के माध्यम से अशत समष्टि चिन्तन की ओर उन्मुख हो गई है। लेखक का समष्टि चिन्तन अथवा समाज मगल सम्बन्धी दृष्टिकोण हसनदीन के व्यक्तित्व मे मुखरित हुआ है।[1] हसनदीन को लेखक ने सामाजिक प्राणी के रूप मे न देखकर केवल एक व्यक्ति के रूप मे देखा है। हसनदीन की आशायें, आकाक्षायें और आस्तिकता सब कुछ वैयक्तिक हैं, किन्तु वह अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व भी करता दिखाई पडता है। अत समाज के परिपार्श्व मे व्यक्ति का चित्रण होने के कारण, इस उपन्यास को व्यक्तिपरक उपन्यास की श्रेणी मे स्थान दिया गया है।

शहर में घूमता आईना (१९६३)

कथासार—आईना का प्रतीक चेतन है। यह गिरती दीवारे के चेतन के अधूरे जीवन की कथा का विस्तार है। शिमला मे अपनी साली नीला के विवाह से लौटकर अपने घर जालन्धर मे चेतन प्रात. ही भटकने के लिए निकल पडता है। वह लाहौर मे एक अल्पवेतन भोगी प्रगतिशील कथाकार है। साली नीला के प्रति उसका आकर्षण था। नीला का विवाह हो जाने के वाद वह कुण्ठित मन लेकर जालन्धर मे रात्रि होने तक घूमता फिरा। उसकी भटकन मे उसके बीते जीवन की स्मृतियाँ सैरबीन की तरह उसकी स्मृति से गुजरती रही। अन्त मे लौटने पर उसके मस्तिष्क मे वरावर घूमते रहे:

---

१. डा० इन्द्रनाथ मदान, उपन्यासकार अश्क, पृ० ५५।

"वही दृश्य, वही घटनायें, वही वातें, उसका मुहल्ला, उसका शहर, उनके लोग, उनकी सोच-समझ और भाग दौड का सीमित क्षेत्र, अनन्त, वद्दा, देवू, प्यारू, रामदित्ता, हकीम दीनानाथ, निश्तर, रणवीर हूनर, महात्मा और योगी, स्वय सेवक और सेठ, लालू और अमरनाथ, पण्डित जुलियाराम और लाला मणिराम, फिर सबसे ऊपर उसके पिता। अपनी हीनदशा पर उसे अव्यक्त क्षोभ हुआ। उसके मित्र उससे कही आगे वढ गये हैं। उसकी अपनी आर्थिक स्थिति क्या है?"[1] और अन्त मे वह अपती पत्नी (चन्दा) के पास चला आया। गर्मी और तपिश से जला झुलसा, थकाहारा वह उस विशाल-झील के किनारे चला आया है—उसके ठहरे निथरे गहरे जल के किनारे ही उसकी नियति है।[2]

वस्तु-विधान—उपन्यासकार ने इस उपन्यास मे अनेक कथा-चित्रो की प्रदर्शनी लगादी है। उनमे परस्पर कोई सम्बन्ध नही है और न वे मिलकर उपन्यास की कथा को आगे बढाते हैं। चेतन की कथा और विशाल 'कैनवास' पर पजावी जीवन के अकन मे कोई सम्वन्ध सूत्र नही दिखाई पडता है। प्रासगिक कथाओ के सूत्र विखरे पड़े हैं और मुख्य कथा के साथ उनका कुछ भी सम्वन्ध नहीं है। प्रासगिक कथाओ मे अनन्त, वद्दा, देवू, प्यारू, रामदित्ता, हकीम दीनानाथ, निश्तर, रणवीर, हूनर, महात्मा, योगी, लालू, अमरनाथ, पडित जुलियाराम और लाला मणिराय की कथाये हैं। यह मानना केवल भ्रान्ति है कि 'सतही दृष्टि से देखने पर उपन्यास मे जो विखराव मालूम होता है, उसके पीछे एक पैटर्न है। अन्तिम चैटर मे चन्दा का सरल, स्नेहशील झील जैसा व्यक्तित्व – जैसे एक पडाव का प्रतीक है, चेतन की किशोरावस्था की परिणति यही होती है। उसके जीवन का बिखराव और काम्प्रेलेक्सिज' एक झील मे आकर खो जाता है।[3] चेतन पडाव पर पहुँच जाता है किन्तु उसकी भटकन मे अन्विति नही है। यह उपन्याम गठित परम्परा से अलग जा पडा है क्योकि इसमे रेखाचित्र, रिपोर्ताज, स्मृतियो आदि को स्थान दिया गया है। इसकी अलग-अलग घटनाओ, कथाओ और दृश्यो को चेतन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इमके सारे विवरण-वर्णन डाकूमेंट्री हो जाते है। अत उपन्यास मे अन्विति का अभाव है।

---

१. उपेन्द्रनाथ अश्क शहर मे घूमता आईना, पृ० ४५७।
२. वही, पृ० ४७४।
३. आलोचना, २८, पृ० १३७।

चरित्र-विधान—यह निम्नमध्यवर्गीय शहरी जीवन का 'मनोरमिक' दृश्य है। चेतन, वह आईना है, जिसके द्वारा हमे जालन्धर का प्रतिबिम्ब दिखाया गया है। आईना हीनता और कामग्रन्थियो मे ग्रसित है, जो इन दृश्यो को असामान्य मनोदशा के क्षणो मे ग्रहण करता है। चेतन अमुक्त कामवासना और पतनोन्मुख बुद्धिवाद का प्रतीक है। चेतन न रोमेंटिक है, न ऐन्टी रोमेंटिक है और न बुद्धिवादी, वह केवल लेखक की 'डायल प्लेट' है जिसको घुमाने वाली मशीन लेखक है। महात्मा बशीराम कविराज जी, जालन्धरीमल योगी, जालन्धर के सेठ हरिदर्शन केवल टाइप हैं। सभी पात्र निम्नमध्यवर्गीय जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं, निम्नमध्यवर्गीय जीवन के अभावो और दुर्बलताओ का प्रतिनिधित्व करते हैं। इससे चेतन की कुण्ठा और भटकन समूचे निम्नमध्यवर्ग की कुण्ठा और भटकन को अभिव्यक्त करती है। इन पात्रो के मध्य केवल चेतन उभरता है और वह भी लेखक का साँचा बनकर रह जाता है।

उद्देश्य—अश्क ने स्वय कहा है—"यदि कहानी ने अपने कलेवर मे सस्मरण, यात्रा-विवरण, निबन्ध तक को समा लिया है तो उपन्यास क्यो न वैसा करे। किसी नायक अथवा नायिका अथवा उसकी प्रेम कहानी को नही, एक शहर को या कहू कि शहर के एक खास हिस्से को चित्रित करना चाहता हूँ।[1] इस दृष्टि मे यह वर्जीनिया वुल्फ के 'मिसेज डेलोवे' से प्रभावित है। 'मिसेज डेलोवे' मे वर्जीनिया वुल्फ मिसेज डेलोवे और उसके पूर्व प्रेमी पीटर वाल्स का चरित्राकन नही करती किन्तु लन्दन शहर का चित्रण करती है; या यो कहे कि मिसेज डेलोवे की स्मृतियो मे यह सरवीन की तरह लन्दन शहर या उसके एक खास हिस्से को चित्रित करना चाहती है। चेतन न्यूराटिक स्थिति में प्रेमिका नीला की याद मे जालघर शहर मे घूमता है और मिसेज डेलोवे भी पूर्व प्रेमी को याद करती हुई कसर्ट से लौटकर, न्यूराटिक स्थिति मे लन्दन शहर मे घूमती है। उसको कई लोग याद करते हैं—सिल्विया, सैली, सैस ·· कई लोग।[2] शिल्प की दृष्टि से 'शहर मे घूमता आईना' मे कोई नया और मौलिक प्रयोग नही है। फ्लाबर्ट ने कहा है कि 'सपूर्ण विश्व मे धूल के दो कण, दो मक्खियां, दो हाथ और दो नाक भी सबसे

---

१. ज्ञानोदय अक्टूबर, १९६४, पृ० ११।

२. विरजीनिया वूल्फ : मिसेज डालोवे, पृ० ३५।

समान नही होते हैं। इस दृष्टि से दो कृतियो की समानता से एक प्रश्न-चिह्न खडा हो जाता है। एक शहर और शहर के एक विशेष भाग का चित्रण लेखक ने किया है। निम्नमध्यवर्गीय जीवन के चित्रण मे व्यक्ति भी उभरता है और समाज भी।

इस उपन्यास मे लेखक की दृष्टि मे व्यक्ति का चित्रण प्रमुख रहा है या समाज का, यह एक विवादग्रस्त प्रश्न रहा है। लेखक ने चेतन के, व्यक्ति के माध्यम से निम्नमध्यवर्गीय सामाजिक जीवन को उभारा है। अश्क ने इस उपन्यास मे निम्नमध्यवर्गीय जीवन का चित्रण किया है किन्तु इन सबके बीच केवल चेतन उभरता है। जनाधार का निम्नमध्यवर्गीय जीवन केवल चेतन की पृष्ठभूमि है। अत. अश्क व्यक्तिपरक उपन्यासकार हैं। समाज के परिपार्श्व मे व्यक्ति की अनुभूतियो, दुर्बलताओ और अभावो की अभिव्यक्ति अश्क ने इस उपन्यास मे की है।

राजेन्द्र यादव

राजेन्द्र यादव व्यक्तिपरक और व्यक्तिसापेक्ष उपन्यासकार हैं। लेखक की मान्यता है 'मुझसे साफ पूछा जाय तो आज यह प्रश्न ही अपने आप मे निहायत असगत और अनावश्यक है। दुनिया का कौनसा कलाकार है जो अपने आसपास की जिन्दगी और परिवेश से किसी न किसी रूप मे बधा और जुडा नही है। हा, इस जुडने के रूप अनेक हो सकते हैं। कभी हमे आसपास की जिन्दगी से वितृष्णा होती है, शिकायत होती है, ऊब और घुटन होती है, असतुष्टि और अलगाव की अनुभूति होती है और कभी ठीक इसका उल्टा भी होता है।.... ... इस प्रकार अपने आसपास की दुनिया के बीच हम अपनी एक व्यक्तिगत दुनिया लिए घूमते रहते हैं। व्यक्तिगत की बजाय मैं इसे व्यक्तिगत दुनिया कहना ज्यादा पसद करूँगा। .. .. मेरी अपनी विवशता है कि जितना ही मैं अपने परिवेश से खिन्न होता हू उतना ही अपनी इस व्यक्तिगत दुनिया मे गहरा चला जाता हू।'[1] राजेन्द्र यादव अपने आसपास की जिन्दगी से जुडे हुए भी हैं और स्वय को अपने से अलग भी महसूस करते हैं। उनके विचारो की यही अभिव्यक्ति उपन्यासो मे मिलती है। राजेन्द्र यादव ने समाज के परिपार्श्व मे व्यक्तियो का चित्रण व्यक्ति मूल्यो की स्थापना के लिए किया है और उसमे व्यक्तिचिंतन प्रमुख है, इसलिए व्यक्तिपरक

---

१. राजेन्द्रयादव, नई धारा, समकालीन कहानी विशेषांक, फरवरी-मार्च १६६६, पृ० १४७–१४८।

उपन्यासो की रचना की है। राजेन्द्र यादव व्यक्तिवादी उपन्यासकार नही हैं क्योकि इनके पात्र परिवेश से नही कटे हुए हैं। इनके कुछ उपन्यासो मे मनोविश्लेषणात्मक आधार है। अत इन्होने, व्यक्तिपरक और व्यक्तिपरक-मनोविश्लेषणात्मक, दोनो प्रकार के उपन्यासो की रचना की है।

'प्रेत बोलते हैं' (१६५२), 'उखडे हुए लोग' (१६५६), 'शह और मात' (१६५६), 'कुलटा' (१६५८) और 'अनदेखे अनजानपुल' (१६६३) इनकी उपन्यासकार कृतिया हैं। जिनमे 'प्रेत बोलते हैं' और 'उखडे हुए लोग' व्यक्तिपरक उपन्यास हैं। 'प्रेत बोलते हैं' को अन्य उपन्यास मे स्थान दिया गया है।

उखड़े हुए लोग (१६५६)

कथासार—'उखडे हुए लोग' युद्धोत्तरकालीन स्त्री-पुरुष के बिगडते-बदलते बनते सम्बन्धो का चित्र है। शरद और जया सम्मिलित जीवन व्यतीत करने का निश्चय करते हैं। उसे नेता भैया देशपांडे के यहा नौकरी का ठिकाना मिल जाता है। जया को लेकर खद्दरधारी पूँजीपति राजनीतिक देशपाडे जी के स्वदेश महल मे शरद सात दिन रहता है और इन सात दिनो मे देशपांडे जी के व्यक्तित्व की परते उघडती चली जाती हैं। शरद को सभी प्राणी रहस्यमय लगते हैं। मायादेवी और देशपाडे के सम्बन्ध और सूरज का बीता हुआ जीवन सब कुछ उसे रहस्यमय लगता है। किन्तु धीरे-धीरे रहस्य की परतें खुलती चली जाती हैं। मायादेवी की कथा देशबन्धु के नीचता की कथा है। मायादेवी का विवाह किसी सम्पन्न व्यक्ति से हुआ था, परन्तु वह देशबन्धु पर मोहित होकर पति की हत्या का कारण बनी और उसने अपनी समस्त सम्पत्ति अपने प्रेमी देशबन्धु को भेंट की। मायादेवी की पुत्री पद्मा, अपनी मा और देशपाडे जी के सम्बन्धो को घृणा से देखती है। स्वदेश महल का वातावरण उसे विक्षिप्त बना देता है। एक दिन मदमस्त होकर देशपाडे पद्मा के कमरे मे प्रवेश कर द्वार बन्द कर लेते हैं। पद्मा सहसा खिडकी से कूदकर आत्महत्या कर लेती है। इस घटना के पश्चात् जया और शरद स्वदेश महल से प्रस्थान कर देते हैं। इस तरह इसकी सम्पूर्ण कथा सात दिनो के भीतर समाप्त हो जाती है।

वस्तु-विधान—'उखडे हुए लोग' मे शरद और जया की कथा मुख्य कथा है और अन्य कथाएँ प्रासगिक है। अन्य कथाओ मे देशपाडे, मायादेवी, पद्मा और सूरज की कथायें हैं। स्वदेशमहल की कथा का देशपाडे, मायादेवी,

पद्मा, शरद और जया की कथा मे सीधा सम्बन्ध है किन्तु सूरज की कथा का शरद और जया की कथा मे कोई सम्बन्ध नही है। शरद और जया का सम्मिलित जीवन विताने का निश्चय, स्वदेश महल के नेता भैया देशपाडे के के यहा शरद को नौकरी मिलना, सूरज की पिछली जीवन-घटनाओ से अवगत होना मायादेवी और पद्मा की स्वदेश महल की घटनायें, मायादेवी का अतीत जीवन, पद्मा को मायादेवी और देशपाडे के घृणित सम्बन्धो के कारण घृणा होना, देशपांडे के कारखाने मे हडताल होना और सूरज का नेता बनना, देशपाडे के बलात्कार के डर मे पद्मा का खिडकी से कूदकर आत्महत्या करना ...... उपन्यास की मुख्य घटनायें हैं। उपन्यास की घटनाओ से भ्रम होने लगता है कि यह शरद और जया की कथा है या स्वदेश महल की। शरद और जया की कथा होते हुए भी यह स्वदेश महल की कथा बन गई है, जया और शरद दर्शक बनकर घटनाओ को देखते हैं। लेखक युद्धोत्तरकालीन स्त्री-पुरुषो के बनते बिगडते चित्र प्रस्तुत कर उखडे हुए लोगो को प्रस्तुत करना चाहता है। यह निश्चित् है कि शरद, जया, सूरज और पद्मा जीवन से उखडे हुए लोग हैं किन्तु उखडे हुए लोगो और उपन्यास की हडताल और आत्महत्या के बीच कोई सम्बन्ध सूत्र नही जान पडता है। अत' घटनाओ के बीच सम्बन्ध सूत्र नही हैं और न तर्कसगत योजना, जिससे उपन्यास मे वस्तु-अन्विति का अभाव खटकता है। घटनायें स्वाभाविक रूप से घटित न होकर, उपन्यासकार के हाथो खिलोना बन गई हैं। शरद और जया का सम्मिलित जीवन पद्मा की आत्महत्या और हडताल आदि के प्रसग, उपन्यास के विकास की दृष्टि मे अस्वाभाविक जान पडते हैं।

चरित्र विधान—उपन्यास के सभी पात्र उखडे हुए लोग हैं। सभी टूटे हुए व्यक्तित्व हैं, उनका भविष्य अनिश्चित और अंधकारमय है। देशपांडे छली और कपटी हैं और नायक-नायिका जीवन की कई मान्यताओ के पोषक हैं। शरद विवाह को व्यक्तिगत समस्या मानता है। उखडे हुए लोगो के अभावो का चित्रण करना ही लेखक का उद्देश्य है। इसलिए इसे चरित्र-प्रधान उपन्यास भी कहा जा सकता है। उपन्यास के चरित्र सजीव और विकसनशील हैं। लेखक की संवेदना अधिकाश पात्रो के उद्‌घाटन मे प्रकट हुई है। देशबन्धु पूँजीपति वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। शरद और जया उपन्यास के केन्द्रबिंदु हैं और इन दो पात्रो के द्वारा लेखक अपने विचारो को अभिव्यक्त करता है। शरद, जया, सूरज और कपिल मध्यमवर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। सूरज साम्यवादी विचारधारा का पोपक मात्र है। कपिल को आज के मध्य-

वर्ग का असली प्रतिनिधि कहा जा सकता है। प्रगतिवादी और प्रतिक्रियावादी दोनों विचारधारायें उसमें है। नारी स्वतन्त्रता का वह समर्थक है किन्तु अपनी पत्नी को वह घर की चारदीवारी के भीतर देखना पसंद करता है। इस उपन्यास मे चरित्र विधान की दृष्टि से यथार्थवाद का सफलता से चित्रांकन हुआ है। पात्र मुक्त और विकसनशील हैं, इसलिए वे लेखक के कठपुतले नही है और प्राणवान हैं।

उद्देश्य—इस उपन्यास मे लेखक ने युद्धोत्तरकालीन व्यक्तियो को प्रस्तुत किया है। बर्लिन से श्रीमती दागमार ने एक सवाल किया है—'जया और शरद का विवाह प्रेमविवाह तो नही है, क्या मैं पूछ सकती हूँ कि आपने उपन्यास की रचना इस प्रकार क्यो की ?'[1] उपन्यास का क्या उद्देश्य है, यह एक विवादग्रस्त प्रश्न है। उपन्यासकार बताना चाहता है, 'सचमुच वास्तविकता तो यह है कि हम सब टूटे हुए व्यक्तित्व के लोग हैं, हमारे स्वाभाविक गठन और व्यक्तित्व को इस तरह मरोड दिया गया है जैसे गीली मिट्टी से बनी सुन्दर मूर्ति को कोई अत्यन्त निर्दयता से मरोड़ डाले। इस तरह की हमारी कुछ सूरतें हो गई हैं। हम देखते कही हैं, चलते कही हैं और वास्तविकता कुछ और है और हम इतने मुडे-तुडे हैं कि अपनी सारी शक्तियो को कही एक जगह केन्द्रित नही कर पाते और कष्ट पाते हैं।'[2] एक अनोखा दिग्भ्रम हमारे चारो ओर छाया हुआ है। वर्तमान ने हमारी कमर को तोड दिया है और किसी सुन्दर भविष्य की बात करना असमव हो गया है। ··· हम लोग जैसे अन्धेरे कमरे मे भटक रहे हैं, आखो पर पट्टी बधी है और इधर उधर भटक रहे हैं।[3]' आज का युद्धोत्तरकालीन हर व्यक्ति देशबन्धु है, आज हर बात के पीछे एक घनीभूत स्वार्थ, एक व्यक्तिगत दृष्टिकोण, एक प्रतिक्रिया का प्रतिकार है। इस तरह युद्धोतर कालीन स्त्री पुरुषो के बिगडते बदलते बनते सम्बधो का चित्रण ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिपरक उपन्यास है क्योकि व्यक्तियो के माध्यम से लेखक समाज के चित्र को प्रस्तुत करना चाहता है। लेखक उपन्यास मे सडे गले वैयक्तिक मूल्यो की स्थापना करना चाहता है। पूंजीपति देशबन्धु के चित्रण

---

१. राजेन्द्रयादव, उखड़े हुए लोग, दूसरे सस्करण के समय।
२. वही, पृ० २२५, २२६।
३. वही, पृ० २२६, २३०।

के माध्यम से यह कहना एक लचर दलील होगी कि इसमें समाजवादी यथार्थ-वाद का चित्रण हुआ है। शरद और जया विवाह को एक व्यक्तिगत समस्या मानते हैं, सामाजिक नही। विवाह दो व्यक्तिओ के बीच एक व्यक्तिगत समझौता है, सामाजिक नही, यह नायक और नायिका की धारणा है। डाक्टर सुषमा धवन की भ्रान्त मान्यता है, 'आज का मध्यवर्गीय युवक किस तरह सामाजिक नियत्रण को अस्वीकारता है, किस तरह सपनो का जाल बुनता है, किस तरह जीवन की वास्तविकता से टकराकर टूटता है और किस तरह समझौतो की शरण लेकर अपने व्यक्तित्व का दमन करता है - इसका विस्तृत चित्रण उपन्यास मे मिलता है। इस चित्रण के मूल मे लेखक की मार्क्सवादी विचार धारा है।[1] डा० धवन ने अपने कथ्य मे दो विरोधी विचार प्रस्तुत कर दिये हैं, वे मानती हैं कि आज का मध्यवर्गीय युवक व्यक्तिपरक है, वह सामाजिक नियत्रण को अस्वीकार करता है और दूसरी बात आरोपित लगती है कि यह समाजवादी या मार्क्सवादी समाज के उद्देश्य की स्थापना नही हुई है। इस उपन्यास मे युद्धोत्तरकालीन अस्वस्थ व्यक्ति मूल्यो के स्थान पर स्वस्थ व्यक्ति मूल्यो की स्थापना समाज के परिपार्श्व मे हुई है, इसलिये इसे व्यक्ति परक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिलना चाहिए, मार्क्सवादी या साम्यवादी उपन्यासो की श्रेणी मे नही।

अन्य उपन्यास

प्रेत बोलते हैं (१९५२)

'प्रेत बोलते हैं' मे एक शिक्षित युवक की पारिवारिक कथा है। उसके परिवार मे उसके बूढे माता-पिता, बड़ा भाई और भावज, विधवा बहिन और उसका एक छोटा भाई है। विकट आर्थिक परिस्थिति के कारण समर का विवाह हो जाता है। पति पत्नी के बीच दुराव अधिक बढता है। अपने मित्र शिरीष की सहायता से सयुक्त परिवार से अलग होकर पुरातन सस्कारो को निकालकर नई गृहस्थी चलाने का सकल्प लेता है।

विचारो और सिद्धान्तो की सघनता से कथानक बोझिल हो गया है। इस उपन्यास मे निम्नमध्यवर्ग का प्रतीक समर है किन्तु वह एक व्यक्ति भी है, केवल वर्ग का प्रतीक नही है। शिरीष समाज शास्त्रीय दार्शनिक और लेखक के विचारो को अभिव्यक्त करने का एक साधन होने के साथ निम्नवर्ग

---

१. डा० सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास, पृ० ३२५।

का एक व्यक्ति चरित्र है जो अपने जीवन के द्वारा निम्न वर्ग मे व्यक्ति मूल्यो की स्थापना करना चाहता है।

उपन्यास के अन्त मे लेखक प्रेतलोक से घोषणा करता है 'जिन्दगी की किसी भी धारा मे, किसी भी बन्धन मे हम चुप नही रह सकते हैं। हम कलमो मे उतरेंगे, दिमागो पर छाएगे, हमे नये शरीर दो, हमे नया रूप दो, हम इन कष्टो मे नही रहेगे, हम निराकार नही भटकेगे। प्रकाश फूट रहा है, हम एक दूसरे को पहचान रहे हैं–अब हम ज्योति से नही डरते। नाश के क्रातिकारी चरणों से सृजन होने लगा है, हमे भी उनके साथ नाचना है, क्योकि वह शिव है और हम प्रेत हैं।[1]' मध्यवर्गीय समाज का प्रेत नया व्यक्ति है, जो नए जीवन की माग कर रहा है और इस नए जीवन मे नए वैयक्तिक मूल्यो की माग की स्थापना करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

समाजवादी जीवन दर्शन की स्थापना इस उपन्यास मे नही हुई है, इसलिये यह समाजवादी कृति नही है। शिरीष ने समर को वैयक्तिक विकास के लिए सामाजिक प्रतिवद्धता से अलग कर दिया है और ऐसी गृहस्थी की रचना की प्रेरणा दी है जहा समर अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके, इसलिए समाज के परिपार्श्व मे नये वैयक्तिक मूल्यो की स्थापना के कारण, यह व्यक्तिपरक उपन्यास है।

सर्वेक्षण—वस्तु–विधान की दृष्टि से देखें तो भगवतीचरण वर्मा का 'आखिरी दाव', 'भूले विसरे चित्र' और 'रेखा,' उपेन्द्रनाथ अश्क के 'पत्थर अलपत्थर' के वस्तु–विधान मे सगठन और आन्विति हैं। भगवतीचरण वर्मा के 'सामर्थ्य और सीमा' मे जलप्लावन अस्वाभाविक घटना है, उपेन्द्रनाथ अश्क के 'गर्मराख' और 'शहर मे घूमता आईना' मे विखराव है और राजेन्द्र यादव का 'प्रेत वोलते हैं' का कथानक विचारो से वोझिल हो गया है। 'भूले विखरे चित्र' और 'गर्मराख' मे स्थूल घटनाए हैं किन्तु 'रेखा', 'वडी वडी आखें', 'पत्थर अल पत्थर', 'शहर मे घूमता आईना', 'प्रेत वोलते हैं' और 'उखड़े हुए लोग' मे मनस्थितियो की अभिव्यक्ति से घटनाओ की स्थूलता कम हो गई है।

भगवतीचरण वर्मा के सभी पात्र, जहा अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और वे व्यक्ति चरित्र भी हैं। वहाँ अश्क के उपन्यासो मे अधिकाँश पात्र

---

१ राजेन्द्रयादव . प्रेत वोलते हैं : पृ० ३२२।

वर्ग का प्रतिनिधित्व तो करते हैं किन्तु व्यक्ति बनकर कम उभरे हैं। राजेन्द्र यादव के उपन्यासो मे व्यक्तित्व होते हुए भी वे मध्यवर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। व्यक्तिपरक उपन्यास समाजसापेक्ष हैं इसलिए वे वर्ग का प्रतिनिधित्व भी करते हैं और व्यक्ति चरित्र भी हैं।

इन व्यक्तिपरक उपन्यासो मे व्यक्ति मूल्यो और व्यक्ति स्वतत्रता की स्थापना हुई है। 'आखिरी दाव' मे व्यक्ति के सडे गले जीवन मूल्यो की, और 'भूले बिसरे चित्र' मे बदलते युगो मे बदलते व्यक्ति के जीवन मूल्यो की अभिव्यक्ति हुई है। 'सामर्थ्य और सीमा' मे व्यक्ति परिस्थितियो का खिलौना है, 'रेखा' मे, शरीर की भूख से पीडित, नारी के वैयक्तिक नैतिकता की कहानी है; 'गर्मराख' मे निम्नमध्यवर्गीय समाज के परिपार्श्व मे कुछ व्यक्तियो का चित्रण है; 'बडी बडी आखे' मे सस्थाओ के अधिनायकत्व से व्यक्ति स्वातन्त्र्य; 'पत्थर अल पत्थर' मे समाज मे उत्पीडित व्यक्ति की पीडा है, 'शहर मे घूमता आईना' एक निराश व्यक्ति की मन स्थितियो का सँग्रहीन है, 'प्रेत बोलते हैं' मे परिवार की पृष्ठभूमि पर व्यक्ति के नवीन मूल्यो की स्थापना और 'उखडे हुए लोग' मे युद्धोत्तरकालीन बदलते समाज मे बदलते व्यक्ति के स्वस्थ जीवन मूल्यो की कहानी है अत इन उपन्यासो मे व्यक्ति मूल्यो और व्यक्ति स्वातन्त्र्य की चेतना का स्वर ध्वनित होता है।

अत व्यक्तिपरक उपन्यासो मे सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो की तरह वस्तु विधान मे स्थूलता की कमी है, पात्र वर्ग के प्रतिनिधि होने के साथ व्यक्ति चरित्र भी हैं और उनमे व्यक्ति मूल्यो की स्थापना हुई है और समाज मे रहते हुए भी व्यक्ति के व्यक्तित्व की रक्षा होती है।

इस विवेच्यकाल के व्यक्तिपरक उपन्यासो के अन्तर्गत 'आखिरी दाव' और 'रेखा' केवल भ्रष्ट नारी की कथा बनकर रह गई है। 'सामर्थ्य और सीमा' के सभी व्यक्ति परिस्थितियो के पुतले हैं। 'गर्मराख' मे मध्यवर्गीय युवक–युवतियो की यौन कुण्ठाए हैं और 'शहर मे घूमता आईना' एक 'न्यूरोटिक' व्यक्ति की मन स्थितियो और बिखरी हुई घटनाओ का अजायबघर है। 'प्रेत बोलते हैं' मे बोझिलता और 'उखडे हुए लोग' मे अस्वाभाविकता है किंतु भारतीय जन जीवन की बदलती पृष्ठभूमि पर बदलते जीवन मूल्यो के चित्रण के कारण 'भूले बिसरे चित्र' इस विवेच्यकाल की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।



व्यक्तिवादी उपन्यास

अस्तित्ववाद व्यक्तिवाद

व्यक्तिवादी-विचारधारा का अभिप्राय व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन से है। व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन पश्चिम मे आधुनिक युग के छः अस्तित्ववादी दार्शनिको—सारेन, किर्केगार्ड, फ्रेडरिक, नीत्से, कार्ल मार्क्स, गेब्रियल मार्सल, मार्टिन हेडेगर और ज्या पाल सार्त्र के जीवन-दर्शन मे अभिव्यक्त हुआ है। पूँजीवाद ने अस्तित्ववाद को समाज-विरोधी दर्शन के रूप मे जन्म दिया है, जो मानता है कि व्यक्ति ही सब कुछ है, व्यक्ति का अस्तित्व ही सब कुछ है। पतनोन्मुखी पूँजीवादी अन्य व्यक्तिवाद की विकृतिया इस विचाराधारा मे अपना विकास पाने लगी हैं। यह व्यक्ति को वातावरण से अलग करके देखता है या अध्ययन करता है, सामाजिक सम्बन्धो के बीच व्यक्ति का अध्ययन नही करता। इसके अनुसार समाज का अर्थ वस्तु-परकता है, व्यक्ति का निषेध है, छल है, भुलावा है आत्मप्रवचना है। अस्तित्ववाद निर्विवाद रूप से व्यक्तिवादी दर्शन है। सारेन किर्केगार्ड के बारे मे यह माना जाता है कि उसका व्यक्तिवाद पूर्ण रूप से धार्मिक और दार्शनिक है।[1]

अस्तित्ववादी विचाराधारा दो विरोधी पक्षो आस्तिकता,नास्तिकता के कूलों को छूता हुआ अपने जीवन दर्शन को अभिव्यक्त कर रहा है। यास्पर्स और सार्त्र के विचार अस्तित्ववाद की मूल स्थापनाओ को अभिव्यक्त करते

---

१ एच० जे० ब्लैकहैम : सिक्स एक्सिस्टेंशियलिस्ट थिंकर्स, पेज २१।
हिज इण्डिविजुअलिज़्म इज होली रिलीजस एण्ड फिलोसोफिक, ए कन्सन्ट्रेशन ऑन द इण्डिविजुअल अंज द सोल सोर्स ऑफ द यूनिवर्स ह्यूमैन ...टिव विलिंग, आथैण्टिक वाइस

हैं। यास्पर्स की मान्यताए हैं कि 'आत्म चेतना जब पूर्ण रूप मे जागृत होती है तब वह मेरी एकाकीपन और मुक्ति की चेतना है।[1]' 'मेरा स्थान निर्धारित है।[2]' 'मेरा सार मेरी मुक्ति मे है।[3]' सार्त्र की मान्यता है कि 'जीवन स्वय ही अपना मार्ग निश्चित करता है।[4] मृत्यु जन्म की तरह एक शुद्ध तथ्य है, मैं मरने के लिए स्वतत्र नही हू' (हैडेगर), 'व्यक्ति का अस्तित्व सार सत्ता से पहले है।[6]' 'अत अस्तित्ववाद की विशेषता है कि वह मनुष्य को विश्व से अलग देखता है।[7] यह व्यक्ति के अस्तित्व का दर्शन है।[8] व्यक्ति मूल्यो का सामाजिक मूल्यो से सबध केवल बौद्धिक किंवदन्ती है।[9] अत अस्तित्ववाद के अनुसार व्यक्ति हर प्रकार के निर्णय के लिए स्वतन्त्र है। सार्त्र के अनुसार हर व्यक्ति स्वतन्त्र होने के लिए अभिशापित है और सहअस्तित्व ही उसके लिए नरक है। व्यक्ति की कुण्ठाओ का दायित्व परिस्थितियो पर न होकर व्यक्ति पर है। निस्सन्देह, अस्तित्ववाद व्यक्तिवादी दर्शन है। राजनीति विज्ञान के

---

१. एच० जे० ब्लैकहैम सिक्स ऐक्सिस्टैन्शियलिस्ट थिकर्स, पेज ४८। सैल्फ कानशसनैस व्हैन इट इज थ्रोली अवेकैंड इन कानशसनैस आफ माइ सोलीटुड ऐंड माइ लिबर्टी।

२. वही, पृ० ५० : "माइ सिचुयेशन इज डिटरमाइण्ड।

३ वही, पृ० ५०–५१ "माइ असेन्स इज माइ लिबर्टी।

४ वही, पृ० १३५ : लाइफ डिसाइड्स इट्स ओन मीनिंग।

५ वही, पृ० १३६ डैथ इज ए प्योर फैक्ट, लाइक बर्थ आइ ऐम नोट फ्री इन आर्डर टू डाइ।

६ वही, पृ० १६२ ऐक्सिस्टैन्स प्रोसीड्स असेन्स।

७ वही, पृ० १५१ द पेक्यूलरिटी आफ एक्सिस्टैन्शियलिज्म, दैन इज दैट इट, डील्स विद द सैपरेशन आफ मैन फ्राम हिमसैल्फ ऐण्ड द वर्ल्ड।

८. वही, पृ० १४९ : एक्सिस्टैन्शियलिज्म, आलसो, इज ए फिलोसोफी आफ बीइंग।

९. वही, पृ० १५८ दिस व्यू आफ रिलेशन आफ इण्डिविजुअल वैल्युएशन टू सोशल वैल्यूएशन इज ऐन इन्टलैक्चुअल-मैथ।

क्षेत्र मे जान स्टुआर्ट मिल ने 'आन लिबर्टी' पुस्तक मे व्यक्ति की स्वाधीनता का नारा लगाया किन्तु व्यक्ति की मुक्ति और उसकी स्वतन्त्रता को दार्शनिक-आधार अस्तित्ववादी दार्शनिको ने दिया है।

व्यक्तिवादी उपन्यास :

व्यक्तिवादी उपन्यास ने अस्तित्ववादी-जीवन-दर्शन को अपने उपन्यासो मे अभिव्यक्त किया है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने उन सभी उपन्यासो को व्यक्तिवादी उपन्यास कहा है जिनमे व्यक्तिगत मनोविज्ञान या व्यक्तिगत जीवन चरित्र, व्यक्तिगत जीवनदर्शन, व्यक्तिगत जीवन घटना या व्यक्तिगत जीवन समस्या का निरुपण या निर्देश सर्वोपरि रहा करता है।[1] मैंने इस प्रकार के उपन्यासो को व्यक्ति-सापेक्ष-उपन्यासो की सज्ञा दी है और जिनमे व्यक्तिवादी दर्शन की स्थापना रहती है केवल उन्ही उपन्यासो को व्यक्तिवादी उपन्यासो मे अगिहीत किया है। एक आलोचक की मान्यता है कि व्यक्तिवादी उपन्यासो मे पात्र इन सामाजिक आच्छादनो को उतारकर नग्न हुए और स्त्री पुरुष के रूप मे आकर खडे हुए। इसलिए दूसरी श्रेणी के उपन्यासकारो की समस्या की मुख्य धुरी मानव के स्त्री-पुरुष रूप मे यौन सम्बन्धो के विविध-रूप थे।[2] 'व्यक्तिवादी उपन्यासो का ध्येय स्त्री-पुरुष के रूप मे चित्रित न करके व्यक्ति को मात्र व्यक्ति रूप मे चित्रित कर अपने विशिष्ट जीवन दर्शन की अभि-व्यक्ति करना है। सुषमा धवन ने गलत मान्यताओ के आधार पर यह माना है कि व्यक्तिवादी तथा मनोविश्लेषणवादी उपन्यास स्थूल रूप से एक ही कोटि के जान पडते हैं।[3] व्यक्तिपरक उपन्यासो को व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे रखने के कारण केवल व्यक्तिपरक उपन्यास की विशेषताओ को व्यक्तिवादी उपन्यासो पर थोप दिया है। व्यक्तिवादी उपन्यासकार व्यक्ति और समाज के सन्धि स्थल पर नही खडा है। वह अकेले और स्वतन्त्र व्यक्ति का अध्ययन करता है जिसके लिए उसका अस्तित्व उसकी सार सत्ता से पहले है; वह अपने अस्तित्व के लिए स्वतन्त्र है। उसकी स्वतन्त्रता अबाध है और इस स्वतन्त्रता के कारण वह अभिशापित है। वह समाज और समाज की नैतिक मान्यताओ का कठपुतला नही है क्योकि वही अपना नियन्ता है। अत जिन उपन्यासो मे व्यक्तिवादी-चेतना के दर्शन होते हैं, उन उपन्यासो को व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया गया है।

---

१. नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य : नये प्रश्न पृ १८५।
२. आलोचना, २, पृ. ३६।
३. सुषमाधवन : हिन्दी उपन्यास, पृ ८८।

जैनेन्द्रकुमार, अज्ञेय, डा० देवराज, नरेश मेहता और मोहन राकेश इस विवेच्यकाल के व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं।

जैनेन्द्रकुमार

जैनेन्द्रकुमार व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं। उनकी मान्यता है कि व्यक्ति का दायित्व असल मे वैयक्तिक और आत्मिक है। यानी वह जीवन मे गर्भित है। यहाँ तक कि वह दायित्व के रूप मे अनुभव मे नही आता, स्वभाव सा लगता है। सच्चे दायित्व का रूप यही है।[1] व्यक्ति को सीधे अपने जीवन मे मिलने वाला जो लाभ है वह साहित्य का श्रेय है। साहित्य अब अधिकाधिक व्यक्तिगत हो रहा है। पहले वह अपेक्षाकृत समाजकृत था। व्यक्ति का समूचा प्रतिनिधित्व साहित्य मे चाहिये।[2] जैनेन्द्रकुमार ने समाज का प्रतिकार कर व्यक्ति के व्यक्तित्व को साहित्य मे प्रतिष्ठित किया। व्यक्ति का व्यक्तित्व ही नही, उसका अस्तित्व भी विचारणीय प्रश्न है ' 'यहा पूरब मे आदमी अपने अस्तित्व मे जहा सहज होता है, जीवन वहा से प्रारम्भ होता है। ये दो चीजें हैं, रहना और जीना, 'टु एग्जिस्ट' 'टु लिव'[3] इतना होने पर अस्तित्ववादियो द्वारा प्रतिपादित अस्तित्ववाद मे उनको पूर्ण विश्वास नही है। "यह अस्तित्ववाद (एग्जिस्टेंशोलिज्म) समन्वित अर्थ की आवश्यकता को मानो समाप्त कर देता है। उसे इतना अधिक छितरा देता है कि जैसे कुल होने मे किसी एक अर्थ अथवा भाव का होना, वैसा मानना देखना मूखता है।'[4] जैनेन्द्रकुमार मे अस्तित्ववाद का प्रतिछाया नही है। जैनेन्द्र मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार नही हैं क्योकि जैनेन्द्र आधुनिक अर्थ मे मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार सार्थक नही हैं। इस अर्थ मे वे एक आत्मवादी उपन्यासकार हैं। जैनेन्द्र जी अपने को मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार न कहकर दार्शनिक उपन्यासकार कहने की इच्छा रखते हैं।'[5] उन्होने व्यक्तिवादी दर्शन अपनाया है। जैनेन्द्रकुमार ने माना है मैं व्यक्ति को ब्रह्माण्ड का केन्द्र मान सकता हूँ। कारण, व्यक्ति चित खण्ड है। केन्द्र को चित मे मान लेने से सारा ब्रह्माण्ड सजीव और चिन्मय

---

१. जैनेन्द्रकुमार आलोचना १५ पृ. ६३।

२. जैनेन्द्रकुमार : सा का श्रेय और प्रेय, पृ १३,२५।

३. जैनेन्द्रकुमार . समय और हम, पृ २१३।

४. वही, पृ. २१८।

५. नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य, नये प्रश्न : पृ. २६१।

हो उठता है ।[1] 'व्यक्ति को ब्रह्माण्ड का केन्द्र मानने के कारण जैनेन्द्र निश्चित रूप से व्यक्तिवादी उपन्यासकार है क्योकि उनके उपन्यासो मे व्यक्तिवादी दर्शन की अभिव्यक्ति हुई है । 'जैनेन्द्रकुमार की व्यक्तिवादिता एक दार्शनिक आवरण लेकर आती है ।[2]' जैनेन्द्र ने समाज के बन्धन को स्वीकार नही किया है । डा० सुषमा धवन की भ्रान्त धारणा है कि जैनेन्द्र की कला का स्थान व्यक्तिवादी और मनोविश्लेषणवादी उपन्यास के बीच की कडी है । और इन्होने मनोवैज्ञानिक उपन्यास का शिलान्यास किया है ।[3] जैनेन्द्रकुमार का मनोविज्ञान साधन है साध्य नही और उनमे केवल व्यक्तिवादी जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति होने से मनोविश्लेषणात्मक और तथाकथित मनोवैज्ञानिक उपन्यासो की कोटि मे रखना भूल होगी ।

'परख' (१९२९), 'सुनीता' (१९३२), 'त्यागपत्र' (१९३७), 'कल्याणी' (१९३९), 'सुखदा' (१९५२), विवर्त्त' (१९५३), 'व्यतीत' (१९५३), 'जयवर्धन' (१९५६) और 'मुक्तिबोध' (१९६५) इनकी उपन्यास कृतिया हैं जिसमे 'सुखदा', 'विवर्त्त', 'व्यतीत', 'जयवर्धन' और 'मुक्तिबोध' इस विवेच्य-काल की कृतिया है और इनमे व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति हुई है ।

सुखदा (१९५२)

कथासार—यह सुखदा की आत्मकथा है । सुखदा और कात का विवाहित जीवन सुखी नहीं है । एक दिन गंगासिह नामक क्रांतिकारी युवक छद्मवेश मे उनके यहां नौकरी करने आता है । वह गिरफ्तार हो जाता है । सुखदा को पता लगता है कि उसकी गिरफ्तारी मे कात का हाथ है । उसके समाचार को पडकर सुखदा के विचारो मे परिवर्तन होता है और वह सावजनिक जीवन मे प्रवेश करती है । हरीश से प्रेरणा ग्रहण करती है और लाल उसकी ओर आकर्षित होता है । सुखदा अपने पुत्र को नैनीताल शिक्षण के लिए भेजना चाहती है । सुखदा के गहने लाल खरीद कर वापिस लौटा देता है । गाधीवाद का प्रभाव वढ़ता है और हरीश की पार्टी छिन्न-भिन्न हो जाती है । हरीश की गिरफ्तारी का पाच हजार का वारण्ट निकलता है और कात हरीश को गिरफ्तार करवाकर पाच हजार रुपये सुखदा को देता है । कात के प्रति घृणा से सुखदा का मन भर जाता है और वह घर छोडकर मायके चली जाती

---

१. जैनेन्द्रकुमार समय और हम पृ ९३ ।
२. नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य, नये प्रश्न पृ १८६ ।
३ डा० सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास, पृ १९९–२०० ।

है। मायके मे वह क्षय रोग से पीडित हो जाती है। वह अपने दुर्भाग्य का रोना रोती है।

वस्तु विधान—सुखदा की कथा ही इस उपन्यास मे अभिव्यक्त हुई है और अन्य पात्रो मे—हरीश, लाल और सुखदा के पति कात की कथायें, सुखदा की आत्मकथा के रूप मे ही अभिव्यक्त हुई हैं। सब पात्रो की कथा वस्तुत. सुखदा की कथा को ही आगे बढाती है। गगासिह का सुखदा के यहा नौकरी करना, सुखदा को पता लगना कि उसको कांत ने पकडवाया है, सुखदा और कात के बीच अनबन उत्पन्न होना, सुखदा का क्रातिकारी दल के दो नेताओ हरीश और लाल से मिलना, लाल और सुखदा के बीच सम्बध प्रगाढ़ होना, पुत्र को नैनीताल पढाने के लिए योजना बनाना, सुखदा का गहने बेचकर क्रातिकारी दल को रुपये देना किंतु लाल द्वारा लौटाना, सुखदा का अपना घर छोड़कर लाल की अनुपस्थिति मे लाल के यहा रहना, सुखदा का घर पहुचना, हरीश की गिरफ्तारी मे कात का हाथ होना और कांत का मुखबिर बनना और अन्त मे सदैव के लिए सुखदा का घर छोडकर मायके चला जाना—इस उपन्यास की मुख्य घटनायें हैं। सुखदा ही कथा का केन्द्र है और इस दृष्टि से सभी घटनायें सुखदा की जीवन-कथा, चरित्र और मनःस्थितियो को स्पष्ट करने का कार्य करती है। इस उपन्यास का उद्देश्य सुखदा की व्यक्तिगत मान्यताओ को स्थापित करना है, इस दृष्टि से भी सभी घटनाये उपन्यास के उद्देश्य की ओर बढती हैं। अत इसका कथानक विस्तृत नही है और इस लघु उपन्यास मे सुखदा के भावो का आरोह-अवरोह होता है। वस्तु–विधान मनोवैज्ञानिक शिल्प से गूथा हुआ है। यह सुखदा का अन्तरग है इसलिए गौण कथाओ के अभाव के कारण वस्तु-विधान मे पूर्णत अन्विति है।

चरित्र-विधान—यह एक चरित्र-प्रधान उपन्यास है। यह पात्रो के अतर्जगत की कहानी है किंतु सुखदा को छोडकर पात्रो का स्वतत्र अस्तित्व है ही नहीं। कात, हरीश और लाल केवल लेखक के कठपुतले हैं और उनमे हाड मास नही है। वे केवल लेखक के विचारो को व्यक्त करने के वाहक बनते हैं। केवल सुखदा यत्रचालित नही है क्योकि वह अतर्जगत की अभिव्यक्ति के कारण स्वतत्र व्यक्तित्व बन गई है। सुखदा की कहानी उसके ही शब्दो मे संवेदनापूर्ण बन गई है। वह प्रारम्भ मे ही कहती है: 'अपनी कहानी कहने चली हू, नहीं जानती। पर यहां इतनी ऊंचाई पर चीड़ के वृक्षो से घिरे अस्पताल मे पडे पडे कभी बहुत सूना लग आता है। एक रीतापन चारो ओर मुझे घेर लेता है कि लील ही लेगा। समय खाली रहता है और उसके शून्य

विस्तार पर मेरे ही जीवन की व्यर्थता यहा से वहा तक लिखी जान पडती है।'[1] कात एक उदार और निरीह पति है। सच्चाई यह है कि कात मे व्यक्तित्व है ही नही। वह दुर्बलता और खोखले आदर्श का प्रतीक है। कात मे कितनी हीनता है। कात सुखदा से कहता है. 'मेरा पहला काम है कि तुम्हारे काबिल बनू, तुम्हारे काबिल कमाई के काबिल बनू।'[2] कात मे निरीहता और हीनता की भावना सीमा को छू गई है। हरीश और लाल दोनो क्रातिकारी हैं और दोनो दो विचार-धाराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। हरीश व्यक्तिवादी है और लाल सामाजिक। लाल कहता है 'घर गृहस्थी मे यहा का व्यक्ति अब तक जुटा हुआ है और भारतीय नैतिकता उस परिधि मे घेर कर उसे बद और निस्पद किये दे रही है।'[3] अब पारिवारिक नही, सामाजिक सस्कृति चाहिये।[3] हरीश मे भारतीयता का आदर्श है। सुखदा के व्यक्तित्व को छोडकर उपन्यास के पात्रो मे सजीवता और मासलता का अभाव है क्योकि सैद्धाकिता का अधिक आग्रह है। सुखदा ने अपने अतर्जगत को अभि-व्यक्त किया है, इसलिए यह कलात्मक सृजन है।

उद्देश्य—'सुखदा' मे सुखदा के प्रेम के उलझन की व्याख्या है। डा. गणेशन की मान्यता गलत है कि इसमे प्रेम के उलझन की व्याख्या है पर उनका दृष्टिकोण सामाजिकता से अधिक मनोवैज्ञानिक है। सुखदा वैवाहिक जीवन से अतृप्त होकर राजनीति के क्षेत्र मे आती है। वस्तुत उसका अचेतन मन अतृप्त वासना की पूर्ति के लिए व्याकुल है किन्तु चेतन मन से वह इसे स्वीकार नही करती। राजनीति मे प्रविष्ट होकर भी जब वह लाल के प्रति आकृष्ट होती है तब यह स्पष्ट नही है कि उसकी वासना, जो अचेतन मे रहती है पति मे सतृप्ति का मार्ग न पाकर, दूसरी ओर से तृप्ति का मार्ग ढूँढती है। लेकिन उसका चेतन मन उसे सामाजिक नियमो और कर्त्तव्यो के पालन की प्रेरणा देता है।[4] इन बातो की खीचतान कर लेखक यह सिद्ध करना चाहता है कि 'सुखदा' एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। सुखदा मे प्रेम के उलझन की व्याख्या न सामाजिक है, न मनोवैज्ञानिक किंतु लेखक जीवन के प्रति व्यक्तिवादी दृष्टिकोण अभिव्यक्त करना चाहता है। प्रेम और जीवन की अस्तित्ववादी परिभाषा प्रस्तुत करता है। सुखदा अमुक्त

---

१. जैनेन्द्रकुमार : सुखदा, पृ ३।
२. वही, पृ. ७२।
३. वही, पृ १११।
४ डा० गणेशन हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन, पृ. ६४।

कामवासना से पीडित नही है। कही भी यह निर्देश नही है कि कात मे नपुसकता है। केवल मुक्त जीवन के स्वाद के कारण सुखदा लाल के समक्ष आत्म-समर्पण करती है। यह लेखक की दमित वासनाओ का विस्फोट नही है यह तो नारी की मुक्ति और पीडा के दर्शन की कथा है। नारी एक व्यक्ति है और वह एक व्यक्ति के स्वतत्र अस्तित्व की कहानी है, यह एक स्वतत्र और अभिशप्त व्यक्ति (नारी) की कहानी है। यह कहना ही लेखक का इस उपन्यास मे उद्देश्य है।

जीवन के उतार चढावो को झेलकर सुखदा महसूस करती है 'चारो ओर से काट काटकर अपने को अलग करती गई, और एकाकी बनकर जिधर भागती हुई चली जाती हू, वहा देखती हू—रेत, रेत, रेत,। केवल मृग तृष्णिका।[1]' सुखदा का जीवन समाज और परिवार मे बिल्कुल कटा हुआ है। उसके सामने सिर्फ फैलावट है, सिर्फ फैलावट। न घर है न दुकान, न मनुष्य, न समाज। बस केवल रिक्तता सामने है जो दीखता है इसमे दृश्य बन उठा है।[2] वह मानती है कि इतिहास के प्रवाह मे, जग के विस्तार मे, व्यक्ति केवल अक ही नही है।[3] हरिदा व्यक्तिवादी क्रातिकारी है और सामाजिक। लाल कहता है 'खुले मे आये और सामाजिक आधार पर चले। हमको अपनी रीति-नीति के नीचे सामाजिक बुनियाद चाहिये।[4] लाल प्रत्याख्यान और हरीश को नेता मानकर लेखक व्यक्तिवादी विचारधारा की स्थापना करना चाहता है। सुखदा सोचती है कि मृत्यु पाऊ और मुक्ति पाऊ।[5] अत सुखदा के माध्यम मे लेखक जीवन के व्यक्तिवादी दर्शन की अभिव्यक्ति करता है। लेखक ने सुखदा के अस्तित्व को, उसके व्यक्तित्व मे, उसकी मुक्ति की विचारधारा को अभिव्यक्त किया है। सुखदा अपने अस्तित्व और मुक्ति के लिए पीडित है। सार्त्र की शब्दावली के अनुसार वह पति से मुक्त होते हुए भी अभिषापित है। अस्तित्ववाद की परिभाषा के अनुसार वह मुक्त और बद्ध, सीमित और असीमित दोनो है। उपन्यास मे उसके 'चेतन मन का मनोविश्लेषण है, अचेतन मन का नही। इस उपन्यास मे चेतन मन का मनोवि—

१. जैनेन्द्रकुमार, सुखदा, पृ ७।
२. वही, पृ ४।
३. वही, पृ १२।
४. जैनेन्द्रकुमार, सुखदा, पृ. ८३।
५. वही, पृ. ८८।

श्लेषण साधन है और अस्तित्ववाद साध्य है, इसलिए इस उपन्यास की सार्त्र की नई शब्दावली 'अस्तित्ववादी मनोविश्लेषण' परिभाषा से अभिहीत करना पड़ेगा। सार्त्र के अनुसार प्रायोगिक अस्तित्ववाद अचेतन मन के अस्तित्व को मानता है किन्तु 'अस्तित्ववादी मनोविश्लेषण' अचेतन का मन प्रत्याख्यान कर उसको चेतन स्तर पर मानता है।[1] 'सुखदा' मे सुखदा के अस्तित्व के प्रश्न को लेकर, चेतन मन की अभिव्यक्ति हुई है। मूल रूप मे इसका मनोविश्लेषण अस्तित्ववाद पर टिका हुआ है, इसलिए इसे व्यक्तिवादी उपन्यासों की श्रेणी मे स्थान मिला है।

विवर्त्त (१९५३)

कथासार—भुवनमोहिनी एक रिटायर्ड जज की पुत्री होती है और वह जितेन को चाहती है। जितेन एक अंग्रेजी पत्रिका के सम्पादकीय विभाग मे कार्य करता है और उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नही होती है। जितेन भुवनमोहिनी के विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देता है। भुवनमोहिनी का विवाह मजिस्ट्रेट नरेशचन्द्र से हो जाता है। जितेन क्रातिकारी बन जाता है, और एक दिन रेल उडाकर भुवनमोहनी के यहां शरण लेता है। वह बीमार हो जाता है और मोहिनी उसकी सेवा करती है। जितेन भुवनमोहिनी के आभूषण चुरा लेता है और फिर भुवनमोहिनी को ही उडा लेता है। वह भुवनमोहिनी के बदले पार्टी के लिए पैसा मागता है। जितेन के विचारो मे परिवर्त्तन होता है और वह पुलिस के समक्ष आत्मसर्मपित हो जाता है।

वस्तु-विधान—'विवर्त्त' की कथा जितेन और भुवनमोहिनी के इर्द-गिर्द चक्कर काटती हैं। अन्य पात्रो की कथाओ मे भुवनमोहिनी के पिता और पति नरेशचन्द्र की कथाए हैं। यह लघु उपन्यास है और इस लघु उपन्याम मे व्यर्थ की घटनाओ को स्थान नही मिला है। भुवनमोहिनी और जितेन के बीच अनबन, भुवनमोहिनी का विवाह, क्रातिकारी जितेन का रेलगाडी उडाना,

---

१. जीन पाल सार्टरे. दिस दज माइ फिलासफी, एडीटेड बाइ व्हिट बर्नेट, पृ २२१।
एम्पिरिकल साइकोअनालिजिज, इन फैक्ट, इज बेस्ड ऑन द हाइपोथिसिज आफ द असिस्टेंस आफ एेन अनकानशस साइकी, व्हिच, आन द प्रिन्सिपिल एसकैप्स द इन्टूशन आफ द सब्जैक्ट। एक्सिस्टेन्शल साइकोअनालिजज रिजैक्ट्स द हाइपोथीसिस आफ द अनकान्शस, इट मेक्स द साइकिक ऐक्ट्स कोएक्सटैन्सिव विद कान्शसनैस।

भुवनमोहिनी के यहा कुछ दिन ठहरना, भुवनमोहिनी के आभूषण चुराना, भुवनमोहिनी को उडाना और अन्तत जितेन का पुलिस को आत्मसमर्पण—इस उपन्याम की प्रमुख घटनाए हैं। उपन्यास मे मुख्य कथा का ही विकास हुआ है और अन्य पात्रो की कथाओ का स्थान गौण है। उपन्यासकार व्यक्ति के विवर्त्त, ग्र थियो को अभिव्यक्त करना चाहता है। जितेन के मन के विवर्त्त और ग्र थियो की अभिव्यक्ति के लिए उपन्यास मे अस्वाभाविक घटनाओ को स्थान मिला है जैसे भुवनमोहिनी को चुराना आदि। उपन्यासो की बदलती घटनाओ के विकास मे कोई तर्कसगत योजना नही है। भुवनमोहिनी की जितेन की सेवा, जितेन द्वारा आभूषण और मोहिनी को उडाने मे कोई तर्क संगत योजना नही है इसलिए मनोवैज्ञानिक वस्तु-शिल्प होते हुए भी अस्वाभाविक घटनायें उपन्याम मे स्थान पा गई हैं। अतः वस्तु अन्विति की दृष्टि से यह उपन्यास सुन्दर उदाहरण नही है

चरित्र-विधान—जितेन और भुवनमोहिनी इस उपन्यास के नायक और नायिका हैं और अन्य मुख्य पात्र मे नरेश है। जैनेन्द्र को अपने हर पात्र पर पूर्ण अधिकार है और कोई भी उनके प्रभाव से मुक्त नही है। प्रारम्भ मे सनकी भुवनमोहिनी, अपने पति नरेश पर पूर्ण आधिपत्य रखती हुई, प्रेमी की सेवा करती है। जितेन के मन मे ग्र थि है, कुण्ठा है। उसका रेलगाडी उडाना, आभूषण चुराना और भुवनमोहिनी को उडाने मे उमके मन की कुण्ठा अभि-व्यक्त होती है। नरेश सुखदा के कान्त का दूसरा रूप है किन्तु कान्त की तुलना मे इसमे शक्ति है, व्यक्तित्व है। विनोदी व्यक्तित्व रखते हुये भी नरेश पत्नी के व्यक्तित्व के समक्ष बौना है। जैनेन्द्र के पात्रो मे अस्पष्टता रहती है और 'विवर्त्त' के पात्र अस्पष्टता मे मुक्त नही है। जितेन, नरेश और भुवनमोहिनी सभी पात्र लेखक के व्यक्तित्व के कठपुतले हैं; लेखक के व्यक्तित्व के साचे हैं, लेखक के व्यक्तित्व से अलग अपना व्यक्तित्व अभिव्यक्त नही करते हैं। जितेन एक विकसनशील पात्र है किन्तु जितेन का विकास अस्वाभाविक रहा है। नरेश पूर्ण रूप से सपाट पात्र है। भुवनमोहिनी के विवाह के पहले और विवाह के बाद के व्यक्तित्व मे कोई सम्बध सूत्र नही है। जितेन पूर्ण रूप से व्यक्तिवादी पात्र है और नरेश और भुवनमोहिनी परिवार मे रहते हुए भी परिवार मे कटे हुए दो अलग व्यक्ति हैं। पति पत्नी से अधिक दो व्यक्तियो के रूप मे अभिव्यक्त हुए हैं इसलिए इन्हें भी व्यक्तिवादी पात्र मानना चाहिये। तीनो पात्र व्यक्तिवाद के पुतले है, जीवन का स्पन्दन और चेतना उनमे नही है।

उद्देश्य—लेखक जितेन के बारे मे लिखता है 'अपराध उसका स्वभाव नही है। मानो कही दवाव है, ग्रथि है, विवर्त्त है जिसके कारण स्वभाव विभाव को अपना सका है। विवर्त्त के अन्त मे विभाव का शमन होता है और नायक जितेन के चित्त का परिष्कार कथा की भुवनमोहिनी के असदिग्ध पर मर्यादाशील स्नेह के प्रभाव से ही निष्पन्न होता है।[1] व्यक्ति के मन के विवर्त्त को अभिव्यक्त कर शमन करना ही उपन्यासकार का इस उपन्यास में उद्देश्य है। रेलगाडी उडाना, आभूषण चुराना और भुवनमोहिनी को उडाने मे उसके मन का विवर्त्त अभिव्यक्त होता है। नायिका के अमर्यादाशील आत्मसमर्पण से जितेन का पुलिस के समक्ष आत्मसमर्पण उसके विवर्त्त का शमन है।

इस उपन्यास मे जितेन और भुवनमोहिनी के अचेतन मन की अभिव्यक्ति नही है। घटनाओ और चेतनमन के परिपार्श्व मे लेखक ने प्रेम और विवाह के दृष्टिकोण को व्यक्तिवादी ढग से प्रस्तुत किया है। विवाह एक सामाजिक समस्या है किन्तु जितेन और भुवनमोहिनी की अनवन और भुवनमोहिनी का विवाह व्यक्तिवादी धरातल पर स्थित है। नरेश की अपनी विवाहिता पत्नी को अत्यधिक स्वतत्रता देना व्यक्तिवादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति है। जितेन भुवनमोहिनी और नरेश सभी व्यक्तियो के अलग अलग घेरे हैं। भुवनमोहिनी लेखक के विचारो को प्रकट करती है 'हम जो हैं है, हर एक को खुद होने की स्वतत्रता है।[2]' व्यक्तिवादी विचारधारा की अभिव्यक्ति के कारण इस उपन्यास को व्यक्तिवादी–उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिला है।

व्यतीत (१९५३)

कथासार—आत्मचरितात्मक उपन्यास 'व्यतीत' मे नायक जयन्त ने अपने असफल प्रेम की कहानी कही है। बी० ए० के पश्चात सिविल सर्विस की कामना थी किन्तु उसे केवल एक अग्रेजी पत्र का सहसम्पादक बनना पडा। वह कविता भी करता था। सम्पन्न पिता की पुत्री अनिता उसे जी जान मे प्यार करती थी, किन्तु उसने उसे स्वीकार नही किया। उसका विवाह चन्द्री से हुआ किन्तु उसका पुरुषत्व तनिक भी चचल नही हुआ। चद्री को छोडकर सेना मे कमीशन लेकर कैप्टन बन गया। अनिता ने स्वय को जयन्त के समक्ष समर्पित कर दिया किन्तु अनिता को छोडकर उसने जीवन उस को ही छोड दिया और गैरिक वस्त्र अपना लिए।

---

१ जैनेन्द्रकुमार : विवर्त्त, भूमिका।
२. वही, पृ० १८।

वस्तु-विधान—'व्यतीत' मे नायक जयन्त की कथा के चारो ओर अन्य पात्रो की कथाए गु थी हुई है। अन्य पात्रो की कथाओ मे चन्द्री, अनिता, सुमिता और मिसेज कपिल आदि की कथाए हैं। जयन्त की प्रेमिका अनिता का उसके पिता की मृत्यु के साथ घर की व्यवस्था करना पुरी दम्पत्ति-अनिता और उसके पति का जयन्त के दफ्तर में मिलना, जयन्त का मालिक की पुत्री सुमिता के साथ अभिसार कर छोड देना, अपने मित्र कुमार को विदेश जाते समय उसकी वहिन चद्री को केवल रोकने के कारण विवाह करना, चन्द्री द्वारा जयन्त के घर की व्यवस्था सम्भालना, सेना के कमीशन पर जाना, उसकी बीमारी के समय कपिल दम्पत्ति की सेवा करना, अनिता का आत्मसमर्पण और जयन्त का गैरिक वसन पहनकर निकल पडना-उपन्यास की मुख्य घटनाए हैं। यह लघु उपन्यास होते हुए भी मनोवैज्ञानिक शिल्प की विरलता के कारण घटना-प्रधान हो गया है। इसमे जयन्त ने, आत्मचरितात्मक शैली मे, अपने असफल प्रेम की कहानी कहती है। उपन्यास मे जयन्त का चन्द्री से विवाह अस्वाभाविक जान पडता है। कुमार के विदेश जाते समय चद्री को रोकने मे विवाह करना असगत जान पडता है। जयन्त का सुमिता के साथ अभिसार की घटना का भी उपन्यास के विकास के साथ कोई सम्बध नही है। जयन्त की सेवासुश्रुषा करने की घटना ने भी उपन्यास के विकास मे सहायता नही की है। यह सही है कि सभी पात्रो की कथा जयन्त की कथा से जुडी है किन्तु जयन्त की असफल प्रेम कहानी के चित्रण मे कुमार और कपिल दम्पत्ति की कथाओ का कोई हाथ नही है। इसका कथानक शिथिल और अस्पष्ट है। इसमे अस्वाभाविक घटनाओ को स्थान मिल गया है, इसलिए शृंखलाबद्ध घटनाओ के अभाव मे उपन्यास की अन्विति की रक्षा नही हो सकी है।

चरित्र-विधान—जयन्त उपन्यास का नायक है और अनिता नायिका। जयन्त व्यक्तिवादी उपन्यासकार का व्यक्तिवादी नायक है और अनिता व्यक्तिवादी नायिका। जयन्त एक असफल प्रेमी और असफल पति बनकर जीवन से पलायन करता है। यह जीवन के पलायन का प्रतीक है। अनिता सुखदा और भुवनमोहिनी की तरह अपने प्रेमी को आत्मसमर्पण के लिए तैयार हो जाती है। अनिता एक पत्नी होते हुए भी उपन्यास मे एक प्रेमिका के रूप मे अभिव्यक्त हुई है जो आत्मसमर्पण के समय कहती है 'कहती हू मैं यह सामने हू। मुझको तुम ले सकते हो। समूची को जिस विधि से चाहे ले सकते हो।[1]' चन्द्री भी कुण्ठाओ से पीडित नारी है और अन्य पात्रो का

१. जैनेन्द्रकुमार : विवर्त्त, पृ० १६३।

व्यक्तित्व भी पूर्ण रूप से अभिव्यक्त नही हुआ है। 'व्यतीत' के पात्रो मे जयन्त, अनिता और चन्द्री आदि सभी पात्र बुद्धिवादी की टेबल पर बनने और बिगडने वाले पात्र हैं। पात्रो का व्यक्ति जैनेन्द्रीय व्यक्तित्व है। पात्रो का जीवन जैनेन्द्र की लेखनी मे परिचालित है। 'व्यतीत' के पात्रो मे कोई व्यक्तित्व नहीं है। उनकी परिस्थितिया मिथ्या है। जितेन अकर्मण्य और अव्यवहारिक व्यक्ति है। इसे हमारी सहानुभूति नही मिलती है। उपन्यास के सभी पात्र— जितेन, अनिता और चन्द्री कृत्रिम, अस्वाभाविक और अमासल हैं। इन पात्रो मे लेखक का मत और पूर्वाग्रहो की अभिव्यक्ति हुई है। जहा तक विकास का प्रश्न है, जितेन प्रारम्भ से अन्त तक पलायनवादी है अनिता आत्मसमर्पण की ओर उन्मुख होने वाली प्रेमिका है और चन्द्री एक कुण्ठित और सनकी युवती और पत्नी है, इसलिए पात्रो के व्यक्तित्व सपाट हैं, उनमे विकास की सम्भावनाओ का अभाव है। इन पात्रो मे जीवन की स्पन्दन और चेतना का अभाव है।

उद्देश्य—जयन्त ने अपने गत जीवन के उहापोह मे जीवन की व्यर्थता को अभिव्यक्त किया है। उपन्यास के अन्त मे जयन्त कहता है, लगता है जीवन व्यर्थ भार ही है क्यो कि कही इसे कभी देकर सो नही सका, ताकि कुछ पा जाता और यो भटकता न फिरता।[1]' जयन्त के इन शब्दो को उपन्यासकार ने उपन्यास के अन्त मे सार के रूप मे प्रस्तुत किया है, किन्तु उपन्यासकार का उद्देश्य व्यक्तिवादी विचारधारा की अभिव्यक्ति है। यह सही है कि आर्थिक विषमता के कारण जयन्त अनीता को नही अपना सका। इसलिए व्यक्तिवादी विचारधारा को आर्थिक आधार प्रदान नही किया है। व्यक्ति की व्यक्तिवादी कुण्ठा ही इस उपन्यास मे है। इस उपन्यास मे न तो जयन्त की अपनी कोई जीवन दृष्टि है और न उपन्यासकार ही कोई विशेष मन्तव्य प्रकट कर सका है।

यह एक व्यक्तिवादी उपन्यास है। अपने व्यक्तिरूप को सामाजिक रूप मे मिलाने के लिये जयन्त ने चन्द्री से विवाह किया। वह कहता है कि विवाह सामाजिक है। हम दोनो ने अच्छी तरह देखा कि वह सामाजिक है। हम दो व्यक्ति रूप मे ही मिले, नियत और एकाकी व्यक्ति।[2] उसके शब्दो मे कहने मात्र को विवाह सामाजिक है किन्तु उसने विवाह के सामाजिक दायित्व को

१. जैनेन्द्रकुमार 'व्यतीत' पृ० १६६।
२. वही, पृ० ८९।

न सम्भाल कर जीवन से पलायन किया। अनिता से प्रेम और चन्द्री से विवाह विषम विवाह के सामाजिक पहलु को हमारे सामने न रखकर व्यक्तिवादी पहलू को रखा है। एक समय आया जब जयन्त ने महसूस किया, 'अनिता भी गई, चन्द्री भी चली गई, अब अकेला हू। आदमी अकेला आता, अकेला जाता है, बाकी बीच का झमेला ही तो है।[1] इस अकेलेपन की अभिव्यक्ति मे जयन्त की व्यक्तिवादी विचारधारा प्रकट होती है। अनिता का आत्म-समर्पण उसकी व्यक्तिवादी विचारधारा प्रकट करती है। अन्त मे जयन्त द्वारा गैरिक वस्त्र पहिनकर जीवन की व्यर्थता की अभिव्यक्ति व्यक्तिवादी विचारधारा की अभिव्यक्ति है। व्यक्तिवाद विचारधारा की अभिव्यक्ति होने के कारण इस उपन्यास को व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिला है।

जयवर्धन (१६५६)

'जयवर्धन' डायरी शैली मे लिखा गया जनैन्द्रकुमार का उपन्यास है। लेखक ने भविष्य के, इक्कीसवी शताब्दी के प्रारम्भ के काल्पनिक अधिपति जयवर्धन को, एक अमरीकी पत्रकार हूस्टन के डायरी के पृष्ठो के माध्यम से अकित किया। जयवर्धन भारत का अधिपति है और वह आचार्य की पुत्री इला के साथ रहता है। इला और जयवर्धन का विवाह नही हुआ है। विवाह न होने और साथ रहने के कारण बडे बडे नेताओ के मन के भीतर जयवर्धन के प्रति रोष है। हूस्टन राजकीय व्यक्ति होने के नाते जयवर्धन और इला की अतिथि रहता है। कुछ सप्ताह के कार्यकाल मे वह आचार्य, स्वामी चिदानन्द, नाथदम्पत्ति और इन्द्रमोहन से मिलकर, जयवर्धन के व्यक्तित्व के बारे मे उनकी क्रिया प्रतिक्रियाओ का अध्ययन करता रहा। वह जयवर्धन का अतरग लेने आया है पर जयवर्धन कहते हैं. मित्रवर, अतरग लेने के लिए नही, न देने के लिए है। तभी भगवान ने उसे अन्दर ढक रखा है।[2]' हूस्टन और जयवर्धन, इला, नाथदम्पत्ति स्वामी, आचार्य और इन्द्रमोहन के सलापो के अतिरिक्त कतिपय घटनाए घटित होती हैं। आचार्य जेल मे मुक्त होकर शिवधाम पहुच जाते है। जयवर्धन के विरुद्ध षडयन्त्र रचा जाता है। राष्ट्रीय-परिषद के समक्ष जयवर्धन अपने को राजकीय—उत्तरदायित्व से मुक्त कर लेते हैं।

---

१ वही, पृ० १२७।

२. जैनेन्द्रकुमार : जयवर्धन : पृ० २३।

वस्तु–विधान—इस उपन्यास मे जयवर्धन की कथा को, ग्रमरीकी पत्रकार श्री हूस्टन ने ग्रन्य पात्रो इला, आचार्य स्वामी चिदानन्द, नाथ दम्पत्ति ग्रौर इन्द्र मोहन की कथाग्रो के साथ कहा है। श्री हूस्टन, भारत के ग्रधिपति, जयवर्धन के यहा, राज्य के नाते कुछ दिन ठहरते हैं। उस समय वे ग्राचार्य की पुत्री इला, ग्राचार्य स्वामी चिदानन्द, नाथ दम्पत्ति ग्रौर इन्द्रमोहन से वातचीत करते हैं। ग्राचार्य की पुत्री इला जयवर्धन के साथ रहती है ग्रौर ग्राचार्य जेल मे है। सलापो के ग्रतिरिक्त वहुत कम घटनाये घटित होती है। ग्राचार्य का जेल से मुक्त होना, उनका शिवधाम पहुँचना, सभी विरोधी नेताग्रो का जयवर्धन के विरुद्ध षडयत्र रचना ग्रौर तदुपरान्त राष्ट्रीय परिषद् के समक्ष जयवर्धन का ग्रपने को राजकीय उत्तरदायित्व से मुक्त करा लेना इस उपन्यास की मुख्य घटनाए हैं। उपन्यास मे घटनाग्रो की ग्रन्विति का प्रश्न ही नही उठता है क्योकि इसमे घटनाएँ नाम मात्र को हैं। सम्पूर्ण उपन्यास मे विचार ही विचार हैं। यह उपन्यास दार्शनिक—विचारो की वोझिलता ग्रौर मनोवैज्ञानिक उलझनो से भरा है। लेखक भी मानता है, 'उस सामग्री को मैंने किंचित ग्रौर यहा के ग्रनुकूल वनाने के लिये जहा तहा ही तनिक छुग्रा या छेडा है। विधिवत् उपन्यास का रूप तो उसे फिर भी नही मिल सका है।[1]' विचारो की वोझिलता के कारण उपन्यास मे विचारो के सूत्र विखरे पडे हैं, वे उपन्यास के प्रारम्भ से ग्रन्त तक नही जुड पाते हैं। वस्तु विधान मे पर्याप्त जटिलता है। जहा तक वस्तु विधान मे मनोवैज्ञानिक शिल्प का प्रश्न है, यह उपन्यास वस्तु विधान की दृष्टि से एक नई उपलब्धि हो सकती है किन्तु दार्शनिक जटिलता की दृष्टि से यह वस्तु ग्रन्विति की रक्षा नही कर सका है। जयवर्धन के व्यक्तित्व का चित्रण करना ही उपन्यासकार का मुख्य उद्देश्य जान पडता है, ग्रौर इस दृष्टि से विचारो की वोझिलता होते हुए ग्रौर ग्रस्पष्टता होते हुए भी उपन्यासकार ग्रपने उद्देश्यो को स्पष्ट करने मे, वस्तु विधान मे ग्रन्विति ला सका है। यह निश्चित है कि स्वल्प कथा ग्रौर स्वल्प वस्तु होने के कारण, यह कथाहीन ग्रौर वस्तुहीन उपन्यासो की परम्परा मे एक महत्वपूर्ण कडी माना जाएगा। उपन्यास की ग्रल्प घटनाए स्वाभाविक ग्रौर शृखलाबद्ध दृष्टि से जुडी हुई हैं। ग्रस्वाभाविक घटनाग्रो को उपन्यास मे स्थान नही मिला है। विचारो की वोझिलता से इसे मुक्ति

---

१. जैनेन्द्रकुमार . जयवर्धन पृष्ठ प्रारम्भिक।

प्रदान करे तो वस्तु विधान मे यह एक नई उपलब्धि है।

चरित्र-विधान—जयवर्धन इस उपन्यास का नायक है और इला नायिका। अन्य पात्रों मे आचार्य स्वामी चिदानन्द, नाथ दम्पत्ति, और इन्द्र मोहन आदि है। जैनेन्द्रकुमार ने इस उपन्यास मे न व्यक्ति दिया है और न टाइप। जैनेन्द्र के पात्र केवल प्रतीक है। यहा हर पृष्ठ पर पात्र नही बोलते, लेखक बोलता है: वे हाड मास के पुतने न होकर जैनेन्द्र के विचारो के वाहक है। इला और लिजा, आचार्य और चिदानन्द, मिस्टर नाथ और इन्द्र-मोहन सभी निर्जीव है, क्योकि उनमे प्राणो की चेतना नहीं है। इस बात मे पर्याप्त सत्यता है, 'आचार्य को गाधीजी की छाया माना जाय तो उनकी भाषा जैनेन्द्र की है, जयवर्धन पर नेहरू जी की छाया डाली गई है परन्तु उससे अधिक उत्कट जैनेन्द्र है, चिदानन्द मे श्री गोलवलकर का आभास है पर उससे भी अधिक उत्कट उसमे जैनेन्द्र हैं। इन्द्रमोहन आतकवादी है परन्तु जैनेन्द्र माडलकार, जैनेन्द्र का दार्शनिक तटस्थ हूस्टन स्वय जैनेन्द्र जी का प्रतिबिम्ब है। यहा तक की इला भी जैनेन्द्र का ही नारी सस्करण है। इस उपन्यास मे जैनेन्द्र ने जैनेन्द्र से जैनेन्द्र को तोला है तो फिर अन्तर कैसे दिखाई देता।[1] पात्र जैनेन्द्रीय विचारो के प्रतीक हैं उनमे विकास की सम्भावनाए नही है। एक आलोचक की भ्रान्त धारणा है कि इस उपन्यास का केन्द्र जयवर्धन मे नही, इला मे है क्योकि उसी को लेकर सभी प्रमुख पात्रो की मानसिक ग्रथियो की सृष्टि हुई है और उसके मोचन पर ही कथा की परिणति प्राप्त हो सकी है।[2] उपन्यास का प्रधान पात्र जयवर्धन है, इला नही, इला केवल माध्यम है। जयवर्धन के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति के लिये और सभी पात्रो की प्रतिक्रिया जयवर्धन के व्यक्तित्व के उद्घटन के लिए व्यक्त हुई है। हूस्टन इला के माध्यम से जयवर्धन का अन्तरग आकना चाहता है, इला का नही। इला, लिजा, आचार्य स्वामी चिदानन्द,मिस्टर नाथ, इन्द्र मोहन और जयवर्धन सभी विचारो और मानसिकता के ताने बाने से बुने हुए व्यक्तित्व हैं। उनमे प्राणो की चेतना और मांसलता का सर्वथा अभाव है। यह मानना सरासर गलत है कि जयवर्धन का हूस्टन तो स्पष्ट रूप से मनोविश्लेषक होने की दुहाई देता है।[3] हूस्टन मनोविश्लेषक न होकर, एक दार्शनिक पत्रकार हैं, वह पात्रो के

---

१. आलोचना २३, पृ० ६८।
२. आलोचना २०, पृ० ११४।
३. रणवीर रागा—हिन्दी उपन्यासो मे चरित्र-चित्रण, पृ० ३६७।

अन्तरग जीवन मे झाककर उनके व्यक्तित्व का प्रकाशन करना चाहता है। केवल अन्तरग जीवन की अभिव्यक्ति के कारण कोई भी पात्र 'मनोवैज्ञानिक केस' नही बन सकता है। सभी पात्र अमान्सल और जैनेन्द्रीय विचारो के प्रतीक होने के साथ, व्यक्तिवादी चेतना के प्रतीक हैं।

उद्देश्य—जैनेन्द्र एक व्यक्तिवादी उपन्यासकार है। आज से लगभग पचास वर्ष आगे आने वाले भविष्य की कल्पना करके 'जयवर्धन' उपन्यास लिखा गया है। उसकी भविष्य की कल्पना मानवीय–समाज के नव निर्माण की कल्पना न होकर, उन व्यक्तियो की कल्पना है जो भविष्य निर्माण करेंगे। इस उपन्यास पर यह आरोप लगाना गलत है कि भारतीय समाज के विचारो को बैचेन करने वाली अथवा नई विचारधारा को प्रोत्साहित करने वाली आर्थिक, राजनैतिक परिस्थितियो को अकित करना आवश्यक नही समझा।[1] जैनेन्द्रकुमार एक व्यक्तिवादी विचारक हैं इसलिए उनके कृतित्व को सामाजिकता और समाजवादी प्रवृत्तियो के आधार पर तोलना व्यर्थ है। व्यक्तिवादी विचारधारा को आधार मानकर ही उनके उपन्यास के उद्देश्य को स्पष्ट किया जा सकता है। भारतीय समाज की राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियो का चित्रण करना लेखक का उद्देश्य नही है। वस्तुत इसमे जयवर्धन के व्यक्तित्व पर पडने वाले घात प्रतिघातो का चित्रण हुआ है। एक अन्य आलोचक ने एक और गलत दृष्टिकोण माना है कि जयवर्धन दिग्भ्रात राजनीति की कोई नई परिभाषा देने के लिये सामने आया है।[2] दिग्भ्रात राजनीति की नई परिभाषा देना इस उपन्यास का उद्देश्य नही है। लेखक ने जयवर्धन के व्यक्तित्व का उद्घाटन किया है। जयवर्धन के व्यक्तित्व को पहली बार देखने पर हूस्टन ने लिखा, 'जयवर्धन को देखा, मिला, बात हुई, व्यक्ति नहीं, यह घटना है। कह दो व्यक्तित्व स्पष्ट नही, कही भीड मे वह खो भी सकता है। साधारण, स्वल्प, पर छुआ कही तो बिजली का जीता तार जैसे छू गया। धक्के और अचमे से आदमी झझना आता है।[3] जयवर्धन के साधारण और असाधारण—चुम्बकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। लेखक ने प्रारम्भ मे ही स्पष्ट कर दिया है कि अमरीकी

१. आलोचना २२, पृ० ५० ।

२. कृति . अगस्त, ६०, पृ० ३८ ।

३ जैनेन्द्रकुमार—जयवर्धन, पृ० १७ ।

पत्रकार विल्वर हूस्टन की पहली यात्रा का लक्ष्य भारत था, पर दूसरी बार जयवर्धन के व्यक्तित्व मे केंद्रित रहा।[1]

जैनेन्द्र व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं और 'जयवर्धन' एक व्यक्तिवादी उपन्यास है। जयवर्धन 'एक व्यक्ति है, जो प्रतीक है।[2] हूस्टन जयवर्धन के बारे मे कहते हैं 'मैं सचमुच उस व्यक्ति की अतगता को, वहा के लक्ष्य को समझ नही सका। क्या है जो उस आदमी के प्रचण्ड और वृहत् राजनीतिक कर्म को और इस अत्यत निजीय और स्वल्प प्रसग को अभिन्नता मे एकत्रित रखता है।[3]' जयवर्धन को व्यक्तिरूप से चित्रित करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है और वह भी विना समाज के परिपार्श्व के, इमे व्यक्तिवादी उपन्यास मानना चाहिये। लेखक मानता है कि व्यक्ति धर्म और शासक धर्म मे उसके भीतर द्वन्द्व चलता है। यह भी देख सका कि शासक से व्यक्ति प्रवल है।[4]' जयवर्धन स्वतत्र होते हुए भी अभिशप्त है इसलिए अपनी मुक्ति के लिए छटपटाते हैं। जयवर्धन वद्ध होते हुए भी मुक्त हैं। वे मानते हैं, 'लेकिन मैं जयवर्धन हूं, जयवर्धन अपना है, वह विधान का नही है, राजपति विधान का कैदी हो और सब सिद्धान्त उस पर आकर टूटने का हक रखते हो, पर जयवर्धन मुक्त है।[5]' जयवर्धन अपने व्यक्तित्व के अस्तित्व के लिए छटपटाते हैं और अत मे बन्धन से मुक्त हो जाते हैं। जयवर्धन मानते हैं 'इला स्वतंत्र नही है, मैं स्वतत्र नही हू, कोई स्वतत्र नही है, सब मुक्त है और अन्त मे परस्पर एक नियति की डोर मे बधे हैं।[6] जयवर्धन सहजीवन से अभिशप्त हैं। लेखक का साम्यवादी और समाजवादी जीवन मे विश्वास नहीं है। जयवर्धन के शब्दो मे जैनेन्द्र मानते हैं 'अस्तित्व सबका स्वीकृत है और समाज वह सच्चा है जहा अस्तित्व सबके लिए सहज हो।[7] 'व्यक्तिवादी दर्शन की अभिव्यक्ति होने के कारण इस उपन्यास को व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे रखना समीचीन जान पडता है।

---

१. वही, प्रारम्भिक।
२. वही, पृ० ४१।
३. वही, पृ० १२३।
४. जैनेन्द्रकुमार : जयवर्धन, पृ० १५०।
५. वही, पृ० १९९।
६. वही, पृ० २००।
७. वही, पृ० २१९।

अन्य उपन्यास

मुक्तिबोध (१९६५)

'मुक्तिबोध' जैनेन्द्रकुमार का अन्तिम उपन्याम है और लेखक के मतानुसार यह रचना 'आकाशवाणी' के निमित्त से बनी है। हर रविवार को एक परिच्छेद लिखा जाता और सोमवार को प्रसारित किया जाता। यह कुल दस हफ्ते तक चला।[1]" इसमे ससद सदस्य सहाय के मन के भीतर उठने वाले अन्तर्द्वन्द्व की कथा लेखक ने कही है। सहाय 'मिनिस्ट्री' नही चाहता है। मिनिस्ट्री से इन्कार करने की बात को लेकर उसके निकटतम व्यक्तियो के मन मे जो प्रतिक्रियाए हुई हैं, उनको इस उपन्यास मे व्यक्त किया गया है। उनकी पत्नी राजश्री, पुत्री अजलि, मित्र ठाकुर सा०, प्रेमिका नीला और दामाद सब विरोध करते हैं। उनका पुत्र वीरेश्वर भी अजलि के पति का साथ देना चाहता है। कु वर अपने कृत्यो से फस जाता है और वह सहाय का सहारा चाहता है। अन्त मे वह सूचना देते हैं कि वे मिनिस्टर बन चुके हैं।

लघु उपन्यास होने के कारण वस्तु विन्यास पूर्ण रूप से गठा हुआ है। केवल वीरेश्वर के प्रश्न को लेकर कुछ चर्चाए आवश्यक सी प्रतीत होती है। लेखक के सभी उपन्यासो मे अधिकाश चरित्र बुद्धिवादी की टेबल पर बनते और बिगडते हुए दिखाई पडते हैं किन्तु सहाय सजीव और सप्राण पात्र है। सहाय के अतिरिक्त नीला भी एक सजीव पात्र है। सहाय लेखक के विचारो और लेखनी मे मुक्त है और वह अपनी जिन्दगी जीता है। राज्यश्री, अन्जलि, कु वर ठाकुर और नीला सभी अपने स्वार्थ मे लिप्त है और वे सहाय को अपनी स्वार्थपूर्ति का एक माध्यम मानते हैं।

व्यक्तिवादी विचाराधारा की स्थापना ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है। सभी व्यक्ति अपने अपने स्वार्थ के घेरे मे बन्धे हुए हैं और वे सहाय को अपनी स्वार्थपूर्ति का एक साधन और माध्यम मानते हैं। अन्त मे सहाय सोचते हैं 'मुक्तिबोध की कहानी यहा ही खत्म हो जाती तो अच्छा था। लेकिन जग का जन्जाल खत्म होने के लिए होना है। परम्परा विस्तृत होती चली जाती है कि सब अन्त मे मुक्ति मे पर्यवसान पाये। अर्थात मुक्ति और सृष्टि परस्पर शब्द है। शायद सृष्टि मे से मुक्ति है। चाहे तो देखें कि सृष्टि सदा बन्धनो की ही सृष्टि हुआ करती है।[2]' 'यही उपन्यासकार का

---

१. जैनेन्द्रकुमार : मुक्तिबोध : भूमिका।

२ वही, पृ० १४५।

सन्देश जान पडता है। व्यक्ति के मुक्ति और बन्धन के प्रश्न को व्यक्तिवादी दर्शन के परिपार्श्व मे उपस्थित करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है।

यह एक व्यक्तिवादी उपन्यास है। सहाय और उनकी पत्नी राजश्री के बीच भी एक रिक्तता है। सहाय सोचते हैं 'उस समय लगा कि मै एकदम इस किनारे हू, बीच मे निपट रिक्तता है और कोई कुछ नही कर सकता है।[1]' व्यक्ति और व्यक्ति के बीच, अलगाव, दूरी और रिक्तता है। सहाय व्यक्तित्व चाहते हैं और उनमे कोई सम्बन्ध नही रखना चाहते हैं जिससे व्यक्तित्व की हानि का समर्थन हो।[2] सहाय व्यक्ति के अस्तित्व के प्रति चिन्तित है 'कहते हैं मूल मे अस्तित्व है उसी को बचाना और बनाना है। इस आधार पर लोगो ने जीवन को समझा है, समझाया भी है।[3]' सहाय की धारणा है . 'सोशलिजम सच्चा शब्द नही है, वह इन्डिविज्वलिजम का सिर्फ जवाब है। एक वाद, दूसरा विवाद।[4]' इस आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सकता है व्यक्तिवादी जीवनदर्शन ही सहाय के जीवन का लक्ष्य है और वही उपन्यासकार का उद्देश्य जान पडता है इसलिए 'मुक्तिबोध' व्यक्तिवादी-उपन्यास है।

अज्ञेय

अज्ञेय व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं। कविता के क्षेत्र मे भी उन्होन माना है . 'आज का कवि तो कविता को बरच व्यक्तित्व की, व्यक्ति के अह की, प्रखरतर अभिव्यक्ति और उस अह को पुष्ट करने वाली रचना मानता हू।[5]' यही बात उनके उपन्यासो के बारे मे लागू होती है। 'शेखर और जीवनी' और 'नदी के द्वीप' के बारे मे उनकी स्पष्ट धारणा है . 'शेखर की स्वातन्त्र्य की खोज टूटती हुई नैतिक रूढियो के बीच नीति के मूल स्रोत की खोज है। कह दीजिए कि समाज की खोखली सिद्ध हो जाने वाली मान्यताओ की प्रतिष्ठा करने की कोशिश की है। .... 'नदी के द्वीप' समाज के जीवन का चित्र नहीं है।' यह व्यक्ति-चरित्र का उपन्यास है। ... वह

१. जैनेन्द्रकुमार, मुक्तिबोध, पृ० ११।
२ वही, पृ० १७।
३ वही, पृ० ४३।
४. वही, पृ० १३६।
५. अज्ञेय : आत्मनेयपद : पृ० ३३।

निरा पुतला, निराजीव नही है, बुद्धि विवेक-सम्पन्न व्यक्ति ।.... ...... तो मेरी रुचि व्यक्ति मे रही है और है, 'नदी के द्वीप' व्यक्ति चरित्र का उपन्यास है ।[1]' अज्ञेय की रुचि हमेशा व्यक्ति मे रही है ।

अज्ञेय ने एक स्थान पर एक प्रश्न के उत्तर मे स्पष्ट कहा है 'जो उपन्यास मूलत चार पाच वैयक्तिक सवेदनाओ का अध्ययन है, उसके पात्र 'समाज से कटे हुए' हैं या नही, यह प्रश्न मेरे लिए तो प्रासगिक हीं नही हुआ । एक पेड़ की शाखा प्रशाखा की रचना देखने के लिए क्या यह पहले निश्चय कर लेना अनिवार्य (या आवश्यक भी) है कि वह पेड जङ्गल से कटा हुआ है या जङ्गल का अङ्ग है ? उपन्यास अनिवार्यत पूरे समाज का चित्र हो, यह माग बिल्कुल गलत है । उपन्यास की परिभाषा के बारे मे भ्राति साहित्य के सामाजिक तत्व को गलत समझने का परिणाम है । कह लीजिये कि छिछली या विकृत प्रगतिवादिता का परिणाम है ।[2] व्यक्ति चरित्र और व्यक्ति की सवेदनाओ का चित्रण इतना अधिक है कि अज्ञेय ने हमेशा समाज की उपेक्षा कर व्यक्तित्व को महत्व दिया है ।

मनोविश्लेषण अज्ञेय के उपन्यासो मे साधन है, साध्य नही । चेतनमन का विश्लेषण व्यक्ति के अस्तित्व की अभिव्यक्ति हेतु हुआ है इसलिए यह व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं । वाजपेयी जी के मतानुसार अज्ञेय की ये कृतियाँ प्रमुखत सामाजिक और मनोवैज्ञानिक उपन्यासो की श्रेणी मे न आकर व्यक्ति-वादी उपन्यास ही कहला सकती हैं । उनके मनोवैज्ञानिक चित्रणो मे वस्तु मुखी मनोवैज्ञानिकता नही है । इसलिए वे मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार कहलाने के अधिकारी नही है ।[3] निस्सन्देह अज्ञेय व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं ।

'शेखर एक जीवनी'–१ (१९४०) 'शेखर एक जीवनी'–२ (१९४४), 'नदी के द्वीप' (१९५१) और 'अपने अपने अजनबी' (१९६१) इनकी उपन्यास कृतिया हैं जिनमे 'शेखर एक जीवनी' को छोडकर 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनबी' इस विवेच्यकाल की कृतिया हैं ।

---

१ अज्ञेय आत्मनेपद पृ० ६७, ७१–७३ ।

२. वही, पृ० ८६ ।

३. नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य नये प्रश्न, पृ० १८८–१८९ ।

'नदी के द्वीप' (१९५१)

कथासार— नदी के द्वीप' चार व्यक्तियों की भुवन, रेखा, गौरा और चन्द्रमाधव की कथा है। यह माना गया है कि उपन्यास का केन्द्रबिंदु भुवन एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक है। इन चार व्यक्तियों के कथाखण्ड मिलकर एक कथा बन गई है। भुवन, डा० भुवन, फिजिक्स के डाक्टर है, कास्मिक रश्मियों की खोज करने वाला है। रिसर्च स्कालर से अध्यापन और फिर मेजर भुवन यही उसके जीवन का क्रम रहा। भुवन रेखा से लखनऊ मे पहली बार मिला और मिलाने वाला था उसका मित्र, चन्द्रमाधव। चन्द्रमाधव हेमेन्द्र से भी परिचित था और रेखा के लिए व्यवसाय खोजने वाला एक पत्रकार था। गौरा भुवन की शिष्य थी और फिर दक्षिण मे सङ्गीत सीखती है। रेखा प्रारम्भ मे प्रतापगढ रियासत मे गवर्नेस रहती है और फिर मुक्त हो जाती है। चन्द्रमाधव 'पायनियर' का सवाददाता होता है और फिर चन्द्रलेखा अभिनेत्री से विवाह करके कम्युनिष्ट बन जाता है? रेखा और भुवन दोनो एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं और वह आकर्षण आसक्ति का रूप ले लेता है। वे अकेले चन्द्रमाधव की पहाडो पर घूमने की योजना को तोडकर पहाडो पर घूमते हैं और निकट मे निकटतर हो जाते हैं। रेखा गर्भवती हो जाती है। भुवन का आकर्षण रेखा के प्रति कम हो जाता है और रेखा भ्रूण हत्या करती है। रेखा दूसरा विवाह करके भुवन को मुक्त कर देती है। गौरा भी भुवन को अपना स्नेह दे डालती है। भुवन, गौरा के स्नेह के बन्धन मे बन्ध जाता है।

वस्तु-विधान—'नदी के द्वीप' मे भुवन और रेखा की कथा मुख्य है और चन्द्रमाधव और गौरा की कथाए मुख्य कथा को आगे बढ़ाने मे सहायक होती है। हेमेन्द्र द्वारा रेखा का परित्याग, भुवन और रेखा का लखनऊ मे पहली बार मिलना, रेखा का प्रतापगढ रियासत मे गवर्नेस बनना और मुक्त होना, भुवन का अपने पत्रकार मित्र चद्रमाधव को छोडकर रेखा से पहाडो पर मिलना, उनके सम्बन्ध अधिकाधिक प्रगाढ़ होना, रेखा का गर्भवती होना और भ्रूण हत्या करना, रेखा का दूसरा विवाहकर भुवन को मुक्त कर देना, भुवन का अध्यापन छोड भारतीय सेना मे मेजर बनना,—इस उपन्यास की मुख्य घटनाए हैं। अन्य घटनाओं मे भुवन की शिष्या गौरा का दक्षिण मे सङ्गीत सीखना और मित्र चन्द्रमाधव का चन्द्र रेखा अभिनेत्री से विवाह करके कम्युनिष्ट बन जाना, इस उपन्यास की गौण घटनाए हैं। इस उपन्यास मे आदि मध्य और अन्त का निश्चित क्रम रहा है। लखनऊ प्रवास आदि, भुवन

और रेखा का पहाड पर सैर, उपन्यास का मध्य, भुवन और गौरा का विवाह, उपन्यास का अन्त है। घटनाओ के क्रम को ले तो उपन्यास की घटनाए तर्क सङ्गत और स्वाभाविक रूप से घटित होती चली गई है। हर घटना के घटित होने के पहले उसकी पार्श्व भूमि है। भुवन और रेखा के सम्बन्ध, रेखा का गर्भवर्ती होना, भ्रूण हत्या और अन्यत्र विवाह स्वभाविक रूप से घटित हुई घटनाए हैं। भुवन के मेजर बनने और गौरा से विवाह करने की घटनाए भी तर्क सङ्गत और स्वाभाविक हैं। चन्द्रमाधव की कथा इस उपन्यास मे व्यर्थ जान पडती है, क्योकि उसका अभिनेत्री चन्द्रलेखा से विवाह कर कम्युनिष्ट बना देने से उपन्यास की मुख्य कथा आगे नही बढी है। प्रारम्भ मे चन्द्र माधव ने रेखा और भुवन को एक स्थान पर लाकर मिलाने का काम किया किन्तु बाद की घटनाओ मे उसकी कथा को मुख्य कथा से उपेक्षित कर दिया है। नाम से यह स्पष्ट है कि सभी व्यक्ति 'नदी के द्वीप' है जो अलग अलग होते हुए भी सेतु से जुडे हुए हैं। इस उद्देश्य की स्थापना मे भी भुवन, रेखा गौरा की कथा यथेष्ट है। चन्द्रमाधव की कथा उद्देश्य की दृष्टि से भी व्यर्थ और निरर्थक है। यह रेखा और भुवन की स्मृतियो और भावनाओ और मानसिक उलझनो की कहानी है। चन्द्रमाधव के कम्युनिष्ट बनने आदि की कथा को छोड दे तो यह निश्चित रूप से हिन्दी का एक अत्यन्त सुगठित उपन्यास है।

चरित्र-विधान—भुवन इस उपन्यास का नायक है और रेखा नायिका। अन्य पात्रो मे गौरा और चन्द्रमाधव है। भुवन रामेटिकता और बौद्धिकता के दो कूलो को छूता है। वह सौंदर्य का पुजारी है, इसलिए रेखा को कहता है कि जो सुन्दर है उसे मिटाना नही चाहिये।[1] भुवन की बौद्धिकता और रोमेटिकता मे उसका व्यक्तिवाद ही निखरता है। उसकी अनुभूतिया केवल कविताओ के माध्यम से अभिव्यक्त होती हैं। रेखा मे रूप और बुद्धि का समन्वय है। रेखा के व्यक्तित्व मे चुम्बकीय आकर्षण है इसलिए भुवन और चन्द्रमाधव सहज ही उसकी ओर आकर्पित हो जाते हैं। अस्तित्ववादी परिभाषा के अनुसार रेखा मुक्त होने के लिए अभिशापित है, इसलिए यह मुक्ति और पीडा के दर्शन के रूप मे व्यक्तिवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है। गौरा सरलता और सौम्यता के साथ हीनता की प्रतीक है। यह सहानुभूति और ममता की प्रतिमा सी लगती है। क्लबो और काफी हाउसो का प्राणी चन्द्र—

---

१. अज्ञेय, नदी के द्वीप, पृ० १३६।

माधव जीवन की कुंठाओ और पशुप्रवृत्ति का प्रतीक है। 'नदी के द्वीप' की रेखा और गौरा के सृजन पर आक्षेप किया गया है कि वे सिर्फ भुवन की वेजान प्रतिध्वनिया हैं, वे सिर्फ कठपुतलिया बन गई हैं जैसे मानो उनकी जिन्दगी का सारा जीवन रस निचोडकर खोखली काया उपन्यास मे पेश की हो।[1] रेखा और गौरा प्राणवान नारिया हैं। व्यक्तिवादी मान्यताओ के बावजूद उनमे प्राणो का स्पन्दन और जीवन की चेतना है। उनमे अनुभूतिया है। भुवन की तरह, कविताओ को अपनी अनुभूतियो का माध्यम नही बनाती है। यह आरोप भुवन के बारे मे सत्य है क्योकि उसका बुद्धिवाद, व्यक्तिवाद, चिन्तन और अनुभूति, सब कुछ लेखक का है। भुवन सवेदनीय नही है। परिस्थितियो के परिवर्त्तन के बावजूद भुवन, रेखा, गौरा और चन्द्रमाधव सभी सपाट पात्र हैं। एक ही निश्चित विचारधारा की स्थापना के कारण विकास की सम्भावनाए उनमे नही है। अत चरित्रविधान मे रेखा और गौरा अज्ञेय की महत्वपूर्ण उपलब्धिया हैं।

उद्देश्य—व्यक्तिवादी उपन्यासकारों ने किसी विशेष उद्देश्य की स्थापना के लिए उपन्यासो की रचना नही की है किन्तु व्यक्तिवादी जीवन दर्शन की स्थापना ही उनका उद्देश्य है। व्यक्तिवादी उद्देश्य ही इस उपन्यास मे अभिव्यक्त हुआ है। यह भ्रान्त धारणा है कि 'नदी के द्वीप' मे एक स्त्री के दमित प्रेम के परिणामो का विश्लेषण है।[2] यहा रेखा के प्रेम के प्रति व्यक्तिवादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति हुई है। भुवन उपन्यास के उद्देश्य को स्पष्ट करता है। भुवन कहता है 'हम द्वीप हैं, मानवता के सागर मे व्यक्तित्व के छोटे-छोटे द्वीप और प्रत्येक क्षण एक द्वीप हैं—खासकर व्यक्ति और व्यक्ति के सम्पर्क काटेक्ट का प्रत्येक क्षण अपरिचय के महासागर मे एक छोटा, किन्तु कितना मूल्यवान द्वीप।[3]' उपन्यासकार ने चारो पात्रो के माध्यम से अस्तित्ववादी जीवन के दर्शन को स्पष्ट किया है। अस्तित्वाद व्यक्ति के अस्तित्व, उसकी मुक्ति और पीडा का दर्शन है, व्यक्ति ही अपने कृत्यो का भोक्ता है। गौरा के अनुसार स्वाधीनता सामाजिक गुण नही है, वह एक दृष्टिकोण है, व्यक्ति के मानस की प्रवृत्ति है।[4] चन्द्रमाधव भी मानता है कि जिसको जहां थोडा

---

१. ज्ञानोदय दिसम्बर ५८, पृ० १७।
२. डा० गणेशन हिन्दी उपन्यास-साहित्य का अध्ययन, पृ० ८५।
३. अज्ञेय, नदी के द्वीप, पृ० ११०।
४. वही, पृ० ७०।

सुख मिलता है, उतना ही हमे आतुर और कृतज्ञ हाथो से ले लेना चाहिये, उसी का नाम स्वाधीनता है।[1] रेखा का व्यक्तित्व अस्तित्ववादी परिभाषा के अनुसार मुक्ति और पीडा का व्यक्तित्व है। रेखा और भुवन मुक्त होने के लिए अभिशप्त हैं। भुवन और रेखा अपनी जीवनधारा के लिए स्वय उत्तरदायी हैं। भुवन अपनी शिष्या गौरा को अस्तित्वाद के पीडा और मुक्ति के दर्शन को बताता है: 'एक स्वाधीन व्यक्ति है जिसका व्यक्तित्व प्रतिभा के सहज तेज से नही दु:ख की आच से निखरा है। दु:ख तोडता भी है और जब नही तोडता या तोड़ पाता, तब व्यक्ति को मुक्त करता है।[2] अत यह स्पष्ट है कि व्यक्तिवादी जीवन—दर्शन की स्थापना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिवादी उपन्यास है। यहा व्यक्ति केवल नदी का द्वीप है और व्यक्तियो के बीच केवल सेतु है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक क्षण एक द्वीप है। सभी व्यक्तिवादी पात्र व्यक्तिवादी जीवन—दर्शन की स्थापना करते हैं। रेखा भुवन को एक पत्र मे लिखती है कि हम जीवन की नदी के अलग अलग द्वीप हैं और गौरा को लिखती है कि व्यक्ति एक अद्वितीय इकाई है।[3] भुवन भी पूर्ण रूप से व्यक्तिवादी पात्र है, इसलिए उसे अनुभूति होती है: 'व्यक्ति की यह छोटी छोटी इकाईया प्रवाह से अलग कोई अस्तित्व नही रखती, फिर भी सम्पूर्ण हैं, स्वायत्त है, अद्वितीय हैं और स्वत प्रमाण है क्योकि अततोगत्वा आत्मानुपित है, अपने आगे उत्तरदायी है।[4] अत उपन्यास मे सभी पात्रो के माध्यम से व्यक्तिवादी दर्शन की अभिव्यक्ति हुई है। यह एक भ्रान्त धारणा है. 'नदी के द्वीप हिन्दी का एक उल्लेख्य मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है।[5]' 'नदी के द्वीप' निश्चित रूप से मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास नही है क्योकि अचेतन को चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न नही है। यह केवल मन की चेतन स्थितियो की अभिव्यक्ति है इसलिए इसे 'मनोवैज्ञानिक उपन्यास[6]' कहा गया। शैली की मनोवैज्ञानिकता से इसे मनोवैज्ञानिक

१. वही. पृ० ७०।
२. अज्ञेय, नदी के द्वीप, पृ० ३१५।
३. वही, पृ० ३३०।
४. वही, पृ० ३३५।
५ नलिनोविलोचन शर्मा, हिन्दी गद्य की प्रवृत्तियां, पृ० ३०१।
६ डा० देवराज उपाध्याय, आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान, पृ० १७४।

उपन्यास कहा जा सकता है किन्तु मनोविश्लेषणात्यक नही। अस्तित्ववाद की मान्यताओ के अनुसार भुवन और रेखा व्यक्तिवाद के जीते जागते प्रतीक है और व्यक्तिवादी जीवनदर्शन की स्थापना करते है इसलिए इसे व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया गया है।

अपने अपने अजनबी (१६६५)

कथासार – वर्फ के केविन मे दो प्राणी युवा योके और वृद्धा सेलमा कैद हो जाते हैं। एक अजनवी देश और अजनवी देश का अजनवी वातावरण था। योके अपनी चाची सेलमा के यहा मिलने आई थी। यह मृत्यु से साक्षात्कार का क्षण था। प्रथम खण्ड मे योके की मनस्थितिया हैं, दूसरे खण्ड में सेलमा का अतीत उसकी मन स्थितियो के द्वारा अभिव्यक्त होता है और तीसरा खण्ड योके का भविष्य है। प्रथम खण्ड मे सेलमा ने मृत्यु के साक्षात्कार के क्षण मे जीवन वोध का अनुभूत कर लिया है और योके में मृत्यु बोध है। इस तरह पहले खण्ड की सेलमा, सेलमा है, योके योके है। दूसरे खण्ड की सेलमा मृत्यु के साक्षात्कार के क्षणो मे जीवन–वोध की कामना करती है किन्तु धीरे धीरे यान के साहचर्य से जीवन–वोध को अनुभूत करती है। सेलमा की मृत्यु हो जाती है और तीसरे खण्ड की योके सेलमा वनकर मौत का वरण कर लेती है। इन तीनो खण्डो मे केवल यौके और सेलमा की मनस्थितिया हैं।

वस्तु–विधान—उपन्यास तीन खण्डो मे विभाजित हैं—प्रथम खण्ड सेलमा और यौके का वर्त्तमान, द्वितीय खण्ड सेलमा का अतीत और तृतीय खण्ड यौके के भविष्य की कहानी है। सम्पूर्ण उपन्यास एक जीवन–वोध को प्राप्त करने की प्रक्रिया है। यह कुछ दिनो की कथा, बर्फ के केविन मे दवे दो प्राणियो की कथा हैं, जिसमे घटनाओ का तार तम्य लघुतम है, केवल मन स्थितियो के सहारे सेलमा और यौके के अतीत को प्रकट किया है। यह उपन्याम हिन्दी उपन्यासो के वस्तु–विधान के क्षेत्र मे एक नवीन और मौलिक उपलव्धि है। यह सुन्दर वस्तु स्थापत्य का एक नमूना है, जिसका एक.एक शब्द वस्तु–विधान के शिल्प मे गु था हुआ है, जिसकी तुलना हिन्दी उपन्यासो मे उपलव्ध नहीं है। इम उपन्यास मे गठन हैं क्योकि एक और लक्ष्य निश्चित समन्या की ओर उपन्यामकार उपन्यास की पार्श्वभूमि मे यौके और सेलमा की दोनो कथाए चलती हैं और उपन्यास की पृष्ठभूमि पर दोनो कथाए आकर मिल गई हैं। दूसरे खण्ड मे यान सेलमा की कथा को आगे वढाता हैं। यौके की कथा को जगन्नाथ आगे वढाता है। अत यान और जगन्नाथ की कथाए

उपन्यास की कथाए वस्तुतः क्रमश· सेलमा और योके की कथाए ही है। सेलमा और योके के अतीत की कथाए उनकी वर्त्तमान कथा को आगे बढ़ाती हैं। वस्तुन· यहा कथ्य नाम मात्र को है। सेलमा और योके के मनस्थितियो की अभिव्यक्ति है, इसलिए यह उपन्यास वस्तु अन्विति का सुन्दरतम उदाहरण हैं।

चरित्र–विधान—यहाँ सेलमा और योके दो ही मुख्य पात्र है, यान और जगन्नाथ तो पार्श्वभूमि के पात्र हैं। यहा सेलमा और योके—न व्यक्ति है और न टाइप—केवल प्रतीक है। योके और सेलमा सम्पूर्ण मानवता के प्रतीक हैं। यह जीवन बोध और मृत्यु—बोध के सघर्ष का इतिहास है। सेलमा को प्रथम खण्ड मे मृत्यु के साक्षात्कार के क्षणो मे जीवन बोध को अनुभूत कर लेने से मृत्यु बोध का भय नही है। वह कहती है 'शायद मृत्यु का ही सहारा है, वह बिल्कुल पास है, सामने खडी है—लगता है कि हाथ बढ कर उसे छू सकती हू।[1]' किन्तु योके मानती है कि मृत्यु एक झूठ है, क्योकि वह जीवन का खण्डन है।[2] दूसरे खण्ड की सेलमा वस्तुत योके ही है जिसमे केवल जीवन बोध है। वह मान जाती है कि जीवन सर्वदा ही अन्तिम कलेवा है जो जीवन देकर खरीदा गया है।[3] दूसरे खण्ड मे ही सेलमा मृत्यु को प्राप्त हो जाती है। तीसरे खण्ड मे योके पहले खण्ड की सेलमा बन जाती है। इसके पात्रो के बारे मे आरोप लगाया जाता है कि पात्र न प्रतीकात्मक है, न ठोस और न विश्वसनीय, न मांसल है न वायवी। सब कुछ ले देकर यही कह सकते हैं कि अपने अपने अजनबी एक अजीब–ओ–गरीब चीज है[4] योके और सेलमा प्रतीकात्मक है जो एक निश्चित जीवन–दर्शन को अभिव्यक्त करते हैं। वस्तुः यह आस्था का उपन्यास है। सेलमा मे आस्था है और योके आस्थाहीन है। दोनो पात्र क्रमश जीवनबोध और मृत्यु बोध के प्रतीक बनकर अभिव्यक्ति करते हैं। दार्शनिक उपन्यासो के पात्र किसी निश्चित दार्शनिक विचारधारा को अभिव्यक्त करते हैं, इसलिए अमांसलता का आरोप उन पर लगाया जा सकता है। अनुभूतिया इन पात्रो का निर्माण करती है इसलिए जीवनदर्शन

---

१. अज्ञेय अपने-अपने अजनबी, पृ० ५३।
२. वही, पृ० ५५।
३ वही, पृ० १०२।
४. माध्यम, अक्टूबर १९६४ पृ० ९१।

को अभिव्यक्त करते हुए भी प्राणवान पात्र है। वस्तुत: पात्रो और उनके व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करना लेखक का उद्देश्य नही है, वह केवल विचारो की अभिव्यक्ति करना चाहता है।

उद्देश्य—यह 'मृत्यु मे साक्षात्कार' का–हिन्दी का अस्तित्ववादी उपन्यास है। सार्त्र की मान्यता है कि सह अस्तित्व की बाध्यता ही नरक है। इसी बाध्यता को लेखक ने उपन्यास मे प्रकट किया है। मृत्यु के साक्षात्कार के माध्यम से बाध्यता को अनुभव किया गया है। योके डायरी मे लिखती है: शायद यही वास्तव मे मृत्यु होती है जिसमे कुछ भी होता नही, सब कुछ ऐसे होते होते रह जाता है।' ... उसके अनुसार छोटे से छोटा खण्ड है।[1] सेल्मा को अजनबी मानती है।[2] लाल आग को देखकर उसे लगता है कि शैतान अभी चिमनी के भीतर से उतारकर कब्र मे हमसे हिसाब करने आएगा किन्तु सेल्मा के अनुसार शैतान नही आता सन्त निकोलस आता है।[3] यहा नास्तिक और आस्तिक अस्तित्ववादी विचारधारा के बीच अन्तर स्पष्ट किया है। सेल्मा आस्तिक अस्तित्ववादी विचारधारा और योके नास्तिक अस्तित्ववादी विचारधारा की प्रतीक है। योके चाहती है कि साझीदार कब हट जाए और वह अकेली रह जाए।[4] सेल्मा को देखकर योके अनुभव करती है कि कैसे कोई जीता हुआ प्राणी जीजिविशा से परे हो सकता है, अनासक्त हो सकता है।[5] सेल्मा मौत को ईश्वर और योके उसे जीवन का खण्डन मानती है।[6] इस तरह सेल्मा और योके दो विचारधाराओ का प्रतिनिधित्व करती हैं और यह उपन्यास अस्तित्ववादी विचारधाराओ का अभिव्यक्ति करता है। मृत्यु के साक्षात्कार के माध्यम से जीवन बोध की यह कहानी कहता है। सेल्मा के अतीत के जीवन का निचोड है 'जीवन सर्वथा ही अन्तिम कलेवा है जो जीवन देकर खरीदा गया है और जीवन जलाकर पकाया गया है और जिसका

---

१. अज्ञेय अपने अपने अजनबी पृ० २३।
२ वही, पृ० २४।
३. वही पृ० २५।
४ वही, पृ० ३८।
५. अपने अपने, अजनबी, पृ० ३९।
६. वही, पृ० ५४–५५।

सामना करना ही होगा क्योंकि अकेले वह भोगे भुगता ही नही ।[1] यही उपन्यास का उद्देश्य है ।

यह हिन्दी का अस्तित्वादी उपन्यास है । अस्तित्ववाद अपने सभी उपकरणो के साथ यहा उपस्थित है । एक आलोचक उपन्यास को अस्तित्ववादी भगिमा भले ही उसमे मिले लेकिन उसी आधार पर उपन्यास को अस्तित्ववादी ठहरा देना कुछ ज्यादती हो सकती है ।[2] यह आलोचको का दुराग्रह है कि इसे अस्तित्ववादी उपन्यास मानकर भी नही मानते हैं, 'अस्तित्ववादी विचारणा के कुछ प्रतिमानो का अपनी दृष्टि से उपयोग करने का यत्न अज्ञेय ने अपने अपने अजनबी मे किया है । सच तो यह है कि अपनी परिस्थितियो मे अस्तित्ववाद मे बडी और अधिक सयत दृष्टि विकसित करके ही हम अस्तित्ववाद के मूल्यो का उपयोग और सयोजन कर सकते हैं । यह ठीक है कि अपने अपने अजनबी अस्तित्ववादी उपन्यास नही हैं—किसी भी आत्मविश्वासी लेखक के लिए वह इष्ट भी क्यो होगा ?—उसमे अस्तित्ववाद का उपयोग करने की चेष्टा भर है ।[3]' अस्तित्ववाद को उपन्यास की जीवन दृष्टि का आधार बनाया है इसलिए इसे अस्तित्ववादी उपन्यास मानना क्यो पडेगा ? अस्तित्ववाद व्यक्तिवादी जीवन दर्शन है, इसलिए यह एक व्यक्तिवादी उपन्यास है ।

जीवन के अस्तित्व के प्रश्न को आधार बनाकर दो व्यक्तियो के चेतन मन का विश्लेषण इस उपन्यास मे हैं इसलिए यह मनोविश्लेषणात्मक-अस्तित्ववादी उपन्यास जान पडता है । कही आशा[4], कही जिज्ञासा[5], कही घृणा[6], कही आत्म पीडा[7], कही क्रोध[8], कही जुगुप्सा[9], कही अकेलेपन[10] के अनुभूतियो

---

१. वही, पृ० १०२ ।

२ कल्पना, मई १९६३, पृ० २७ ।

३. माध्यम—अक्टूबर १९६४, पृ० ८४ ।

४. अज्ञेय, अपने अपने अजनबी, पृ० ९ ।

५. वही, पृ० २९ ।

६. वही, पृ० ३४ ।

७ वही, पृ० ४० ।

८. वही, पृ० ५४ ।

९. वही, पृ० १०७-१०८ ।

१०. वही, पृ० १०९ ।

के बीच झूलते हुए मानव मन की चेतन मनोवृत्तियो का विश्लेषण लेखक ने किया है। मृत्यु और जीवन बोध के झूले के बीच योके अपने अस्तित्व को महसूस करती है, 'जिऊ और गङ्ग, कि गङ्ग और जिऊ और अनुभव करू कि मै जीता हू।'[1] अस्तित्ववादी विचारधारा के मूल मे व्यक्तिवादी विचारधारा है—व्यक्ति के अस्तित्व, व्यक्ति की स्वतत्रता और व्यक्ति की पीडा की विचार धारा है, इसलिए इसे व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे रखना ठीक है। मनोविश्लेषण यहा केवल चेतनमन का है और वह भी केवल साधन है, साध्य व्यक्तिवादी जीवन दर्शन है।

डा० देवराज

डा० देवराज हिन्दी के व्यक्ति सापेक्ष उपन्यासकार हैं। व्यक्तिसापेक्ष जीवन की अभिव्यक्ति मे कभी व्यक्तिवाद की ओर झुकाव रहा है, तो कभी मनोविश्लेषण की ओर। 'पथ की खोज' (१९५१), 'बाहर भीतर' (१९५४) 'रोडे और पत्थर' (१९५८) और 'अजय की डायरी' (१९६०) इस विवेच्य-काल की उपन्यासकृतिया है जिनमे 'अजय की डायरी' व्यक्तिवादी उपन्यास है।

अजय की डायरी

कथासार—डा० देवराज की डायरी शैली मे लिखा हुआ नवीनतम उपन्यास है। अजय 'भारतीय समाज मे स्त्रियो का स्थान' विषय पर अनुसन्धान कार्य करने वाला एक अनुसंधित्सु है। उसका विवाह शीला से हुआ है जो उसकी इच्छा का परिणाम है। उसकी पत्नी शिक्षिता और सुन्दर है। डा० द्विवेदी के यहा उनकी पुत्री दीपिका की मित्र हेमलता से उसकी मुलाकात हुई। अजय को काश्मीर मे, अपनी शिक्षा-सस्थान के प्रतिनिधि रूप मे भारतीय शिक्षा सम्मेलन मे सम्मिलित होना पडा। हेमा, दीपिका और अजय का मित्र पाण्डे अजय के साथ थे। अजय का हेमा के प्रति आकर्षण वढता ही गया। काश्मीर प्रवास से लौटकर अजय का अमरीका प्रवास हुआ। हेमा का एक इजीनियर युवक से विवाह हो गया। अमरीका से लौटने पर शीला का एवार्शन हुआ और अजय की पीडा की स्थिति मे ही कथा समाप्त हुई।

वस्तु-विधान—अजय की हेमा मे मुलाकात, अजय दीपिका, हेमा और पाण्डे की काश्मीर-यात्रा, काश्मीर यात्रा के समय अजय के मन मे हेमा के

१, अपने अपने अजनवी, पृ० ५६।

प्रति दुर्निर्वार आकर्षण—चुम्बन की भिक्षा और उपलब्धि, अजय और शीला के बीच संघर्ष की स्थिति, अजय का अमरीका प्रवास, अमरीका मे मिस क्लारा और तदुपरान्त नाइट क्लबो मे भटकती उसकी जिन्दगी, हेमा का विवाह, अजय का भारत लौटना और शीला का एवार्सन—इस उपन्यास की मुख्य घटनाए हैं। यह उपन्यास एक वैचारिक कृति है इसलिए घटनाओ का उपन्यास मे कोई स्थान नही है। डायरी की घटनाओ और अजय के विचारो मे कोई अन्विति नही है। शीला से विवाह उसकी इच्छा का परिणाम था तो वह भटकता क्यो है ? हेमा मे शीला की अपेक्षा आकर्षण क्यो है ? दीपिका मे अजय के प्रति आकर्षण था तो वह चुप क्यो रही ? अजय दमित यौनकुण्ठा का प्रतीक है तो नाइट क्लबो मे जाकर नाक भौं क्यो सिकोड़ी ? अजय के विचार उसकी 'क्रिएटिव प्रोसेस और उसकी इच्छाओ के बीच कोई सामजस्य क्यो नही है ? इन प्रश्नो के कारण यह कहा जा सकता है कि यह उपन्यास, उपन्यास से अधिक एक वैचरिक डायरी है। अजय की कथा ही मुख्य है और अन्य कथाओ मे दीपिका, हेमलता, पाण्डे और शीला की कथा है। दीपिका की कथा केवल अजय और हेमलता को मिलाने का माध्यम बन जाती है। पाण्डे का अजय के दल के साथ काश्मीर भ्रमण निरर्थक लगता है। पाण्डे ने अजय की कथा को आगे नही बढ़ाया है न दीपिका यह कार्य कर सकी है। हेमलता की कथा अजय की प्रेमकथा का केवल उपजीव्य बनकर रह जाती है। अत घटनाओ के विकास तारतम्यता और स्वाभाविकता की दृष्टि से देखें तो तर्क संगत घटनाओ का अभाव है। उपन्यास के उद्देश्य की दृष्टि से अन्य निरर्थक पात्रों की घटनाओ के साथ शीला का 'एवार्शन' भी है। अन्तत यह निश्चित रूप से मानना पडेगा कि वस्तु-अन्विति की दृष्टि से असगत घटनाओ, असगत पात्रो और वैचारिकता के कारण यह एक कमजोर कृति है।

चरित्र-विधान—अजय कुछ अर्थो मे आधुनिक शिक्षित युवको का प्रतिनिधित्व करता है। अजय की समस्याए और कुण्ठाए आज के सुशिक्षित और बहुपठित युवको की समस्याए हैं। नैतिकता का उसके लिये काफी उदार है। समाज के प्रति उसका दायित्वबोध का आधार भी दूसरी तरह का है। यह अपने अस्तित्व को प्राथमिकता देता है। आधुनिक युवको की व्यक्तिवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व अजय करता है। अजय सम्पूर्ण डायरी मे छाया हैं और अन्य चरित्र अजय के व्यक्तित्व की तुलना मे बौने लगते हैं। प्रारम्भ मे निगम, डा० मदन, डा० द्विवेदी और प्रिंसिपल पी० आदि कुछ चरित्र हैं किन्तु वे पात्र व्यर्थ हैं। मूल कथा मे प्रविष्ट होने वाले पात्र हेमा, दीपिका,

इला, नरेश अवस्थी और उमाकान्त पाण्डे है। बाद मे अजय की पत्नी शीला भी है। अजय के अतिरिक्त हेम, दीपिका, शीला और पाण्डे आदि का व्यक्तित्व उभकर नही आया है। दीपिका भी अजय की तरह लेखक की दार्शनिक विचारधाराओ को अभिव्यक्त करने का कार्य करती है। हेमा केवल अजय की प्रेम की तुष्टि मे अपने व्यक्तित्व को खो देती है। पाण्डे केवल हसोड बनकर रह जाता है; उसमे व्यक्तित्व है ही नही। इसी तरह उत्तरार्द्ध के पात्रो मे इला, नरेश, अवस्थी और पाण्डे हेमा और दीपिका के साथ अजय के अह की तुष्टि की अभिव्यक्ति करते हैं। अजय की अह तुष्टि के अतिरिक्त उनका अस्तित्व ही नही है। उपन्यास मे केवल एक पात्र अजय का विद्रोह करने मे सहायक हो सकी है और वह उसकी पत्नी शीला है किन्तु 'एबार्शन' करवा कर शर्म से उसे अजय के समक्ष झुका दिया है। सभी पात्र अजय के समक्ष बौने हैं, मूक है, अपग है और अजय भी लेखक का ही रूपान्तर है 'अजय की डायरी' मे प्राणवान पात्रो का सर्वथा अभाव है, उसमे अजय और दीपिका भी लेखक के विचारो के पुतले बनकर हमारे सामने आते हैं।

उद्देश्य—अजय लेखक के विचारो का वाहक है और अजय का जीवन दर्शन अजय के शब्दो मे अभिव्यक्त होता है। वह कहता है कि हीरोइक जीवन जीने के लिए प्रेम की अनिवार्य जरूरत है। आत्मा के विकास का एक ही उपयुक्त पारितोषिक है : प्रेम को अनुचिन्तन का विषय बनाना। 'सिर्फ हीरोइक जीवन को ही प्रेम की जरूरत होती है। दूसरो का कामवासना की क्षणिक तृप्तियो से चल जाता है, किन्तु वैसी तृप्ति कभी पूर्ति या फुलफिलमेंट नही दे सकती।[1]' इन शब्दो मे ही अजय ने उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट किया है। अजय अपने जीवन को हीरोइक जीवन कहता है और अपनी पत्नी के जीवन को साधारण जीवन मानता है, जो क्षणिक कामवासना से ही तृप्त हो जाती है। अत. डा० देवराज ने इस उपन्यास मे प्रेम को व्यक्तिवादी धरातल पर स्थापित किया है।

'अजय की डायरी' मे लेखक के व्यक्तिवादी जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति हुई है। दीप के शब्दो मे अजय इगोइस्टिक[2] (अहवादी) है। अहवादी व्यक्ति व्यक्तिवादी विचारधारा मे विश्वास करता है। अजय के शब्दो मे 'मनुष्य की

---

१. डा० देवराज : अजय की डायरी, पृ० ३३२।
२. वही, पृ० ३४।

भौतिक प्रगति और सस्थाए साधन है, साध्य नही। साधन के रूप मे उनकी उपयोगिता मैं स्वीकार करता हूँ। लेकिन साध्य, मनुष्य की चेतना, उसका चेतनामूलक अन्तर्जीवन है। इस चेतना का परिष्कार और विकास ही हमारी संस्थाओ का लक्ष्य होना चाहिये।[1]' इन शब्दो मे व्यक्तिवादी विचारधारा अभिव्यक्त होती है। एक स्थान पर अजय लिखता है . 'मैं मानवता को नही जानता, मैं सिर्फ व्यक्ति को पहचानता हू—व्यक्ति से ही सम्पर्क बनता है। मैं मानवता के लिए नही जी सकता। मानवता झूठ है, छलना है। मानवता समाज है—निर्मम, निरुद्वेग, निष्ठुर। मानवता के हृदय नहीं है, उसके आंसू नही निकलते, वह कभी सवेदना से द्रवित नही होती।[2]' अजय केवव व्यक्तिवाद मे विश्वास रखता है इसलिए 'अजय की डायरी' व्यक्तिवादी उपन्यास है।

नरेश मेहत्ता

नरेश मेहता व्यक्तिवादी उपन्यासकार है। 'डूबते मस्तूल' (१९५४) और 'यह पथ वधु था' (१९६१) इनके उपन्यास हैं जिनमे 'डूबते मस्तूल' को 'अन्य उपन्यास' मे स्थान दिया है।

यह पथ बंधु था

कथासार—इस उपन्यास मे देश के पिछले पचास वर्षों के इतिहास के परिपार्श्व में श्रीधर की कथा है। बाल्यावस्था मे श्रीधर का समय इदु दीदी के साथ वीतता था। दीदी विधवा हो गई। श्रीधर मिडिल स्कूल मे अध्यापक बन गये। वे राजनीतिक कार्यकर्त्ता आतकवादी विशनबाबू से मिले। विशन बाबू मालिनी की प्राण रक्षा करते हैं। मालिनी वेश्या थी। विशन की सही नाम शफीकुल्ला था और वे छद्म नाम से रहते थे। विशन और मालती का विवाह हो जाता है। मालती का पिता विशन पर अपहरण का मुकदमा दायर करते हैं और गिरफ्तारी का वारंट निकल जाता है। विशन श्रीधर का परिचय अपने दल की रत्ना से करवाता है। श्रीधर को पता लगता है कि अग्रेजी अधिकारी की हत्या करते समय विशन मारा जाता है। रत्ना भी आतकवादिनी शुभदा के कारण दल मे सम्मिलित हुई थी। रत्ना भी पुलिस की गोली खाकर मर जाती है। श्रीधर कांग्रेस आदोलन मे भाग लेते हैं और उन्हें तीन वर्ष की सजा होती है। उनके पास रत्ना का बम रखा हुआ थैला

१. डा० देवराज : अजय की डायरी, पृ० ३६।
२. वही, पृ० २५६।

था। वे पकडे जाते हैं और पुन दस वर्ष जेल काटते है। लम्बे वर्षों के पश्चात् घर पहुंचते है। माता पिता मर चुके थे, पुत्री गुणी सास ससुर के अत्याचारो से अपाहिज होकर दिन काट रही थी, पत्नी सरो यक्ष्मा से पीड़ित थी। उनकी पत्नी का देहान्त हो गया। वे मनुष्य का पुन इतिहास लिखने की सोचते हैं। सामाजिकता से हटकर पूर्णत: व्यक्तिवादी जीवन व्यतीत करते हैं।

वस्तु-विधान—यह उपन्यास घटना सकुल है। उपन्यास मे प्रमुख कथा श्रीधर की है और अन्य कथाओ विशन मालिनी, मालती, इदु दीदी, पत्नी सरो, पुत्री गुणी और आतकवादिनी रत्ना आदि की कथाएं हैं। इन कथाओ मे विशन, मालिनी, मालती और आतकवादिनी रत्ना की कथाओ का विस्तार अपेक्षित नही था। विशन और मालती के विवाह और मालिनी की प्राण रक्षा आदि का मुख्य कथा से कोई सम्बध नही है। दीदी इन्दु की कथा भी उपन्यास मे व्यर्थ है। उपन्यात की कथाओ मे तर्क सगत योजना का अभाव है। श्रीधर मे अस्तित्वादी व्यक्तित्ववादी चेतना जगाने के लिए लेखक ने विशन, रत्ना और सरो को मार दिया और पुत्री गुणी को अपग वना दिया। मालिनी की कथा को उपन्यास से हटा दें तो भी उपन्यास की मुख्य कथा के विकास मे कोई अन्तर नही पडता है अत इस उपन्यास का वस्तु-विधान कमजोर है।

चरित्र-विधान—यह पचास वर्षो के राजनीतिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य मे व्यक्तिमन को अभिव्यक्त करता है। उपन्यास का नायक श्रीधर है और अन्य पात्रो मे इन्दु दीदी, विशन, मालिनी, मालती, सरो, गुणी, और रत्ना आदि पात्र है। श्रीधर सहनशीलता का प्रतीक है और अन्त मे उसमे व्यक्तिवादी चेतना जागृत होती है। जीवन के उतार चढावो के वाद उसके व्यक्तित्व पर चढी सामाजिकता की पर्त उधड जाती है और वह पूर्ण रूप से व्यक्तिवाद की प्रतिष्ठा करता है। श्रीधर एक विकसनशील पात्र है। श्रीधर की दीदी इन्दु और विशन की दीदी मालिनी, शरत की दीदी की प्रतीक हैं। विशन और रत्ना क्रातिकारियो का प्रतिनिधित्व करते हैं, गुणी सामाजिक शोषण के फलस्वरूप दमित नारी का प्रतिनिधित्व करती है। उपन्यास मे केवल श्रीधर के चरित्र का विकास हुआ है और अन्य पात्र इन्दु दीदी, मालिनी, विशन, रत्ना, सरो और गुणी लेखक के साँचे बनकर रह गए हैं। श्रीधर के विकास मे परिस्थितियो और अन्य पात्रो ने योगदान दिया है। वाल्यावस्था मे उसका विकास इन्दु दीदी ने और तदुपरान्त विशान ने

किया। श्रीधर परिस्थितियों का निरीह पुतला है। विशन भी श्रीधर को 'निरीह[1]' मानता है। श्रीधर का व्यक्तिवादी-व्यक्तित्व भी आरोपित है। अतः हम देखते हैं कि इन पात्रों मे लेखक प्राणो का स्पन्दन फूंककर, जीवन्त पात्रो का सृजन नही कर सका है।

उद्देश्य—देश के पिछले पचास वर्षों का इतिहास होते हुए भी युग का राजनीतिक—सामाजिक चित्र प्रस्तुत करना उपन्यासकार का लक्ष्य नही है। राजनीतिक सामाजिक परिपार्श्व मे वह केवल एक व्यक्ति के जीवन क अभिव्यक्त करता है लेकिन उपन्यास की भूमिका मे कहता है 'इतिहास सफल क्रूरो तथा महापुरुषो का होता है, जबकि हमारी स्मृतियो मे ऐसे अनेक जन होते हैं जो व्यक्ति भी नही बन पाते, केवल सख्या होते हैं लेकिन हम जानते हैं कि ये असफल सामान्य जन इतिहास न हो, महापुरुष न हो किन्तु मानुष होते हैं।[2]' अन एक व्यक्ति की व्यक्तिवादी चेतना को इस उपन्यास मे उजागर किया गया है। 'जिन अस्त्रो को लेकर जिन्दगी में वे लडे थे आदर्श थे। आदर्शों का मुलम्मा तो पहले ही चाटे मे उतर जाता है। युधिष्टर आदर्श थे, इसलिए मात्र निमित थे। महाभारत युधिष्ठर ने नही जीता वह तो कृष्ण अर्जुन थे जिन्होने किसी भी नीति को पालन न करने वाली नीति अपना कर युद्ध जीता था।[3]' श्रीधर के द्वारा लेखक बताना चाहता है कि व्यक्ति का यथार्थ और उसका अस्तित्व ही सत्य है। व्यक्ति के ऊपर आदर्श का मुलम्मा लगाकर उसे सामाजिक बनाना झूठ है। पहले उन्होने 'राज्य का इतिहास' लिखा था, अब जीवन मे भटककर 'मानव का इतिहास' लिखने बैठे हैं। काव्य की लघु सीमाओ से निकलकर उनके सामने मनुष्य सारी सफलताओ, असफलताओ के साथ खडा था।[4] श्रीधर का जीवन अस्तित्ववादी परिभाषा के अनुसार पीड़ा आदि से मुक्ति का व्यक्तित्व है। अत व्यक्ति की व्यक्तिवादी—चेतना जागृत करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

यह व्यक्तिवादी उपन्यास है। श्रीधर के शब्दो मे व्यक्ति तो मात्र

---

१. नरेश मेहत्ता · यह पथ बन्धु था : पृ० २३४।
२. वही, पृ० ७।
३. नरेश मेहत्ता, यह पथ बन्धु था : पृ० ५६३।
४. वही, पृ० ५६४।

परिस्थितियो के कमजोर पुतले हैं जो कि अघेरे से अघेरे तक यात्रा किये जाने वाले-लाखो साधारण कमजोरो मे से एक है। इतिहास मे जो व्यक्ति भी नही बनते, न उनकी कोई सज्ञा होती है, वे केवल संख्या होते हैं।[1]' श्रीधर को केवल व्यक्ति रूप से चित्रित किया है जो समाज से बिल्कुल कटा हुआ है। अत श्रीधर के व्यक्तिवादी उद्देश्य कारण यह व्यक्तिवादी उपन्यास है।

अन्य उपन्यास

'डूबते मस्तूल' (१९५४) मे रजना, एक अपरिचित व्यक्ति को, जान-बूझ कर अकलक शब्द का सम्बोधन कर, अपने ऊपर होने वाले व्यभिचार और बलात्कारो की कहानी कहती है। कथा की अवधि केवल २४ घन्टे हैं किन्तु इस चौबीस घन्टे मे रजना की पिछले जीवन की समस्त घटनाए सिमट गई है। यह एक प्रयोग अवश्य है किन्तु इस प्रयोग को असफल मानना चाहिये क्योकि अपरिचित व्यक्ति को अपने बलात्कारो की कहानी सुनाना अस्वाभाविक लगता है। इसमे शिल्प घटना प्रधान हो गया है। सभी घटनाए रजना के जीवन से सबधित है इसलिए कही भी लेखक अन्य कथाओ मे उलझा नही है, अत वस्तु–विधान मे अन्विति है। रजना पूर्ण रूप से व्यक्तिवादी पात्र है। वह कहती है 'हम सब साप की ही भाति चिकने मुलायम, चितकबरे, काले पीले !!! किन्तु ज्योही हमारी वस्तु–स्थिति केचुल पर आच आती है, हमारे व्यक्तित्व का फन समस्त कडवाहट लिए फुफकारने लगता है। कुण्डली मार कर बैठे हुए साप !! सभी ऐसे व्यक्ति।[2]' अस्तित्ववाद क्षणवाद मे विश्वास करता है और रजना भी 'क्षणवादी[3]' है। एक व्यक्तिवादी नारी के व्यभिचार और बलात्कारो की कहानी होने के कारण, यह एक व्यक्तिवादी उपन्यास है।

मोहन राकेश

मोहन राकेश व्यक्तिवादी उमन्यासकारकार है और 'अघेरे बद कमरा' (१९६१) इनका व्यक्तिवादी उपन्यास है।

अंधेरे बंद कमरे (१९६१)

कथासार—मधुसूदन एक पत्रकार है जो दिल्ली आकर कस्साबपुरा

---

१. वही, पृ० ५१३।
२ नरेश मेहत्ता : डूबते मस्तूल, पृ० ३२।
३. वही, पृ० ३३।

मे एक ठकुराइन के यहां बसता है। कस्सावपुरा मे निम्न सामाजिक स्थिति के लोग रहते हैं। मधुसूदन और ठकुराइन के बीच रस रंग की बातें भी होती रहती हैं। मधुसूदन उम गदे और घुटनभरे वात,वरण से निकलकर कनाट प्लेस की चहल पहल मे रहना चाहता है। एक दिन अचानक उसकी भेंट हरवस से हो जाती है जिससे उमका परिचय वम्बई मे हुआ था। सूदन का परिचय, हरवस की पत्नी नीलिमा और उसकी सालिया शुक्ला और सरोज से हो जाता है। हरवस उखडा-उखडा सा रहता है। वह एक कालेज मे अस्थायी रूप से पढाता है, साहित्यकार वनने की धुन भी लगी रहती है, भारतीय इतिहास पर काम भी करता है। नीलिमा को चित्रकला मे शौक था किन्तु धीरे-धीरे नृत्य-कला की ओर उसका झुकाव हो जाता है। दिल्ली से भागकर हरवंस लन्दन चला जाता है और वहां पहुचकर नीलिमा को आमन्त्रित करता है। लन्दन पहुच कर नीलिमा 'वेवी सिटिंग' से तग आकर उमादत्त-ट्रूप के साथ पेरिस चली जाती है। ट्रूप लौट आता है और नीलिमा ऊ वातू नामक एक वर्मी कलाकार के साथ दो दिन पेरिस मे रुककर पुनः लन्दन लौट आती है। हरवस दिल्ली लौटकर-अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, कला और सभ्यता के झूठे नकाव मे अपने 'विजन' को विस्थापित करता है। नीलिमा के असफल नृत्य-प्रदर्शन पर प्रशसापूर्ण टिप्पणिया छपती है। हरवस उसके साथ सहयोग नहीं करता है। नीलिमा हरवस को छोडकर चली जाती है। हरवस रात भर छटपटाता है और मधुसूदन रात भर उसके साथ रहता है। सवेरा होने पर दरवाजा खोलते ही वह नीलिमा को चाय वनाते देखता है। मधुसूदन ने आत्मकथा के रूप में ठकुराइन, हरवस और नीलिमा, अपनी और सुषमा श्रीवास्तव की कहानी कही है।

वस्तु-विधान—इसमे हरवस और नीलिमा की कथा मुख्य है और अन्य कथाओ मे ठकुराइन, सुषमा श्रीवास्तव और मधुसूदन की कथाए हैं। इस उपन्यास मे हरवस और नीलिमा के घात-प्रतिघातो का सूक्ष्म चित्रण हुआ है। लेखक ने स्वयं स्पष्ट किया, "और जहां तक परिचय का सवाल है, मैं सोचकर भी तय नही कर पा रहा हू कि इसे क्या कहूं आज की दिल्ली का रेखाचित्र ? पत्रकार मधुसूदन की आत्मकथा ? हरवस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी ?"[1] लेखक दिल्ली का रेखाचित्र, मधुसूदन की आत्मकथा

---

१ मोहन राकेश, अंधेरे वद कमरे · भूमिका।

और हरवस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी प्रस्तुत करना चाहता है, अन विविध उद्देश्यो की स्थापना के फलस्वरूप वस्तु विखर गई है और उसमें गठन का नितान्त अभाव है। यह वस्तुत. हरवस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी है और कस्सावपुरे के ठकुराइन की कहानी को लेखक उपन्यास की मुख्य कथा से नही जोड सका है। सुषमा श्रीवास्तव की कहानी भी छठी अगुली के समान उपन्यास मे लटकती है। लेखक ने इनको स्पष्ट करते हुए कहा है कि मधुसूदन इन क्राइसिस के नूनो को एक जगह समेटने का प्रयत्न करता है और यह समेट सकने की प्रक्रिया ही उसकी रोज की जिन्दगी है।[1] उपन्यास के बिखराव को दूरकर गठन मे केवल मधुसूदन सहायक हुआ है। क्योकि वही ठकुराइन, सुषमा, श्रीवास्तव और हरवस नीलिमा की कथा को जोडता है। ठकुराईन का जीवन अधेरा कमरा और हरवस–नीलिमा का जीवन वद कमरा है।

चरित्र-विधान—हरवस इस उपन्यास का नायक है और नीलिमा नायिका। अन्य महत्वपूर्ण पात्रो मे लेखक स्वय मधुसून्दन के रूप मे उपस्थित है। मधुसून्दन के अतिरिक्त मधुसूदन के सम्पर्क मे आने वाले अन्य पात्रो मे कस्सावपुरा की ठकुराईन और सुषमा श्रीवास्तव है। नीलिमा और हरवस के चरित्र को उजागर करने वाले पात्रो मे शुक्ला, सुरजीत और ऋ वालू आदि हैं। हरवस और नीलिमा के बारे मे यह आरोप लगाया है कि मधुसूदन दोनो के निकट सम्पर्क मे रहता है, तयापि वह अपनी तथाकथित तटस्थ दृष्टि मे उनमें से किसी भी यथार्थ को प्रस्फुटन करना पसन्द नही करता। वह केवल अलग अलग शीशो मे झलकते हुए उनके विभिन्न प्रतिविम्वो को प्रक्षिप्त करता हुआ चलता है। फल यह देखने मे आता है कि दोनो मे से एक का भी व्यक्तित्व सुस्पष्ट, सजीव और मूर्त्त रूप मे पाठको के आगे प्रस्फुटित नही हो पाता। दोनो जैसे पुआल के बने स्प्रिगदार पुतले हो, जिन्हे ऊपर से मनमाने ढग से सजाकर लेखक (या नेरेटर) इच्छानुसार नचाता चलता है।[2] यह आक्षेप हरवस के बारे मे सही है किन्तु नीलिमा के बारे मे सत्य नही है। हरवस दुहरे व्यक्तित्व का प्राणी है जिसके व्यक्तित्व का गठन एकात्मक रूप से नही हुआ है। कभी वह नीलिमा के समक्ष झुकता है और कभी उपेक्षा करता है।

---

१. ज्ञानोदय, वर्ष १७, अक १, पृ० १६।

२. माध्यम, फरवरी १९६५, पृ० ७५।

कभी नीलिमा से भागता है और कभी अपने पास बुलाता है। नीलिमा मे सवेदनशीलता है, कलाकार बनने की कामना होते हुए भी नारीत्व है। पत्नीत्व का उसमे अभाव है किन्तु सवेदना का नही। नीलिमा निश्चित रूप से प्राणवान नारी पात्र है। नीलिमा से भी अधिक प्राणवान पात्र कस्सावपुरे की ठकुराइन है। उसकी सजीवता और सप्राणता पाठक के मन को गुदगुदाती है। कस्सावपुरे की ठकुराइन का कथा के विकास मे महत्त्वपूर्ण हाथ नही है इसलिए उसका विकास भी नही हो सका है। शुक्ला और सुरजीत सफल दाम्पत्य के प्रतीक हैं। मधुसूदन के जीवन मे दो विरोधी पात्र आते है जो विरोधी जीवन पद्धतियो के प्रतीक हैं, कस्सावपुरे की ठकुराइन निम्नवर्ग का प्रतिनिधित्व करती है और सुषमा श्रीवास्तव आभिजात्य वर्ग का। ऊ बानू मे तो व्यक्तित्व है ही नही। वह तो नीलिमा का पालतू कुत्ता प्रतीत होता है। दार्शनिक जटिलताओ से पात्रो के प्राणो का स्पन्दन दब जाता है किन्तु प्रस्तुत उपन्यास मे दार्शनिक जटिलताओ के होते हुए भी अनुभूतिशीलता होने के कारण, हरबस आदि को छोडकर सभी पात्र सप्राण है।

उद्देश्य—यह न आज के दिल्ली का रेखाचित्र है, न पत्रकार मधुसूदन की आत्मकथा किन्तु हरबस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी है। यह मानना गलत है कि इस उपन्यास का शीर्षक 'अधेरे बन्द कमरे' की बजाय 'शहर मे घूमता आईना' होता है।[1] यह नई दिल्ली के आधुनिकतम जीवन का चित्रण नही करता है। नीलिमा और हरबस के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी कहना ही इसका उद्देश्य नही है। लेखक दिल्ली के रेखाचित्र, हरबस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व और मधुसूदन की आत्मकथा के द्वारा जीवन की अस्तित्ववादी मान्यता की स्थापना करना चाहता है कि 'सहअस्तित्व ही नरक है।' व्यक्ति के अस्तित्व के प्रश्न को इस उपन्यास मे उठाया है। एक बिस्तरे पर सोकर भी पति पत्नी सर्वथा अजनबी और अपरिचित हो सकते हैं। नीलिमा यह मानती है कि उनका व्याह हुए तीन साल हो गए किन्तु वह हरबस को आज तक नही समझ सकी।[2] हरबस सहअस्तित्व से अभिषप्त है इसलिए वह अकेला रहना चाहता है।[3] व्यक्ति सहअस्तित्व को नरक मानते हुए भी साथ रहने के लिए मजबूर है। हरबस एक तरफ सहजीवन की यत्रणा से

---

१. माध्यम, फरवरी १९६५, पृ० ८१।

२. मोहन राकेश : अंधेरे बन्द कमरे : पृ० ८४।

३ वही, पृ० ९९।

पीडित है और दूसरी ओर निगलता हुआ सूनापन। वह मानता है कि हमारे पास एक दूसरे के साथ चिपके रहने के सिवाय कोई चारा नही है।[१] इसी तरह मधुसूदन, नीलिमा और सुषमा श्रीवास्तव आदि सभी अपने अस्तित्व के लिए सघर्ष कर रहे हैं। नीलिमा यह स्वीकार करती है कि जैसे हम पति पत्नी न होकर एक दूसरे के दुश्मन हो और साथ रहकर एक दूसरे के लिए अजनबी थे।[२] लेखक ने इस उपन्यास के उद्देश्य को स्पष्ट किया है : 'व्यक्ति और व्यक्ति के बीच एक गहरी खाई है, और आसपास एक गहरा खड्डा है—वे चाहकर भी इन्हे भर नही पाते पर न भरपाने की मजबूरी से बचकर क्या वे रह सकते है ? लेखक स्वय कहता है 'अधेरे मे भटकना और बन्द होकर रहना उनकी मजबूरी है, फिर भी वे एक ही कमरे मे साथ साथ हैं–यह कमरा उनकी साझी जिन्दगी है। अधेरा या बन्द होने से मुक्ति एक दूसरे से हटकर उनके लिए नही है—न एक के लिए है और न दोनो के लिए। इसलिए रात दिन आपस मे टकराते हुए एक साथ जिये जाते हैं, क्योंकि मुक्ति उनके लिए यदि है तो वह एक दूसरे मे और एक दूसरे की साझेदारी मे हैं। पर उन्हें मुक्ति नही मिल पाती।[३]' इस उपन्यास मे लेखक आधुनिक युग की पृष्ठ भूमि पर, सहजीवन की यत्रणा का चित्रण करते हुए, व्यक्तियो के खोखले जीवन को, अस्तित्ववादी परिभाषा के आधार पर स्पष्ट करना है। अत' सहजीवन की यत्रणा से पीडित व्यक्तियो का चित्रण करना ही इस उपन्यसा का उद्देश्य है जिनका जीवन अधेरे या बन्द कमरे के समान हैं।

अस्तित्वादी–जीवन–दर्शन की स्थापना होने के कारण यह व्यक्तिवादी उपन्यास हैं। इस उपन्यास मे आधुनिक युग के सत्रस्त व्यक्तियो का चित्रण है; युग के सामाजिक जीवन का नही। अत मे युग के सास्कृतिक जीवन का खोखलापन लेखक बताना चाहता है किन्तु इस सास्कृतिक जीवन के खोखलेपन का चित्रण करना लेखक का उद्देश्य नही है। उसका केन्द्र बिन्दु समाज न होकर व्यक्ति ही है। मधुसूदन, हरबस, नीलिमा, ठकुराइन और सुषमा श्रीवास्तव को व्यक्तियो के रूप मे देखा है, सामाजिक प्राणियो के रूप मे नही। लेखक इन व्यक्तिवादी पात्रो के सृजन के द्वारा व्यक्तिवादी उद्देश्य की स्थापना

---

१. वही, पृ० १५१।
२. वही, पृ० ३१२, ५१८।
३. मोहन राकेश, ज्ञानोदय, जुलाई १९६५, पृ० १५।

करना चाहता है इसलिए इस उपन्यास को व्यक्तिवादी उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया गया है।

सर्वेक्षण—व्यक्तिवादी उपन्यासो मे जैनेन्द्रकुमार की 'सुखदा' और 'व्यतीत' आत्मचरितात्मक है; 'जयवर्धन' डायरी शैली मे हैं और अज्ञेय का 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनवी' के शिल्प मे मौलिक उपलब्धि हैं। 'सुखदा' 'विवर्त्त,' 'व्यतीत' 'जयवर्धन' और 'मुक्तिवोध' मे मानसिक धरातल पर कथावस्तु घठित हुई है, घटनाए क्षीण है। 'नदी के द्वीप' सुन्दर स्थापत्य का नमूना है और 'अपने अपने अजनवी' का वस्तु शिल्प काव्यात्मक है। मोहन राकेश के 'अंधेरे बंद कमरे' और नरेश मेहत्ता के 'यह पथ बन्धु था' के कथानक जटिल और पेचीदा हैं किन्तु पत्रकार मधुसूदन और श्रीधर कथातंतुओ के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं। 'अजय की डायरी मे' अन्विति का अभाव है।

जहा तक चरित्र का प्रश्न है जैनेन्द्रकुमार की 'सुखदा' की सुखदा, लाल और कान्त, 'विवर्त्त' के जितेन और भुवनमोहिनी, व्यतीत की जयन्ती, चन्द्री और अनिता, 'जयवर्धन' का जयवर्धन, इला, आचार्य, इन्द्रमोहन; और 'मुक्तिवोध' का सहाय—सभी वुद्धिवादी की टेवल पर वनते और विगडते हुए पात्र हैं और उनकें मांसलता का अभाव है। सम पात्रो पर जैनेन्द्र का व्यक्तित्व उनके व्यक्तित्व को आक्रांत कर देता है। 'नदी के द्वीप' के भुवन, रेखा, और गौरा कविताओ मे अपनी अनुभूतिया अभिव्यक्त करते हुए भी सजीव हैं। अपने अपने अजनवी की योके और सेलमा न व्यक्ति हैं, न टाइप, केवल प्रतीक हैं। अंधेरे वन्द कमरे' की नीलिमा और हरवश असफल विवाह के प्रतीक वनकर अस्पष्ट वन गए हैं और केवल कस्सावपुरा की ठकुराइन का चरित्र उभारा है जिसमे जीवन्त चेतना है। 'अजय की डायरी' का अजय व्यक्तिवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है, उसमे केवल वैचारिकता है।

इन व्यक्तिवादी उपन्यासो पर अस्तित्वाद का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव परिलक्षित होता है। अपने अपने अजनवी मे अस्तित्ववादी पूरी मान्यताओ के साथ उपस्थित है किन्तु 'नदी के द्वीप' और 'अंधेरे वन्द कमरे' मे वह कहानी से गुथा हुआ है। सुखदा भी अपने अस्तित्व के लिए चिन्तित है। 'सुखदा,' 'नदी के द्वीप,' 'अपने अपने अजनवी' को मनोविश्लेषणात्मक अस्तित्ववादी उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया जा सकता है। यह चेतन मन का विश्लेषण है, अचेतन मन का नहीं। इनमे अस्तित्ववादी यिचार धारा

की क्षीण अभिव्यक्ति भी मिले किन्तु यह सही है कि सभी पात्र समाज मे कटे हुए अपनी व्यक्ति की सीमाओ मे जीवन जीते हैं। 'यह पथ बन्धु था' का नायक श्रीधर देश और समाज के बीज रहते हुए भी व्यक्तिवादी पात्र है। इन पात्रो को अपने व्यक्तित्व और अपने अस्तित्व की चिन्ता है और एक ने भी सामाजिक मूल्यों की स्थापना का प्रयत्न नही किया है।

सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो की तुलना मे व्यक्तिवादी-चेतना के उपन्यासो मे एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियो की कथाए होने मे कथा तत्व कम रहता है। वस्तु-विधान मे अन्विति की रक्षा हुई है और वस्तु मे स्थूलता के स्थान पर सूक्ष्मता दृष्टिगत होती है। पात्रो मे व्यक्तिवादी-चेतना अभिव्यक्त हुई है और वे दार्शनिक मान्यताओ के माध्यम बन जाने से, कम सवेदनशील हो जाते हैं। सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो मे उद्देश्यपरकता का आग्रह होता है। समाजवादी उपन्यासो पर प्रचारात्मकता का आरोप लगाया जाता है किन्तु व्यक्तिवादी उपन्यासो मे व्यक्तिवादी-चेतना का स्वर मिलता है और प्रचारात्मकता का प्रश्न ही नहीं है। इन उपन्यासो के लेखको ने मनोवैज्ञानिक शिल्प और चेतना प्रवाह प्रणाली आदि पद्धतियो का खुलकर प्रयोग किया है।

इस विवेच्यकाल के व्यक्तिवादी उपन्यासो मे जैनेन्द्रकुमार का 'जय-वर्धन,' अज्ञेय के 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनबी' और मोहन राकेश का 'अंधेरे बंद कमरे' महत्वपूर्ण उपलब्धिया हैं।



व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

मनोविश्लेपरग व्यक्ति के अचेतन मन की छानवीन कर उसको चेतन स्तर पर लाता है । 'समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास' अध्याय के प्रारम्भ मे मनोविश्लेपणात्मक—उपन्यास की विशेषताओ को वताया जा चुका है । मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे सामाजिकता का आग्रह अपवाद स्वरूप इम विवेच्यकाल की उपलब्वि है, किन्तु मनोविश्लेपरा, अनिवार्यत व्यक्ति के अन्त को चीर कर उसके अचेतन मन को, उपन्यास के पृष्ठो मे उसके असामान्य व्यवहारो के द्वारा अभिव्यक्त करता है । इन उपन्यासो मे उपन्यासकार एक मनोविश्लेषक वनकर, पात्रो के मानसिक रोगो की छानवीन करके, उनके असामान्य व्यवहारो के माध्यम से अचेतन मन को, चेतन—मन के स्तर पर लाने का प्रयत्न करता है ।

डा० सुषमा धवन की यह भ्रामक मान्यता है 'व्यक्तिवादी और मनोवैज्ञानिक उपन्यास स्थूल रूप से एक ही कोटि के जान पडते हैं परन्तु सूक्ष्म विश्लेपरा से उनमे अन्तर जान पडता है । जव किसी उपन्यास मे वैयक्तिक चेतना की अभिव्यक्ति इतनी अन्तर्मुखी तथा आत्मकेन्द्रित हो गई है जिसके परिणाम स्वरूप सामाजिक—चेतना अत्यत क्षीण हो गई है, तो रचना–विशेष को मनोवैज्ञानिक—उपन्यास की सज्ञा दी गई है । इस आधार पर वाजपेयी जी ने जिन कृतियो को व्यक्तिवादी उपन्यास के अन्तर्गत रखा है, उनमे मे कुछ रचनाओ को मैंने मनोवैज्ञानिक—उपन्यास मे रखने का साहस किया है ।[1]' मनोवैज्ञानिक उपन्यास और मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास को एक ही

---

१. डा० सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास, पृ० ८८ ।

कोटि मे मान लेने से यह भ्रम हुआ है। यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि मनोवैज्ञानिकता उपन्यासो का शिल्प है, इसलिए इस शिल्प का प्रयोग अनेकानेक प्रवृत्तियो के उपन्यासकारो ने किया है किन्तु व्यक्ति—चेतना के उपन्यासकारो ने अधिक किया है। डा० देवराज उपाध्याय स्पष्ट कर चुके है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यास मे विचार, चिन्तन या ध्यानशील मनुष्य (मेन इन कन्टम्प्लेशन) का चित्रण करता है और अन्य उपन्यासकार क्रियान्वित मनुष्य (मेन इन एक्शन) का। यह सही है कि मनोविश्लेषण मनोविज्ञान की एक शाखा है किन्तु यह स्वतत्र विज्ञान वन रहा है। मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकारो ने इसे स्वतत्र रूप से अपनाया है। इलाचद्र जोशी और डा० देवराज आदि मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासकार होते हुए भी, इतिवृत्तात्मक शिल्प के कारण, मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार नही है। डा० वाजपेयी ने अज्ञेय और जैनेन्द्रकुमार की कृतियो को व्यक्तिवादी घोषित किया है, वस्तुतः वे व्यक्तिवादी ही है, मनोविश्लेषणात्मक नही। इन व्यक्तिवादी उपन्यासकारो ने मनोवैज्ञानिक शिल्प का प्रयोग किया है, इसलिए यह भ्रम उत्पन्न हुआ है। अत वैयक्तिक—चेतना की प्रवृत्ति आत्मकेन्द्रित और अन्तर्मुखी होने पर व्यक्तिवादी उपन्यास मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास नही हो जाता है। व्यक्तिवादी और मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास दो अलग धाराए हैं, एक का आधार व्यक्तिदर्शन है और दूसरे का आधार व्यक्ति का मनोविश्लेषण।

अत व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास का आधार केवल व्यक्ति होता है और वह सामाजिक चेतना की उपेक्षा करता हुआ व्यक्ति के अचेतन मन का अध्ययन करता है। व्यक्ति के मन के भीतर दमित कामनाओ का विस्फोट उसके असामान्य व्यवहारो मे प्रस्फुटित होता है। यह कहा गया है कि यथार्थ मे सघर्ष उस समय प्रारम्भ होता है जव अचेतन प्रवृतिया उसके अह (ईगो) मे प्रवेश करती हैं और वह अपनी अचेतन प्रवृत्तियो को व्यक्तित्व का एक अग महसूस करता है।[1] मनोविश्लेषण मुख्य रूप से प्रायोगिक है,

---

१. फ्रान्स अलेक्जेण्डर . साइको अनालिजिज् टुडे, ऐडीटर सैण्डर लोराण्ड, पृ० १४७।

द रेड कन्फ्लीक्ट अराइजेज आनली आफटर द अनकान्शस टेण्डेन्सीज् विगिन टु सेण्टर द ईगो ऐण्ड द पेशेण्ट टु फील दैम अंज् पार्ट आफ् ऐक्चुअल पर्सनलिटी।

इसलिए उसका क्षीण प्रभाव उपन्यासो पर पड़ा है और इस विवेच्यकाल के हिन्दी—उपन्यास भी इसके अपवाद नही है।

डा० देवराज और राजेन्द्र यादव इस विवेच्यकाल के व्यक्तिपरक-मनोविश्लेषणात्मक-उपन्यासकार है।

पथ की खोज (१९५१)

कथासार—डा० देवराज के 'पथ की खोज' मे कुछ मध्यवर्गीय पात्रो की जीवन कथा दो खण्डो मे प्रस्तुत की गई है। चन्द्रनाथ ने एम० ए० प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण किया। उसका विवाह सुशीला नाम की एक सुन्दर और रूपवती कन्या मे हो जाता है। सुशीला उसके प्रति निष्ठावान थी। चन्द्रनाथ एक आदर्शवादी युवक था किन्तु सुशीला मे, चन्द्रनाथ के आदर्शों मे रुचि नही थी। साधना सुशीला की एक सखी थी। चन्द्रनाथ का लगाव साधना से था, परन्तु चन्द्रनाथ और सुशीला का विवाह हो जाने के फलस्वरूप चन्द्रनाथ और साधना के प्रेम मे व्यवधान उत्पन्न हो गया। साधना का विवाह अरुण कुमार नाम के एक युवक के साथ हो गया, किन्तु उसका विवाहित जीवन सुखी नही था। सुशीला का आकस्मिक देहान्त हो गया। चन्द्रनाथ की नियुक्ति बनारस के एक कालेज मे हो गई। बनारस आगमन के समय मे, दूसरे खण्ड की कथा प्रारम्भ होती है। चन्द्रनाथ अपने कालेज मे जीव-विज्ञान के व्याख्याता नरेन्द्र के यहा ठहरा। नरेन्द्र अपनी पत्नी और बच्चो के प्रति उपेक्षा रखता है। उसका जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण वैज्ञानिक और व्यक्तिवादी होता है। नरेन्द्र और चन्द्रनाथ घटो बहस किया करते। नरेन्द्र की पत्नी चन्द्रनाथ की बहुत आवभगत करती और उसके बच्चे भी चन्द्रनाथ से हिलमिल गए। आदर्शों की तह के नीचे चन्द्रनाथ मे अमुक्त कामवासना थी, इसलिए नरेन्द्र की पत्नी के स्पर्श मात्र से ही उसकी काम-वासना जागृत हो जाती, किन्तु उसका अह उस पर हमेशा विजय प्राप्त करता। नरेन्द्र के यहा वह आशा को देखता है और आशा के सौन्दर्य से अभिभूत हो जाता है। साधना भी पति से परित्यक्त होकर बनारस मे विद्याध्ययन करती है। कुछ समय वह चन्द्रनाथ के यहा रहती है, तदुपरान्त लड़कियो के होस्टल मे चली जाती है। चन्द्रनाथ और आशा के विवाह मे नरेन्द्र की पत्नी और साधना का हाथ होता है। चन्द्रनाथ की पत्नी विवाह के पश्चात् नैहर चली जाती है और उसकी अनुपस्थिति मे साधना का आगमन होता है। दोनो अलग कमरो मे सोते है, किन्तु चन्द्रनाथ बार बार उसके कमरे मे जाता है। साधना चन्द्रनाथ के समक्ष आत्मसमर्पण कर देती है किन्तु

आशा से वचनवद्ध होने और साधना के कारण चन्द्रनाथ धर्म सकट मे फस जाता है। उसके 'ईड' और 'ईगो' के बीच भयानक द्वन्द्व चलता है और वह उसको सन्तुष्ट करना चाहता है, किन्तु साधना उसे बचा लेती है। अन्त मे आशा भी लौट आती है और साधना क्रातिकारी योगेन्द्रनाथ के दल मे सम्मिलित होकर चली जाती है। इस प्रकार साधना और चन्द्रनाथ अपनी अमुक्त कामवासनाओ का उदात्तीकरण करते हैं।

वस्तु–विधान—'पथ की खोज' मे चन्द्रनाथ की कथा प्रधान है और प्रासगिक कथाओ मे सुशीला, साधना, नरेन्द्र, आशा और योगेन्द्र आदि पात्रो की कथाए है। उपन्यास की मुख्य घटनाओ मे चन्द्रनाथ का सुशीला से विवाह और तदुपरान्त मृत्यु, साधना का अरुण कुमार से विवाह, काशी के नये कालेज मे चन्द्रनाथ की नियुक्ति, अरुणकुमार से परित्यक्त होकर साधना का काशी आगमन, चन्द्रनाथ का आशा से विवाह, साधना का चन्द्रनाथ के समक्ष आत्म-समर्पण, और उसका योगेन्द्रनाथ के कातिकारी दल की सदस्या बनना—इस उपन्यास की मुख्य कथाए हैं। चन्द्रनाथ की कथा को प्रारम्भ से अत तक आगे बढ़ाने का कार्य साधना का रहा है। अत चन्द्रनाथ और चन्द्रनाथ की कथा दोनो खण्डो मे अविरल गति से बहती है। सुशीला की कथा उसकी मृत्यु के साथ पहले ही खण्ड मे समाप्त हो जाती है, आशा की कथा दूसरे खण्ड के मध्य से प्रारम्भ होकर अन्त तक चलती है। नरेन्द्र और उसके परिवार की कथा सम्पूर्ण रूप मे दूसरे खण्ड मे व्याप्त है। योगेन्द्रनाथ ने, चन्द्रनाथ की कथा का विकास न कर, साधना की कथा का विकास किया है। चन्द्रनाथ और साधना को कथा का केन्द्र विन्दु मानकर चलें तो नरेन्द्र और मदन आदि पात्रो की कथा का मुख्य कथा के विकास मे हाथ नही है। नरेन्द्र और चन्द्रनाथ के बीच भारी–भरकम वार्त्तालापो का कथा के विकास मे हाथ नही है। कथा, घटनाओ के जमघट और, वर्णन–वार्त्तालापो से भरी पडी है। इसका शिल्प पूर्ण रूप से परम्परागत और इतिवृत्तात्मक है। लेखक को विषय के विस्तार की अपेक्षा रही है। चन्द्रनाथ और साधना के प्रेम को वह दूसरे खण्ड के अभाव मे भी परिणति दे सकता था। सुशीला की मृत्यु होना, साधना को परित्यक्ता बनाना और आशा से विवाह करवाकर लेखक ने अनावश्यक रूप से उपन्यास की वस्तु को आगे बढाया है। उपन्यास का उद्देश्य चन्द्रनाथ और साधना के प्रेम का उदात्तीकरण करके नये पथ की खोज करना है, इस दृष्टि से उपन्यास की पृष्ठ भूमि बहुत विशाल है। नरेन्द्र, उसके परिवार और मदन आदि की कथा व्यर्थ हैं। घटनाओ के घटित होने के कार्य कारण का

अभाव है; उनके विकास मे तर्क सगत योजना नही है। लेखक, दो खण्डो के इस दीर्घकाय उपन्यास मे, साधना के आत्मसमर्पण के अवसर को उपस्थित करने के लिए, सभी घटनाए घटित कराता चलता है, जिनमे औचित्य और स्वाभाविकता नही है। सुशीला की मृत्यु, साधना का परित्याग और आशा से विवाह आदि की घटनाए, ऐसा लगता है कि जीवन मे न घटित होकर, उपन्यास मे घटित हो रही है। इसका कथानक बिखर गया है और लेखक इसे सभाल नही सका है। नरेन्द्र और उसके परिवार के प्रसग को निकाल देने पर इसमे कुछ अश मे अन्विति की रक्षा हो सकती थी। अत अनेकानेक घट–नाओ और पात्रो के जमघट के कारण उपन्यास मे अन्विति का अभाव है।

चरित्र-विधान—चन्द्रनाथ उपन्यास का नायक और साधना नायिका है। अन्य पात्रो मे सुशीला, आशा, नरेन्द्रनाथ और मदन आदि हैं। चन्द्रनाथ के चरित्र के बारे मे यह मानना सरासर गलत है कि उसका चरित्र मध्यवर्गीय समाज के थोथेपन को स्पष्ट करता हुआ नये पथ पर चलने का आग्रह करता है। वह उन मान्यताओ की छानबीन करता है जो जीवन को सकुचित बनाए हुए हैं।[1] चन्द्रनाथ के जीवन का उद्देश्य मध्यवर्गीय समाज के खोखलेपन को बताना नहीं है। चन्द्रनाथ, एक मनोविश्लेषणात्मक—उपन्यास लेखक द्वारा बनाया, लेखक का पुतला है, जो इच्छाओ और आदर्शो के बीच झूलता है और जिसके आदर्श उसे यौन प्रकृतियो का गुलाम नही बना देते हैं। चन्द्रनाथ जीवन के खोखले आदर्श और विवशता का प्रतीक है। चन्द्रनाथ का मित्र व्यक्तिवादी और वैज्ञानिक मान्यताओ मे विश्वास रखता है। योगेन्द्र क्रान्ति-कारी और सुशीला परम्परावादी है। चन्द्रनाथ पूर्ण रूप से व्यक्तिवादी नही है किन्तु वह भी समाज–चेतना से व्यक्ति–चेतना को अधिक महत्व देता है। सुशीला को पूर्णत यथानाम तथा गुण के अनुसार भारतीय नारी का मूक प्रतीक बनाकर उपस्थित किया गया है। मदन जीवन की रूमानी प्रवृत्तियो का प्रतीक है। साधना इच्छाओ का प्रतीक, जो जीवन को सारहीन, निरर्थक मानती है किन्तु अन्ततोगत्वा नये पथ की खोज मे अग्रसर होती है। चन्द्रनाथ, सुशीला, साधना, आशा, नरेन्द्र और योगेन्द्रनाथ मे चन्द्रनाथ भी लेखक का केवल पुतला या साचा ही बनकर अभिव्यक्त होता है। सुशीला को भारतीय नारी का प्रतीक बनाकर और उसको मृत्यु द्वार पर पहुचाकर, उसके व्यक्तित्व

---

१ सुषमा धवन : हिन्दी उपन्यास, पृ० २५४।

के विकास की सम्भावनाओ को अवरुद्ध कर दिया है। आशा के व्यक्तित्व का विकास भी लेखक नही कर सका है। चन्द्रनाथ की दूसरी पत्नी होते हुए भी उसका कुछ भी अस्तित्व महसूस नही होता है। योगेन्द्रनाथ भी केवल नामधारी क्रांतिकारी बनकर रह जाता है। लेखक नरेन्द्र के चरित्र का विकास स्पष्ट रूप से नही कर सका है। अतएव साधना जैसे पात्रो को छोडे तो अन्य पात्रो—चन्द्रनाथ, योगेन्द्रनाथ और आशा आदि मे जीवन का स्पन्दन और चेतना का अभाव खटकता है। सुशीला, आशा, नरेन्द्र और योगेन्द्रनाथ सभी सपाट चरित्र हैं, उनमे विकास की सम्भावनाओ का अभाव है। चन्द्रनाथ और साधना मे विकास की सम्भावनाएं रही हैं, जिसमे केवल साधना अपना विकास कर सकी है। चन्द्रनाथ केवल सैक्स की चेतना से आक्रान्त वैयक्तिक-पात्र बनकर रह गया है। साधना के प्रति पाठक सवेदनशील हो जाता है।

उद्देश्य—यह भ्रात धारणा चली आ रही है कि 'पथ की खोज' मे मध्यवर्ग के ध्वसोन्मुख आदेर्शो का सयत, मनोवैज्ञानिक और कलापूर्ण चित्र उरेहा है।[1] मध्यवर्ग के ध्वसोन्मुख आदशो का चित्रण करना इस उपन्यास का उद्देश्य नही है। इस उपन्यास मे मध्यमवर्गीय समाज की कुण्ठा और निराशा न होकर व्यक्ति की कुण्ठा, निराशा, जडता और यौनप्रवृतिया है। साधना अपने जीवन के द्वारा व्यक्ति के खोखलेपन को बताती हुई कहती 'लगता है जैसे पूर्णतया अपना नही है, यानी ऐसा कि जिसे मैं सम्पूर्ण अर्थ मे अपना समझ सकू, और न कोई मुझे अपना समझने वाला है और लगता है जैसे जीवन मे भारी शून्यता है, और एक बडा खोखलापन।[2]' मध्यवर्गीय समाज का इसमे खोखलापन न होकर व्यक्ति का खोखलापन है। चद्रनाथ का जीवन भी खोखला है। वह केवल अपनी पत्नी के डर से साधना के समक्ष आत्म-समर्पण नही करता। चद्रनाथ सोचता है 'कौन कहता है व्यक्ति स्वतत्र है, मनुष्य स्वाधीन है? न जाने वह किन अज्ञात शक्तियो के हाथ की कठ-पुतली हैं—न जाने कहा से उसकी इच्छाएं, वासनाए, उसके जीवन की सबसे प्रेरणाए निर्धारित होती है। ... 'और यदि वासनाओ का दबाना ही उद्दिष्ट है तो वह हमारे अन्दर आई ही क्यो? क्या उष्णता का दमन या उससे मुक्ति भी आग का लक्ष्य हो सकती है।[3]' अत. व्यक्ति की इच्छाओ और आदर्शों

१. आलोचना २, पृ० १३७।
२. डा० देवराज : पथ की खोज, पृ० ३६६।
३. वही, पृ० ३७५।

का सघर्ष इस उपन्यास मे है। चद्रनाथ समाज के विधि निपेधो से नही डरता, वह मिथ्या धारणाओ का बन्दी नही है।[1] वह साधना को स्पष्ट कहता है : 'मैं तुम्हारे व्यक्तित्व को समाज की रूढियो द्वारा बुद्धि और विवश नही होने दूगा, उस व्यक्तित्व का मुझे मोह है, उसकी इतनी बडी क्षति मुझे सह्य नही।[2]' व्यक्ति को दुर्बलताओ और कमजोरियो से उठाकर नये पथ की खोज करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। साधना चन्द्रनाथ के अपने पत्र मे लिखा 'मैंने यह सोचा कि शायद कर्म और सघर्ष का वातावरण मुझे अह की सकीर्ण परिधि से मुक्ति दे सकेगा।[3]' अत लेखक द्वारा मनोविश्लेपणात्मक आधार पर, व्यक्ति की अमुक्त कामवासनाओ को, नये पथ की ओर अग्रसर करना ही इस उपन्यास का लक्ष्य है।

यह व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। ऐसा भ्रम होता है कि कोई महाप्राण विचारक भारतीय सस्कृति को विचार का आधार बनाते हुए कोई नवीन जीवन–दृष्टि दे रहा है जो जन जीवन मे क्रातिकारी परिवर्तन को लाते हुए मानवता का उद्धार करेगी। उपन्यास मे इसका क्षीण आभास भी नही है। यहा तो आधुनिक–काव्य पर थोडा विचार विमर्श है, क्या यही भारतीय साहित्य है? गान्धीवाद का थोडा समर्थन है, क्या यही भारतीय राजनीति है? वैवाहिक प्रथा पर थोड़े आक्षेप हैं, क्या यही देश की सामाजिकता का स्वरूप है? तीर्थ स्थानो मे थोडे दोष दिखाए गए हैं, क्या यही भारतीय धर्म के प्रतीक हैं।[4]' यहा समाज के स्थान पर व्यक्ति का स्वर प्रमुख है। चन्द्रकात और साधना के जीवन के आधार पर उनकी मनोविश्लेणात्मक शल्य क्रिया की गई हैं। चन्द्रनाथ 'इड' और 'ईगो' के सतुलन को रखने मे असमर्थ है और यही स्थिति साधना की है। साधना का आत्मसमर्पण, यौन–भावना का अतिरेक है। चन्द्रनाथ के हाथ को वक्षस्थल पर दबाकर कहती है—'देखो यहा कितनी आग है, कितनी पीडा।[5]' चन्द्रनाथ समाज के सैंसर से पीड़ित है,[6] और साधना द्वारा योगेन्द्रनाथ के साथ क्रातिकारी

---

१ डा० देवराज : पथ की खोज, पृ० ३७६।
२. वही, पृ० ३८०–३८१।
३. वही, पृ० ४१६।
४. आलोचना २, पृ० ६५।
५. पथ की खोज, (स्वप्न और जागरण), पृ० ३७३।
६ पथ की खोज, (स्वप्न और जागरण), पृ० ३७६।

दल की सदस्या बनना, उसकी यौन भावना का उदात्तीकरण है। फ्रायडियन मनोविज्ञान के फलस्वरूप इसे मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया गया है। यहा मनोविश्लेषण के साथ व्यक्ति मूल्यो की स्थापना हुई है। चन्द्रनाथ आशा को पत्र मे लिखता है "विश्व की सारी संस्कृतियो और मान्यताओ मे अधिक महत्त्व है—मानव-व्यक्तित्व का। मैं मानता हू कि धर्म और दर्शन के सब सिद्धात, नीति के समस्त विधि-निषेध, उस व्यक्तित्व के प्रसार और सुख के लिए हैं, उसके उत्पीडन और विनाश के लिए नही।[1]" व्यक्ति मूल्यो की स्थापना मनोविश्लेषणात्मक आधार पर हुई है, इसलिए यह व्यक्तिपरक—मनोविश्लेषणात्मक—उपन्यास है।

बाहर भीतर (१९५४)

कथासार—'बाहर भीतर' डा० देवराज का इस विवेच्यकाल का दूसरा उपन्यास है। इस उपन्यास का नायक किशोर राजन अपने परिवार के व्यक्तियो के साथ बिजनौर जाता है और वहा अपनी मौसेरी भाभी सुमित्रा के व्यक्तित्व से अभिभूत हो जाता है। वह किशोरावस्था मे भाभी का आकर्षित व्यक्तित्व उसे बहुत प्रभावित करता है। वहाँ बीती हुई घटनाओ को याद करता है और उसको भाभी की याद आ जाती है। भाभी की 'वे आंखे, वे तेजस्वी और सरस आखे, जो पलक उठाए, खोए से भाव से केवल ताका करती हैं। वह खिले गुलाब जैसा मुखडा, जो अब मुरझा गया है और वे सूखे फूल की पखुडियाँ जैसे होठ। वह उदास, मुस्कान शून्य मुद्रा, वे अस्त व्यस्त, तेल से अछूते केश।[2] सचमुच राजन सुमित्रा को चाहता था, इसलिए घटो उसके साथ ताश खेलता है। भाभी राजन के व्यक्त्वि से अभिभूत थी। दोनो के मन मे अमुक्त काम-वासना थी। भाभी राजन के पहुंचते ही आवभगत करती थी। भाभी के व्यक्तित्व की तुलना मे हरिकृष्ण का कोई व्यक्तित्व नही था। व्यापारिक होने के कारण वे केवल व्यवहारिक थे। भाभी और राजन की बातचीत को सुनकर, उन्हें जलन होती थी और वे यह पसन्द भी नही करते थे। भाभी घटो घर के कामो मे उलझी रहती। किशन भैया और भाभी के बीच मे बहुत व्यवधान था। किशन हमेशा सुमित्रा पर कड़ा नियन्त्रण रखता था। राजन की मिथुन-वासना भाभी के सम्पर्क से

---

१. वही, पृ० ३८३।
२. डा० देवराज : 'बाहर-भीतर', पृ० ३।

अभिव्यक्त हुई । एक दिन एकान्त के क्षणो मे उसने भाभी को चूम लिया और भाभी ने अपना हृदय खोलकर कहा क्या मुझसे शादी कर सकते थे ? क्या अब भी शादी कर सकते हो, बिना किसी झिझक या परेशानी के ? ···मुझे भगा कर ले चलो ?[1]' नायक राजन मे इतनी शक्ति नही थी । उसके पिता का स्थानान्तरण लखनऊ मे हो गया और नायक राजन भी लखनऊ की चकाचौंध और नये वातावरण मे खो गया । किशन भैया का देहान्त हो गया परिस्थितियो से विवश होने के फलस्वरूप विधवा भाभी सुमित्रा के भीतर की कामनाओ पर, बाहर के समाज के संसार के कठोर नियत्रण ने विजय प्राप्त की, किंतु नायक को समय जीतने पर भाभी के करुण मुख की याद आती रहती है ।

वस्तु-विधान—यह राजन सुमित्रा देवर–भाभी की कथा है । इस उपन्यास मे इन दो पात्रो की जीवन घटनाओ के स्थान पर अन्य घटनाओ का सर्वथा अभाव है । आत्म–कथात्मक शैली मे लेखक ने बाहर (समाज, संसर) और भीतर (व्यक्ति, इच्छाओ) के सघर्ष को प्रस्तुत किया है । आत्मकथात्मक शिल्प, लघु उपन्यास और घटनाओ की विरलता होने के कारण उपन्यास मे गठन है । राजन का सुमित्रा से मिलना, सुमित्रा के व्यक्तित्व और सौंदर्य से अभिभूत होना, राजन मे मिथुन वासना जागना; भाभी को चूमना और हरिकृष्ण भैया का बीमार पडना आदि–इस उपन्यास की मुख्य घटनाए है । राजन की मन स्थितियो का चित्रण होने के कारण अनावश्यक विस्तार और वस्तु–शिथिलता का अवकाश लेखक को नही रहा है । इस उपन्यास मे लेखक ने भाभी के खण्डित जीवन के चित्रण के लिए उन घटनाओ और पात्रो को चुना है जो वस्तु–विधान मे अन्विति ला सकें । न घटनाए अधिक है और न पात्रो की बहुलता है । प्रासगिक घटनाओ के अभाव के कारण मैं इसे उपन्यास न कहकर लम्बी कहानी भी कहा जा सकता है ।

चरित्र-विधान—राजन और सुमित्रा इस उपन्यास के दो प्रमुख पात्र हैं । राजन का चरित्र और व्यक्तित्व तो लेखक की प्रतिकृति मात्र लगता है । राजन लेखक के भावो, विचारो और अनुभूतियो का प्रतिबिम्ब है । लेखक की सारी करुणा बाहर–भीतर की भाभी को मिली है । 'बाहर–भीतर' की भाभी का करुण व्यक्तित्व पाठक की समस्त मानसिक व भावनात्मक सत्ता को

---

१ डा० देवराज . पथ की खोज . पृ० १०१ ।

अभिभूत कर लेने की क्षमता रखता है। उसमे अनिर्वाच्य रहस्यमय आकर्षण है।[१] पाठक की दृष्टि ·ाभी की उन तेजस्वी किंतु तरल आंखो से नही हट पाती जो अब तेजहीन और भावहीन' बन गई हैं। भाभी की करुणा केवल भारतीय नारी की करुणा नही है, नारी ही मन मे उठने वाले इच्छाओं के ज्वार, मन के भीतर की एक जलने वाली आग, भीतर हमेशा चलने वाला कामनाओ का फव्वारा–सब कुछ भाभी के भीतर देखने को मिलता है। दूसरी ओर समाज अथवा सँसर के डर मे, अपनी इच्छाओ और कामनाओं की होली जलाकर, अपने जीवन को बिताती है। यह एक नारी के मन मे उठने वाले बाहर भीतर के सघर्षो की कहानी है। यह मानना गलत है, भारतीय नारी की अशेष करुणा ने हमारे भारतीय भाषाओ के कथा और काव्य साहित्य को अक्षय विषय प्रदान किये हैं।[२] भाभी की करुणा केवल भारतीय नारी की करुणा न होकर सामान्य नारी की करुणा है। वह सामान्य नारी सवेदनशीलता और करुणा को उपन्याम के पृष्ठो मे अभिव्यक्त करती है। भाभी नारी की सवेदनाओ, अनुभूतियो और करुणा का सजीव चित्र है। भाभी का सजीव व्यक्तित्व नायक को लिखे गए पत्र मे भी अभिव्यक्त होता है।[३] राजन से अधिक प्राणवान पात्र भाभी है। भाभी मे जीवन का स्पन्दन और चेतना है। राजन अपने प्राणो की कुलबुलाहट लेकर उपन्यास मे उपस्थित है, वह 'पथ की खोज' का पुतला चन्द्रनाथ बनकर नहीं रह जाता है। भाभी और राजन दोनो मे विकास की सम्भावनाए हैं। दोनो भीतर से बाहर की ओर उन्मुख होकर अपनी कामवासनाओ का उदात्तीकरण करते हैं। अन्य पात्रो मे हरिकृष्ण आदि मे व्यक्तित्व है ही नही। अत. 'बाहर–भीतर' के राजन और सुमित्रा, पात्रो की रचना की दृष्टि से कलात्मक सृजन है।

उद्देश्य—एक आलोचक की भ्रान्त धारणा है की 'बाहर–भीतर' की समस्या तो पुरानी है, अनमेल विवाह को लेकर न जाने कितनी कथाए रची गई है किन्तु लेलक ने उसे निश्चय ही नया रूप दिया है।[४] अनमेल–विवाह की समस्या उपस्थित करने का ही उद्देश्य लेखक का नही रहा है।

---

१. डा० देवराज, पथ की खोज : पृ० ३४।

२ आलोचना १५, पृ० ७८।

३. डा० देयराज : पथ की खोज, पृ० १०५–१०६।

४ आलोचना १५, पृ० ८०।

भाभी–सुमित्रा अनमेल–विवाह से आक्रान्त नारी–पात्र है और समस्त उपन्यास मे भाभी की पीड़ा और वेदना का अहसास होता है किन्तु अनमेल विवाह तो एक माध्यम भर है। व्यक्ति की आन्तरिक इच्छाओ पर वाह्य मूल्यो की विजय ही उपन्यास का उद्देश्य है। व्यक्ति इच्छाओ भावनाओ और आकांक्षाओ का पुतला है। व्यक्ति के जीवन की सफलता इच्छाओ के उन्नयन और उदात्तीकरण मे है। अत नये व्यक्ति मूल्यो की स्थापना करते हुए, भीतर से बाहर की ओर जाना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

'बाहर भीतर' व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है क्योकि मनोविश्लेषणात्मक आधार पर व्यक्ति मूल्यो की स्थापना इस उपन्यास मे हुई है। राजन के अचेतन मन मे भाभी के प्रति काम भावना थी जो बाद मे प्रकट हुई। राजन स्वीकार करता है 'मेरी सुषुप्त मिथुन–वासना, जो भाभी के सम्पर्क मे उन्मिलित हुई थी, अब नारी—मात्र की उपस्थित मे उत्फलित होने लगी। सक्षेप मे अब मैं विषम लिंग के सदस्यो से सचेत अभिरुचि लेता जान पडता हू।[1]' इस उपन्यास मे हरिकिशन सैंसर का प्रतीक है। अतृप्त यौन प्रवृत्तियो के फलस्वरूप राजन सोचता है 'क्या कभी इच्छा करने पर भी भैया से जुदा नही हो सकती ? और क्या वह हमेशा मेरे साथ नही रह सकती ? क्या मुझे सदैव भाभी के साथ चाय पीने को नही मिल सकती ? उनके साथ आमने सामने बैठकर चाय पीना कितना भला लगता है।[2]' यह निश्चित रूप से मनोविश्लेषणवादी उपन्यास है और साथ ही साथ व्यक्ति मूल्यो की स्थापना हुई है, इसलिए इसे व्यक्तिपरक–मनोविश्लेषणात्मक–उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान मिला है।

रांगेय–राघव

पतझर (१९६२)

कथासार—रागेय–राघव के लघु उपन्यास 'पतझर' मे दो प्रेमी प्रेमिकाओ–मोहिनी और जगन्नाथ की कहानी है। मोहिनी और जगन्नाथ वस्तुत. प्रेमी प्रेमिका के रूप मे अनिला और नलिन है। जगन्नाथ बहुत होनहार लडका होता किन्तु वह मानसिक रोग से ग्रस्त हो जाता है। जगन्नाथ के

---

१. डा० देवराज · बाहर–भीतर, पृ० ५५–५६।
२. वही, पृ० ५०।

पिता जगन्नाथ को एक मनोविश्लेपक के यहा, चिकित्सा के लिए लाता है। जगन्नाथ को मानसिक रोग के फलस्वरूप कुछ दिखाई नही देता है। उसने अच्छे नम्बरो से एम० ए० किया था और आई० ए० एस० (भारतीय प्रशासनिक सेवा) की तैयारी मे लग गया। एकाएक उसकी आखे कमजोर हो गई किन्तु आखो के डाक्टर विवश थे। मनोविश्लेपक ने रोगी का पूरा इतिहास पूछा। इसी तरह हरबसलाल अपनी पुत्री अनिला को लाए, अनिला भी मानसिक रोग से पीडित होती है। डाक्टर ने जगन्नाथ से उसके बारे मे पूरी जानकारी के लिए साक्षात्कार किया। मनोविश्लेपक ने अपनी मनोविश्लेपणात्मक पद्धत्तियो के द्वारा जगन्नाथ के अचेतन को चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न किया है। जगन्नाथ मे सामूहिक अवचेतन के रूप मे दबी हुई कामनाए प्रकट हुई। स्वप्न मे उसे लगा कि वह आदिमयुग का मानव मदार है और उसकी प्रेमिका प्रावर्णा। प्रावर्णा का पिता निलुखा प्रावर्णा को भगा लेता है किन्तु मदार उसे छुडाता है। नोल खा की पत्नी मखिला मदार को कहती है कि 'जो पुरुष स्त्री को छल से हर लाता है और धोखे से उसके नारीत्व का भोग करता है, वही उसका नियमानुसार पति होता है।' स्वप्न से जागकर जगन्नाथ को बताना पडा कि उसकी प्रावर्णा की चेहरा अनिला से मिलता है। अनिला बातचीत भी कविताओ मे करती है। पुन स्वप्न मे जगन्नाथ ने देखा कि डाक्टर प्राचीन युग का मीनाक्ष है, अनिला सुवेशी और वह स्वय पुलस्त्य का वशज है। इस तरह मनोविश्लेपक ने उनकी अचेतन मे दबी कामवासनाओ को चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न किया। दोनो प्रेमियो ने समाज और परिवार के नियन्त्रण के विरोध मे शादी करने का वचन सबके सामने दे दिया।

वस्तु-विधान—उपन्यास केवल इन दो पात्रो–अनिला और नलिन को लेकर चलता और इन दो पात्रो मे समन्वय–सूत्र स्थापित करने का कार्य डाक्टर करता है इसलिए आवश्यक कथा–प्रसगो का उपन्यास मे सर्वथा अभाव है। अत उपन्यास मे अन्विति भग होने का प्रश्न ही नही उठता है। अनिला और नलिन के अचेतन मन मे दमित इच्छाओ को चेतन स्तर पर लाना था, इसलिए उसने दोनो की पूर्व कथाओ को स्पष्ट किया है। 'सामूहिक–अवचेतन' को स्पष्ट करने मे, आदिम युग के पुरुष और स्त्री–मदार प्रवर्णा की कथा अस्वाभाविकता मे भरा पडा है क्योकि उपन्यासकार अस्वाभाविक घटनाओ को लेकर आगे बढा है।

चरित्र–विधान—उपन्यासकार ने पात्रो के नाम पर कठपुतले दिये हैं जो उपन्यासकार के मन्तव्य को स्पष्ट करते हैं, उनमे जीवन की चेतना

और प्राणो के स्पन्दन का सर्वथा अभाव है। डाक्टर के रूप मे लेखक उपस्थित है और मानसिक-रोगियो के रूप मे अनिला और नलिन। पात्रो का बीजारोपण भी अस्वाभाविकता के फलस्वरूप हुआ है। डाक्टर कहता है 'मेरे पास मनोविज्ञान के क्षेत्र के तरह तरह के मरीज आते हैं, उन लोगो का मस्तिष्क बहुत बिगडा हुआ होता है, इसलिए मुझे उनसे बात करते वक्त अक्सर ही दीमागी झटके देने पडते हैं।[1]' अत केवल मानसिक रोगियो के डाक्टर और उनके मा बाप दीनानाथ और हरबसलाल केवल नामरूप मे हैं और किसी मे भी व्यक्तित्व का अश भी नही है।

उद्देश्य—अनिला और नलिन के अचेतन मन मे घुसकर, भीतर दबी हुई अमुक्त कामनाओ और इच्छाओ को, उपन्यासकार बाहर लाना चाहता है। लेखक जैसे मनोविश्लेषण की पुस्तक खोलकर उपन्यास लिखने बैठ गया है, इसलिए उपन्यास मे लेखक का कार्य डाक्टर करता है। हरबशलाल कहता है 'फ्रायड ने यह साबित किया है कि सब चीजें काम शक्ति की वजह से चलती हैं और मनुष्य का एक अवचेतन होता है, जिसको सब कोशस बोलते हैं।[2]' रागेयराघव युग के सामूहिक अवचेतन मे विश्वास करते हैं। वे कहते हैं कि इस बात को मानने को वे तैयार नही कि अवचेतन मे केवल काम भावना होती है। मनुष्य का अवचेतन एक विराट शक्ति है। भारतीय योगियो ने उस अवचेतन को जगाने की कोशिश की।[3] डाक्टर अनिला और नालिम से साक्षात्कार प्रणाली के द्वारा मुक्त आसग प्रणाली का प्रयोग करता है जिसमे रोगी को निर्बाध रूप से अपने विचारो और भावो की पूर्ण स्वतन्त्रता मिल जाती है। बीच बीच मे निराधार प्रत्यक्षीकरण का प्रयोग किया है, तब रोगी प्रत्यक्ष अवस्था मे उन ध्वनियो, व्यक्तियो और वस्तुओ को देखता है, जिनका अस्तित्व ही नही होता है। 'मदार और प्रवर्णा का प्रसग[4]' इसका एक उदाहरण है। सम्मोहन प्रणाली का प्रयोग भी किया गया है।[5] अतः साक्षात्कार के पश्चात् मुक्त आसग प्रणाली, सम्मोहन विधि, स्वप्न विधि

---

१. रांगेयराघव : पतझर, पृ० ११०।
२ वही, पृ० १२।
३ रांगेयराघव, पतझर : पृ० १२।
४. वही, पृ० २६–३४।
५. वही, पृ० २७।

और निराधार प्रत्यक्षीकरण प्रणाली का प्रयोग करता है। इन सबके साथ पूर्ववृत्तात्मक प्रणाली का भी प्रयोग किया है क्योंकि पात्र की वर्तमान अवस्था के आधार पर, पात्र के मन का विश्लेषण किया है। अत: सामूहिक अवचेतन पद्धति के द्वारा, कुछ नामधारी और व्यक्तित्वहीन पात्रों को लेकर, मनोविश्लेषण का प्रयोग करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। डाक्टर का विश्वास है कि समाज का ढाचा व्यक्ति का पूर्णत विकास नही कर पाता।[1] लेखक द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद से भी प्रभावित है लेकिन उसको भी नही छोड पाता है। डाक्टर कहता है. 'हम जिस अवस्था मे रहते हैं उसमें कई स्तर हैं, मनुष्य साम्राज्यवाद और पूजीवाद बनाकर भी रहता है, मनुष्य साम्यवाद का अधिनायकत्व बनाकर भी रहता है।[2] डाक्टर के यह विचार आरोपित हैं। मूल रूप मे यह व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है क्योकि मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का सहारा लेकर 'व्यक्ति के स्वातन्त्र्य की भावना[3]' का उद्घोष किया है। अत अस्वाभाविक कथावस्तु, अस्वाभाविक पात्रो और अस्वाभाविक उद्देश्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह 'दो मनोवैज्ञानिक केसो की कथा' है और इसमे उपन्यास-रस का सर्वथा अभाव है।

राजेन्द्र यादव

कुलटा (१९५८)

कथासार—'कुलटा' राजेन्द्र यादव की लम्बी कहानी है, लघु उपन्यास मानना पडेगा। लेखक अपनी बहन वीनू के यहा गया। उसके पति कैप्टन रणधीर हैं। वहा लेखक ने मिसेज तेजपाल को देखा। कुलटा मिसेज तेजपाल है, जिसको 'टालस्टाय के उपन्यास, शॉ के नाटक और चेखव की कहानिया पढने का शौक था। कीट्स और वर्डसवर्थ पर जान देती थी। भारत नाट्यम् देखनी थी। अब सब खत्म हो गया है। अब तो राक-एन-राल देखती है।[4]' अपने पति मेजर तेजपाल के साथ उसका हर समय सघर्ष रहता है। मेजर तेजपाल

१. वही, पृ० १०४।
२. वही, पृ० १ ७।
३ वही, पृ० १२०।
४. राजेन्द्र यादव : कुलटा पृ० ६८।

को लम्बे बाल पसन्द थे, इसलिए उसने बाल कटवा कर 'बाब्ड हेयर' रखवा लिये। मेजर को फिल्मी गीत पसन्द नही थे किन्तु वह फिल्मी–गीत गाती। पति को योरोपीय पोशाक पसन्द नही थी किन्तु वह नायलान की पारदर्शक साड़ी पहनना पसन्द करती। मिसेज तेजपाल ने अपने शरीर को ऐसा लचीला, गदरीला और त्वचा को ऐसा स्निग्ध और पारदर्शी बना दिया कि उसे देखकर छूने की इच्छा मन मे लगती थी।[1]' लेखक ने ऊपरी जिन्दगी मे कुछ गडबड़ दिखाई थी। उसके जीवन मे बहुत बडी ट्रेजडी है। लेखक ने उनका नाम पूछा तो उसने बताया कि नाम ही क्या, पहले जाने कितनी चीजे थी जो मिसेज तेजपाल होने के बाद छूट गई और कहा : 'मसलन मैं पहले किसी की बेटी थी, किसी की बहन थी, बाद मे सिर्फ पत्नी रह गई। शादी के बाद सिर्फ लैफिटनैण्ट की बीवी थी, अब मेजर की हू, दो तीन साल बाद मिसेज कर्नल हो जाऊँगी।[2]' वह इस औपचारिक जिन्दगी से तग आ चुकी थी। उसे लगता है कि यहा की औरतो को जिन्दगी मे सिर्फ खाना और कपड़ा है। वे पिकनिक मे साथ गये और तेजपाल के व्यक्तित्व की दबी हुई परतें खुलती चली गई। मेजर तेजपाल पागल हो गए। एक बार रास्ते मे एक औरत मिल गई तो उस औरत को पटक कर, उसके कपडे फाड कर उसे न गी कर दिया। उन्हे पागलखाने भर्ती करा दिया किन्तु वे अपनी अश्लील चेष्टाए छोडते नही थे। वे यही चिल्लाते कि मैं आदम ।[3] मिसेज तेजपाल को भी तगडी अलशेसियन कुतिया, न जाने कहा खीच ले गई।

वस्तु–विधान—लेखक ने ही इसे लम्बी कहानी कहा है किन्तु यह एक लघु उपन्यास है। इस उपन्यास मे घटनाओ का नितान्त अभाव है। लेखक, स्वय इसमे एक पात्र के रूप मे उपस्थित है और वह मिसेज तेजपाल के व्यक्तित्व की परतो को खोलता गया है। मिसेज तेजपाल के हावभाव और बातचीत के साथ कथा आगे बढ़ती है और यह सहज ही कहा जा सका है कि इसमे घटनाए है ही नही। मिसेज तेजपाल रहस्यमय रूप से गत जीवन को बताती है किन्तु वह भी घटना प्रधान नही। मेजर तेजपाल, मिसेज तेजपाल बीनू, रुद्रा और लेखक का पिकनिक पर जाना, यही एक घटना है किन्तु उपन्यास का मोड़

---

१ वही, पृ० ३६।
२. वही, पृ० ६५।
३. राजेन्द्र यादव . कुलटा पृ० १०४।

मेजर तेजपाल के पागल होने और मिसेज तेजपाल के एंग्लोइंडियन कुतिया के साथ चले जाने से हुआ है। इसमे केवल मिसेज तेजपाल की कथा है और अन्य कथाओ का सर्वथा अभाव है इसलिए अन्विति के कमजोर होने का प्रश्न ही नही उठता है। इस उपन्यास के बारे मे यह भ्रामक धारणा है कि यौन अतृप्ति वाला अश उपन्यास के अन्त मे पाठक को चमत्कृत करने के लिए नही लाया जाता तो भी उपन्यास मे किसी बात का अभाव नही रहता।[1] यौन अतृप्ति वाले अश ने ही इसे उपन्यास बनाया है, अन्यथा यह उपन्यास केवल एक लम्बी कहानी बनकर रह जाता। यौन अतृप्ति वाले अंश से मिसेज तेजपाल के जीवन के एक से अधिक पक्षो का उद्घाटन हुआ है और यह उपन्यास बन गया है।

चरित्र-विधान—यह एक चरित्र-प्रधान उपन्यास है। मिसेज तेजपाल इस उपन्यास की नायिका है और अन्य पात्रो मे मेजर तेजपाल, बीनू, रुद्रा और लेखक हैं। केवल मिसेज तेजपाल के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास इस उपन्यास में हुआ है। मिसेज तेजपाल कुलटा थी।[2] वह सुन्दर थी और उसकी सुन्दरता मे दूसरो को आकर्षित करने की शक्ति थी। लेखक को भी उसे छू कर देखने की इच्छा मन मे जागती थी।[3]

लेखक ने उसके शरीर का वर्णन भी जी खोलकर किया है जैसे 'स्लिम देह, भरी देह, सीढियो पर उठते कदम, लहराते केपू के फूल और ऊपर झूमते हुए बाल[4] ...... उनकी आखो की गहराइयो मे तरल कालिमा मचलती थी।[5] वह एक रहस्यमय नारी थी और लेखक को लगा कि 'यह स्त्री जानबूझकर अपने पास एक रहस्य का जाला ताने रखना चाहती है।[6] उसको औपचारिकता भी पसन्द नही थी।[7]

अत मिसेज तेजपाल के व्यक्तित्व की रेखाओ को स्पष्ट करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। यह टाइप नही, चरित्र है। इसका चरित्र और

---

१. लहर : मार्च १९६१, पृ० ७४।
२. राजेन्द्र यादव : कुलटा : पृ० ९।
३. वही, पृ० ३९।
४. वही पृ० ४०।
५. वही, पृ० ४३।
६. वही, पृ० ६६।
७. वही, पृ० ७०।

व्यक्तित्व, एक आधुनिक-नारी का चरित्र और व्यक्तित्व है। औपचारिकता के बारे मे कहती है : 'वही पहले दिन वाली फार्मेलिटी, वही तकल्लुफ, वही औपचारिकता। लगता है ही नही जैसे आदमी मिल रहे हो। कठ पुतलो की जिन्दगी।[1]' अत मिसेज तेजपाल मे पूर्ण व्यक्तित्व है और वह एक विकसनशील पात्र है। विवाह के पहले और विवाह के बाद उसके व्यक्तित्व के दो पहलू हैं। वह अमुक्त काम-वासना से पीडित है क्योकि मेजर तेजपाल नपुसक है और यही मिसेज तेजपाल के जीवन की ट्रेजडी है। अमुक्त कामवासनाओ को सन्तुष्ट करने के लिए उसे भी पता नही वह अलमेशियन कुतिया उन्हे कहा खीच ले गई।[2] मिसेज और मेजर तेजपाल दोनो अमुक्त कामवासनाओ से पीडित है किन्तु मिसेज तेजपाल की तुलना मे मेजर तेजपाल का व्यक्तित्व स्पष्ट नही हुआ है। उनका व्यक्तित्व खूंख्वार है और वे नपुसक है जिसका रहस्य उपन्यास के अन्त मे खुलता है। अन्य पात्रो के व्यक्तित्व का विकास नही हुआ है। निस्सन्देह मिसेज तेजपाल एक प्राणवान स्त्री पात्र है।

उद्देश्य—'कुलटा' मे उच्च मध्यवर्गीय समाज का चित्रण किया गया है, जहा पुरुषों और स्त्रियों को क्लब ब्रिज रेस और पिकनिक जीवन से ही फुरसत नही मिलती है, किन्तु यह उपन्यास का उद्देश्य नही है। उपन्यास का केन्द्र विन्दु समाज न होकर व्यक्ति है। उपन्यास का केन्द्र विन्दु मिसेज तेजपाल है और मिसेज तेजपाल कुलटा है। लोगो मे यह चर्चा है कि मिसेज तेजपाल कुलटा है, इसलिए उसके व्यक्तित्व की परतो को उघाडकर, उसके अंतस् को खोलकर रखना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। मिसेज तेजपाल अमुक्त कामवासनाओ से पीडित है क्योकि उसका पति मेजर तेजपाल नपुसक है। नपुंसक होने के कारण मेजर को रोमास पसन्द नही है।[3] उनका रास्ते की औरत को नगा करना और अश्लील चेष्टाए करना नपुसकता के चिन्ह हैं। लेखक कहता है 'शुरु के दिनो मे पागल खाने की रिपोर्ट बड़ी अजब थी—उनके सामने जो पड जाता उसमे लिपट जाते, उसके साथ अश्लील चेष्टाए करते और खुद अपने आप को लोह, लुहान कर देते।[4]' यही चिल्लाते

१. वही, पृ० ७०।
२. वही, पृ० १०७।
३. राजेन्द्र यादव . कुलटा : पृ० २६।
४. वही, पृ० १०४।

थे कि मैं आदमी हू । मैं अभी दिखा दू गा मैं मर्द हू । लाओ, औरन लाओ मेरे सामने, मैं अभी दिखाता हू ।[1]' यहा मेजर तेजपाल की विकृतिया, मिसेज तेजपाल की अयुक्त कामवासनाओ को प्रकट करने के लिए अभिव्यक्त हुई हैं। मिसेज तेजपाल की तडक भडक उसकी अमुक्त कामनाओं का विस्फोट थी और पता नही वह तगडी अलसेशियन कुतियां उन्हे कहा खीच ले गई ..... 'यह शब्द अमुक्त कामवासनाओ को पूर्णत स्पष्ट कर देते हैं। अत यह स्पष्ट है कि मिसेज तेजपाल के व्यक्तित्व की परतो को खोलकर, उसकी अमुक्त कामवासनाओ की अभिव्यक्ति करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

फ्रायडियन मान्यता के अनुसार अमुक्त कामवासनाए व्यक्ति के अचेतन मन मे रहती है और समय आने पर वे व्यवहार मे अभिव्यक्त होकर भयानक विस्फोट करती है। इस उपन्यास मे मिसेज तेजपाल के असामान्य व्यवहारो को अभिव्यक्त किया गया है, जो वस्तुत उसकी अचेतन मे दबी अमुक्त कामवासनाओ का विस्फोट है। व्यक्ति के अचेतन मन को चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न इस उपन्यास मे हुआ है, इसलिए यह निश्चित रूप से व्यक्ति-परक—मनोविश्लेषणात्मक—उपन्यास है।

अनदेखे अनजान फल (१९६३)

कथासार— अनदेखे अनजान फल' राजेन्द्र यादव का लघु उपन्यास है। इसमे निम्मी नाम की कुरूप लडकी अपने दादा के साथ दिल्ली घूमने जाती है। वह अपने दादा के साथ दादा के मित्र युवक कलाकार दर्शन के यहा ठहरे। निम्मी मे भयानक हीनतानुभूति है। उसे यह तीव्र बोध था कि उसका रग काला है, वह सुन्दर नही है उसके होठ सावले हैं और मसूड़े जरूरत से ज्यादा लाल हैं और सारे चेहरे पर दातो और आखो के कोयो की सफेदी वडी डरावनी लगती है।[2]' सोते सोते ही निम्मी ने सोचा कि सुबह सुबह ही वह सज सवर कर तैयार हो जाएगी। निम्मी ने खाना बना लिया। जब वह दर्शन को खना खिला रही थी तो उस समय उसके भीतर 'एक गहरी तृप्ति की भावना थी। युग के नारी संस्कार थे, जो पुरुष को खिलाकर सार्थकता की व्यापक अनुभूति के पुलक थे।[3]' उसके कन्धे दर्शन से छू गये

---

१. वही, पृ० १०४।

२ राजेन्द्र यादव . अनदेखे अनजान फल पृ० २७।

३. वही, पृ० ४०।

तो उसकी 'सारी संवेदना शक्ति कंधों की मांसल टकराहट' में आ समाई थी। दर्शन के साथ वह नुमाइश देखने गई। वहां भी हीनतानुभूति से खिंची खिंची रही। वे 'न्यूड' और 'नेकेड' आर्ट पर भी बातें करते रहे। लौटने पर उसे दर्शन का पत्र मिला। उस पत्र में उसने आत्मीयता प्रकट की। निम्मी ने भी पत्र का उत्तर दिया। एक रिश्तेदार के यहां लडकी की शादी थी। वहां अंधेरे में सीढियों में बैजल ने सन्ध्या के बहाने उसे बांहों में भर कर चूम लिया। उसका मन हमेशा 'कुछ दुष्ट, कुत्सित और वर्जनीय कहने और करने को मचलता रहता। छिप छिप कर चटखारेदार प्रेम और रोमांस की किताबें पढती, उनके चुम्बनों, आलिंगनों वाले वर्णनों को अनेक बार दुहराती और बन्द करती, तो बैजल की गर्म गर्म सांसें और अंधेरी म्यानी सामने आ जाती।' पडोसी के त्रिपाठी जी के बच्चों को गोदी में भींचने और गालों को नोचने में निम्मी को बड़ा आनन्द आता था। त्रिपाठी जी के लडके साचार के साथ भाग जाने के लिए उसने सपने देखे। दर्शन के प्यार और विश्वास के सहारे वह जीती है। दर्शन की निराशा और कुण्ठा के फलस्वरूप वह बीमार पड गई और दर्शन ने उसके होंठों को चूम लिया। दर्शन के चुम्बन ने उसको नया मोड दिया। दर्शन का विवाह हो गया। निम्मी आगे पढी, उसने नौकरी की और अब भारत सरकार के जिम्मेदार पद को संभाले हुए हैं।[1]

वस्तु-विधान—यह एक कुरूप युवती की मानसिक स्थिति का संवेदनशील चित्र है। इसमें निम्मी की ही कथा मुख्य है और अन्य पात्रों की कथाओं के संकेत भर हैं। अन्य पात्र केवल निम्मी की मनस्थितियों म मनस्थितियों को अभिव्यक्त करते हैं और स्वतंत्र रूप से उनकी कथा है ही नहीं। यह मानना सरासर गलत है कि छोटी छोटी बातों को बहुत विस्तार दे दिया गया हो और इस कारण प्रभाव की प्रखरता कम हो गई है। दूसरे शब्दों में निम्मी के मानसिक जगत और अन्य सम्बंधों में कुछ पक्षों की बहुत सी अनावश्यक तथा छोटी बातों को भी बहुत विस्तार से या बार बार कहा गया है और कुछेक अन्य आवश्यक पक्षों की इतनी उपेक्षा कर दी गई कि उसकी मूल परिणति अनिवार्य नहीं लगती, फलस्वरूप उपन्यास के समग्र प्रभाव में समग्रता और तीव्रता की कमी महसूस होती है।[2] उपन्यास में अन्य प्रसंगों

---

१. राजेन्द्र यादव : अनदेखे अनजाने पुल : भूमिका।

२. ज्ञानोदय : जनवरी १९६४, पृ० १०८।

और उनके विस्तार का सर्वथा अभाव है। उपन्यास मे केवल उसी घटना का जिक्र है, जिससे निम्मी की मन स्थितियो का विकास हुआ है। सागर का स्पर्श, बैंजल का चुम्बन, दर्शन के साथ नुमाइश का भ्रमण और स्थल स्थल पर स्पर्श सुख की अनुभूति निम्मी की हीनतानुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए हुआ है। प्रासगिक-घटनाओ के अभाव और मानसिक स्थितियो के कारण इसमे अन्विति की रक्षा हुई है। अस्वामिकता का आरोप अवश्य लगाया जा सकता है कि बैंजल के चुम्बन से उसमे हीनतानुभूति की भावना तीव्र हो जाती है और इसके पश्चात् बीमारावस्था मे दर्शन के चुम्बन से हीनावस्था दूर हो जाती है। इसमे आगे पीछे का अध्याय तो वर्त्तमान है और बीच का अध्याय उसके अतीत को अभिव्यक्त करता है। अस्वाभाविकता के आरोप से मुक्त करें तो, लघु उपन्यास के अनुरूप, इसमे सुन्दर अन्विति है।

चरित्र-विधान—यह एक काली लडकी निम्मी के मानसिक सघर्षो और मन स्थितियो की कहानी है। प्रारम्भ मे ही लेखक ने निम्मी के शब्दो को कहा है: जब मैं सबको देखती हू तो लगता है जैसे एक तग और अधेरी सुरंग से गुजर कर आ रही हू।[1]" उपन्यास मे केवल निम्मी की हीनतानुभूति की अभिव्यक्ति है। इसमे हीनतानुभूति का बोध है। यह बोध रात दिन उसके ऊपर सवार रहता और घिनौने तिलचट्टे की तरह उसकी नीद हराम किये रखता।[2] वह मानती है कि 'यह बताना मुश्किल है कि इस बोध को जनाने मे दूसरो का हाथ कितना है और अपनी हीनतानुभूति कितनी, फिर भी इतना जरूर है कि जब भी पहले पहल यह बात उसके मन मे आई होगी, उसे लाने का श्रेय दूसरो का ही रहा होगा।[3] जब वह दर्शन को थाली परोस रही थी तो 'एक बडी घिसी पिटी सी बात मन मे उठी'—वह थाली नही, मेरा सूक्ष्म व्यक्तित्व है, वह स्वय ही दर्शन के सामने परोसी जा रही है। 'उसके भीतर वह हीनतानुभूति ग्रंथि मे बदल गई थी और जाने कब से निम्मी के भीतर यह ग्रथि बन गई थी और कभी ऐसी जगह जाने की उसकी हिम्मत नही पडती थी, जहा साथ के बहुत से लोग बैठे हो।[4] उसका दर्शन

---

१. राजेन्द्र यादव: अनदेखे अनजान पुल: भूमिका।
२. वही, पृ० २७।
३ राजेन्द्र यादव. अनदेखे अनजान पुल: पृ० २८।
४ वही पृ० ३८।

के साथ 'न्यूड आर्ट और सप्रेस्ड डिजायर्स[1]' के बारे मे बात करना भी उसकी हीनता ग्रंथि दर्शन और उसकी पत्नी से भी वह हीनता भाव से ही मिली।[2] 'उतरती सीढ़ियो के अंधेरे मोड' मे बैंजल का चुम्बन और 'खेत मे सागर का स्पर्श[3]' भी उसकी अमुक्त कामनाओ को प्रकट करता है। इसी हीनतानुभूति के फलस्वरूप निम्मी को महसूस होता है कि लोगो के जीने के कुछ बहाने होते हैं—वर्त्तमान के कुछ लगाव, कोई साथ या कोई स्वार्थ ' ' '' निम्मी के लिए तो कुछ भी नही है। '''''' न कोई सपना है, तो भविष्य के परदो के पार खडा होकर जिन्दगी को अपनी ओर खीचे, न कोई स्मृति है जो पीछे की ओर बुलाती रहे।[4]' अतः सम्पूर्ण उपन्याम मे अमुक्त वामनाओ के फलस्वरूप निम्मी की हीनतानुभूति प्रकट हुई है।

इसमें निम्मी के जीवन का एक पहलू और एक विचार है, इसलिए सपाट चरित्र है, इसमे विकास की स्थितियो का अभाव है। यह गलत आरोप लगाया गया है : क्या प्रथम अध्याथ की निम्मी द्वितीय अध्याय की निम्मी रह पाती है निम्मी का पतन अस्वाभाविक लगता है। यह अस्वाभाविकता आरोपित हीनताग्रंथि के कारण है। निम्मी का व्यक्तित्व भय और स्वप्न का असन्तुलित व्यक्तित्व है। निम्मी की अपेक्षाओ, कुण्ठाओं और प्रतिक्रियाओ मे घोर बचकानापन है।[5] प्रथम अध्याय की निम्मी द्वितीय और तृतीय अध्याय की निम्मी ही है क्योकि उसकी हीनताग्रंथि का क्रमश विकास हुआ है। निम्मी का पतन अस्वाभाविक नही है क्योकि वह हीनताग्रंथि की स्वाभाविक परिणति है। पहले अध्याय की निम्मी भी दर्शन के साथ नुमाइश मे स्पर्श—सुख का आनन्द लेती है। इस उपन्यास को मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास के दृष्टिकोण से देखना पड़ेगा। मनोविश्लेषण के दृष्टिकोण से यह बचकानापन नही है। हीनतानुभूति के आधार पर लेखक निम्मी के अचेतन मन की परतो को खोलकर दिखाना चाहता है। यह आरोप गलत है कि उसके चरित्र मे विश्वसनीयता नही है। दो चुम्बन के अंश अवश्य अस्वाभाविक लगते हैं किन्तु उसके

---

१ वही, पृ० ५६।

२. वही, पृ० ९१।

३. वही, पृ० ११५।

४ वही, पृ० १३५।

५. ज्ञानोदय ' फरवरी १९६५, पृ० १५।

व्यक्तित्व के समग्र चित्रों मे सगति और तीव्रता है। अन्य पात्रो—दर्शन, सागर और बेंजल आदि के व्यक्तित्व का विकास नही हुआ है। निम्मी सपाट चरित्र होने पर भी लेखक के नारी-चरित्रो मे एक सुन्दर सृजन है।

उद्देश्य—उपन्यासकार ने निम्मी की हीनतानुभूति को अभिव्यक्त किया है किन्तु हीनतानुभूति को अभिव्यक्त करना ही उसका अतिम लक्ष्य नही है। दर्शन के रूप मे लेखक स्वय उपस्थित है और दर्शन चुम्बन के समय जो विचार कहता है, वह उपन्यास के लक्ष्य को स्पष्ट करता है : 'सुन्दर का निर्माण जितना बडा काम है, सुन्दरता का सरक्षण उससे कम छोटा काम नही है।—कोई सुन्दर, दृश्य मूड या भाव, जिसे कलाकार चित्र मे बाधकर जमा कर देता है ...... क्या वह दुनिया की इस बाहरी और भीतरी कुरूपता-गलाजत के बीच हल्की सी किरण एक नन्हा सा प्रकाश स्तम्भ बनकर मनुष्य की आत्मा को आस्था और जल नही देता रहता ......?[1]' और फिर दक्षिण की मूर्तियो के आधार पर सुन्दरता के मापदण्ड को निश्चित करता हुआ मानता है कि कलाकार 'अग अग को अनुपात, सुडोलता देते थे। पतले होठ और नुकीली नाक तराशते रहते थे। लम्बी लम्बी बरोनिया, धनुषाकार भौहे निकाल देते थे। लेकिन सारे मुखमण्डल पर छाई यह शाति-खीझ, प्यार-क्रोध और होठो से फूटती लजीली मुस्कान का कौन सा कौडा, कौनसा कौशल पत्थर मे उतारने को मजबूर कर सकता है ? बिना मन की उमग और आस्था के पत्थर के होठो पर वह मुस्कराहट कहा से आएगी, जो बोलती है, खीचती हैं और तन-मन को एक गध की बाहो मे बांधे रखती हैं ? उस क्षण मुझे लगा, अनुपात सुन्दरता नही, अनुपात के पीछे उद्भासित होने-वाला प्राण, प्रसन्न-उत्साह और आस्था ही सौंदर्य है।[2]' उपन्यासकार ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि आस्था ही सौंदर्य हैं और यही उपन्यासकार का उपन्यास मे उद्देश्य है।

'अनदेखे अनजान पुल' यौन भावनाओ का पुल है।[3] इस उपन्यास मे केवल निम्मी की हीनता ग्रथि है। यह माना गया है कि—जो व्यक्ति हीनता-ग्रथि से पीडित होते हैं उन्हे विश्वास होता है कि इस विश्व मे प्रेम और

---

१. राजेन्द्र यादव : अनदेखे अनजान पुल : पृ० १४५।

२. वही, पृ० १४७।

३. वही, पृ० ५५।

स्नेह का अभाव है और प्रेम और स्नेह से उनका सामान्यस म्बध नही रहता है।[1] यह निम्मी की हीनता ग्र थि का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन है इसलिए यह निश्चित रूप से मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। निम्मी के अचेतन मन मे दवी अमुक्त काम भावनाओ को हीनताग्र थि के द्वारा चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न किया गया है; केवल व्यक्ति का ही चित्र प्रमुख है और सामाजिक चेतना की उपेक्षा की गई है, इसलिए, यह निस्सदेह व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है।

अन्य उपन्यास

शह और मात (१९५९)

डायरी शैली मे लिखा गया सुजाता नाम की प्रसिद्ध लेखिका की प्रेम कहानी है। सुजाता उदय नाम के युगप्रवर्त्तक लेखक से प्यार करने लगती है किन्तु उदय उसको छोडकर विदेश चला जाता। है उदय भी अन्य युवती से प्यार करता है किन्तु वह उदय के सम्पन्न होने तक विवाह नही करना चाहती है। इस उपन्यास के बारे मे एक आरोप लगाया जाता है: 'यादव जी का यह उपन्यास 'शह और मात' कथानक की दृष्टि से अत्यत विघटित दिखाई पडता है। डायरी की शैली मे लिखा गया यह उपन्यास अलग अलग पृष्ठो मे पूर्ण दिखता है, पर इसे समवेत रूप से मिलाकर पढ़ने मे अपूर्णता ही लक्षित होती है। सुजाता की डायरी का प्रत्येक पृष्ठ अलग अपने मे विदग्धता एवं काव्य का अश पर्याप्त रूप मे वर्त्तमान रहता है पर एक पृष्ठ से दूसरे पृष्ठ के भीतर अन्विति का अभाव है।[2]' समाजपरक उपन्यासो—सामाजिक और समाजवादी उपन्यासो की तरह स्थूल घटनाओ से नही बुना गया है किन्तु व्यक्तिपरक और विशेषकर मनोवैज्ञानिक शिल्प के कारण मनस्थितियो के ताने बाने से बुना हुआ है। उपन्यास मे कथानक का अकुर फूटता है और धीरे धीरे पूर्ण विकास की स्थितियो की ओर बढ़ता है।

सुजाता आत्मरति से पीडित है और यह एक विघटित व्यक्तित्व है। रेखा और उदय भी खण्डित व्यक्तित्व के ज्वलत प्रतीक हैं। सुजाता, रेखा और उदय का विकलांगी व्यक्तित्व, मनोविश्लेषको के लिए मनोवैज्ञानिक केस है। सारे पात्र उखड़े हुए भी नही हैं। आधारहीन और फिर वह महान् हीनता ग्रंथि

---

१ अल्फ्रेड अैडलर: अण्डरस्टैण्डिग ह्यूमन नेचर, १९४९ पृ० ७३।

२. ज्ञानोदय: अगस्त १९६०, पृ० ९६–९७।

उपन्यास के रोए रोए मे पुराने रोग की तरह समाई हुई है।[१]' मनोविश्लेषणात्मक जीवन दृष्टि के आधार पर सुजाता और उदय की प्रेम-कहानी का चित्रण करना ही इस उपन्याम का उद्देश्य जान पड़ता है, इसलिए यह मनोविश्लेपणात्मक उपन्यास है।

सर्वेक्षण—व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो के विवेचन से इस निष्कर्ष पर पहु चते हैं कि डा० देवराज के 'पथ की खोज' के अतिरिक्त अन्य लघु उपन्यास—'वाहर भीतर,' 'कुलटा', 'अनदेखे अनजान पुल' आदि वस्तु स्थापत्य के सुन्दर नमूने हैं। राजेन्द्र यादव के 'शह और मात' मे डायरी शैली का प्रयोग हुआ है और 'वाहर भीतर' आत्मकथात्मक शैली मे हैं। 'पथ की खोज' पूर्णत इतिवृत्तात्मक है क्योकि इसमे मनोवैज्ञानिक शिल्प का प्रयोग नही किया है। 'अन देखे अनजान पुल' मे चेतना प्रवाह प्रणाली और पूर्व दीप्ति प्रणालियो का प्रयोग हुआ है।

मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो के पात्रो के अचेतन मन मे अमुक्त कामवासनाए दवी पडी रहती है। 'पथ की खोज' के चन्द्रनाथ और साधना, 'कुलटा' के मेजर और मिसेज तेजपाल, और 'अनदेखे अनजान पुल' की निम्मी सभी अमुक्त कामवासनाओं से पीड़ित विकलाग और खण्डित व्यक्तित्व हैं। यह सभी पात्र 'मनोवैज्ञानिक केस' हैं।

इन सभी उपन्यासो मे लेखको ने 'मनोवैज्ञानिक केसो' के भीतरी परतो को उघाड कर, अचेतन को चेतन स्तर पर लाने का प्रयत्न किया है। 'पथ की खोज' के चन्द्रनाथ और साधना, काम प्रवृत्तियो का उदात्तीकरण करने मे सफल होते हैं, 'वाहर—भीतर' की भाभी वाहर (समाज, परिवार, सैंसर) भीतर (दमित कु ठाए, अमुक्त वासनाए) पर विजय पा लेती है और उसकी कामनाओ और इच्छाओ का दमन हो जाता है; 'कुलटा' की मिसेज तेजपाल अपनी दमित कामनाओ की सतुष्टि के लिए तगडी अलशेसियन कुतिया का सहारा लेती है; और 'अनदेखे' अनजान पुल' की निम्मी, अपनी हीनताग्रंथि का उदात्तीकरण कर आस्था को अपनाकर, भारत सरकार के एक वड़े पद को सभालती है।

इन उपन्यासो मे केवल व्यक्ति उभरता है, समाज नही। 'पथ की खोज' के चन्द्रनाथ और साधना 'वाहर भीतर' के राजन और सुमित्रा, 'कुलटा'

---

१. कृति : अगस्त १९६०, पृ० ५१।

की मिसेज तेजपाल और 'अनदेखे अनजान पुल' की निम्मी चारो ओर की भीड और समाज मे खो नही जाती है।

इस विवेच्यकाल मे 'पथ की खोज' के अतिरिक्त अन्य उपन्यास लघु उपन्यास हैं, अतएव व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो ने अधिकाश मे लघु उपन्यासो का शिल्प अपनाया है। लघु उपन्यासो की उपलब्धि इस विवेच्यकाल के व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो की विशेष उपलब्धि है। इन उपन्यासो मे उपन्यास-रस की उपलब्धि होती है किन्तु 'पतझर' तो मानो मनोविश्लेषण की पुस्तक है और उसमे औपन्यासिकता का अभाव है।



व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास

ऐतिहासिक उपन्यास मे व्यक्ति और समाज दोनों का चित्रण सम्भव है। जिन उपन्यासो मे सामाजिकता का आग्रह होता है, उनमे सामाजिक-मूल्यो की स्थापना होती है, किन्तु ऐतिहासिक उपन्यासकार व्यक्ति को अपनी जीवन दृष्टि का आधार मानकर भी अपने उपन्यासो की रचना करता है। समाज-परक ऐतिहासिक उपन्यासो मे नायक नायिका का व्यक्तित्व, युग के चित्रण और सामाजिक समस्या के उहापोह और सामाजिक मूल्यो की स्थापना मे, नगण्य होता है, किन्तु जिन उपन्यासो मे व्यक्तिचिन्तन, व्यक्ति चेतना और व्यक्तिमूल्यो की स्थापना होती है, उनमे व्यक्ति उभरता है, समाज नही। जिस तरह व्यक्तिपरक उपन्यास समाज की पृष्ठभूमि पर व्यक्ति चरित्र का उद्घाटन करते हैं, उसी तरह व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास भी समाज की पृष्ठभूमि पर ऐतिहासिक नायक के व्यक्तित्व की रक्षा कर, किसी विशेष व्यक्ति के द्वारा जीवन मूल्यो की स्थापना करते हैं। इस श्रेणी के उपन्यासो मे व्यक्तिवादी और व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति का सर्वथा अभाव है। इस श्रेणी के ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास के चरित्र नायको का चरित्रचित्रण ही उपन्यासो का प्रतिपाद्य रहा है, जिनमे इन चरित्र नायको के वैयक्तिक गुणो की प्रशसा ही मिलती है। व्यक्तिवादी चेतना का अभाव होने के कारण समाज के परिप्रेक्ष्य मे यहा व्यक्तिनायक उभरे हैं किन्तु इनका जीवन, सामाजिक की अपेक्षा, व्यक्ति के आदर्श और व्यक्तिमूल्यो की स्थापना करता है। वीर-पूजा, नायक पूजा, और व्यक्ति-आदर्शो की पूजा ही इन उपन्यासो का उद्देश्य रहा है।

वृदावनलाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यासो मे जहा सामाजिक-चेतना और सामाजिक मूल्यो की स्थापना हुई है, वहा इन्होने अपने उपन्यासो मे

इतिहास के विविध युगो के महान्–चरित्र–नायको–व्यक्तिनायको के चरित्र उद्घाटन द्वारा, समाज के परिपार्श्व मे व्यक्तिमूल्यो और व्यक्ति–आदर्शों की स्थापना का प्रयत्न किया है। इन उपन्यासो मे उपन्यासकार की व्यक्ति पूजा का स्वर स्पष्ट ध्वनित होता है। 'मृगनयनी' (१६५०), 'अहिल्या बाई' (१६५५), 'भुवनविक्रम' (१६५७), 'माधवजी सिंधिया' (१६५७), और 'महारानी दुर्गावती' (१६६४) वृंदावनलाल वर्मा के इस विवेच्यकाल के व्यक्तिपरक–ऐतिहासिक–उपन्यास हैं। इसके अतिरिक्त चतुरसेन शास्त्री के 'आलमगीर' आदि व्यक्तिपरक—ऐतिहासिक उपन्यास हैं किन्तु इसका स्थान नगण्य है। अतएव वृंदावनलाल वर्मा इस विवेच्यकाल के एक मात्र व्यक्ति-परक–ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं।

मृगनयनी (१६५०)

कथासार—ग्वालियर के पश्चिम दक्षिण मे राई नामक ग्राम मे निम्मी और उसका भाई अटल रहते थे। लाखी निम्मी की साथिन थी। निम्मी और लाखी के सौंदर्य और लक्ष्यवेध की चर्चा मालवा की राजधानी माण्डू, मेवाड की राजधानी चित्तौड और गुजरात की राजधानी अहमदाबाद तक पहुची। उस समय दिल्ली के तख्त पर गयासुद्दीन खिलजी बैठ चुका था। माण्डू के बादशाह बर्बरा और गयासुद्दीन ने निम्मी और लाखी को प्राप्त करने की योजनाए बनाई। राई गाव के पुजारी ने उनके सौंदर्य और लक्ष्य-वेध प्रशसा ग्वालियर के राजा मानसिंह के समक्ष की।

लाखी की मा मर गई इसलिए लाखी, निम्मी और अटल के पास रहने लगी। गयासुद्दीन खिलजी ने, नटो के सरदार को निम्मी और लाखी को लाने के लिए, योजना तैयार की। नटो और नटनियो ने निम्मी और लाखी को फुसलाना प्रारम्भ किया। एक दिन राजा मानसिह शिकार खेलने राई गाव पहुचे। निम्मी के सौंदर्य और शिकार मे लक्ष्यवेध से मुग्ध होकर विवाह करके उसे ग्वालियर ले गये।

अटल गूजर था और लाखी अहीर। गाववालो ने अटल और लाखी के विवाह का विरोध किया। पुजारी ने उनका विवाह नही कराया। वे नटो के दल के साथ नरवर के किले की तरफ आ गये। लाखी को नटो के षडयंत्र का पता लग गया, इसलिए उसने उनके षडयत्र को विफल कर उन्हे समाप्त कर दिया। महाराजा मानसिह अटल और लाखी को ले गए। ग्वालियर मे उनका विवाह हुआ।

निम्मी विवाह के पश्चात् मृगनयनी के नाम से प्रसिद्ध हुई। मृगनयनी के पहले राजा के आठ पत्निया थी जिनमे सुमनमोहिनी सबसे बडी थी। सुमनमोहिनी के सोतिया डाह को झेलते हुए, मृगनयनी राजा को कर्त्तव्यपथ की ओर अग्रसर होने के लिए प्रेरणा देती रही। मृगनयनी ने चित्रकला और संगीतकला का अध्ययन प्रारम्भ किया और मार्नसिह ने भी चित्रकला, सगीतकला, मूर्तिकला और भवन-निर्माणकला के विकास मे हाथ बटाया। नरवर के किले पर सिकन्दरलोदी का आक्रमण हुआ। मृगनयनी ने कला के साथ कर्त्तव्य की प्रेरणा भी राजा को दी। मृगनयनी के कहने से सुमनमोहिनी का पुत्र विक्रमसिह राज्याधिकारी हुआ।

वस्तु-विधान—इस उपन्यास मे मृगनयनी की कथा मुख्य है और मृगनयनी की कथा को आगे बढ़ाने का कार्य महाराजा मानसिह, लाखी, अटल, कला और सुमनमोहिनी की कथा ने किया। पूर्वार्द्ध मे उसके भाई अटल और भाई की प्रेमिका लाखी के साहचर्य से निम्मी-मृगनयनी की कथा विकसित हो सकी है। निम्मी की कथा के विकास मे मुख्य हाथ, अटल और लाखी की प्रेमकथा के साथ, राई मदिर के पुजारी का भी रहा है। पुजारी ने निम्मी की कथा को मार्नसिह की कथा से मिला दिया है। पोटा और नटो के दल ने, मुख्य कथा के विकास मे सहयोग न देकर, अटल और लाखी की प्रासगिक कथा का विकास किया है। कला की कथा ने मृगनयनी के व्यक्तित्व के कलात्मक पहलू को उभारा है और सुमन-मोहिनी ने उसके धैर्य की परीक्षा की। सुमनमोहिनी की कथा ने भी मृगनयनी की कथा को विकसित किया है। मार्नसिह की कथा का मृगनयनी की कथा से सीधा सम्बंध नही है किन्तु सेतुसम्बध जोडने का कार्य कला ने किया है। गुजरात के महमूद बर्धरा, दिल्ली के सुल्तान गयासुद्दीन और नसीरुद्दीन और सिकन्दर लोदी की कथाओ ने युग की पृष्ठभूमि का निर्माण किया है और उनका मृगनयनी की कथा से प्रत्यक्ष सम्बध नही है। वस्तुत सिकन्दर लोदी की कथा ने मृगनयनी के कर्त्तव्यशील पहलू को उभारा है, किन्तु महमूद बर्बरा के दैत्य व्यक्तित्व का वर्णन और नसीरुद्दीन के हरम की ग्यारह हजार सुन्दरियो के वर्णन का उपन्यास की मुख्य कथा के साथ सीधा सम्बध नही है। नसीरुद्दीन की कथा का उपन्यास की प्रासगिक कथाओ के साथ भी सम्बध नही है, इसलिए वह छठी अगुली की तरह व्यर्थ ही लटकती है। उपन्यासकार मृगनयनी के बारे मे सब कुछ कहने का मोह नही छोड सका है इसलिए प्राचीन इतिहास के पृष्ठो को क्रमश. खोलता चला गया है। उपन्यासकार ने

घटनाओ के विकास के पहले पूर्ण पृष्ठभूमि तैयार की है। निम्मो और मानसिंह के विवाह के पहले निम्मी के सौंदर्य और लक्ष्यभेद का सविस्तार वर्णन किया। लाखी और अटल की कथा ने मृगनयनी की कथा को निस्सन्देह आगे बढाया है किन्तु इस कथा को अनावश्यक विस्तार दिया है। लाखी और अटल की कथा स्वतत्र रूप मे एक उपन्यास का विषय बन सकती है। मृगनयनी के चरित्र का उद्घाटन ही उपन्यास का उद्देश्य है इसलिए एक ओर वे घटनाए हैं, जो उसके कलात्मक व्यक्तित्व को निखारती हैं और दूसरी ओर की घटनाए उसके कर्त्तव्यशील व्यक्तित्व को। उपन्यास मे मनोवैज्ञानिक उहापोह का अभाव है, किन्तु लेखक ने वस्तु अन्विति की रक्षा की है।

चरित्र-विधान—मृगनयनी उपन्यास की नायिका है और मानसिंह उपन्यास का नायक। मृगनयनी का चरित्र ही उपन्यास का मूलाधार है, इसलिये यह नायिका प्रधान उपन्यास है। अन्य पात्रो मे अटल, लाखी, सुमनमोहिनी, राजसिंह, कला, गयासुद्दीन, नसीरुद्दीन, महमूद बघेरा, सिकन्दर लोदी और पोटा आदि पात्र हैं। मृगनयनी राई गाव की गूजर-कन्या निम्मी है, जिसकी काया पुष्ट और बलिष्ट है। वह कहती है: जहा भी जाऊ इस प्यारी नदी की कल्लोलिनी धार को अपने पास रखू। उनमे से चादी की कडियो वाली लहरो को नाचता हुआ देखा जाय और फिर गाऊ—जाग परी मैं पिया के जगाये—लहरें चादी और मोतियो के हार पहने हुए इठलाती हुई नाचती रहेगी, बन्दनवार सदा हरे रहेगे, पत्तो की झिलमिलिया निरन्तर चादनी की भीगी हुई चमक और फूलो की महक से लदी रहेगी।[१] 'राई गाव आने पर महाराजा मानसिंह को अनुभव हुआ कि राख के ढेर मे चिनगारी कहा से आ गई? इस सडियल गाव मे ऐसा सौंदर्य?[२] विवाह के पश्चात् निम्मी मृगनयनी बन गई। मृगनयनी मानसिंह की प्रेरणा है: "मैं चाहती हू आपका शरीर, उत्साह, यश और सूरमापन दिन दूना दृढ और चमत्कार से भरा हुआ बना रहे।"[३] वह कला की साधना मे जुट जाती है किन्तु कर्त्तव्य को नही भूलती। युद्ध के समय वह मानसिंह से कहती है: "वीणा को बजाते बजाते काम पड़ने पर, यदि तुरन्त तलवार न उठा पाई, कोमल सेज पर सोते सोते, संकट आने

---

१ वृन्दावनलाल वर्मा, मृगनयनी, पृ० १७।

२. वही, पृ० १७८।

३. वही, पृ० २४८।

पर यदि तुरन्त ही उछलकर कमर न कसी, ध्रुवपद को गाते गाते शत्रु के सामने खडे होने पर यदि गरज कर चुनौती न दे पाई, जिन कानो मे यदि रणवाद्यो और कडखो की धुन न समा पाई, तो ऐसी वीणा, सेज और ध्रुवपद की तानो का काम ही क्या ?[1] मृगनयनी कला और कर्त्तव्य की साकार प्रतिमा है इसलिए "कला और कर्त्तव्य के बीच तौल" बनाए रखना चाहती है। वह मानती है कि इन कलाओ को अधिक समय देगे तो वे (सैनिक) अवसर पाते ही अपनी वासनाओ पर उतर आयेंगे।[2] प्रचण्ड भूकम्प के समय भी पति को धैर्य देते हुए कहा "भगवान की मुस्कान का ध्यान करिये। शिव के ताण्डव नृत्य का। धैर्य और शान्ति के साथ, मेरे प्राणनाथ, अन्त के अनन्त के सामने डट जाइये।"[3] कला और कर्त्तव्य के साथ वह सकल्प और भावना का समन्वय चाहती है : "सकल्प और भावना जीवन तलखी के दो पलडे हैं। जिसको अधिक भार दे दीजिये, वह नीचे चला जाएगा। सकल्प कर्त्तव्य है और भावना कला। दोनो मे समान समन्वय की आवश्यकता है। न तो अभी कला का अश पूरा हुआ है और न कर्त्तव्य का।"[4] अत मृगनयनी उपन्यास मे कला और कर्त्तव्य—भावना और सकल्प के समन्वय की प्रतिमा है।

अन्य पात्रो मे लाखी और अटल प्रेम और वीरता का; सुमनमोहिनी नारी की सौतिया डाह का; महाराजा मानसिह आदर्श और कलाप्रिय शासक का; बोवन रूढिवादी पुजारी का; राजसिह षड्यन्त्र, नसीरुद्दीन कामवासनाओ का और बघेरा दैत्य का प्रतीक बनकर उपन्यास मे उपस्थित है। मृगनयनी के अतिरिक्त लाखी, अटल, मानसिह का चरित्र मुख्य रूप से विकसित हुआ है। मृगनयनी को छोडकर सभी पात्र शक्ति और दुर्बलता के पुज हैं इसलिए छोटे से छोटे पात्र के व्यक्तित्व को लेखक उभार सका है। महाराजा मानसिह का व्यक्तित्व मृगनयनी के तेजस्वी व्यक्तित्व के समक्ष फीका पड गया है। मृगनयनी, लाखी, अटल, मानसिह, सुमनमोहिनी आदि प्राणवान पात्र दिये हैं। मृगनयनी, लाखी, अटल, और मानसिह विकसनशील पात्र हैं किन्तु बघेरा और नसीरुद्दीन आदि अविकसनशील या सपाट चरित्र हैं।

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा, मृगनयनी, पृ० ३४७।

२. वही, पृ० ४२२।

३. वही, पृ० ४४०।

४. वही, पृ० ४८७।

उद्देश्य—लेखक ने मृगनयनी और मानसिंह तोमर के ऐतिहासिक रूमानी कथानक पर उपन्यास लिखा है और वह लिखता है "मानसिंह तोमर १४८६ से १५१६ ई० तक ग्वालियर का राजा रहा। फरिस्ता के इतिहास लेखक ने मानसिंह को वीर और योग्य शासक बतलाया है। अंग्रेज-इतिहास-लेखकों ने मानसिंह के राज्यकाल को तोमर-शासन का स्वर्णयुग कहा है।[1] मानसिंह की कथा का ऐतिहासिक आधार होने के साथ लेखक का उद्देश्य मृगनयनी के चरित्र को अभिव्यक्त करना है। लेखक लिखता है "मानमन्दिर और गूजरी महल के सृजन की कल्पना को मृगनयनी से प्रेरणा मिली होगी। बैजू बावरा मानसिंह मृगनयनी के गायक थे। गूजरी-टोड़ी, मगल-गूजरी इत्यादि राग इसी मृगनयनी के नाम पर बने हैं। जिन सम्मानित पाठिका ने मृगनयनी के कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया था उन्होंने ठीक ही लिखा कि मृगनयनी शौर्य और कला, दोनो के लिए विख्यात थी।"[2] युग का चित्रण करना उपन्यासकार का उद्देश्य नही था और न मानसिंह की कथा कहना। प्रारम्भ से अन्त तक मृगनयनी के चरित्र का रहस्योद्घाटन करना ही उपन्यास का लक्ष्य है। निम्मी प्रकृति की क्रोड़ मे पली शक्ति और सौन्दर्य की प्रतिमा थी जो आगे जाकर कला और कर्त्तव्य की प्रतीक बन गई। कलात्मक व्यक्तित्व के विकास के लिए मृगनयनी ने कलाओ का अध्ययन प्रारम्भ किया और मानसिंह मे भी कलात्मक भावनाओ का स्फुटन किया। मानसिंह के शब्दो से उपन्यास का ध्येय स्पष्ट होता है। महाराजा मानसिंह कहते हैं : "सचमुच वह कला क्या जो कर्त्तव्य को लगडा करदे, और वह कर्त्तव्य क्या जो कला को अगभग हो जाने दे ?'[3] मृगनयनी कर्त्तव्य और कला के समन्वय की प्रतीक है और उसके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति ही उपन्यास का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिपरक-ऐतिहासिक-उपन्यास है। लेखक ने परिचय मे कहा है कि १९४९ के अन्त मे ग्वालियर की एक समानित पाठिका ने मृगनयनी और मानसिंह तोमर के ऐतिहासिक रूमानी कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया था।[4] उपन्यासकार ने युग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा : मृगनयनी, पृ० १।

२ वही, पृ० ३।

३. वही, पृ० ३४८।

४. वही, पृ० १।

कर उसे उपन्यास मे अभिव्यक्त किया है। मृगनयनी, मानसिंह, बघेरा, गयासुद्दीन, नसीरुद्दीन और सिकन्दर लोदी आदि ऐतिहासिक पात्र हैं। लेखक ने भी स्वीकार किया है कि उपन्यास मे आए सभी चरित्र-थोड़ो को छोड़कर ऐतिहासिक नही है। लाखी और अटल आदि पात्रो का व्यक्तित्व ऐतिहासिक नहीं है। लाखी और अटल की नटो मे सम्बन्धित कथा का आधार भी एक किम्वदन्ती है। बोधन ब्राह्मण और विजयजगम भी ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं हैं। लेखक ने युग की स्थिति का भी चित्रण किया है किन्तु मृगनयनी के अतिरिक्त सब पात्रो का व्यक्तित्व केवल मृगनयनी के व्यक्ति-चरित्र के उद्घाटन के लिए हुआ है। मृगनयनी के व्यक्ति चरित्र की अभिव्यक्ति के द्वारा लेखक व्यक्ति को केन्द्र मानकर जीवन-मूल्यो की स्थापना करता है। इस उपन्यास मे उस युग के समाज के स्थान पर केवल व्यक्ति उभरते हैं। अतः व्यक्ति-चरित्र और व्यक्ति चेतना का स्वर प्रमुख होने के कारण यह एक व्यक्तिपरक-ऐतिहासिक उपन्यास है।

अहिल्याबाई (१९२५)

कथासार—'अहिल्याबाई' मे अहिल्याबाई की जीवन-कथा लेखक ने अभिव्यक्त की है। लेखक के अनुसार उस समय चारो ओर गड़बड़ी मची हुई थी। शासन और व्यवस्था के नाम पर घोर अत्याचार हो रहे थे। प्रजाजन-साधारण गृहस्थ, किसान, मजदूर अत्यन्त हीन अवस्था मे सिसक रहे थे। उनका एक मात्र सहारा-धर्म-अन्धविश्वासो, भयत्रास और रूढ़ियों की जकड़ मे कसा जा रहा था। 'न्याय' मे न शक्ति रही थी न विश्वास। ऐसे काल की विकट परिस्थितियो मे अहिल्याबाई ने जो कुछ किया—बहुत किया। वह चिरस्मरणीय है।[1] पति की मृत्यु के पश्चात् अहिल्याबाई का दोहित्र नत्थू चल बसा। दामाद यशवन्तराव फणसे न रहे और पुत्री मुक्ताबाई सती हो गई। तुकोजीराव के पुत्र मल्हारराव पर स्नेह था किन्तु वह उच्छखलता करता रहा। जनहित के लिए अनेक कार्य किये, दान दिये, मन्दिर बनाए और हमेशा न्याय किया। अन्त मे वे इस ससार से विदा हो गई। उस समय चेहरे पर उनके दमक थी, मानो नर्मदा स्वय बुलाने आई हो। उन्होने अपने भीतर देखा जैसे सूर्यादय के समय की लालिमा क्षितिज पर छाई हो, मानो उस लालिमा मे से कोई मुस्कानो पर मुस्काने बरसा रहा हो, जैसे चारो ओर शख-झाझर बज रहे हो और उन मुस्कानो का जयकार के साथ स्वागत कर

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा : अहिल्याबाई, परिचय . पृ० ११

रहे हो, मानो वह कोमल रश्मियो पर खडी उन मुस्कानो पर फूल चढा रही हो ।"[1]

वस्तु-विधान अहिल्यावाई की कथा इस उपन्यास की प्रमुख कथा है। अहिल्यावाई जनकल्याण के लिए न्यायपूर्वक राजकार्य करती हैं किन्तु उसके कार्य मे बाधाए उसका पुत्रवत प्रिय मल्हारराव करता है। मल्हारराव की कथा इस उपन्यास की प्रासगिक कथा है। मल्हारराव, गनपतराव और आनन्दी, भोपत और सिन्दूरी को अपने दल मे सम्मिलित कर डाके डालता है। आनन्दी मे अनबन हो जाती है और अन्त मे उसके हाथो आनन्दी की हत्या हो जाती है। गनपतराव और आनन्दी, भोपत और सिन्दूरी की कथा भी मुख्य कथा—अहिल्यावाई की कथा को आगे बढाती है। अहिल्यावाई के चरित्र के उद्घाटन के लक्ष्य को लेकर कथाए आगे बढती हैं। यह मानना गलत है : इन सब चित्रो को प्रस्तुत करने वाली घटनाओ को किसी घटना या अन्तर्विशेष की श्रृखला क्रमबद्ध नही करती वरन् अहिल्यावाई के चरित्र-चित्रण के आश्रित होकर ये घटनाए पदार्पण करती हैं। ऐसी दशा मे घटना तथा कार्यकारण का क्रमबद्ध होने का प्रश्न ही नही उठता।"[2] उपन्यास की सभी घटनाए अहिल्यावाई के चरित्र को उद्घाटन कार्य करती है। घटनाओ के कार्यकारण की श्रृखलाबद्ध योजना नही है और उपन्यास मे यह कमी खटकती है। यह इतिवृत्तात्मक उपन्यास है इसलिए घटनाए इतिवृत्तात्मक रूप से आगे बढती हैं। जिन घटनाओ मे नाटकीयता का अभाव है वहा केवल घटनाओ का वर्णन मिलता है। अन्त के पृष्ठो मे लेखक अहिल्यावाई के जीवन का वर्णन करता चला जाता है।

चरित्र-विधान—यह एक नायिका-प्रधान उपन्यास है। इसमे विवेकशील, न्यायप्रिय, दानी, वीर और कर्त्तव्यनिष्ठा शासिका अहिल्यावाई की कथा है। अहिल्यावाई भारतीय नारी के आदर्शो का प्रतीक है। धार्मिकता, न्यायप्रियता के साथ-साथ वह ममत्व की मूर्ति है। वात्सल्य भावना के कारण मल्हारराव की उच्छृखलता को हमेशा क्षमा करती है। मल्हारराव कुत्सित और पतित व्यक्ति का प्रतीक है। मल्हारराव और अहिल्यावाई के अतिरिक्त सशक्त चरित्रो मे गणपतराव, आनन्दी और सिंदूरी का नाम लिया जा सकता है। लेखक ने भूमिका मे ही कहा है कि अहिल्यावाई देवी से बढकर मानव

---

१. वृदावनलाल वर्मा : अहिल्यावाई, पृ० १६० ।

२. डा० शशिभूषण सिंहल उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, पृ० २३।

थी। कौनसा देवता इतने कष्ट सहकर भी अपने देवत्व पर अटल रह सका होगा ? किस देवता ने अपने आसुओ मे से इतनी किरणें फैलाई होगी।[1] अहिल्याबाई की शक्तियो और दुर्बलताओ की अभिव्यक्ति अहिल्याबाई के व्यक्तित्व मे अभिव्यक्त हुई है।

अहिल्याबाई आदर्श की प्रतीक है। अहिल्याबाई ने एक स्वप्न देखा—चारो ओर आग लगी हुई है—बीच-बीच में पोखरो, जलाशयो मे पानी भरा है, परन्तु आग बुझाने के लिए उसे काम मे बहुत थोडे लोग ला रहे हैं, एक वह स्वय अथक परिश्रम कर रही है, मन्दिरो के घण्टे बज रहे हैं।[2] यह स्वप्न उसके जीवन का साकार चित्र प्रस्तुत कर देता है। नाना फडनवीस ने चन्द्रावती के दमन पर कहा "अभी तक सुनते आये थे कि अहिल्याबाई 'धर्म और दान मे ही लगी रहती है, परन्तु आज उनकी वीरता का भी पता लग गया।"[3] उपन्यास में अहिल्याबाई को धर्म और दान की देवी के रूप मे अभिव्यक्त किया है। अहिल्याबाई विवेकशील नारी के रूप मे कहती है कि श्रद्धा निष्टा जब विवेक और बुद्धि का साथ पा जाती हैं, तब चमत्कारपूर्ण हो जाती हैं और बिना इस सग के श्रद्धा का मूल्य ही कितना है? मल्हारराव, अहिल्याबाई की कमजोरी है किन्तु मल्हारराव को वह उपदेश देती है कि शत्रुओ से लडो, प्रजा का पालन करो और धर्म का विस्तार करो। विचार का स्मरण करने के लिए आचार बनाये गये हैं जैसे देवशास्त्राचार, देशाचार, कुलाचार और जात्याचार।[4] कला और कलाकार का वह आदर करती थी किन्तु मानती है कि कला का कर्त्तव्य मानव को ऊपर उठाने का है, गिराने का नही।[5] अत. अहिल्याबाई आदर्श की प्रतिमा के रूप मे अभिव्यक्त हुई है इसलिए घनीभूत आदर्श के फलस्वरूप वह प्राणवान पात्र नही बन सकी हैं। मल्हारराव के प्रति उसकी कमजोरी नें ही उपन्यास के पात्र के रूप मे उसको शक्ति दी है, अन्यथा वह आदर्श की पुतलिका मात्र है।

---

१. अहिल्याबाई . परिचय, पृ० ३।
२ वृन्दावनलाल वर्मा, अहिल्याबाई, पृ० १०।
३. वही, पृ० ७६।
४. वही, पृ० ११३।
५. वृन्दावनलाल वर्मा : अहिल्याबाई पृ० १३७।
६ वही, पृ० १८६।

उद्देश्य—अहिल्यावाई का चरित्रविधान ही, इस उपन्यास मे, उपन्यासकार का उद्देश्य है इसलिए अहिल्यावाई के आदर्श-विचारो और कार्यों की अभिव्यक्ति ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। जब चन्द्रावतो के दमन का समाचार पाकर पूना मे नाना फडनवीस ने कहा है कि अभी तक सुनते आये थे कि अहिल्यावाई धर्म और दान मे ही लगी रहती हैं, परन्तु आज उनकी वीरता का भी पता लग गया।[1] अहिल्यावाई के बारे मे उनके स्वय के विचार भी महत्वपूर्ण है। अहिल्यावाई श्रद्धा और निष्ठा की प्रतीक है। व्यक्तिगत आदर्शों के साथ-साथ उसने भारतीय एकता का स्वर ध्वनित किया: "सारे भारत की जनता मे एक द्वेष ही तो राजाओ और जनता मे है। ये एक दूसरे की निन्दा की आड़ मे एक दूसरे प्रदेश को बुरा वतलाते हैं। वह प्रदेश छोटा और बुरा है, हमारा प्रदेश वडा और अच्छा है, वे जगली हैं, हम श्रेष्ठ हैं। इस भेदभाव का विष हम सबको किसी दिन नरक मे धकेलेगा। मराठी जनता, बुन्देलखण्डी और राजस्थानी जनता सभी एक दूसरे की निन्दा करती सुनी गई है।[2] देश की एकता का स्वर उन्होने ध्वनित किया। अपने जीवन मे उन्होने उच्च विचारो के साथ देव, देश, कुल और जाति के सम्वन्ध मे विचारों का पालन किया और अनेकानेक वाधाओ के साथ सफलता पाई। व्यक्ति कठिनाइयो और वाधाओ के वावजूद जीवन मे आगे बढते जाय, यही इस उपन्यास का सन्देश है। अहिल्यावाई का मन डूबने उतराने लगा "मेरा पुत्र गया! दौहित्र, दामाद और पुत्री का अन्त!! मैं अब और क्या देखने के लिए वची हूँ? कोई आडे न आया! भजन पूजन सब असफल!!.... .... उन्हे स्पष्ट सूझा—जब जीवन मे कोई और आनन्द उपलब्ध न हो तब धर्माचरण और कर्त्तव्यपालन ही चित्त को शान्ति दे सकता है, तरह-तरह के भय मानव को घेरे हुए हैं, अन्ध-विश्वासो को भय ही जन्म देता है, मैं सब प्रकार के भयो से लडूगी।" अहिल्यावाई के इन शब्दो मे लेखक की सुलझी हुई जीवन-दृष्टि प्रकट होती है।

यह एक व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। अहिल्याबाई के ऐतिहासिक जीवन की खोजवीन करने के वाद यह उपन्यास लिखा गया है। लेखक ने कहा है: "ऐतिहासिक उपन्यास मे तत्कालीन वातावरण की अवतारणा लेखक के लिए अनिवार्य है। दूसरी कठिनाई है—आज और आने

---

१. वही, पृ० ७६।
२. वही, पृ० ११७–११८।

वाले कल के लिए भी तो उसमे कुछ हो। केवल ऐतिहासिक वर्णन या वर्णन-मात्र अभीष्ट नही है। केवल जीवन चरित्र की प्रणाली से कार्य बनता न दीखा तो मैंने उपन्यास लिखने की सोची।"[1] यह जीवन-चरित्रात्मक उपन्यास है इसलिए इतिहास और वर्णन के आधिक्य के कारण इसमे उपन्यास-रस न इतिहास-रस अधिक है। अहिल्याबाई के व्यक्तिमूल्यो की स्थापना ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है, इसलिए इसे व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे स्थान दिया गया है।

भुवन विक्रम (१९५७)

कथासार— भुवनविक्रम' मे उत्तर वैदिककाल की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थिति के आधार पर अयोध्या-जनपद के राजा रोमक के पुत्र भुवनविक्रम की कहानी है। रोमक का विरोध पुरोहित मेघ पणिश व्यापारी नील और उसकी पुत्री हिमानी और सामन्त दीर्घबाहु ने किया। नील के शोषण, स्वार्थपरता और कन्जूसी के कारण उसका दास शूद्र कपिजल भाग गया और नैमिषारण्य मे धौम्य मुनि के आश्रम मे दीक्षित हो गया। जनपद मे अकाल बढने लगा इसलिए आर्थिक असन्तोष बढता रहा। ममता और भुवन द्वारा दान देते समय हिमानी और दीर्घबाहु ने छद्मवेष मे विद्रोह की चिनगारी छोडनी चाही, इसलिए हिमानी की पीठ पर भुवन की चाबुक पडी। भुवनविक्रम की उच्छ्खृलता के कारण रोमक ने उसको धौम्य मुनि के आश्रम मे पहुँचा दिया। मिलेजुले षड्यन्त्र के कारण मेघ नील और दीर्घबाहु आदि के कारण जनपद समिति ने राजा को तब तक पद-च्युत किया जब तक जनपद फिर से सुखी न हो जाय। रोमक राज्यभवन छोड-कर साधारण भवन मे आया। नैमिषारण्य के पास गौरी और उसके परिवार के लोग अयोध्या छोडकर रह रहे थे। भुवनविक्रम का आकर्षण गौरी के प्रति बढा और गुरुकुल छोडने के बाद उससे विवाह की प्रतिज्ञा की। धौम्य ऋषि ने भुवन को अनुशासन मे लिया और उसने गौरी से मिलना छोड दिया। रोमक ने शूद्र ऋषि कपिजल की हत्या करनी चाही किन्तु भुवन ने रोमक के विवेक को जगाया। धौम्य ऋषि ने भुवन को कर्मशील राजयोगी घोषित किया। भुवनविक्रम शिक्षा समाप्त कर अयोध्या लौटा।

गौरी भी अनाथ हो गई थी। गौरी और कपिजल नील के यहा सेवक-सेविका बन गये। नील, हिमानी और मेघ ने हिमानी और भुवन के

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा अहिल्याबाई, पृ० २-३।

विवाह का षडयंत्र रचकर, भुवन की हत्या का आयोजन किया। विवाह-मण्डप मे गौरी और कपिंजल ने हत्या को असफल कर दिया। षडयंत्र का भण्डा भोड हुआ। गौरी और भुवन का विवाह सम्पन्न हुआ और जनपद-समिति ने रोमक को राज्य लौटा दिया।

वस्तु-विधान—इस उपन्यास की मुख्य कथा भुवन के जीवन से सम्बन्धित है। अन्य प्रासगिक कथाओ मे नील और हिमानी, मेघ, कपिंजल, गौरी और उसके परिवार और दीर्घबाहु की कथायें हैं। समस्त प्रासगिक कथायें अनेकानेक स्थानो पर भुवन की कथा के साथ मिलकर भुवन की कथा को आगे बढ़ाती हैं। सभी कथायें भुवनविक्रम के चरित्र का विकास करती हैं। लेखक ने युग का चित्रण भी किया है किन्तु भुवनविक्रम ही उसकी कथा का आधार रहा है। नील, हिमानी, मेघ और सामन्त दीर्घबाहु के विरोध द्वारा और रोमक, गौरी और धौम्य ऋषि आदि ने सहयोग द्वारा मुख्य कथा को आगे बढाया है। उद्देश्य की उपलब्धि के लिए समस्त कथायें गन्तव्य स्थान की ओर बढाती हैं इसलिए उपन्यास के वस्तु-विधान मे सगठन हैं। उपन्यास का वस्तु-सघटन इतिवृत्तात्मक है और उसमे मनोवैज्ञानिकता का सर्वथा अभाव है।

चरित्र-विधान—भुवन उपन्यास का नायक है। रोमक, हिमानी, गौरी, मेघ, कपिंजल और धौम्य ऋषि इसके महत्वपूर्ण पात्र हैं। पात्रो का रेखाचित्र भी लेखक ने शब्दो की रेखाओ से खीचा है। मेघ के बारे मे लेखक चित्र खीचता है "मेघ उतरती अवस्था का दीर्घकाय सावला पुरुष था। सिर पर जटाजूट, ठोडी के नीचे लहराने वाली खिचडी रग की दाढी, कमर मे सूती सफेद करधनी, गले मे रुद्राक्ष, पैरो मे खडाऊँ, शरीर पर ऊनी उत्तरीय आकृति से जान पडता था कि हठी, क्रोधी और हिंसक प्रकृति का है। आखें गढ्ढो मे ऐसी धंसी हुई कि गढाकर देखें तो लगे कि मोम के हृदय को देखकर पीठ के पार होकर ही दम लेगी।"[1] इस तरह कितने ही पात्रो को शब्दो की रेखाओ से लेखक ने स्पष्ट किया है। रोमक को आदर्श राजा; नील को स्वार्थी और षडयन्त्रकारी दुष्ट स्वामी, मेघ को षडयन्त्रकारी पुरोहित और दीर्घबाहु को स्वार्थी और मूर्ख सामन्त के रूप मे लेखक ने चित्रित किया है। भुवनविक्रम मे मानवीय शक्तिया और दुर्बलतायें अभिव्यक्त हुई हैं। गौरी उत्तरवैदिककाल की आदर्श नारी का प्रतिनिधित्व करती है। नील, मेघ,

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा . भुवनविक्रम, पृ० ६।

हिमानी और दीर्घवाहु को उपन्यासकार ने दुष्ट पात्रो और रोमक, भुवन गौरी ममत्व, कपिंजल और धौम्य ऋषि को आदर्श पात्रो के रूप मे चित्रित किया है। भुवनविक्रम एक विकसनशील पात्र है क्योकि उद्दण्ड भुवन से वह कर्मशील राजयोगी बन जाता है। रोमक, नील, हिमानी और धौम्य ऋषि सपाट चरित्र हैं इसलिए इनमें विकास की सम्भावनायें नही हैं। लेखक ने वर्णनात्मकता और नाटकीयता के द्वारा पात्रो को मुक्त रूप मे अभिव्यक्त किया है।

भुवन ही उपन्यास का केन्द्रविन्दु है। उपन्यास के पूर्वार्द्ध मे भुवन को क्रोधी किशोर के रूप मे प्रकट किया है किन्तु धीरे-धीरे उसके क्रोध का शमन होता है। धौम्य ऋषि के आश्रम मे भुवन का कायाकल्प हो जाता है। भुवन का सिद्धात है कि शरीर से निरोग और उदात्तवीर बनें।[1] धौम्य के एक प्रश्न के उत्तर मे भुवन मानता है कि लगातार शुभ कर्म करने से मानव पराक्रमी बनता है।[2] धौम्य ऋषि के आश्रम में ही उसने निश्चय कर लिया कि मन को सन्तुलित करने और दृढ रखने के बराबर और कोई हथियार नही।[3] अपने पिता के आश्रम मे पहुचने पर उसनें स्वीकार किया कि गुरुदेव ने उसे पशु से मनुष्य बनाने का मार्ग दिखलाया है।[4] कपिंजल के वध के प्रश्न को लेकर उसके व्यक्तित्व मे निखार आता है और गुरुदेव से कहता है : कपिंजल के वध की योजना अधर्म-मूलक है। कपिंजल के वध का समर्थन करते ही मेरी आत्मा टूटफूट कर विखर जायेगी। आपने मुझे जो कुछ सिखलाया है, वह सब धूल मे मिल जायेगा।[5] उसने अपने पिता का विरोध किया। उसके पिता ने कहा कि पुरुषार्थ दायें हाथ मे हो और विनय बायें हाथ मे, किन्तु उसे कहना पडा : "पिताजी, उस सिद्धात के साथ एक तत्व और मिला हुआ है, जो मुझे इस आश्रम मे आने पर मिला—पुरुषार्थ दायें हाथ मे हो। धर्म हृदय मे हो, तो विजय बायें हाथ मे रहती है।"[6] भुवन

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा : भुवनविक्रम, पृ० ११७।

२. वही, पृ० १४८।

३. वही, पृ. १४८।

४. वही, पृ० १७२।

५. वही, पृ० १७६।

६. वही, पृ० १७६।

धौम्य के शब्दो में 'कर्मशील राजयोगी'[1] है। भुवन पूर्ण रूप से आदर्श पात्र है किन्तु उसका पर्याप्त विकास हुआ है। भुवन का आदर्शवाद सपाट न होकर विकसनशील है। भुवन मे शक्ति और दुर्बलता का समन्वय है, इसलिए यह एक सप्राण पात्र है। भुवन के अन्त. की झाकी हम नही पा सके हैं।

उद्देश्य—लेखक ने परिचय मे स्पष्ट कहा है "वैदिककाल के एक अग पर लिखने की बहुत समय से इच्छा थी। उस काल की तरुण और सद्य ओजस्विता का स्पन्दन इतिहास और कथाओ मे स्थान-स्थान पर मिलता है। विकास का यह क्रम अनन्त है और मानव की यह ओजस्विता भी। किसी-किसी युग मे विकास-क्रम मे कुछ कड़िया सडीगली और निर्बल भी दिखाई पड़ती हैं।"[2] व्यक्ति की ओजस्विता और आदर्श की अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास मे हुई है। तत्कालीन समाज का चित्र भी लेखक ने खीचा है। लेखक मानता है कि तत्कालीन समाज का स्थिति-चित्रण इस उपन्यास मे करने की चेष्टा की गई है।"[3] उपन्यास मे वैदिक युग की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक स्थितियो का चित्रण हुआ है किन्तु समाज के परिपार्श्व मे व्यक्ति के आदर्शों की अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास का उद्देश्य जान पडता है। उपन्यासकार ने यह बताना चाहा है कि पुरुषार्थ और धर्म के सयोग से व्यक्ति को जीवन मे सफलता मिलती है। भुवनविक्रम के पास शौर्य और पुरुषार्थ था, किन्तु धौम्य ऋषि के आश्रम मे उसे धर्म और विवेक मिला, इसलिए वह सफल हो सका। धौम्य का कथन है "केवल इतना ही कहना है कि विवेक के साथ प्राचीन को जानो—पहचानो और समझो, वर्तमान को भलीभाति देखो—परखो और उसमे चलो और भूत तथा वर्तमान दोनो की सहायता से भविष्य को प्रबल बनाओ। भय और बाधाओ के सामने कभी न झुको। जीवन की लहरो पर दृढता के साथ आरूढ रहो। जो कुछ आश्रम मे सीखा है उसे पुरुषार्थ के साथ सत्य, शिव और सुन्दरम् की दृष्टि से कार्यान्वित करो।"[4] धौम्य, लेखक के विचारो का अधिवक्ता है और भुवन ने धौम्य के विचारो को अपने जीवन मे घटित कर, सफल जीवन की स्थापना की। भुवन की मान्यता है कि पुरुषार्थ के साथ एक तत्त्व और मिला

---

१. वही, पृ० १८५।
२. वृन्दावनलाल वर्मा, भूवनविक्रम परिचय।०१,, पृ
३ वही, पृ० ४।
४. वही, पृ० १६२।

और वह धर्म है। भुवन में पुरुषार्थ था किन्तु धर्म की उपलब्धि से जीवन को जीत सका है और यही उपन्यास का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसके मुख्य पात्रो पर इतिहास की हल्की छाया है। लेखक का कथन है कि डा० नारायणचन्द्र वद्योपाध्याय की पुस्तक मे रोमपाद नाम के अयोध्यानरेश के राज्यकाल मे भयानक अकाल पडने का वृत्तान्त मिला। अकाल का विस्तृत ब्यौरा वाल्मीकि रामायण मे है। रोमपाद को मैंने उपन्यास मे रोमक कर दिया है क्योंकि अयोध्यानरेशो की एक वशावली मे रोमपाद नाम नही आया है। रोमक आया है और यही नाम मुझे अच्छा लगा है। रोमक के पुत्र का नाम कुछ और था, परन्तु मैने उसके सुन्दर कल्याणकारी और पराक्रम के कारण उसका नाम वदल दिया है। उसी के नाम पर यह उपन्यास है।"[1] अत. लेखक ने केवल ऐतिहासिक कल्पना का आधार लेकर इस उपन्यास की रचना की है। वेदो और इतिहास की पुस्तको के आधार पर ऐतिहासिक वातावरण चित्रित किया है किन्तु उपन्यास का केन्द्रविन्दु, युग न होकर भुवनविक्रम है। भुवन उस युग के आदर्श-व्यक्ति का प्रतीक है। भुवनविक्रम धौम्य ऋषि के शब्दो को चरितार्थ करने वाला शील, शक्ति और सौंदर्य का पुञ्ज है। लेखक ने सामाजिक मूल्यो और सामाजिक चिन्तन के साथ व्यक्ति को केन्द्रविन्दु मान-कर व्यक्तिमूल्यो और व्यक्ति के आदर्शों की स्थापना की है इसलिए इसे व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे स्थान देना समीचीन जान पडता है।

माधवजी सिंधिया (१९५७)

कथासार—माधवजी सिंधिया जिस समय भारतीय राजनीति के रगमच पर उतरे। दिल्ली की दशा खराव थी। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् वादशाह केवल कठपुतले वन गये। शिहावुद्दीन का पिता मीरवख्शी गाजीउद्दीन मारा जा चुका था। वजीर सफदरगज की सिफारिश से अहमदशाह ने शिहावुद्दीन को मीरवख्शी वनाया। षडयन्त्र के फलस्वरूप सफदरगज के स्थान से निरत होकर अवध का नवाव वनाया गया। शिहा-वुद्दीन वजीर वन गया। शिहावुद्दीन ने अहमदशाह को मारकर आलमगीर द्वितीय को गद्दी पर बैठा दिया।

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा, भुवनविक्रम पृ० ३।

एक ईरानी लडकी गन्ना वेगम के विवाह के दो अभ्यार्थी थे—शुजा-उद्दोला और शिहाबुद्दीन । शुजाउद्दोला पिता की मृत्यु पर अवध का नवाब बन गया था। गन्ना वेगम भरतपुर के राजकुमार जवाहरसिंह को चाहती थी किन्तु उसका विवाह शिहाब से हुआ। उस समय अफगान बादशाह अहमद-शाह अब्दाली ने दिल्ली मे जनवध किया किन्तु शिहाब और बादशाह कुछ नही कर सके। शिहाब का विवाह मुगलानी वेगम का बेटा अन्ना वेगम से हो गया। अब्दाली के जाने के पश्चात शिहाब ने बादशाह की हत्या की और शाहजहा खानी को बादशाह बनाया।

अहमदशाह अब्दाली दूसरी बार दिल्ली की ओर आगे बढा। शिहाब ने दिल्ली छोडकर भरतपुर मे शरण ली। भरतपुर के जाट राज्य की स्थिति खराब थी। जाटराजा सूरजमल रूहेलो के एक युद्ध मे मारा गया। जवाहर-सिंह भी मार डाला गया। जवाहरसिंह के पश्चात् रतनसिंह गद्दी पर बैठा। किन्तु वह भी मारा गया। जाट–शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई।

इस अराजकता की स्थिति मे मराठो की स्थिति भी भिन्न नही थी। सतारा मे ताराबाई पेशवा के विरुद्ध षडयन्त्र मे रत थी। बालाजीराव पेशवा की कमजोरियां उन्हे समाप्त कर रही थी। बालाजीराव पेशवा का पुत्र माधवजी पेशवा मराठो की स्थिति दृढ करने मे लग गया। माधवराव पेशवा की मृत्यु पर उसका छोटा भाई नारायणराव पेशवा ने आसन ग्रहण किया। राघोवा ने नारायण की हत्या की। माधवजी सिंधिया के विरोध के कारण राघोवा को कूटनीति से अलग होना पडा। नानाफडनवीस और तुकोजी होल्कर पेशवा के द्वितीय सरक्षक बने। उस समय अहमदशाह अब्दाली के साथ युद्ध मे मराठे हार गये। उस समय मराठो की सेना का सेनापतित्व सदाशिवराज भाऊ ने किया। मराठो की पराजय के पश्चात् माधवजी सिंधिया देश को एकता के सूत्र मे बाधने मे जुट गये। उन्होने अग्रेजो के सरक्षण से निकालकर शाहआलम को बादशाह बनाया। दिल्ली की सचालक शक्ति पेशवा के हाथ मे और माधवजी पेशवा के प्रतिनिधि बन गये।

गन्ना वेगम विवाहित जीवन से दुखी होकर एक सिखवेश मे माधवजी के पास रही। तुकोजी ने विषपान कराकर माधवजी की हत्या की। गन्ना वेगम के रहस्य का पता माधवजी सिंधिया को लग गया था। मृत्यु के पहले दोनो स्नेह की डोर मे बध गए। शिहाबुद्दीन गन्ना वेगम को पुन. पकड़कर ले गए किन्तु उसने विषपान करके अपना शरीर छोड़ दिया।

वस्तु–विधान—उपन्यास मे लेखक ने मराठो की स्थिति का विश्लेपण किया है। मनमौजी राजा साहू के उपरान्त महाराष्ट्र की सत्ता पेशवा के हाथ मे चली गई। कथा का दूसरा पक्ष मराठो की उत्तरी भारत में गतिविधि से है। अहमदशाह अब्दाली की सूचना पाकर मराठी सेना सदाशिवदास भाऊ के सेनापतित्व मे उतरती है। मराठो का पतन होता है और पतन के बीच माधवजी सिंधिया का व्यक्तित्व उभरता है। माधव जी सम्पूर्ण देश मे एकता की स्थापना करता है। अत मराठो की फूट विश्रृंखलता और लडाई-भिडाई की कथा मे माधवजी सिंधिया की कथा मुख्य है। माधवजी सिंधिया के अतिरिक्त अन्य कथाए भी उपन्यास मे चलती हैं, जिसमे दिल्ली के पतनोन्मुख मुगल सम्राट की कथा है। बादशाह अहमदशाह दिल्ली के तख्त पर आसीन था। माधवजी सिंधिया बादशाह को दिल्ली के तख्त पर पुन. स्थापित करता है। तीसरी कहानी गन्ना बेगम के असफल प्रेम की है। भरतपुर के जाट राजकुमार के प्रति उसका आकर्पण होता है किन्तु विवाह कामुक शिहाबुद्दीन से हो जाता है। गुनीसिंह के छद्मवेप मे वह माधवजी सिंधिया के पास रहती है किन्तु अन्त मे उसका रहस्य खुल जाता है। शिहाब से बचने और माधवजी के प्रेम के लिए वह विषपान करती है। चौथी कथा भरतपुर के जाट राजा की है। गन्ना बेगम के प्रश्न पर राजा सूरजमल और ज्येष्ठ पुत्र जवाहरसिंह मे ठन जाती है। आपसी प्रतिद्वन्द्विता से जाट शक्ति तहस नहस हो जाती है। देश की राजनीतिक उथल–पुथल के बीच उपन्यास आगे बढता है इसलिए उपन्यास मे घटनाओ के अम्बार है।

इसके वस्तु–विधान के बारे मे एक समीक्षक का भ्रम है : 'घटनाएं एवं पात्र चलचित्र के समान एक एक कर आते हैं और अपना प्रभाव छोड कर चले जाते हैं। इसमें इतने विशाल क्षेत्र, उसमे रहने वाली जातियो, राज्य एव घटनाओ का समावेश किया गया है कि जिन्हे यदि विस्तार दिया जाता तो ग्रथ का कलेवर सहस्त्रो पृष्ठो का हो जाता। परन्तु वर्मा जी कुशल-कथाशिल्पी है। उनकी कथा दार्शनिक–विश्लेपणो और रम्य कल्पना के आवृतो मे उलझकर कही भी नही रुकती और ऋजु–विकास पथ छोडकर इधर उधर फैलती है। कथा के विकास के प्रारम्भ से ही पर्याप्त सयम से काम लिया है और कथा के सम्पूर्ण सूत्रो को कसकर नियत्रण मे रखा है। प्रत्येक घटना मूल उद्देश्य को आगे बढाकर आने वाली घटना के मार्ग प्रशस्त कर हट जाती है।[1]' उपन्यास की कई घटनाए अनावश्यक जान पडती हैं और अन्विति का

---

१ समालोचक मार्च १९५८, पृ० ५६।

ग्रभाव है। कई घटनाओं को इतिहास रूप में रखने के स्थान पर चेतना प्रवाह प्रणाली के उपयोग से कथासूत्र अधिक सशक्त हो सकता था। कथा मे इतिवृतात्मकता है इसलिए कथा मे शिथिलता के दर्शन होते हैं। वर्मा जी इतिवृनात्मक कथाकार हैं इसलिए कथा का विकास और सयोजन केवल वाहरी घटनाओ के जोडतोड के आधार पर हुआ है और कही भी मन स्थितियो के ताने बाने नही जुड़े हैं। अनगिनत घटनाए केवल पृष्ठभूमि के निर्माण हेतु उपन्यास के रगमच पर प्रस्तुत हुई हैं। कुछ सीमा तक इन विशृंखलित घटनाओ को जोडने का काम माधवजी सिंधिया और गन्ना वेगम ने किया है, किन्तु उपन्यास की वस्तु–अन्विति की रक्षा नही कर सके हैं।

चरित्र–विधान—इस उपन्यास में भारत की राजनीतिक पृष्ठभूमि पर माधवजी सिंधिया का चरित्र अभिव्यक्त हुआ है। लेखक ने परिचय मे स्वीकार किया है 'इतिहास के जिस चौखटे में माधवजी सिंधिया का मैं चित्रण करना चाहता था, वह विशाल और विस्तृत था अखिल भारतीय चित्रों की रूप रेखा, विभिन्न रगो का अनुपात और वितरण, ऐतिहासिक तथ्यो और कल्पना का घेल–मेल–ये समस्याएं सामने थी। परन्तु इन सब को चुनौती देने वाला था माधव जी का महान व्यक्तित्व, घोर ग्लानिवाले युग मे।[1]' माधवजी सिंधिया के ऐतिहासिक व्यक्तित्व को लेखक ने उभारा है। माधवजी सिंधिया के अतिरिक्त गन्ना वेगम और उम्दा वेगम भी इतिहास प्रसिद्ध हैं। इस उपन्यास का कथाक्षेत्र अत्यत विस्तृत है इसलिए पात्रो की संख्या भी अधिक है। माधवजी सिंधिया, गन्ना वेगम, उम्दा वेगम पेशवा, राघोवा, भाऊ, तारा वाई, नजीव, शिहाब, अहमदशाह अब्दाली, सूरजमल और जवाहरखा आदि के ऐतिहासिक व्यक्तित्व उभरे हैं। सभी पात्रो के बीच माधवजी सिंधिया और गन्ना वेगम के व्यक्तित्व मे उठान है। माधवजी सिंधिया भारतीय एकता और भारतीय आदर्शो का प्रतीक है। गन्ना सामन्त-युगीन पद-दलित नारी की प्रतीक है।

माधवजी सिंधिया आदर्श का जीता जागता प्रतीक है। मराठा शक्ति की एकता के लिए ताराबाई के समक्ष वह कहता है कि पेशवा इसी प्रकार के लोगो का सघ वना रहे हैं जो भारत भर मे स्वराज्य की स्थापना करेगे।[2]

---

१ वृन्दावनलाल वर्मा : माधवजी सिंधिया, पृ० ३।

२. वही, पृ० ४५।

माधवजी एक आदर्श सैनिक हैं। उसे अपने सैनिकों पर गर्व है। वह भाऊ से कहता है कि हमारे सैनिकों को मालूम है कि वे किस आदर्श और हित के लिए लड रहे हैं। उनमे स्वदेश प्रेम और उत्साह है।[1] वह अनुशासनहीनता और लूटपाट का विरोधी है।[2] गन्ना से प्रेम की अभिव्यक्ति करते समय भी आदर्श को वह भूला नही। माधवजी सिंधिया केवल आदर्श का पुतला है किन्तु गन्ना बेगम के सदर्भ मे उसके कोमल व्यक्तित्व की भी अभिव्यक्ति हुई है। मन. स्थितियो की अभिव्यक्ति और इतिवृतात्मकता के कारण अन्य पात्रो के साथ माधवजी सिंधिया भी प्राणवान पात्र नही हैं। इसमे औपन्यासिकता से अधिक ऐतिहासिकता है।

उद्देश्य—देश की खडित राजनीतिक पृष्ठभूमि पर माधवजी सिंधिया के व्यक्तित्व को उभारना ही लेखक के इस उपन्यास का उद्देश्य है। माधवजी सिंधिया एक स्थान पर कहते है 'मैंने एक आदर्श रख छोडा है। मैं भारत-भर की शक्तियो का एकीकरण करना चाहता हू, जिससे भारतीय सस्कृति की रक्षा हो जाय, उसका विकास हो और वह निरन्तर बढे। अहमदशाह सरीखे विदेशियो से जो यहा रक्तपात और भयकर उत्पात मचा चुके हैं और अग्रेज सरीखे परदेशियो से जो आगे चलकर हमको दाव सकते हैं, इस देश को बचाना चाहता हू।[3]' इस उद्देश्य की स्थापना हेतु माधवजी सिंधिया के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। माधवजी सिंधिया को एक महान जननायक के रूप मे लेखक ने दिखाया है। उपन्यास मे लेखक बताना चाहता है कि माधवजी सिंधिया का स्वप्न भारत को एक सूत्र मे बाधना था और यदि वे और जिन्दे रहे होते तो इसको सफल बनाते। माधवजी सिंधिया के जीवनचरित्र की अभिव्यक्ति ही उपन्यासकार का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। लेखक का कथन है - 'माधवजी सिंधिया का जीवन-चरित्र न लिखकर उपन्यास लिखने का सकल्प मैंने इस कारण किया कि बडी मात्रा मे कल्पना की गु जाइश मिल गई। परन्तु मैंने कल्पना को इतिहास मूलक रखा है।[4]' उपन्यास मे कल्पना और

---

१ वही पृ० २३८।

२ वही, पृ० ४३८।

३. वृन्दावनलाल वर्मा, माधवजी सिंधिया, पृ० ४३८।

४. वही, पृ० ८ (भूमिका).

इतिहास का मणिकाचन सम्भव हुआ है किन्तु इतिहास रस उपन्यास–रस से अधिक है। वर्माजी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासो मे सामाजिक मूल्यो की भी स्थापना की है किन्तु इस उपन्यास मे माधवजी सिंधिया को वीर, आदर्श जननायक के रूप मे प्रस्तुत किया है और उनके वैयक्तिक मूल्यो के प्रति निष्ठा प्रकट हुई है, इसलिए यह व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। लेखक ने कहा है 'केन्द्र से छुटकारा पाकर जो प्रदेश आत्मनिर्भर हुए उनमे हिन्दू और मुसलमानो की एकता बढी। केन्द्र मे उस एकता का काफी अभाव रहा। अठारहवी शताब्दी मे यह अभाव बढ गया। उत्तर–भारत के लगभग सभी खण्ड परदेशी जागीरदारो, जमीदारो के हाथ मे चले गये। ऐसी कठिन परिस्थिति मे माधवजी सरीखे नायक का ही काम था कि केन्द्र को प्रबल बनाये रखने के साथ ही उन्होने प्रदेशो को भी आत्मनिर्भर बने रहने मे सहयोग दिया और हिन्दू मुसलमानो मे एकता की भावना समृद्ध करने का प्रयत्न किया। साथ ही उन परदेशी जागीरदारो और जमीदारो को उखाडकर जनता के विकास का मार्ग विस्तृत किया।[1]' नायक पूजा का भाव होने और उसके द्वारा माधवजी सिंधिया के व्यक्तिमूल्यो की स्थापना के कारण, इस उपन्यास को व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे स्थान मिलना चाहिये।

महारानी दुर्गावती (१९६४)

कथासार—वृंदावनलाल वर्मा का अंतिम उपन्यास 'महारानी दुर्गावती' है। राजकुमारी दुर्गावती अपनी सखी दासी रामचेरी के साथ मनियागढ़ मे दुर्गादेवी के दर्शन हेतु आई। रामचेरी गौंड नरेश दलपतिशाह से मिली। रामचेरी ने गौंड नरेश दलपतिशाह के समक्ष दुर्गावती के सौंदर्य और लक्ष्यभेद की प्रशंसा की। रामचेरी अपना हृदय दलपतिशाह के दीवान मोहनदास को दे बैठी। रामचेरी ने लौटकर दलपतिशाह का चित्र दुर्गावती को भेंट किया। दुर्गावती ने अपना हृदय दलपतिशाह को दे दिया।

दुर्गावती के पिता कीर्तिसिंह को शेरशाह के आक्रमण का डर होता है इसलिए उसने दलपतिशाह के साथ मित्रता की योजना बनाई। पत्रो के आदान–प्रदान के पश्चात् दुर्गावती और कीर्तिसिंह शिकार के निमंत्रण के लिए गौंडवाना गए। दलपतिशाह और दुर्गावती ने विवाह मे बंधने की शपथ खाई। छुआछूत की भावना से सम्बंध टूटने का डर था किन्तु दुर्गावती ने

1. वृन्दावनलाल वर्मा, माधवजी सिंधिया, पृ० ४।

पत्र द्वारा इसका स्पष्टीकरण दलपतिशाह के समक्ष किया। अतिम शिकार मे दलपतिशाह ने दुर्गावती के प्राणो की रक्षा की। कीर्तिसिह ने उनके विवाह के लिए छुपी स्वीकृति दे दी।

आखेट हेतु दलपतिशाह कालिजर आए और वे कीर्तिसिह की छुपी अनुमति से उनकी अनुपस्थिति मे दुर्गावती को गौंड राज्य मे ले आए। रेतीसिह का राजा सुधर्मसिह भी वही था। सुधर्सिह ने उनका पीछा किया, किन्तु असफल रहा। दलपतिशाह और दुर्गावती का विवाह हुआ। दुर्गावती ने राज्यकार्य मे दिलचस्पी लेनी प्रारम्भ कर दी। सुधर्सिह के षडयत्र के फलस्वरूप कीर्तिसिह का देहान्त हो गया। पिता की मृत्यु पर दुर्गावती ने कर्त्तव्यपालन की शपथ ली। दलपतिशाह की मृत्यु हो गई। शोक के सागर से निकलकर अपने पुत्र वीरनारायण को गद्दी पर बिठाकर राज्यकार्य उसने अपने हाथ मे ले लिया। देवर चन्द्रसिह नाराज होकर चादा चला गया। अकबर की सेना ने गौंडवाने पर आक्रमण किया और दुर्गावती वीरतापूर्वक लडी और पकडे जाने के पहले कटार से आत्म हत्या करली।

वस्तु-विधान—इस उपन्यास की मुख्य कथा दुर्गावती से सम्बधित है और अन्य कथाओ मे कीर्तिसिह, दलपतिशाह, सुधर्सिह, रामचेरी, मोहनदास और गन्नू की कथाए इस मुख्य कथा को आगे बढ़ाने मे सहायक हुई है। दलपतिशाह की कथा दुर्गावती के प्रति प्रेम और तदुपरान्त विवाह होने के पश्चात् उसमे विलीन हो गई। कीर्तिसिह की कथा ने दुर्गावती और दलपति-शाह के मिलन मे योगदान दिया है। सुधर्सिह की कथा ने, उनकी प्रेमकथा का विरोध कर, मुख्य कथा को गति दी है। रामचेरी और मोहनदास की प्रेमकथा दुर्गावती और दलपतिशाह की प्रेमकथा के साथ समानान्तर रूप से आगे बढती गई है। गन्नू की कथा से दुर्गावती के चरित्र का विकास होता है। गन्नू की कथा उपन्यास के मध्य मे स्थान पाती है और वह दुर्गावती के मृत्यु-पर्यन्त चलती है। राजबहादुर, अकबर और आसफखा की कथाओ ने दुर्गावती की मुख्य कथा को ही आगे बढाया है। अत इस उपन्यास मे निरर्थक कथाओ का अभाव है किन्तु कीर्तिसिह और शेरशाह के बीच लडाई की कथा से दुर्गावती का विशेष सम्बध नही है। चन्द्रसिह के विरोध ने भी दुर्गावती की कथा का विकास किया है। उपन्यास की घटनाओ के चित्रण मे इतिवृत्ता-त्मकता है। उपन्यास के उत्तरार्द्ध से पूर्वार्द्ध अधिक रोचक है। उत्तरार्द्ध मे घटनाएं लगातार घटित होती चली जाती हैं। उत्तरार्द्ध मे असगत घटनाओं

की बाढ आ गई है जैसे कीर्तिसिंह, दलपतिशाह और दुर्गावती की मृत्यु आदि। उपन्यास की उत्तरार्द्ध की घटनाओ के बीच तर्कसंगत योजना नहीं है। अत. उपन्यास के पूर्वार्द्ध मे उपन्यास रस है और उत्तरार्द्ध मे इतिहास रस। निरर्थक घटनाओ के अभाव होते हुए भी यह उपन्यास वस्तु-अन्विति का सुन्दर उदाहरण नही है।

चरित्र-विधान—दुर्गावती इस उपन्यास की नायिका है और उपन्यास के अन्य पात्रों—कीर्तिसिंह, दलपतिशाह, सुधरसिंह, रामचेरी, मोहनदास और गनू, का चरित्र नायिका के चरित्र की अभिव्यक्ति के लिए हुआ है, इसलिए इसे नायिका प्रधान उपन्यास मानना चाहिये। कीर्तिसिंह वीरता और साहस के साथ राजनीति का भी प्रतीक है। दलपतिशाह आदर्शप्रेमी और आदर्श शासक का, सुधरसिंह खलनायक का, रामचेरी और मोहनदास मित्रता के; और गनू स्वामीभक्ति के प्रतीक के रूप मे अभिव्यक्त हुआ है। राजकुमारी दुर्गावती इस उपन्यास की शक्तिशाली स्त्री पात्र है। वह रामचेरी को कहती है: 'ऊट पटाग जीवन बिताने वाले राजा रानियो की कहानियां छुटपन से सुनती आई हू। ऐसे जीवन से राम बचावे। मैं तो जन्म भर बाधाओ, कठिनाईयो का सफलतापूर्वक सामना करती हुई आल्हाद मे मगन रहना चाहती हूं।[1]' वह एकता के लिए मानती है कि जातियो के उपजाति भेद समाप्त हो जाने चाहिये। वर्ण व्यवस्था ने देश को लाभ ही बहुत पहुँचाया है। यह बड़ी पुरानी है परन्तु उपभेद मिट जाने चाहियें। वस्तुत. दुर्गावती शक्ति और सुन्दरता कासमन्वय[3]' है। देश की एकता का समर्थन करती है।[4] विवाह के पहले दलपतिशाह को पत्र लिखती है उसमे उसका भारतीय-प्रेमिका का स्वरूप निखरता है। प्रेमिका होते हुए भी वह मर्यादिनी है। रामचेरी के शब्दों में वह "जगत भर की सुन्दरता सलोनेपन और साहस की बेजोड की अनोखी मूर्ति है।"[5] उसे अपने पिता के वचन, लज्जा और प्रतिष्ठा का ध्यान था इसलिए वह सुधरसिंह को बाहर न निकाल सकी। दुर्गावती आदर्श पत्नी भी है। वह पति को कहती है: "सूर्य की किरणो को समेट लू, तो उसका

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा : महारानी दुर्गावती · पृ० १३।
२. वही, पृ० २५।
३. वही, पृ० २७।
४ वही, पृ० ३३।
५. वही, पृ० ६४।

हार वनाकर आपके गले मे डाल दूं।" और जव दलपतिशाह पूछते हैं कि उसे किरणें कहा से प्राप्त होगी तो वह कहती है · "आपके नेत्रो के प्रकाश से, आपके हृदय की महानता से, आपकी भुजाओं के पुरुषार्थ से, आपके पूर्वजो के साहस और पराक्रम की कीर्ति से।"[१] दलपतिसिह को मानना पडा कि उसकी कोमल उगलियों मे वज्र की शक्ति और कठोरता, आखो में ऊषा की किरणो की मजुलता और होठो पर खिले कमल की मृदुल प्रेरणा है। वह पति को धर्म और कर्त्तव्य की प्रेरणा देती है : "जिस तलवार की आपने अभी-अभी उपमा दी थी, उसकी धार कभी मोथरी न पडने पावे। कर्त्तव्य-पालन मे आपकी सहायता करती रहे।"[२] पिता की मृत्यु पर दृढ़ता के साथ कर्त्तव्य-पालन की शपथ लेती है।[३] सचमुच दुर्गावती "धर्म और शूरवीरी की मूर्ति है।"[४] उपन्पास मे दुर्गावती आदर्श की जीती जागती प्रतिमा के रूप मे अभिव्यक्त हुई है किन्तु दुर्गावती और दलपतिशाह की प्रेम-कहानी ने दुर्गावती को सप्राण पात्र वना दिया है। दुर्गावती विकसनशील पात्र है किन्तु दलपतिशाह, कीर्तिसिह, आधारसिह, सुघरसिह, रामचेरी, चन्द्रसिह और गन्नू आदि पात्र अविकसनशील है।

उद्देश्य—'परिचय मे लेखक ने स्पष्ट किया है कि १६५६ मे जबलपुर की एक सभा ने महारानी दुर्गावती पर उपन्यास लिखने के लिए अनुरोध किया।[५] उपन्यासकार का लक्ष्य दुर्गावती के युग की स्थितियो का चित्रण करना नही रहा है। वह केवल दुर्गावती के व्यक्तित्व को उपन्यास के माध्यम से उभारना चाहता है। इतिहास के पृष्ठो मे दुर्गावती की कहानी छिपी हुई है, उसको औपन्यासिक वाना लेखक ने पहनाया है। दुर्गावती के आदर्श व्यक्तित्व मे धार्मिकता और नैतिकता थी। वह मानती है कि शूरवीर, न्याय और धर्म के मार्ग से कभी विचलित नही होते।[६] वह धर्मयुद्ध को मानती है। वह कहती है कि हमे अपने धर्म के लिए लडना है। युद्ध मे किसी प्रकार

---

१. वृन्दावनलाल वर्मा . महारानी दुर्गावती, पृ० १६४।

२ वही, पृ० १६१।

३. वही, पृ० २२३।

४. वही, पृ० २४८।

५. वही, पृ० १।

६. वही, पृ० २२६।

की कसर नही रह पायेगी। परिणाम—जय-पराजय भगवान के हाथ मे है।[1] अतः यह निश्चित है कि केवल दुर्गावती के भव्य व्यक्तित्व का चित्रण करना ही लेखक का उद्देश्य है।

यह एक व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यास है। उपन्यास लिखने के पहले लेखक को दुर्गावती के जीवन सम्बधी सामग्री इकठी करनी पडी। लेखक ने स्वीकार किया है कि दुर्गावती सम्बधी ऐतिहासिक सामग्री बिखरी पडी थी और कई विषयो पर भिन्न-भिन्न मत थे। एक विषय पर मत-भिन्नता नही रही है—वह है उनका शौर्य, पराक्रम, जनहित चिन्तन, कठिनाईयो के सामने सिर का न झुकना, सशक्त मनोबल।[2] ऐतिहासिक सामग्री लेखक को प्राप्त हुई, उसमे कल्पना का रग भी लेखक ने चढाया। अत इतिहास के परिपार्श्व मे दुर्गावती के वैयक्तिक चरित्र की विशेषताओ को ही अभिव्यक्त करना उपन्यासकार का लक्ष्य रहा है, इसलिए इमे व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो की श्रेणी मे स्थान दिया है।

सर्वेक्षण—वृदावनलाल वर्मा इस विवेच्यकाल के व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं और 'मृगनयनी,' 'अहिल्याबाई' 'भुवनविक्रम,' 'माधवजी' सिंधिया, और 'महारानी दुर्गावती' व्यक्तिपरक—ऐतिहासिक—उपन्यास। इन ऐतिहासिक उपन्यासो मे व्यक्तिपरक चेतना अभिव्यक्त हुई है। 'भुवनविक्रम' मे उत्तरवैदिककालीन युग का, 'मृगनयनी' मे चौदहवी पन्द्रहवी शताब्दी के तोमर शासन के स्वर्ण युग का; 'महारानी दुर्गावती' मे सोलहवी शताब्दी के भारत का, 'माधवजी सिंधिया' मे पतनोन्मुखी मुगलकालीन युग का और अहिल्याबाई मे अठारहवी शताब्दी के भारत का चित्र प्रस्तुत हुआ है, किन्तु इन उपन्यासो मे युग की पृष्ठभूमि पर व्यक्ति उभरते हैं। भुवनविक्रम, मृगनयनी, माधवजी सिंधिया और अहिल्याबाई अपने अपने युग मे उभरते है।

वृदावनलाल वर्मा के लेखन मे इतिवृत्तात्मकता है, इसलिए शिल्प के क्षेत्र मे नई उपलब्धि नही दे सके हैं। घटनाओ की लम्बी शृखला इनके उपन्यासो मे मिलती है और इन घटनाओ के बीच तर्क सगत योजना का अभाव स्पष्ट झलकता है। अन्य उपन्यासो की तुलना मे 'माधवजी सिंधिया' की कथाओ मे उलझाव है और इन घटनाओ का विकास सुसगत रूप मे लेखक नही कर सका है। ऐतिहासिकता के मोह के कारण अधिकाश उपन्यासो मे उपन्यास—रस मे अधिक इतिहास रस की उपलब्धि होती है।

---

१ वृन्दावनलाल वर्मा, महारानी दुर्गावती, पृ० २६५।
२. वही पृ० २।

यह सभी व्यक्ति-चरित्र के उपन्यास हैं। मृगनयनी कला और कर्त्तव्य की; अहिल्याबाई श्रद्धा, धर्म और विवेक की और दुर्गावती शक्ति और सुन्दरता की प्रतीक है। भुवनविक्रम कर्मशील राजयोगी के और माधवजी सिंधिया भारतीय एकता के प्रतीक रूप मे अभिव्यक्त हुए हैं। भारतीय-इतिहास के पृष्ठो की तीन महान् भारतीय-नारियो के आदर्श चरित्र की अभिव्यक्ति 'मृगनयनी' 'महारानी दुर्गावती' और 'अहिल्याबाई' मे हुई है। मृगनयनी और महारानी दुर्गावती शक्ति और सौंदर्य का प्रतिनिधित्व करती हैं और अहिल्याबाई शील का। इन उपन्यासो के मुख्य पात्रो मे मृगनयनी, महारानी दुर्गावती, अहिल्याबाई, और माधवजी सिंधिया ऐतिहासिक पात्र हैं किन्तु भुवनविक्रम उत्तरवैदिक काल की पृष्ठभूमि पर काल्पनिक पात्र हैं। सभी पात्र आदर्शवाद के प्रतीक हैं। मृगनयनी और भुवनविक्रम के अतिरिक्त अहिल्याबाई, माधवजी सिंधिया और महारानी दुर्गावती आदर्शवाद और इतिहास के साचे बनकर रह गये हैं। अत. 'मृगनयनी' और 'भुवनविक्रम' मे उपन्यास रस की उपलब्धि हो सकी है इसलिए ये उपन्यास व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण उपलब्धिया हैं।



परिशिष्ट (क)

सहयोगी उपन्यास

(१) ग्यारह सपनों का देश

कथासार—सहयोगी उपन्यास 'ग्यारह सपनो का देश' को धर्मवीर भारती, उदयशकर भट्ट, रांगेयराघव, अमृतलाल नागर, इलाचन्द्र जोशी, राजेन्द्र यादव, मुद्राराक्षस, प्रभाकर माचवे, लक्ष्मीचन्द जैन और कृष्णा सोवती ने एक एक अध्याय लिखकर पूरा किया और समापन अध्याय पुन' धर्मवीर भारती ने लिखा। शोमन मीनल के भैया हैं और भाभी कुन्तल। रोहित और गुप्ता शोमन भैया के मित्र हैं। इसकी कथा रोहित, मीनल, शोमन और कुन्तल के इर्दगिर्द घूमती है। आई० पी० एस० ट्रेनिग करके रोहित आया तो उसके मन मे देश के नवनिर्माण का सपना था। वे जीप मे आउटिंग में गये और वहां आग के चारो ओर अजीव लग रहा था। लगता था जैसे—"हजारो वर्ष पहले का और भूखे गुहावासी वर्बर मानव ने पत्थर रगडकर यह आग बनाई है और उसके चारो ओर पूर्वजो की छायायें नृत्य कर रही हैं।" उन्होने जगल मे बीमार हरीन्द्र को देखा। शोमन और मीनल से उसे जीवन की चेतना मिली। वह शोमन के यहा आ गया। रोहित के व्यग वाणो से हरीन्द्र भाग गया और उसके वाद मीनल ने भी हरीन्द्र की खोज में, घर छोड़ दिया। गुप्ता को हाथ दिखाने के प्रश्न को लेकर रोहित ने कुन्तल भाभी पर आरोप लगाया। शोमन मीनल की खोज मे चल पडे और उसकी अनुपस्थिति मे गुप्ता ने कुन्तल को आलिगन मे बद्ध किया। रोहित ने कुन्तल से क्षमा मागी। रोहित, कुख्यात डाकू चेतसिंह का मुकावला करने, चल दिया। हरीन्द्र जीवन खोजने घूमा। श्यामली नाम की एक लडकी के प्रति

उसका आकर्षण था, किन्तु वह हरीन्द्र वावा को पूजा के फूल चढाकर अगले दिन एक आवारा के साथ भाग गई। मीनल, एक प्रौढ अध्यापिका मिमेज वर्मा के साथ टिकी किन्तु वहा भी मिसेज वर्मा के साथ 'विपिन मीनल काण्ड' हुआ। मिसेज वर्मा के अल्पवयस्क पुत्र, विपिन के मन मे मीनल के प्रति आकर्षण था। मीनल और श्यामली वम्वई आ गये। मीनल मि० पाववाला के होटल मे 'रिसेप्सनिस्ट' वन गई। डाकू को मारकर रोहित जख्मी हुआ। मीनल को रोहित मिल गया और हरीन्द्र को श्यामली। मीनल रोहित से मिली और गर्भवती हो गई। कुन्तल को छोडकर शोभनदा भी आ गये किन्तु मीनल के आग्रह से उन्हे जाना पडा। अन्त मे मीनल ने महसूस किया : "मैंने कैसे-कैसे क्षण अकेले काटे और जड पत्थर वनकर गुजार ले गई—पर अव जाना चाहती हू अपने घर।"[1]

वस्तु—विधान— उपन्यास मे वस्तु-अन्विति का अभाव है क्योकि सभी लेखक कथा तन्तुओ को अपनी इच्छा से मोडते चले गये हैं। सहयोगी उपन्यास का लेखक अपने अध्याय को एक इकाई के रूप मे मानने को मजवूर हो जाता है इसलिए ऐसे उपन्यास का हर अध्याय नये-नये प्रारम्भ और विकास का हो जाता है। ग्यारह सपनो का देश का हर अध्याय अपने से अलग अध्याय है। रोहित, शोभनदा और कुन्तल, मीनल, हरीन्द्र और श्यामली की अलग-अलग कथायें चलती हैं। कथा डोलती जाती है। मीनल, रोहित गुप्ता और हरीन्द्र के वीच कथा हवामुर्ग की तरह घूमती है। उदयशकर भट्ट ने हरीन्द्र को लाकर कथा को नया मोड दिया। इलाचन्द्र जोशी ने जीवन की खोज पहाडो पर की। उपन्यास की कथा मे श्यामली की कथा जोड दी। प्रभाकर माचवे ने नारी समस्या को विकट करने के लिए मीनल को गर्भवती कर दिया। उपन्यास का मुख्य विषय यह नही था। आखिर सपनो का देश था। हर उपन्यासकार ने कथा को अपने ढग से मोडा। इस उपन्यास मे कथा का महत्व कम है, लेखको को अपना कर्त्तव्य ही निभाना था कि कुछ उपलव्ध-चरित्र-सूत्र कितने अध्यायो मे देखा और आका जा सकता है। इसलिए हर-कथा-लेखक कथा को अपनी दृष्टि से मोडने को स्वतन्त्र था। सभी उपन्यास-कार स्वतन्त्र रूप से वस्तु—विधान मे जुट गये इसलिए वस्तु विधान मे अन्विति नही रही। घटनाओ का विकास होता गया और लेखक उसकी तर्क-सगत योजना प्रस्तुत नही कर सके। हरीन्द्र और उसके पश्चात् श्यामली की

---

१. ग्यारह सपनो का देश, पृ० २३३।

कथा ने तो नये-नये मोड़ लिये और हरीन्द्र और श्यामली की कथा को मीनल की कथा से जोड़ा है। मीनल की कथा मुख्य है इसलिए हरीन्द्र और श्यामली की कथा व्यर्थ है। अतः वस्तु-विधान में अन्विति का अभाव है।

चरित्र-विधान—वस्तु-विधान के बारे मे जो बात लागू होती है, वही बात चरित्र-विधान और उपन्यास के उद्देश्य के विषय मे कही जा सकती है। मीनल, शोभन, कुन्तल और रोहित उपन्यास के मुख्य पात्र हैं और हरीन्द्र व श्यामली गौण पात्र। सभी लेखको ने इनके व्यक्तित्व को नया ही मोड दिया। " · 'ग्यारह सपनों का देश' मे किन्ही दो अध्यायो की मीनल एक नही है, शोभन और कुन्तल एक नही हैं। लगता है—'नाम' और 'रूप' ओढे सैकडो ऐयार घुस आये हैं।"[1] लेखको ने चरित्रो को समझा ही नही। प्रारम्भ मे रोहित उपन्यास का केन्द्र था किन्तु पहले अध्याय के पश्चात् उपन्यास का केन्द्रबिंदु 'मीनल' हो गई। हर लेखक ने पात्रो के व्यक्तित्व मे परिवर्तन किया। प्राय' हर लेखक का केन्द्र मीनल रही। 'वह कभी 'नदी के द्वीप' की रेखा समझी गई, कभी 'चरित्रहीन' की सावित्री और कभी जैनेन्द्र की मृणाल बुआ और इस तरह से आज के लेखको की रोमानी दृष्टि प्रमाणित करती रही।'[2] मीनल एक है किन्तु लेखको ने खीचातानी से उसको नये-नये रूप दिये। अन्तिम अध्याय की मीनल स्वय कहती है "मैं मीनल नही हू—वे बातें करते गये, करते गये और यह प्रभाव और भी गहरा होने लगा मुझ पर कि वे मुझसे नही अपने आप से बातें कर रहे है। मैं तो एक व्याज मात्र हू, और थोडी देर मे लगने लगा जैसे मैं हू ही नही, केवल वे हैं और हैं कि खुलते जा रहे हैं परत–दर–परत और उनकी अगुलिया हैं जो उन्ही के अन्तरतम मे पैठकर उनके मन की गाठ–दर–गाठ खोलती जा रही है।"[3] लेखको ने मीनल को माध्यम बनाकर अपने विचारो, भावनाओ और मन की गाठो को खोला है। शोभन शान्त विचारो, गुप्ता युग की विलासिता, मीनल जीवन्त वेदना, कुन्तल अतृप्त वेदना और रोहित जलती हुई आग के प्रतीक बनकर आये हैं। रोहित मे विकास की सम्भावनायें थी किन्तु कथा का मीनल के इर्दगिर्द चक्कर काटने से उसका विकास नहीं हो सका। "रागेयराघव ने मीनल को व्यक्तित्व

१. ग्यारह सपनो का देश, पृ. २४६।

२. वही, पृ० २५८।

३. वही, पृ. २२८।

दिया। रागेयराघव ने मीनल को आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र नारी बना दिया। इलाचन्द्र जोशी ने हरीत और श्यामली को लेकर मनोविश्लेषणात्मक शव परीक्षा की। लक्ष्मीचन्द जैन ने तो पात्रो को कठपुतली बना दिया। इस उपन्यास के पात्रो के सम्बन्ध मे धर्मवीर भारती की बात सत्य है कि "लेखको को पात्र मिले—रोहित, मीनल, शोभन, हरीन्द्र–कि उन्होंने बाजी बिछादी—खाने गिने और मोहरो की तरह उन्हे सजा दिया और फिर उसको ढाई घर चला, उसको दो घर, इसे बायें खिसकाया, उसे दायें धकेला और इसको यो मारा और उसको यो धमकाया और फिर यह शह और वह लीजिये मात। एक अच्छी खाशी शाम भी कट गई और वास्तविकता मे न सही तो कल्पना मे सही एक दुश्मन भी खेत रहा। कुछेक को यह मारकाट पसन्द नही। उनके लिए पात्रो का दूसरा उपयोग है। उन्हे शोभन, रोहित कोई पात्र हाथ लगा कि उन्होने हथौडी उठाई और पात्रो को खूटी की तरह गाढ दिया। उसके बाद अपनी धारणायें, विचार, राजनीति–शास्त्र-ज्ञान के सारे लबादे उतारे, आराम से खूटीवत पात्र पर टांग दिये और चैन की सास ली।"[१] सहयोगी उपन्यास की दुर्बलताओ के कारण पात्रो के व्यक्तित्व का विकास, निश्चित दिशाओ की ओर नही हुआ है, इसलिए उनके विकास की सम्भावनायें उपन्यास मे समाप्त हो गई है।

उद्देश्य—सभी लेखको ने अपनी दृष्टि से कथा का विकास किया। धर्मवीर भारती ने आदिम मानव की कल्पना की थी, किन्तु उदयशकर भट्ट की कथा भटक गई। देश के नवनिर्माण का सपना उपन्यास का उद्देश्य था क्योकि उपन्यास का केन्द्रबिन्दु रोहित था। जब वह ट्रेनिंग मे था तब उसने पाया कि देश के हर होने से नौजवान आए थे जिनके मन मे एक सपना था, एक उमग थी—देश के नये निर्माण मे अपने को अर्पित कर देने की।[२] इसके पश्चात् उपन्यास का केन्द्रबिन्दु मीनल हो गई। रागेयराघव ने दिखाया था कि आर्थिक रूप से स्वतन्त्र नारी ही मानवीय मूल्यो के लिए खडी हो सकती है। रागेयराघव ने आर्थिक रूप से स्वतन्त्र नारी को उपन्यास का केन्द्र बनाया किन्तु नारी का दूसरा रूप बाद के लेखको ने प्रकट किया। इलाचन्द्र जोशी ने हरीन्द्र और श्यामली को लेकर जीवन के प्रति मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि को प्रकट किया। राजेन्द्र यादव ने नारी को अलग ही दृष्टिकोण से देखा।

---

१. ग्यारह सपनो का देश, पृ. २८३-२८४।

२. वही, पृ. १४।

'आर्थिक दबाव, महगाई और सामाजिक रूढियो के शिकजो मे पिसती'[1] हुई मध्यवर्गीय कुण्ठाग्रस्त नारी का चित्रण किया। प्रभाकर माचवे ने नारी को नग्न यथार्थ की भूमि पर पटक दिया। आधुनिक युग के परिपार्श्व मे नारी को विभिन्न दृष्टिकोणो से देखने का प्रयास किया हैं। नारी अनुभूति की अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। मीनल कहती है "मैं नही चाहती कि तुम दोनों मुझे बच्चे की तरह समझो। मैं तन का, मन का, हर ज्वार झेलकर, पीकर—पत्नीत्व, मातृत्व सबको जीतकर, सबसे गुजरकर उन्मुक्त आकाश के नीचे चिरन्तन अकुण्ठित जिज्ञासा सी खडी होकर हर बात का उत्तर जानना चाहती हूं अब।"[2] अतः मीनल का—आधुनिक नारी का, जीवन की जटिलताओ के बीच, चरित्र-चित्रण करना ही इस उपन्यास का उद्देश्य है।

व्यक्ति और समाज के प्रश्न को हर उपन्यासकार ने पात्रो के माध्यम से अपने दृष्टिकोण को अभिव्यक्त किया है। आदिम अग्नि और अनिश्चिय की घाटियो मे एक दूसरे से असम्पृक्त—रोहित, शोभन, कुन्तल, मीनल और गुप्ता हैं। शोभन टैगोर की गीताजली मे मस्त है, मीनल अनिश्चय की घाटियो मे बह रही है; रोहित देश के निर्माण का सपना देख रहा है और कुन्तल गुप्ता को हाथ दिखा रही है। 'एक न मिली मृत्यु और पी की बैचेनी मे हरीन्द्र समझता था कि मनुष्यता मर गई। भारती ने आदिम अग्नि को जलाया था। उदयशंकर भट्ट ने उसी अग्नि की सामाजिक प्रक्रिया को प्रकट किया था।"[3] रागेयराघव के शोभनदा सोचते हैं: "उत्तरदायित्व राष्ट्र का सम्बल है और किसी भी प्रकार की नकारात्मकता मूलत, उस जड़वाद से जन्म लेती है, जो व्यक्तित्व को सीमित कर लेता है, अपने को विस्तार देना नही चाहता।"[4] रांगेयराघव ने उपन्यास को सामाजिक भावभूमि पर लाकर पटक दिया। मीना कहती है: "शोभन भैया! तुम इतनी सी बात नही सोच सकते कि धर्म और सत्य, रूप और दर्शन का जन्म व्यक्ति मे है, भले ही

---

१. ग्यारह सपनों का देश, पृ. २४६।

२. वही, पृ. २६२।

३. वही, पृ. २६३।

४. वही, पृ. ४६।

५. वही, पृ. ४६।

वह समाज का सापेक्ष हो।"[1] रागेयराघव का रोहित कहता है : "निर्माण किसका ? कौन चाहता है निर्माण करना ? निर्माण उस देश का जिसकी संस्कृति की नीव रिश्वत पर रखी है ? योग, राग, पूजा-पाठ जिनका आडंबर है, जहां भगवान को भी रिश्वतखोर बना दिया गया है ?"[2] अमृतलाल नागर की मीनल मे पर्याप्त सामाजिकता और आदर्श का आग्रह है। वह शोभनदा को पत्र मे लिखती है : "वे मानवता के सिद्धात मे, दीन-दुखी की सेवा मे, विश्वास नही रखती। उन्हे व्यक्तिगत सुख, वैभव और दुनियादारी की चाह है। उन्हे आधुनिक भद्र समाज का चमत्कार प्यारा लगता है। ·· ···· जो हो परन्तु जो मार्ग आपने मुझे दिखाया, मैं उस पर ही चलती रहूगी। आप तो अपने हिस्से की सेवा कर चुके, राष्ट्रीय आन्दोलनो मे भाग लिया, अपने मित्रो को, नई पीढी को आपने देश-सेवा और मानव-पूजा के लिए बडी प्रेरणा दी।"[3] मीनल ही नही शोभनदा भी पत्नी को सामाजिकता का उपदेश देते हैं : "व्यक्ति समाज से विद्रोह कर सकता है, पर ऐसा करने का अधिकार केवल उसी व्यक्ति को है जो अपना ही विराट रूप मानकर उसकी पूजा-सेवा करता है। तुम्हे विद्रोह करने का कोई हक नही है, क्योकि तुम अभी नासमझ हो। ······ यो मैं जातिवाद या कुलवाद का हामी नही, पर सदियो के व्यवहार से उसमे जो शक्ति उत्पन्न हुई है उसे अवश्य मानता हू। तुम्हें यह नही भूलना चाहिए कि तुम ब्राह्मण-कुल की कुलवधु हो।"[4] अमृतलाल नागर के अध्याय मे भी सामाजिकता की चेतना है।

इलाचन्द्र जोशी ने सामाजिक चेतना से अलग वैयक्तिकता को आधार मानकर मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि प्रदान की है। राजेन्द्र यादव ने मध्यवर्गीय नारी की कुण्ठा को अभिव्यक्ति दी है। यह सामाजिक रूढियो के विरुद्ध नारी का विद्रोह है। 'मीनल विपिन काण्ड' मे यादव की व्यक्तिपरक चेतना अभिव्यक्त हुई है क्योकि समाजमूल्यो के स्थान पर, व्यक्तिमूल्यो और व्यक्तिचेतना को अधिक महत्व दिखाया है। मुद्राराक्षस की व्यक्तिपरक चेतना मीनल मे अभिव्यक्त हुई है। मीनल विपिन को कहती है "काश, तुम बच्चे नहीं, मर्द होते,

---

१. ग्यारह सपनों का देश, पृ ५६।

२. वही, पृ० ४६।

३ वही, पृ ७२-७३।

४. वही, पृ ७५।

और क्षोभ का यह आघात अपने पर नही, अनविधी देह पर करते ?"[१] गुप्ता और कुन्तल का आलिंगनबद्ध होना वैयक्तिक-चेतना का प्रतीक है।

प्रभाकर माचवे के 'मा फलेषु कदाच न' मे मीनल को गर्भवती कहकर समस्या को सामाजिक बनाने का प्रयत्न किया है। "एक कुमारी का यो माता बनना हिन्दू-समाज के सामने चुनौती है।"[२] मि० पाववाला मानता है कि दुनिया की सस्कृति खतरे मे है और व्यक्ति-स्वतन्त्रता ही अन्तिम मूल्य है।[3] मीनल को लगा कि उसे चारो ओर से समाज नामक एक निराकार दैत्य की लपलपाती आदिम अग्नि की जिह्वायें नजर आने लगी। सब मानो उसकी ओर ऊँगली उठा–उठाकर जो धीरे-धीरे मालो की फाल मे परिणत हो रही थी—चीख रहे थे . तू चरित्र-हीन है! तेरा चरित्र भ्रष्ट है!! तेरा चरित्र अब नही रहा!!![४] प्रभाकर माचवे ने भी उपन्यास को सामाजिक भूमि पर स्थापित किया।

कृष्णा सोबती और धर्मवीर भारती के क्रमश दो अध्यायो दो राहे - दो बाहे' और 'आदिम अग्नि' उगता सूरज और दीपशिखा मे उपन्यास, सामाजिक धरातल को छोडकर, व्यक्ति-चेतना के धरातल पर है। यहा मीनल की मन'स्थितियो की अभिव्यक्ति है, सामाजिक मूल्यो की स्थापना के प्रयत्न नही हुए हैं।

अत' हम देखते हैं कि व्यक्ति और समाज को लेकर डूबता उतराता यह उपन्यास आगे विकास की दिशाओ की ओर प्रयत्न साध्य होकर आगे बढा है, इसलिए प्रस्तुत प्रबन्ध के किसी भी वर्गीकरण के भीतर इसको स्थान देना कठिन जान पडता है। धर्मवीर भारती ने देश की पृष्ठ भूमि पर कुठित व्यक्तियो को रखा, इसलिए व्यक्तिसापेक्ष उपन्यास था, किन्तु कही इसको सामाजिक रग मिले हैं, तो कही मनोविश्लेपणात्मक, कही व्यक्तियो को केन्द्र बनाया है तो कही समाज को, कही पात्रो को व्यक्ति–रूप मे रखा है तो कही उनका सामाजिक–व्यक्तित्व। असफल प्रयोग होते हुए भी इसे अभिनव प्रयोग मानना पडेगा।

---

१. ग्यारह सपनो का देश, पृ १४१।

२ वही, पृ १७६।

३. वही, पृ १८०।

४ वही, पृ १८२।

एक इंच मुस्कान

कथासार—लेखक दम्पत्ति राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी ने उपन्यास एक इंच मुस्कान की रचना बीस अध्यायों मे पूरी की है। इसमे अमर, अमला और रजना के इर्दगिर्द कहानी घूमती है। कन्याकुमारी के एक होटल मे रहते, अमर को पुरानी स्मृतिया कोंधती रही। उसने अपने को नौकरी में ऐसा फंसा लिया है कि उस सबको याद करने का अवकाश ही नहीं मिला। अगर भूले भटके ख्याल आया भी तो इस तरह जैसे वह सब उसका नही, किसी दूसरे का अतीत है। निश्चय ही वह भोगने वाला और जीने वाला अमर दूसरा था। अमला की मृत्यु हो गई और रजना उसे छोडकर चली गई। अमला धनी मा-बाप की दुलारी बेटी और पति द्वारा परित्यक्ता थी। अमला की कैलाश से मित्रता थी,किन्तु कैलाश ने विवाह कर लिया था। लेखक अमर और अमला का पत्र-व्यवहार द्वारा परिचय था। अमला ने उसे समझाया कि अपनी अद्भुत प्रतिमा और कला को चरम-विकास पर ले जाना है तो वह विवाह के चक्कर मे न पड़े। अमला ने उसे स्कालरशिप देना स्वीकार किया। अमर ने रजना से स्पष्ट कह दिया कि वह शादी के बन्धन में नही बंधेगा। वह उपन्यास की रचना मे लग गया। उपन्यास की समाप्ति पर वह तेज बुखार मे तप रहा था। मन्दा भाभी, सेवा के लिए रजना को लेकर आ गई। रजना और अमर शादी के बन्धन मे बंध गये। दाम्पत्य जीवन सुखी साबित नही हुआ। उनके बीच कटुता और मनमुटाव का वातावरण था। अचानक अमला की उपस्थिति ने स्थिति को और अधिक असह्य बना दिया। तीनो दुखी हो गए-रजना विवाह करके, अमला पुरुष के अभाव में और अमर दोनो नारियो के बीच। अमर को निश्चय नहीं हुआ कि दो नारियो के तटो पर कहा उसका आसरा है ? रजना चली जाती है और अमर व्यथा की गहराइयो मे डूब जाता है। रजना मित्रों के प्रयत्न से पुन अमर के पास आती है किन्तु कटुता का अन्त नही। अन्त मे अमर नौकरी करने कन्याकुमारी के निकट आ जाता है। वहाँ उसे अमला की मृत्यु का समाचार मिला।

वस्तु-विधान—सहयोगी-उपन्यास के अभावो से इस उपन्यास का वस्तु-विधान भी बच नही सका है। मन्नू भण्डारी को इस बात की आशका पहले ही थी। उसने यादव से कहा ‘कहानी पहले से ही तय होनी चाहिये-सारे उपन्यास का प्लैंनिग होना चाहिये-यह नही कि कुछ भी शुरु कर दिया जाय और फिर कथानक के साथ मनमानी करते रहे जब जहा मर्जी आया

मोड दिया, घसीट दिया।[1]' वस्तु–विवान मे मनमानी हुई क्योकि राजेन्द्र यादव का केन्द्र विन्दु अमर था और मन्नू की अमला। अमर और अमला को केन्द्र मानकर कहानी हिचकोले खाती रही। राजेन्द्र यादव ने अमला की उपेक्षा की और मन्नू भण्डारी ने अमर की। राजेन्द्र ने पहला अध्याय लिखकर इसे लेखक अमर के जीवन की ट्रेजडी बना दिया। गठन के वारे मे लेखिका स्वय स्वीकार करती है . जहा तक कथानक की अन्विति, गठन और प्रवाह का प्रश्न है वहा भी शिथिलता का दोष स्वीकार करने मे मुझे सकोच नही है। हा, इतना अवश्य कहूगी, इसमे दोष हमारा नही, ऐसे प्रयोगो से इससे अधिक की आशा रखना ही व्यर्थ है। हर अध्याय एक उपन्यास की क्रमबद्ध कडी कम और स्वतत्र कहानी का प्रारम्भ अधिक लगता है।[2]' निस्सदेह उपन्यास मे गठन या अन्विति का अभाव है। उपन्यास का क्रमबद्ध और वास्तविक विकास प्रस्तुत नही हुआ है; घटनाओ और स्थितियो की तर्क सगत योजना नही है। यह लेखक अमर के जीवन की ट्रेजडी है। कैलाश उपन्यास के हाथ की लटकी हुई छठी अगुली है,क्योकि उसकी कथा से मुख्य कथा का कोई सम्बध नही है। उपन्यास मे 'फलैश बैक' पद्धति का अभाव होता तो उपन्यास की विकास की स्थितियो का सम्भालना मुश्किल हो जाता है।

चरित्र–विधान—अमर, अमला और रजन के चरित्र और मन.स्थितियो को अभिव्यक्त करती हुई कहानी आगे बढती है। राजेन्द्र यादव ने अमर को व्यक्तित्व प्रदान किया और मन्नू भण्डारी ने नारी पात्रो को। लेखक अपने पूर्वाग्रहो से मुक्त नही है। इसमे पात्रो की मानसिक स्थितियो का चित्रण हुआ है। यह भ्रान्त धारणा है 'स्वस्थ पढा लिखा व्यक्ति जो जीवन मे कुछ करना चाहता है, ससार मे अपने अधिकारो को लडकर लेना चाहता है। जो आज की प्रचलित शब्दावली मे फ्रास्ट्रेटड नही है, इस उपन्यास के नायक अमर के साथ मानसिक तादात्म्य कभी न स्थापित कर सकेगा। उसे ऐसा कभी न लगेगा कि उसकी अपनी कथा है।[3]' अमर लेखक है और इस लेखक के जीवन की ट्रेजडी की कथा के साथ हम पूर्णतः तादात्म्य स्थापित कर सकते हैं। अमर में आज के नवयुवको की मानसिक उलझनें हैं। अमला के व्यक्तित्व को भी उपन्यास मे निखार मिला है। उपन्यास मे उसका व्यक्तित्व

---

१. **मन्नू भण्डारी : ज्ञानोदय, सितम्बर १९६२, पृ ३७।**
२. वही, पृ ४३।
३. **माध्यम वर्ष १ : अंक ७, पृ ९१।**

प्राणवान है। अमला के व्यक्तित्व मे स्मानियत' है। रजना समर्पण भी करती है और विद्रोह भी। अमला, रंजना और अमर के चरित्र पूर्ण रूप से विकसित हुए है किन्तु अमला का चरित्र सपाट है और रजना और अमर के चरित्र विकसनशील हैं क्योकि विभिन्न परिस्थितियो मे विकसित होते रहते हैं। टण्डन आदर्श मित्र के प्रतीक रूप मे उपस्थित हुआ है। इतना होने पर भी पात्र लेखक-दम्पत्ति के व्यक्तित्व से मुक्ति नहीं पा सके हैं। अमर का निर्माण यादव ने किया और रंजना का मन्नू ने, किन्तु अमला अविकसनशील होते हुए भी स्वतत्र व्यक्तित्व लेकर आई। मन्नू-भण्डारी मानती है : 'उपन्यास मे जो अमला आई,वह मेरी कल्पना की अमला से न चाहते हुए भी भिन्न हो उठी है। विशिष्ट वर्ग मे पली बुद्धिवादिनी, अहवादिनी अमला जब सबको ही झुठलाती, अस्वीकारती और ठुकराती चली गई तो भला मेरे बस मे कब आती। ......अमला को मेरी लेखनी ने नही चलाया है, वरन् मेरी लेखनी को अमला ने चलाया है।[1]' अतः लेखनी की सवेदना अमला को सबसे अधिक मिली है इसलिए उसके व्यक्तित्व और मन स्थिति को कुशल रूप से अभिव्यक्त कर सकी है।

उद्देश्य—अमर, अमला और रजना मे मन्नू भण्डारी अमला को उपन्यास का केन्द्र विन्दु बनाना चाहती थी किन्तु राजेन्द्र यादव न अमर को बना दिया इसलिए लेखक ने अमर के जीवन की ट्रेजडी इसे बना दिया है। साधारण व्यक्ति और लेखक की स्थिति मे एक अन्तर होता है किन्तु अमर दाम्पत्यग्रह स्थिति मे फस गया और उसकी विकास की सम्भावनाए रुक गई। अमला ने उसे बता दिया . 'तुम्हे अपनी प्रतिमा के दुरुपयोग का क्या हक है ? तुम्हारा लेखक साहित्य की एक उपलब्धि है। तुम्हारा तो एक मात्र उद्देश्य होना चाहिये लिखो ...... लिखो .... लिखो ' मैं यही सोच रही थी, कि अब तुम शादी कर लोगे ..... फिर तुम्हारा परिवार होगा .... वच्चे होंगे ' ' ' ... जिम्मेदारिया होगी ....सब होगा और कला से दूर होते जाओगे, हटते जाओगे। शायद हर बाधा और हर मुसीबत के समय सोचोगे कि इसके समाप्त होते ही तुम अपनी कला-साधन मे लगोगे-लेकिन जिम्मेदारियो और बाधाओ का जंजाल क्या इतनी आसानी से समाप्त होता है ' ' नहीं अमर, मुझे लगता है, कलाकार के लिए ये जिम्मेदारिया घातक हैं,-वह मुक्त प्राणी है।[2]' अमला के इन शब्दो में उपन्यास का ध्येय प्रकट होता है

१. मन्नू भण्डारी . ज्ञानोदय सितम्बर १९६२।

२. राजेन्द्र यादव : एक इन्च मुस्कान, ज्ञानोदय, मार्च १९६२, पृ. १०३-१०४।

कि लेखक, लेखक होने के नाते, व्यक्ति के रूप मे भी, परिवार और समाज से प्रतिबद्ध नही है।

लेखक की प्रतिबद्धता के प्रश्न को उपन्यास मे उठाया है इसलिए यह निश्चित है कि एक सीमा तक यह भी व्यक्ति और समाज के प्रश्न से अछूता नही है। उपन्यास से स्पष्ट ध्वनित होता है कि जहा तक लेखक के लेखक का प्रश्न है, उसे परिवार और समाज के प्रति प्रतिबद्ध करके हम उसे कुठित कर देते हैं। रजना ने लेखक अमर को, परिवार और अपने प्रति, प्रतिबद्ध रखना चाहा, किंतु अमर न परिवार के प्रति सच्चा रहा और न लेखन के प्रति। परिवार, पत्नी और लेखन–इन तीनो से उसे पलायन करना पड़ा। इस उपन्यास का मूल स्वर तो व्यक्तिपरक चेतना की घोषणा करता है कि परिवार और समाज मे रहते हुए व्यक्ति परिवार और समाज से प्रतिबद्ध नही है। यह स्वर इस सहयोगी उपन्यास के लेखक का है किन्तु मन्नू भण्डारी की मान्यता है कि लेखक परिवार के प्रति प्रतिबद्ध है। अतः विचारो की विभिन्नता होने के कारण इस सहयोगी उपन्यास का वर्गीकृत उपन्यास की भिन्न कोटि मे मे रखकर 'सहयोगी–उपन्यास' के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।



उपसंहार

हिन्दी उपन्यासो (१९५०–६५) के शास्त्रीय विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि व्यक्ति और समाज को लेकर दो सामान्य प्रवृत्तियां इस विवेच्यकाल मे चल रही हैं। प्रेमचन्द–युग मे सामाजिक–चेतना विकास की स्थितियो मे थी, उसका पूर्णतः विकास इस काल मे हुआ है। व्यक्ति–चेतना का क्षीण आभास उस युग मे दिखाई देता था, किन्तु यहां इसका पूर्णत विकास हुआ है। सामाजिक उपन्यासो मे दर्शन और मनोविश्लेषण अभाव मिलता है। सामाजिक–उपन्यासो मे सामाजिक–चेतना के साथ सामाजिक दृष्टि के आधार पर जीवन–मूल्यो की स्थापना हुई है। इसी तरह व्यक्तिपरक उपन्यासो मे भी मनोविश्लेषण और दर्शन का अभाव है; यहां समाज के बीच व्यक्ति उभरता है। इन उपन्यासों में व्यक्ति को केन्द्र मानकर ही जीवनमूल्यो की स्थापना और व्यक्ति–चेतना का स्वर उद्घोष किया गया है। दर्शन और मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति व्यक्तिपरक और समाजपरक उपन्यासो मे समानान्तर रूप मे चल रही है। समाजसापेक्ष उपन्यासो से समाज-दर्शन की समाजवादी चेतना के रूप मे अभिव्यक्ति हुई है और व्यक्ति–सापेक्ष उपन्यासो मे व्यक्तिवादी, अस्तित्ववादी, दर्शन के रूप मे। मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति भी व्यक्ति और समाज दोनों को प्रभावित कर रही है। अब तक मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति ने केवल व्यक्ति को केन्द्र बनाया था किन्तु अब उसमें सामाजिक–चेतना और सामाजिक–मूल्यो की स्थापना हो रही है। अतः समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों में सामाजिक चेतना का आग्रह है और व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों मे व्यक्ति चेतना का।

समाजपरक—ऐतिहासिक उपन्यासो मे ऐतिहासिकता के साथ सामाजिक—चेतना है। व्यक्तिपरक ऐतिहामिक उपन्यासो मे व्यक्तिचरित्रो का वर्णन और जीवन-मूल्यो की स्थापना हुई है। सामाजिक उपन्यासो मे समाज के साथ व्यक्ति की उपेक्षा नही होती है और न व्यक्तिपरक उपन्यासो मे समाज की पूर्णतः उपेक्षा होती है, उसी तरह समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो में व्यक्ति और व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो में समाज की उपेक्षा भी नही हुई है।

हिन्दी उपन्यास अपने उद्भव से लेकर अद्यतन विकास की स्थितियो को पार करता हुआ, इस विवेच्यकाल मे प्रौढ़ता की ओर उन्मुख हुआ है। इन पन्द्रह वर्षों मे कथा, वस्तु, चरित्र और उद्देश्य के क्षेत्र मे क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। हिन्दी-उपन्यासो के उद्भवकाल के सामाजिक, जासूसी, ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यासो मे, उपदेशात्मकता, काल्पनिकता, मनोरजकता, और अनगढ शिल्प के स्थान पर, प्रेमचन्द युग के उपन्यासो मे वास्तविकता, मानवजीवन और समाज की समस्याओ का चित्रण परिवर्तित-शिल्प मे हुआ। प्रारंभिक युग मे घटना-प्रधान उपन्यासो का बोलबाला था किन्तु प्रेमचन्द युग मे वस्तु-प्रधान हो गया। प्रारम्भिक युग मे घटनाओ के नाम पर केवल कथा, चरित्र के नाम पर केवल कठ पुतले थे और उद्देश्य के नाम पर उपदेश, नैतिकता और मनोरजन था किन्तु प्रेमचन्द-युग का उपन्यास कथा से वस्तु की ओर बढ़ा, कठपुतले पात्रों मे प्राण फूंककर उन्हे सामाजिक व्यक्तित्व दिया और उद्देश्य के नाम पर समाज की समस्याएं और समाधान प्रस्तुत किये गए। सामाजिक-उपन्यासो मे इस विवेच्यकाल के रेणु के 'मैला आचल' और 'परती परिकथा' मे जीवन को प्रत्यक्ष देखते हैं। 'बूंद और समुद्र' भारतीय-जीवन का महाकाव्य है।

प्रेमचद्रोत्तर-युग मे हिन्दी-उपन्यास नई प्रवृत्तियो की ओर अग्रसर हुआ। व्यक्ति और समाज को लेकर, नई प्रवृत्तियो का बीजारोपण, इस विवेच्यकाल के प्रारम्भ होने के पहले हो चुका था। यशपाल, नागार्जुन और रागेयराघव समाजवादी-चेतना का स्वर प्रतिध्वनित कर चुके थे, किन्तु इन पन्द्रह वर्षो मे इन्होने नई उपलब्धिया प्रदान की। यशपाल के 'दादा कामरेड' पार्टी कामरेड और देश द्रोही मे मार्क्सवादी सिद्धान्तो का प्रचार प्रसार मिलता है किन्तु 'झूठा सच' मे साम्यवादी सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार से मुक्त होकर वैचारिक धरातल पर समाजवादी चेतना की स्थापना कर सके हैं। व्यापक

चित्रफलक पर, भारत–विभाजन के समय के, स्वातत्र्योत्तर भारत की जनवादी· चेतना का प्रतिनिधित्व 'झूठा–सच' मे है। घटना सकुल होने पर भी 'झूठा–सच' मे सवेदनशीलता है और बदलते जीवन मूल्यो की स्थापना हुई है। अपनी कृतियो की तुलना मे नागार्जुन का 'वलचनमा' महत्वपूर्ण है। रागेय-राघव की अन्य कृतियो की तुलना मे 'कब तक पुकारु' महत्वपूर्ण कृति है।

मनोविश्लेषण की प्रवृति का बीजारोपण, इलाचन्द्र जोशी इस विवेच्यकाल के पहले कर चुके थे, किन्तु उन कृतियो मे सामाजिक चेतना का अभाव था। 'मुक्तिपथ,' 'सुबह के भूले' 'जिप्सी' और 'जहाज का पछी' मे सामाजिक–चेतना का स्वर मुख्य रूप से होने के कारण ये महत्वपूर्ण समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास हैं। 'जहाज का पछी' मे जोशीजी सामाजिक यथार्थ के अधिक निकट आ गए हैं। अन्य मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे लघु उपन्यासो की परम्परा मुख्य रूप से चल पड़ी है। व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यामो मे 'पथ की खोज' एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। हिन्दी उपन्यामो मे व्यक्तिवादी–चेतना का अकुर जैनेन्द्रकुमार के 'सुनीता,' 'परख' 'त्यागपत्र' और अज्ञेय के 'शेखर · एक जीवनी मे' पड चुका था किन्तु इस विवेच्यकाल मे व्यक्तिवादी–चेतना का क्रमश विकास हुआ है। जैनेन्द्रकुमार की पिछली रचनाओ की तुलना मे 'सुखदा,' 'विवर्त्त' और 'व्यतीत' तो महत्वपूर्ण उपलब्धिया नही है किन्तु 'जयवर्धन' मे जैनेन्द्रकुमार कई कमियो का निराकरण हो चुका है। जैनेन्द्रीय माडल के पति, पत्नियो और क्रातिकारियो का क्रम यहां टूट गया है। 'जयवर्धन' भारत का चित्र न होकर, केवल जयवर्धन के अन्तरग का चित्र है, फिर भी व्यक्तिवादी उपन्यासो के क्षेत्र मे इस विवेच्यकाल के 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनवी' की तुलना मे महत्वपूर्ण उपन्यास है, किन्तु लेखक की अस्तित्ववादी विचारधारा का पूर्ण विकाम इस काल की कृतियो मे हुआ है। मनोवैज्ञानिक शिल्प की चेतना–प्रवाह–पद्धति का प्रयोग तीनो कृतियों मे हुआ है किन्तु इस काल के उपन्यासो के शिल्प मे भी नवीनता है। 'शेखर. एक जीवनी' यदि एक सुन्दर वाटिका है तो 'नदी के द्वीप' उसका एक सुन्दर प्रान्तर और 'अपने अपने अजनवी' एक सुन्दर शावक। ऐतिहासिक उपन्यासो के क्षेत्र मे हिन्दी जगत को वृदावनलाल वर्मा, 'गढ कुढार,' 'विराट की पद्मिनी' 'मुसाहिवजू' 'कचनार' और 'महारानी लक्ष्मीवाई' दे चुके थे जिसमे 'गढकुढार' 'विराटा की पद्मनी' और 'मुसाहिवजू' मे सामाजिक–चेतना का स्वर प्रतिध्वनित होता है और भासी की रानी लक्ष्मीवाई और 'कचनार' मे व्यक्ति चेतना का। अतः

कथावस्तु, चरित्र और उद्देश्य की दृष्टि से वर्मा जी ने इस विवेच्यकाल मे नई उपलब्धिया नही दी है। 'मृगनयनी' और 'महारानी दुर्गावती' मे मृगनयनी और महारानी दुर्गावती का भव्य व्यक्तित्व है तो पिछले उपन्यासो मे लक्ष्मीबाई और कचनार का था। 'गढकुढार,' विराटा की 'पद्मिनी' और 'मुसाहिबजू' मे ऐतिहासिक आधार क्षीण हैं. ठीक वही बात 'टूटे कांटे' के बारे मे कह सकते है। 'भुवन–विक्रम' और 'माधव जी सिंधिया' इस दृष्टि से पिछली परम्पराओ की कडी मे स्वतत्र है किन्तु इतिवृत्तात्मकता के कारण वर्मा जी इस विवेच्यकाल मे शिल्प के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण उपलब्धि नही दे सके हैं। चतुरसेन शास्त्री के 'वैशाली की नगर वधू' की तुलना मे 'वयं रक्षाम ' एक साधारण कृति है। वैशाली की 'नगर वधू' मे इतिहास–रस है तो 'वय रक्षाम ' में अतीत रस। हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'बाण भट्ट की आत्मकथा' की तुलना मे उनका इस विवेच्यकाल का उपन्यास 'चारुचन्द्रलेख' अस्वाभाविकताओ और जटिलताओ मे भरा पडा है। राहुल सास्कृत्यायन के 'सिंह सेनापति,' 'जय यौधेय' और 'मधुर स्वप्न' मे मार्क्सवादी सिद्धान्तो की स्थापना हुई है तो इस विवेच्यकाल के 'विस्मृत–यात्री' मे भी मार्क्सवादी चेतना है, किन्तु इसमे राहुल के बौद्ध दर्शन और मार्क्सवाद के समन्वय का स्वर है। राहुल जी के बौद्धिक विकास की यह चरम परिणति है। यशपाल की 'दिव्या' मे पतनोन्मुखी प्राचीन जीवन की मार्क्सवादी व्याख्या है और इस विवेच्यकाल की 'अमिता' मे युद्ध के प्रश्न को मार्क्सवादी विचारधारा के आधार पर देखा गया है। अमृतलाल नागर का 'शतरज के मोहरे' पतनोन्मुख मुगलकालीन युग के जीवन का सजीव चित्र है। 'शतरज के मोहरे' इस विवेच्यकाल का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। अत सामाजिक–उपन्यासो मे 'बूद और समुद्र' 'मैला आचल' और 'परती परिकथा;' समाजवादी उपन्यासो मे 'झूठा–सच' और बलचनमा;' समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे 'जहाज का पछी; समाज परक ऐतिहासिक उपन्यासो मे 'शतरज के मोहरे;' व्यक्तिपरक उपन्यासो मे 'भूले बिखरे चित्र;' व्यक्तिवादी उपन्यासो मे 'जयवर्धन' 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनबी;' व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे 'पथ की खोज,' व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे वृदावनलाल वर्मा के उपन्यास, और सहयोगी उपन्यासो मे 'ग्यारह सपनो क देश' इस विवेच्यकाल की सृजनात्मक और महत्वपूर्ण उपलब्धियां है।

उपन्यास का भविष्य

हिन्दी–उपन्यासो का भविष्य केवल शिल्प की नवीनता को आधार

मानने के स्थान पर उपन्यास के धरातल मे क्रांतिकारी परिवर्त्तन करेगा। यह कहा गया है कि व्यक्ति के माध्यम से समाज को देखने की प्रवृत्ति है जो एकाकी और संकीर्ण सीमाओ मे बधी है। समाज के माध्यम से व्यक्ति को देखने की प्रवृत्ति मिथ्या आतक है और उसमे अनावश्यक यांत्रिकता उभर आती है।' हिन्दी उपन्यासो के विवेचन से यह बात निराधार सावित होती है। इस विवेच्यकाल के सामाजिक उपन्यासो मे समाज के माध्यम से व्यक्ति को देखा गया है, किन्तु उसमे यांत्रिकता नही है। व्यक्तिपरक उपन्यासो मे व्यक्ति के माध्यम से समाज का चित्र प्रस्तुत किया गया है, किन्तु वह व्यक्तिवादी उपन्यासो की तुलना मे एकागी नही है, जहा व्यक्ति को देखा है और समाज का अस्तित्व ही नही है। समाजवादी उपन्यासो मे समाज के माध्यम से समाज को देखा जाता है, इसलिए समाजवादी उपन्यासो मे व्यक्ति उपेक्षित रह जाता है। इसी तरह समाजपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे समाज और मनोविश्लेषण से व्यक्ति को देखा है और व्यक्तिपरक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासो मे व्यक्ति और मनोविश्लेषण के माध्यम से व्यक्ति को। समाजपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे समाज और इतिहास से समाज को देखते हैं और व्यक्तिपरक ऐतिहासिक उपन्यासो मे व्यक्ति और इतिहास के माध्यम से व्यक्ति को देखते हैं। अतः इन उपन्यासो के विवेचन से स्पष्ट हो गया है कि 'मानव का सम्पूर्ण व्यक्तित्व सामाजिक और व्यक्तिगत' इन दो टुकड़ो मे बट गया है। हिन्दी उपन्यास का भविष्य व्यक्ति और समाज के झूले मे झूल रहा है अत समाज और व्यक्ति के समन्वय का प्रश्न ही उसे विकास के पथ पर आगे बढ़ा सकता है। मनुष्य से सम्बधित बढते हुए विज्ञान ने जैसे प्राणि-विज्ञान, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, मनोविश्लेषण, सौंदर्यशास्त्र, समाजशास्त्र तथा राजनीति आदि ने मनुष्य का सम्पूर्ण पक्ष न दिखाकर आशिक रूप दिखाया गया है। मानव अपने भाष्यो की भटकती हुई भीड-भाड मे खो गया है[1]' अत हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भविष्य का उपन्यास, दर्शन और मनोविश्लेषण के कठघरे से निकल, मनुष्य के सम्पूर्ण पक्ष को अभिव्यक्त करते हुए नया-पथ प्रकाशित करेगा, वस्तु, चरित्र और उद्देश्य मे क्रांतिकारी परिवर्तन होगे। संगठित वस्तु के बीच पात्रो के रूप मे सांचे नही मिलेंगे-'आर्थिक साचे, वासना जनित साचे, सामाजिक साचे, सौंदर्यवादी साचे, आदर्श-

---

१ आलोचना : ७, पृ ६५।

वादी सांचे ।[1]' पात्र स्वतः निर्मित व्यक्ति होंगे । समाजवादी उपन्यासों की तरह व्यक्तिसमाज में डूब नहीं जाएगा और व्यक्तिवादी उपन्यासों की तरह समाज की उपेक्षा नहीं होगी । भविष्य के उपन्यास को मनोविश्लेषण के नाम पर अचेतन मन की अंधेरी गलियों में भटकना नहीं पड़ेगा । अतः धरातल की दृष्टि से भविष्य का उपन्यास क्रांतिकारी परिवर्तन करेगा ।

---

१. आलोचना १२, पृ. २२३ ।

विद्वान लेखकों और उपन्यासकारों के पत्र

(इस शोध-प्रबंध लेखन की कालावधि मे प्रस्तुत प्रबन्ध-लेखक को सर्व श्री कल्याणमल लोढा, डा० प्रभाकर माचवे, डा० रघुवंश, श्री जैनेन्द्रकुमार श्री यशपाल और श्री राजेन्द्र यादव के पत्र उपलब्ध हुए, जिन्हे पूर्णत., अंशत प्रस्तुत किया जा रहा है ·)

(१) कल्याणमल लोढ़ा

२ ए देशप्रिय पार्क ईस्ट
कलकत्ता-२६
८-६-६५

प्रिय महावीर,

(१) तुम्हारा पत्र मिला धन्यवाद।

(२) शास्त्रीय विवेचन स्पष्ट है। शास्त्रीय शब्द का अर्थ 'वैज्ञानिक' भी होता है। प्रत्येक आलोचना का 'सैद्धान्तिक' होना ही उसका वैज्ञानिक होना है। वैज्ञानिक पद्धति विश्लेषणात्मक होते हुए आगमनात्मक और निगमनात्मक होती है। मनोदर्शन भी एक विज्ञान है। जब हम उपन्यासो का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करते हैं, तब एक विशिष्ट वैज्ञानिक पद्धति का आकलन और पालन करते हैं। आज जब दर्शन और विज्ञान का पारस्परिक विरोध समाप्त हो गया तो पश्चिमी विद्वान 'वैज्ञानिक दर्शन' और 'दार्शनिक विज्ञान' की भी व्याख्या करने लगे हैं (द्रष्टव्य . दी फिनोमिना आव मेनचार्डिन)।

शास्त्र शब्द का पारस्परिक प्रयोग 'विधान' बताने वाले धार्मिक ग्र थों के लिए होता था—वे आदेशात्मक होते थे। इसका एक अर्थ 'विशिष्ट-

विषय का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से सग्रह किया जाय' भी है (शब्दार्थ-कौस्तुभ) यह निश्चय ही शिष्यतेऽनेन, शास—ष्टन से बना है।

मैं समझता हूँ शास्त्रीय विवेचन मे जहा एक आधुनिक वैज्ञानिक विवेचना पद्धति अपेक्षित है वहा दूसरी ओर साहित्य-शास्त्रीय (श्रेण्य पद्धति) भी।

इधर सभी प्रसन्न हैं। योग्य सेवा लिखना।

तुम्हारा—
ह० कल्याणमल लोढ़ा

(२) डा० प्रभाकर माचवे

१२०, रवीद्र नगर, नई दिल्ली ११,
२३-८-६५

प्रियवर,

२० अगस्त का पत्र, चार प्रश्नो के विस्तृत उत्तर नीचे दे रहा हू। शायद काम के हो।

सप्रेम—ह० प्रभाकर माचवे

प्रश्न १ आपकी उपन्यास-विषयक मान्यताए।

उत्तर— मैं जानता हू कि उपन्यास—

(१) जीवन के निकटतम हो। जीवन का सपाट फोटोग्राफ हो। यानी कि जीवन के भीतर जो भव्य है, जो सघर्ष है, जो भयद—त्रासद, अप्रिय और आकर्षक जो कुछ भी है उसे ठीक तरह से भोग सके—अपना अनुभूत सत्य बना सके और प्रामाणिकता और उत्कटता से व्यक्त कर सके।

(२) जीवन के व्यापार केवल विवेक और प्रज्ञा, जोड़-तोड़ (व्यवहार-व्यावसायिकता) और नक्शे-प्रयोजना से नही चलते। उनके पीछे मनुष्य की (और प्रकृति की भी) कई आदिम प्रसुप्त पार्थिव—प्रवृत्तिया चलती रहती रहती हैं। उस 'इर्रेशनल' उस अविवेक और असयम, अनियम—उच्छृखल हेतुमत्ता को खोजना चाहता हू। मानव की आज की अकरुण अवस्थिति का बीज वही है।

(३) इस मानवी नियति मे मानवी इच्छा और सकल्प, भावना और सवेदना का स्थान कहां तक है? क्या आदर्शवादी मानते हैं, उस प्रकार से यही मनुष्य की त्राता है—निष्ठा, आस्था, प्रतिबद्धता या यह सिर्फ 'मृगजल' है, मनका धोखा है, 'अध्यास' और मेंटल कन्स्ट्रक्ट मात्र है? मेरे लिए उपन्यास वही टिकेगा जो इन अन्तिम प्रश्नो का उत्तर देने का यत्न करेगा।

वाकी तो वक्त काटने के लिए ह्वीलर स्टालयर वहुत से पाकेट वुक होते ही हैं।

प्रश्न २ · उपन्यास के शास्त्रीय विवेचन से आपका अभिप्राय।

उत्तर—शास्त्रीय मे मेरा मतलव 'वैज्ञानिक' मे है, प्राचीन साहित्य शास्त्र को यहा विचारार्थ लाना व्यर्थ है। शास्त्रीय से मेरा अर्थ निष्पक्ष, पूर्व-ग्रहविरहित आधुनिक मनोविज्ञान और समाजविज्ञान की सहायता मे विश्लेपण विवेचन करना है। उपन्याम अव केवल उत्सुकता वढाने वाली (ऐयारी-तिलिस्मी चन्द्रकान्ता सन्तति) कथा मात्र नही है, न है वह प्रेमचद के जमाके आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की (एक मन गाधीवाद मे दो तोला समाजवादी जैसी) दवा या समाज सुधार की मधुरता लिपटी कुनैन। जैनेन्द्र ने स्त्री पुरष सम्वधो मे रूढ़ नीति को झकझोरा—मानवी मन के भीतर झाकने का यत्न किया, 'अज्ञेय' ने क्रान्तिकारी के वाल्य का मनोरम विवरणात्मक मनोविश्लेषण किया। यशपाल ने द्व द्वात्मक भौतिकवाद को आधार मानकर भारतीय जीवन के सामाजिक इतिहास का—चाहे वौद्धकालीन दासप्रथा हो या विभाजनोत्तर पजाव हो—पुर्ननिरीक्षण किया। रेणु रागेयराघव शैलेश मटियानी आदि आगे वढकर आचलिक जीवन का भौगोलिक विस्तार वाला 'रिलीफ' मानचित्र देने लगे और आगे कुछ लेखक अ-कथा की तरह 'ऐंटी-नावेल' की ओर भी वढे—भारती ने 'सूरज का सातवाँ घोडा' मे व्यग और रघुवश ने 'अर्थहीन' मे अस्तित्ववाद की भी छटा दी। निर्मल वर्मा, उषा प्रिय वदा आदि देश-विदेश की सीमाए तोडने लगे—एक नई भाषा की ओर हिन्दी उपन्यास वढ रहा है, चाहे वह कृष्णा सोवती की हो या रमेश वक्षी की। इस सारे विकास का विवेचन पुराने प्रतिमानो से नहीं हो सकेगा। अव हडसन और सैंटसवरी, राल्फ फाक्स और ए० सी० वार्ड काफी नही हैं। गये पद्रह वर्षों में प्रत्येक उपन्याम को नये सिरे से जाचने वाली अमरीकी 'नई' आलोचना और लेखक के हेतु के विषय मे विवेचना वढती जा रही है। उपन्यास के शिल्प और स्थापत्य की विवेचना भी अधिक तर्क पूर्ण हो गई है। ऐसा विवेचन हिन्दी मे वहुत कम हुआ है। कुछ लेख यत्र-तत्र देवराज या देवराज उपाध्याव आदि के मिलते रहे हैं। पर वे काफी नही हैं। ·······

भारतीय हिंदी परिषद्

(३) डा० रघुवंश

१८४ (१६७) ए, एलनगज
इलाहावाद-२
६-९-६४

प्रिय भाई,

पत्र मिला। प्राय तुरन्त ही उत्तर दे रहा हू, क्योंकि उत्तर तभी देना सम्भव होता है, यदि तुरन्त दिया जाय। मुझे काफी पत्र-व्यवहार करना

पडता (क ख ग प्रसग मे भी) है, इस कारण पत्र—व्यवहार के माध्यम से मैं अधिक उपयोगी नही हो पाता ।

शास्त्रीय का 'काव्य शास्त्रीय' अर्थ सचमुच सारे अध्ययन को निरर्थक दिशा दे देता । तुमने इसको वैज्ञानिक अध्ययन के रूप मे ग्रहण किया और मनोविज्ञान आदि मानवशास्त्रो के परिप्रेक्ष्य मे उपन्यासो के अध्ययन का विचार किया है । अध्ययन की दिशा स्पष्ट है, पर यहा 'शास्त्रीय' शब्द का चुनाव शायद बहुत अच्छा न माना जाय । यहा 'मानव शास्त्रो के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक उपन्यासो का अध्ययन' जैसा कुछ विषय ही अधिक स्पष्ट होता । इलियट आदि के अर्थ मे भी 'शास्त्रीय' शब्द बहुत स्पष्ट नही है, वहा प्रायः उनका भाव 'क्लसिकी' से रहा है । उनकी दृष्टि से उपन्यासो का अध्ययन किया जा सकता है, पर मात्र आधुनिको को लेने से पूर्ण दृष्टि उभर नही सकेगी—क्योकि आज की उपलब्धि क्लासिकी नही माना जा सकता । खैर जो भी हो विषय तुम्हारा निश्चित हो ही गया है ।

इलाहाबाद आओ तो अच्छा रहेगा । मेरा निमंत्रण भी समझो, मेरे साथ भी रुक सकते हो, यदि कोई स्नेही आत्मीय—जन न हो । पर सोचने समझने मे लगा रहता हू, कोई बातचीत करने के लिए समानधर्मा मिल जाय तो खुशी होती है । यहा इस नगर मे ऐसा ही है । विद्वान, उच्च साहित्याकार, तीसमार यहा कोई किसी को नही गिनता, पर गहरी, तेज और सक्रिय बहस में लोग काफी रुचि लेते हैं । तुम जाओगे तो खुद जान लोगे ।

मैं समझता हूं कि जिस रूप मे तुमने अपना अध्ययन लिया है उसमे तो उपन्यासकार और भी व्यर्थ हो जाता है । उपन्यासो मे अभिव्यक्त मनस्थितियां, सामाजिक परिस्थितियां, राजनीतिक वातावरण, दार्शनिक दृष्टियो का अध्ययन उपन्यासो के माध्यम से ही किया जा सकता है । उपन्यास के सर्जनात्मक कृतिकर्म के रूप मे अध्ययन के प्रसंग मे उपन्यासकार के दृष्टिकोण का कुछ महत्व माना भी जा सकता है, यद्यपि न माना जाय तो भी क्या फर्क पड़ेगा ! लेकिन तुम उपन्यासकारो के चिन्तन या व्यक्तित्व के सन्दर्भ से भी कुछ निष्कर्ष निकालना चाहो तो बुरा क्या है ? कुछ रोचक तथ्य सामने आयेंगे ही ।

तुम्हारा सस्नेह
ह०—रघुवंश

(४) जैनेन्द्रकुमार

दिल्ली,
२९–८–१९६५

प्रियवर,

आज आपका पत्र मिला 'आर्डर' बेहद भारी है। यो पूरा न हो पायगा। चाहे तो यहा आकर बातें मन भर अवश्य कर सकते हैं।

आपका स्नेहाधीन
ह०—जैनेन्द्र
दिल्ली

(५) यशपाल

दिनांक २६–८–६५

प्रिय महावीर जी,

आपका २० अगस्त का पत्र मिला। अनुमान है कि यह पत्र श्री जैनेन्द्र जी के लिये था, भूल से मेरे नाम के लिफाफे मे रखा गया।

सम्भव है कि इस आशय का मेरे नाम लिखा पत्र किसी अन्य लिफाफे मे चला गया हो। यदि यह मेरी अहमन्यता मात्र जान पडे तो उपेक्षा कर जाय। पत्र को इस लिफाफे मे लौटा रहा हू।

प्रत्येक प्रश्न ऐसा है कि उसका समाधान ४–६ फुलस्केप पृष्ठो पर लिखा जाना चाहिये और उसके लिये आठ–दस दिन का समय–मेरी जैसी सामर्थ्य की दृष्टि चाहिये। बात–चीत मे और बात होती है। इतना मैं आंखो के अस्वस्थता के कारण और अन्यथा भी कर न पाऊगा। विश्वास है अन्यथा न मानेंगे। शुभकामना सहित।

भवदीय,
ह०—यशपाल

(६) यशपाल जैन

३३५–बी०, महानगर,
लखनऊ—७
दिनाक १६–९–६५

प्रिय महावीर जी,

आपका १ सितम्बर का पत्र मुझे दो दिन पूर्व ही मिला है। पत्र जोधपुर से लिखा गया है। सम्भव है नगर की सकटमय स्थिति के कारण डाक निकलने मे विलम्ब हुआ है। आशा है आप सपरिवार सर्वथा कुशल होगे।

आपने मुझसे जिम सहयोग की इच्छा प्रकट की है आपके यहां आने पर सामर्थ्य और अवसर के अनुकूल उसके लिए अवश्य यत्न करूगा।

सम्भव है इस समय आप अजमेर हैं, वहा न भी होंगे तो समाचार आपको मिल जायगा इस अनुमान से अजमेर के पते पर लिख रहा हूं।

शुभ कामना सहित। प्रकाशजी को नमस्कार।

आपका—

ह०—यशपाल

(७) राजेन्द्र यादव

२१३६ अन्सारी रोड

दरियागंज, दिल्ली—६।

प्रियवर,

मैं कलकत्ते और केरल से लौटकर आया तो तुम्हारा पत्र मिला। 'हिंदी उपन्यासो पर शास्त्रीय विवेचन' विषय मुझे पसद आया। सदेह यही है कि ५०–६५ के उपन्यासो मे 'शास्त्रीयता' कितनी भिडाई जा सकेगी। तुम्हारी प्रश्नावली तो पूरी एक पुस्तक का विषय है। क्या दिल्ली नही आ रहे, चार-छ घंटे बैठकर बातें करना, सौ पन्नो की लिखाई से अधिक आसान है।

सस्नेह,

ह०—राजेन्द्र यादव



परिशिष्ट-१

विवेच्य-पुस्तकें

(हिन्दी)

	प्रथम संस्करण	प्रयुक्त संस्करण	प्रकाशन
अज्ञेय			
१. नदी के द्वीप	१९५१	तृतीय १९६०	वाराणसी, सरस्वती प्रेस
२. अपने अपने अजनबी	१९६१	प्रथम	काशी, भारतीय ज्ञानपीठ
अमृतराय			
३. बीज	१९५३	प्रथम	
अमृतलाल नागर			
४. सेठ बाकेमल	१९५५	प्रथम	इलाहाबाद, किताब महल
५ बूंद और समुद्र	१९५६	द्वितीय १९६४	—वही—
६. शतरज के मोहरे	१९५९	द्वितीय १९६२	काशी भारतीय ज्ञानपीठ
७. सुहाग के नुपुर	१९६०	प्रथम	दिल्ली, राजकमल-प्रकाशन
८ ये कोठेवालिया	१९६१	प्रथम	—वही—
इलाचन्द्र जोशी			
९. मुक्तिपथ	१९५०	द्वितीय १९६१	इलाहाबाद, हिन्दी भवन
१०. सुबह के भूले	१९५२	प्रथम	—वही—
११ जिप्सी	१९५२	प्रथम	—वही—
१२. जहाज का पछी	१९५५	द्वितीय १९५६	दिल्ली, राजकमल-प्रकाशन

उदयशंकर भट्ट			
१३. सागर लहरें और मनुष्य	१९५५	द्वितीय १९६४	दिल्ली-आत्माराम एंड संस
१४. शेष अशेष	१९६०	प्रथम	दिल्ली, भारतीय-ज्ञानपीठ
उपेन्द्रनाथ अश्क			
१५. गर्मराख	१९५२	द्वितीय १९५९	इलाहाबाद; नीलाभ प्रकाशन
१६. बड़ी बड़ी आँखें	१९५५	प्रथम	—वही—
१७. पत्थर-अल पत्थर	१९५७	प्रथम १९५७	—वही—
१८ शहर मे घूमता आइना	१९६३	प्रथम	—वही—
चतुरसेन शास्त्री			
१९. वयं रक्षामः (प्रथम भाग)	१९५५	द्वितीय १९६०	भागलपुर, शारदा प्रकाशन
२०. वयंरक्षामः (द्वितीय भाग)	१९५५	द्वितीय १९६०	—वही—
२१ सोना और खून	१९६०	प्रथम	दिल्ली, राजपाल एन्ड संस
जैनेन्द्रकुमार			
२२. सुखदा	१९५२	द्वितीय १९६१	दिल्ली, पूर्वोदय प्रकाशन
२३ विवर्त्त	१९५३	प्रथम	—वही—
२४ व्यतीत	१९५३	प्रथम	—वही—
२५ जयवर्धन	१९५६	प्रथम	—वही—
२६ मुक्तिबोध	१९६५	प्रथम	—वही—
डा० देवराज			
२७. पथ की खोज (१)	१९५१	प्रथम	
२८. पथ की खोज (२)	१९५१	प्रथम	
२९. बाहर—भीतर	१९५४	प्रथम	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
३०. रोडे और पत्थर	१९५८	प्रथम	—वही—
३१. अजय की डायरी	१९६०	प्रथम	दिल्ली, राजपाल एण्ड संस
धर्मवीर भारती			
३२. सूरज का सातवां घोड़ा	१९५२	तृतीय १९६०	काशी, भारतीय—ज्ञानपीठ

नरेश मेहता

३३	डूबते मस्तूल	१९५४	प्रथम	दिल्ली, आत्माराम एण्ड संस
३४	यह पथ बन्धु था	१९६२	प्रथम	बम्बई, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर

नागार्जुन

३५.	बलचनमा	१९५२	प्रथम	इलाहाबाद, किताब महल
३६.	नई पौध	१९५३	प्रथम	—वही—
३७	बाबा बटेसरनाथ	१९५४	प्रथम	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
३८.	दुःख मोचन	१९५७	प्रथम	—वही—
३९.	वरुण के बेटे	१९५७	प्रथम	इलाहाबाद, किताब महल
४०	उग्रतारा	१९६३	प्रथम	दिल्ली, राजपाल एण्ड संस

फणीश्वरनाथ 'रेणु'

४१	मैला आंचल	१९५४	चतुर्थ १९६३	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
४२.	परती परिकथा	१९५७	प्रथम	—वही—
४३.	दीर्घतपा	१९६३	प्रथम	पटना, बिहार ग्रंथ कुटीर
४४.	जुलूस	१९६५	प्रथम	काशी, भारतीय-ज्ञानपीठ

भैरवप्रसाद गुप्त

४५.	मशाल	१९५१	प्रथम	—
४६.	गंगा मैया	१९५३	प्रथम	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
४७.	सतीमैया का चौरा	१९५९	प्रथम	इलाहाबाद, नीलाम प्रकाशन

भगवतीचरण वर्मा

४८.	आखिरी दाव	१९५०	प्रथम	इलाहाबाद, लीडर प्रेस
४९.	अपने खिलौने	१९५७	प्रथम	—वही—
५०.	भूले बिसरे चित्र	१९५९	द्वितीय १९६१	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
५१.	सामर्थ्य और सीमा	१९६२	द्वितीय १९६५	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
५२	वह फिर नही आई	१९६०	प्रथम	—वही—
५३	थके पांव	१९६३	प्रथम	देहरादून, साहित्य सदन
५४.	रेखा	१९६४	प्रथम	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन

	भगवतीप्रसाद वाजपेयी			
५५	यथार्थ से आगे	१९५५	प्रथम	दिल्ली ओरियण्टल बुक डिपो
५६	एक प्रश्न	१९५६	१९६१	दिल्ली, राजपाल एण्ड सस
	मोहन राकेश			
५७.	अंधेरे बंद कमरे	१९६१	प्रथम	बम्बई, राजकमल प्रकाशन
	यशपाल			
५८	अमिता	१९५६	प्रथम	लखनऊ विप्लव प्रकाशन
५९.	झूठा—सच (वतन और देश)	१९५८	द्वितीय १९६०	—वही—
६०.	झूठा सच (देश का भविष्य)	१९६०	द्वितीय १९६३	—वही—
६१.	बारह घंटे	१९६४	प्रथम	—वही—
	रांगेय राघव			
६२.	सीधा सादा रास्ता	१९५१	प्रथम	इलाहाबाद, किताब महल
६३	कब तक पुकारु	१९५७	द्वितीय १९६०	दिल्ली, राज्यपाल एन्ड सस
६४	राई और पर्वत	१९५८	प्रथम	—वही—
६५	पतझर	१९६२	प्रथम	—वही—
६६.	आखिरी आवाज	१९६३	प्रथम	—वही—
	राजेन्द्र यादव			
६७.	प्रेत बोलते हैं	१९५२	प्रथम	किताब महल, इलाहाबाद
६८.	उखडे हुए लोग	१९५६	द्वितीय १९६४	देहरादून, सहित्य सदन
६९	कुलटा	१९५८	प्रथम	दिल्ली, श्रमजीवी प्रकाशन
७०	शह और मात	१९५९	प्रथम	काशी, भारतीय-ज्ञानपीठ
७१	अनदेखे अनजान पुल	१९६३	प्रथम	दिल्ली राजपाल एण्ड सस
	राहुल सांकृत्यायन			
७२.	विस्मृत यात्री	१९५५	प्रथम	इलाहाबाद, किताब महल
	वृंदावनलाल वर्मा			
७३	मृगनयनी	१९५०	छटवा १९५९	झांसी, मयूर प्रकाशन
७४	टूटे कांटे	१९५४	द्वितीय १९५९	—वही—
७५	अहिल्याबाई	१९५५	छठवां १९५९	—वही—

७६	माधवजी सिंधिया	१९५७	तृतीय १९६०	—वही—
७७	भुवनविक्रम	१९५७	द्वितीय १९५९	—वही—
७८.	महारानी दुर्गावती	१९६४	प्रथम	—वही—

सहयोगी उपन्यास

७९	ग्यारह सपनों का देश	१९६०	प्रथम	काशी, भारतीय-ज्ञानपीठ
८०.	एक इंच मुस्कान	—	—	ज्ञानोदय

हजारीप्रसाद द्विवेदी

८१	चारुचन्द्र लेख	१९६३	प्रथम	दिल्ली, राजकमल प्रकाशन



सहायक ग्रन्थ सूची (हिन्दी)

परिशिष्ट—२

१ अज्ञेय, आत्मनेपद १९६० ।

२. डा० इन्द्रनाथ मदान, उपन्यासकार अश्क, १९६० ।

३ इलाचद्र जोशी, विवेचना, वि० स० २००५ ।

४ डा० ओम शुक्ल, हिन्दी—उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, १९१८ ।

५ डा० गणेशन, हिन्दी—उपन्यास—साहित्य का अध्ययन, १९३० ।

६ डा० गोविन्द त्रिगुणायत, शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, द्वितीय भाग, १९५९ ।

७. जैनेन्द्रकुमार, साहित्य का श्रेय और प्रेय, १९५३ ।

९. जैनेन्द्रकुमार, इनस्तत. ११६०

८ जैनेन्द्रकुमार, समय और हम, १९६२ ।

१० देवराज उपाध्याय, हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान, १९५६ ।

११ देवराज उपाध्याय, साहित्य तथा साहित्यकार, १९६० ।

१२ डा० नगेन्द्र, विचार और विवेचन, १९४९ ।

१३ डा० नगेन्द्र विचार और विश्लेषण, १९५५ ।

१४. नलिनो विलोचन शर्मा, हिन्दी गद्य की प्रवृत्तिया ।

१५. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, हिन्दी कथा साहित्य, १९५४ ।

१६. प्रेमचन्द्र, साहित्य का उद्देश्य, १९५४ ।

१७. प्रेमभटनागर, इलाचद्र जोशी, साहित्य और समीक्षा, १९५९ ।

१८ प्रकाशचन्द्र गुप्त, साहित्यधारा १९५६।
१९ बलभद्र तिवारी, इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास, १९५८।
२० डा० मक्खनलाल शर्मा, हिन्दी आलोचना सिद्धान्त और समीक्षा, १९६५।
२१ महेन्द्र भटनागर, हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण, १९६२।
२२. मुद्राराक्षस, साहित्य–समीक्षा, १९६३।
२३. मोहनवल्लभ पन्त, आलोचनाशास्त्र।
२४ रघुनाथशरण झालानी, जैनेन्द्र और उनके उपन्यास, १९५६।
२५ डा० रणवीर रांगा, हिन्दी उपन्यास में चरित्र चित्रण का विकास, १९६१।
२६ रामकुमार वर्मा, साहित्य शास्त्र, १९५६।
२७ रामदास मिश्र, ऐतिहासिक उपन्यासकार वृंदावनलाल वर्मा, १९६४।
२८ रामरतन भटनागर, जैनेन्द्र–साहित्य और समीक्षा. ११५८।
२९ शचीरानी गुर्टू, वैचारिकी, १९६२।
३० शरद देवडा, युगचिन्तन, १९६३।
३१. शिवदानसिंह चौहान, साहित्यानुशीलन, १९५५।
३२. शिवनारायण श्रीवास्तव, हिन्दी उपन्यास, वि० स० २०१६।
३३. डा० श्रीनारायण अग्निहोत्री, हिन्दी–उपन्यास–साहित्य का शास्त्रीय विवेचन, १९६१।
३४. सुरेशचन्द्र तिवारी, यशपाल और हिन्दी–कथा साहित्य, १९५६।
३५. डा० सुरेश सिन्हा, हिन्दी–उपन्यास उद्भव और विकास, १९६५।
३६. डा० सुषमा धवन, हिन्दी–उपन्यास, १९६१।
३७. डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल, १९४८।
३८. डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, साहित्य का मर्म, १९५९।
३९. डा० त्रिभुवनसिंह, हिन्दी–उपन्यास और यथार्थवाद, वि० स० २०२२।

पत्रिकाएं

१. अणिमा (कलकत्ता) अप्रेल–जून १९६५ और अक्टूबर–दिसम्बर १९६५ के अंक।
२. आलोचना (दिल्ली) १ से ३५ अंक तक।
३ उपमा (कानपुर) मार्च १९६३, अगस्त १९६३ और दिसम्बर १९६३ के अंक।
४. कृति (दिल्ली) अक्टूबर १९५८, अप्रेल १९६०, अगस्त १९६०, मई १९६०, और मई–अगस्त १९६१ के अंक।

५ कल्पना (कलकत्ता) ।

६. नई धारा (पटना) नवम्बर १९६५ और फरवरी–मार्च ६६ (समकालीन कहानी वि०) ।

७ माध्यम (प्रयाग) मई १९६४ से दिसम्बर १९६४, फरवरी १९६५, अप्रेल से मई १९६५ तक और अक्टूबर से दिसम्बर १९६५ तक के अंक ।

८ लहर (अजमेर) मार्च १९६१ ।

९ समालोचक (आगरा) जून, जुलाई और सितम्बर १९५९ के अंक ।

१० ज्ञानोदय (कलकत्ता) ।

कोश—ग्रंथ

(हिन्दी और संस्कृत)

१. सस्कृत शब्दार्थ कौस्तुम, १९५७ ।

२ शब्द कल्पद्रुम, १९६१ ।

३. हिन्दी शब्द सागर, प्रथम (१९१२) और तृतीय (१९२७) भाग ।

४. हिन्दी साहित्य कोश, भाग १, सवत् २०१५ ।

५ सक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर (रामचन्द्र वर्मा : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी) षष्ट सस्करण ।

आलोचनात्मक ग्रंथ (अंग्रेजी)

1 Alfred Adler, Understanding Human Nature 1949.

2. Arneld Benett Author's Craft .

3. Bacil Hogart The Technique of Novel Writing

4. Bernardd De Voto. The World of Fiction

5 Blackham, H. J. : Six Existentialist Thinkers, 1956

6 Brown, J. A. C Freud & the post Freudians, 1961.

7 Carr, C H., What is History

8 Charles Holmes, Sir, A grammar of Arts, 1946

9 Dogobert D Runes, Twentieth Century Philosophy, 1947

10 Ernest A Baker, The History of Novel in England Vol: I, 1957.

11. Edward Wagenknecht, Conclovade of English Novel.

1963
12. Forster, E. F , Aspacts of the Novel, 1952.
13. Frans Alexander, Fundamentals of psychoanalysis, 1960
14. Fredrick Angels, Revolution in Seience Anti Durhing, 1947.
15. Frieda Fordham, An Introduction to Jung's Psychology, 1954.
16. Harold Weston, Form in Literature. A Theory of techniques & construction, 1970.
17 Helen Mc Mohan, Criticsm of Fiction A study of trends in the Atlantic Monthly (1857-1898), 1962.
18. Henary James, The House of Fiction, 1952
19. Herdert J. Muller, A Study of Fiction A Study of Values found
20. Hertert Read, The Meating of Arts, 1900
21. Jean Paul Sartre, what is literature, 1950
22. Leavis, F R , The Great Traditidn, 1955.
23. Leggct, H. W. The idea of Fiction
24. Leo Tolstoy, What is Art.
25 Ltonel Stevenson, The English Novel, 1931.
26. Magill, Frank, N. (Editor) Master pieces of World Literature.
27. Miriam Allott, Novelists on the Novel.
28. Morris. I. Stein, Creativity & the individual, 1960.
29. Percy Lubbock, The Craft of Fiction, 1965
30. Regar Datallar, The plain man and the Novel, 1950.
31. Ralph Fox, The Novel and the people, 1956.
32 Richard Stang, The Theory of Novel in England, 1961.
33. Robert Lidnel, Some Principles of Fictions, 1955.
34 Sandor Lorand (Editor) Psychoanlysis To day.
35. Sigmund Freud, Major Works of Sigmund Freud, 19 2
36. Stevension, Memoirs and Portraits
37. Welter Allen, The English Novel, 1968

38. Willur R Cross, The development of English Novel, 1957.

39. William Henry Hudson, An Iutroduction to the Study of Literature, 1954.

पत्रिका

1. Indian Literature Vol VIII, No. 1, 1965.

संदर्व-ग्रंथ

1 A New English Dictionary on historical principles (Editor. A. H. Murray) Vol· VI, 1928.

2. Dictionary of World Literature (Editor Joseph T. Shipley), 1943.

3. Encyclopedia Britannica: Vol II & Vol. XVI, 1959

4 The Oxford Euglish Dictionary vol VII, 1961.

